श्रीमाहेश्वरतन्त्रम्

Nijanand App

ॐ

श्रीमाहेश्वरतन्त्रम्

(हिन्दी अनुवाद)

अनुवादक : प्रो. यज्ञदत्त शुक्ल

Nijanand App

कीमत : एक सौ रूपये

मुद्रक :-
आइडियल इम्प्रैशन प्रा0 लि0
नई दिल्ली

Nijanand App

अज्ञान तम नाशाय मुमुक्षूणां मोक्षहेतवे
चिदानन्द परब्रह्म विज्ञानार्क प्रकाशिका ॥१॥
अज्ञान नाशिनी टीका शुक्ला श्री क्रियते
सच्चिदानन्द ब्रह्मार्क ज्ञान अनुभवात्मिका ॥२॥
पाखण्ड मतखद्योतरसंसारे तमसाऽऽवृते
विज्ञानार्क प्रकाशेन नाशमायाति निश्चितम् ॥३॥
संसार दुस्तरं सिन्धुन्तर्तनाम्पारदं प्लवम्
कैवल्य मोक्षदन्तज्ञरसिंकानां सुखाम्बुधिम् ॥४॥

प्राक्कथन

अनादि अक्षरातीत सच्चिदानन्दस्वरूप पूर्णब्रह्म श्री प्राणनाथ जी की ही यह मेहर (कृपा) थी कि एक अनादि अपौरुषेय एवं अनन्त ग्रन्थ 'श्रीमाहेश्वरतंत्रम्' के सम्बन्ध में कुछ कार्य करने का अवसर प्राप्त हुआ।

सांसारिक सुखों का खद्योत कुछ काल के लिए चमक कर नष्ट हो जाता है, किन्तु वह आनन्द है जो पूर्ण रस श्रीकृष्ण जिन्हें अक्षर परमात्मा और पुरुषोत्तम संज्ञा भी प्राप्त है, के संयोग-वियोग रूप रस में लीन होने के परिणामस्वरूप प्राप्त होता है। यह वास्तविक एवं अखण्ड है। क्षणभंगुर नहीं। इस रस की प्राप्ति रसरूप ब्रह्म से ही सम्भव है। वर्तमान में मानव कलियुग रूपी दावानल से संतप्त होकर दुखनाश और सुख प्राप्ति की सीढ़ियों पर चढ़ने के लिए उतावला दिखाई पड़ता है। यह श्रीमाहेश्वरतंत्रम् श्रुति, स्मृति, इतिहास एवं पुराण में प्रतिपादित रहस्य की प्राप्ति का सोपान है। यह सिद्धिरूपी जलाशय में उतरने के लिए तथा अनर्थरूपी सागर से बचने के लिए आलम्बन स्वरूप है। यह तन्त्र 'राजधर्म' की ध्वजा को खड़ा करने के स्थान के समान, सभी विद्याओं के गुरु के समान, आचारों के आकर के समान, सारे मंगलों के आयतन के समान, आत्मज्ञान के उदय पर्वत के समान है। जिस तन्त्र को आज सामान्य जन के सम्मुख लाया जा रहा है, वह उस माहेश्वरतंत्रम् का उत्तरखण्ड से सम्बद्ध ज्ञानखण्ड ही है। यह देवाधिदेव शंकर जी द्वारा कहे गए तत्काल विश्वास देने वाले 64 तन्त्रों में परमार्थ प्रकाशन के लिए परम उपयोगी है। इसमें और धर्मशास्त्र के ग्रन्थों में अत्यधिक समानता होने के कारण इसकी धर्मशास्त्र से समानता स्पष्ट है। इस तन्त्र में क्षर, अक्षर और अक्षर से परे उत्तम इन तीनों पदों के अर्थ का निर्णय वृहत् रूप से किया गया है। योगमाया के अधीन उसका त्रिविध लीला प्रकाश कालमाया में अपनी प्रियाओं को लोकलीला का दर्शन कराने हेतु ब्रज, मथुरा, वृन्दावन आदि में अवतरण एवं लीला का जो वर्णन जिस रूप में है, इसमें प्रस्तुत किया गया है,

Nijanand App

वह महागुरु शंकर द्वारा पार्वती के स्नेहवश ही किया जाना सम्भव था। इसी कारण यह तन्त्र अज्ञानी तथा वादियों के तर्कों के खण्डन में निपुण तथा वेद के प्रकाश में लाने के कारण होने से अन्य तन्त्रों से बढ़कर है।

इस तन्त्र के श्रीमाहेश्वरतंत्रम् नामकरण के सम्बन्ध में छब्बीसवें अध्याय के छठे एवं सातवें तथा दसवें श्लोक में वर्णन है एवं इसका महत्व भी इसी पटल के बयालीस से पैंतालीस श्लोक में वर्णित है। यद्यपि इस तन्त्रराज के वक्ता और श्रोता शिव हैं, किन्तु इसके कर्ता वे नहीं हैं, क्योंकि उनके द्वारा यह स्वयं स्वीकार किया गया है कि जब महाशिव ने यह ज्ञान परमब्रह्म से प्राप्त किया, तब उस समय वहां कूट में उपस्थित सदाशिव से समाधिस्थ शिव ने प्राप्त किया। अतः वह उसके कर्ता नहीं हैं, यह स्पष्ट है। इस तन्त्र के वेद में कहे गए क्षर, अक्षर और अक्षरातीत त्रिविध पदों के अर्थों का निर्णय निगम में उपदिष्ट ब्रह्मपुर, दिव्यब्रह्मपुर, आदि का विशेषतः व्याख्यान किया गया है। इसलिए श्रुति से भी इसकी एक वाक्यता है। इस तन्त्र में वर्णित कृष्णप्रिया आदि के मनोरथों की अघटित घटना प्रदर्शित करने वाली सुमंगला की स्तुति है, क्योंकि इस मार्ग में सुमंगला के स्वीकार न करने पर वियोग की स्थिति घटित नहीं हो सकती और लीलाओं की अनुभूति सम्भव नहीं होती। इस तन्त्र में सारस्वत कल्प, जिसे महापद्मकल्प भी कहा गया है, में ही श्रुतियां अपने मनोरथों को प्राप्त कर सकीं। सारस्वत कल्प व पद्म कल्प को श्वेतवाराह कल्प भी कहा गया है। इन नामों में से प्रत्येक में एक ही प्रकार की लीला का वर्णन मिलता है। यह त्रिविध लीला कृष्ण द्वारा ही सम्पन्न की गई। इस तन्त्र से यह भी सम्यक् प्रतीत होता है। इस कृष्ण लीला की तरह उसमें निमित्तभूत कल्पों का अपने में समावेश होने से इस गूढ़ तत्व को जानने वाले इस तन्त्र में कल्प भेद का विरोध किया गया है। इसके अनुसार दिव्य ब्रह्मपुर विहारिणियों का प्रादुर्भाव श्वेतवाराह कल्प में भी था। वहां गोलोक के ऐश्वर्य लोक गोकुल में ग्यारह वर्ष बावन दिनों तक चलने वाले महारास उत्सव में कालमाया निर्मित ब्रह्माण्ड के अकाल प्राकृत प्रलय, दिव्य ब्रह्मपुर के ऐश्वर्य से सम्पन्न नित्य वृन्दावन में आधिदैविक रात्रियों में रमण कर व्यापी ने बैकुण्ठ लीला का श्रुतियों को दर्शन करा रमण के लिए भगवान (व्यापी) ने वर दिया। यही श्रुतियां कालान्तर में गोपियां हुईं। उन्हीं के साथ वृन्दावन तथा गोकुल में रमण कर भगवान ने वेद ऋचाओं (श्रुतियों) के मनोरथ को पूर्ण किया। इसमें वर्णित लीला की त्रिविधता इसलिए है क्योंकि उसका प्रथम रूप पूर्ण ब्रह्म द्वारा सुख ऐश्वर्य रूप वृन्दावन की लीला है, दूसरी गोलोक ईश्वर से युक्त गोकुल की लीला है और बैकुण्ठ रूप युक्त द्वारिका की लीला तीसरी है। श्रीकृष्ण की लीला

Nijanand App

के रसास्वादन करने वाले लोगों को इनका अनुभव करना चाहिए, यह इस तन्त्र में कहा गया है। इस तन्त्र के अनुसार रस जब संयोग पक्ष में होता है तो यह लीला मायातीत श्रीब्रह्मदिव्यपुर रूप निज धाम में साक्षात् श्रीकृष्ण (श्रीराज जी) के द्वारा की जाती है। जब रस वियोग पक्ष में होता है तब वह प्रकट होकर योगमाया निर्मित दिव्य वृन्दावन आदि में रसस्वरूप ब्रह्मावेशकृत होती है। जब यह रस संयोग-वियोग दोनों की सन्धि पर समाप्त होता है तो कालमाया ब्रह्माण्ड में श्रीकृष्ण प्रियाओं के प्रबोध के समय के समीप पहुंच जाने के कारण शास्त्र के अनुसार सद्गुरु सम्प्रदाय से अपने स्वरूप की व्यवस्था के ज्ञान के कारण रूप साधन गर्भित या श्रीनिष्कलंक कृत ऐश्वर्यगर्भित होती है।

प्रथम उपोद्घात में अक्षर स्वरूप निरूपण करके, सप्तम पटल में निजधाम लीला संवाद आदि का निरूपण, द्वितीय से नवम् पटल तक ब्रजादिगमन, पन्द्रह पटल में प्रियाओं के दु:खदर्शन रूप अवशिष्ट काम की पूर्ति के लिए पुन: कालमाया के आविर्भाव का निरूपण, साधनों से स्वधाम प्राप्ति आदि कहकर आत्मस्वरूप लाभ रूप तृतीय रहस्य की उपपत्तियां वर्णित करके उपसंहार किया गया है। इस तन्त्र में कही गई तृतीय लीला के अट्ठाइसवें कलियुग लीला में जीव अधिकारी है, ऐसा सुनने से ही हम कराल कलियुग में रहने वालों को भी, द्वापर में पुरुषोत्तम के चरण कमल में अनुराग रखने वालों के समान ही परम लीला के अनुभव की योग्यता की प्राप्ति इस तन्त्र की उपयोगिता है।

इस ग्रन्थ का इस रूप में आप तक पहुंचना सतगुरु जागनी रतन (सरकार) श्री जगदीश चन्द्रजी की कृपा से ही सम्भव हो पा रहा है। श्री राजन स्वामी का अलौकिक व्यक्तित्व भी इस कार्य हेतु प्रेरणा स्रोत रहा है। सुन्दर साथ श्री एस. पी. आर्य, आई. ए. एस. ने श्री राज जी की प्रेरणा से मुझे इस योग्य समझा कि मैं इस ग्रन्थ को अनूदित कर सामान्य हिन्दी जानने वालों के लिए प्रस्तुत कर सकूं। मेरे गुरु डॉ. उमाशंकर त्रिपाठी जी ने इस कार्य में मेरा जो मार्गदर्शन किया, उनका स्मरण कर अनुग्रह प्रकाश करता हूं। श्री प्राणनाथ जी को प्रणाम करते हुए मनीषी जनों से यह प्रार्थना करता हूं कि वह त्रुटियों को सुधार कर इस प्रयत्न को अंगीकार करें।

—प्रो. यज्ञदत्त शुक्ल

Nijanand App

दो शब्द

प्रौढ़ाऽज्ञानविनाशनैक चतुरांसत्प्रेम: लक्ष्यांचिताम्
धामोद्दाम विवेचनैक जननी संत्तारतम्यान्विताम्।
योऽदाच्छ्रीमच्छाकुण्डलाय धरणीपालाय विद्यांपराम्
तंवन्दे मुनि-वृन्दवंदितपदंश्री प्राणनाथामिधम्।।

पाठक वृन्द आत्म सम्बन्धी सुन्दर साथ जी—

सस्नेह प्रणाम।

वस्तुत: अध्यात्मवादियों के लिए यह ग्रन्थ माहेश्वर तन्त्र (हरितन्त्र) इतना अधिक उपयोगी सिद्ध हुआ है कि आज तक अखिल विश्व एक परमात्मा पारब्रह्म पुरुषोत्तम सच्चिदानन्द का सही विवरण अन्य किसी शास्त्र या पुराण में नहीं पाया गया। मध्य काल में महामति श्री प्राणनाथ जी द्वारा रचित ग्रन्थ श्री मुखवाणी साहब में पूर्णरूपेण वर्णन अवश्य पाया जाता है। तबसे प्रणामी जगत के शास्त्रीय विद्वान इस खोज में संलग्न थे कि शास्त्र में पूर्ण विवरण अवश्य होगा। अन्ततोगत्वा भगवान शंकर द्वारा पार्वतीजी को सुनाया गया आन्तरिक ज्ञान यह माहेश्वर तन्त्र प्राप्त हुआ। इससे प्रणामी जगत के शास्त्रीय विद्वानों में पूर्णरूपेण सन्तोष की लहरें उमड़ पड़ी थीं। इसी आन्तरिक ज्ञान के कारण श्री शंकर भगवान को महादेव कहते हैं क्योंकि आज तक किसी देवता या ऋषि ने इतने उच्च कोटि के ज्ञान का वर्णन नहीं किया है। यह ग्रन्थ देवभाषा संस्कृत में था जिसके कारण सभी को लाभ नहीं होता था। आधुनिक युग में इसकी अधिक आवश्यकता रही। इस महान् कार्य को करने का सर्वप्रथम श्रेय लखनऊ के प्रणामी धर्मानुयायियों को है जिन्होंने अथक परिश्रम द्वारा इस ग्रन्थ को प्राप्त कर माननीय आचार्य श्री यज्ञदत्तजी शुक्ल से सम्पर्क स्थापित कर हिन्दी का अनुवाद करवाया। श्री शुक्लजी की जिह्वा पर श्री सरस्वतीजी की अधिक कृपा है जिसके कारण थोड़े ही समय में उन्होंने हिन्दी अनुवाद का कार्य सम्पन्न कर दिया।

संस्कृत भाषा का ज्ञान कुछ लखनऊ सुन्दर साथ (धर्मानुयायियों) को भी है। फिर भी अपने सन्तोष के लिए बाल ब्रह्मचारी श्री राजनस्वामी जी जो जागनी रतन श्री जगदीश चन्द्र सद्विद्यारत्नजी के परम शिष्य हैं तथा संस्कृत के प्रकाण्ड विद्वान भी हैं, के सहयोग से रात्रि के दो-दो बजे तक जागकर इस कार्य को सम्पन्न कर समाज एवं आम जनता का परम कल्याण किया। वस्तुत: इन महापुरुषों का जितना भी धन्यवाद, अभिनन्दन किया जाय, थोड़ा ही होगा। इस महान् ग्रन्थ के प्रकाशन का भार श्री निजानन्दाश्रम ट्रस्ट, रतनपुरी, मुजफ्फरनगर

Nijanand App

ने अपने ऊपर लेकर इस महान् कार्य को पूर्ण किया है जिसके लिए वहां के ट्रस्टीगणों को भी हार्दिक धन्यवाद है।

जय मंगल पाण्डेय
प्रणामी सदन, प्रणामी नगर,
खगौल, पटना

Nijanand App

श्रीमाहेश्वरतन्त्रम्

Nijanand App

॥ अपौरुषेयम् ॥

(नारदपञ्चरात्रान्तर्गतम्)

श्रीमाहेश्वरतन्त्रम्

प्रथमं पटलम्

श्रीकृष्णाय नमः

श्रीपार्वत्युवाच

देवदेव महादेव करुणार्णव शंकर।
हर शम्भो शिव मृड़ पशुनाथ नमोऽस्तुते॥१॥
नमस्ते सर्वदेवानां दैवताय परात्मने।
पिनाकिने नमस्तुभ्यं गङ्गाधर नमोऽस्तुते॥२॥
भूतिभूषितदेहाय भक्तानामभयंकर।
कर्पूरविशदाभाय त्रिनेत्राय नमोऽस्तुते॥३॥
नमश्चन्द्रकलाधारिन् नीलकण्ठ महेश्वर।
महाभुजङ्गमाबद्धजटाजूट शिवप्रद॥४॥
अकिञ्चनाय शुद्धाय ह्यणिमाद्यष्टसिद्धये।
संसारवार्धितरणे प्लवभूतपदांम्बुज॥५॥
योगीश्वराय योगाय योगिनां पतये नमः।
योगिहृत्पद्ममार्तण्ड योगानन्दमयाय ते॥६॥
सृष्ट्यर्थं ब्रह्मरूपोऽसि पालनार्थं स्वयं हरिः।
रुद्रोऽस्यंताय देवेश नमस्त्रितयरूपिणे॥७॥
नमो वेदान्तवेद्याय नित्यानन्दमयाय ते।
निरञ्जनाय शुद्धाय सच्चिदानन्दचेतसे॥८॥
निर्मलाय निराशाय निरीशायाखिलात्मने।
अणोरणीयसे तुभ्यं महतोऽपि महीयसे॥९॥
दिक्कालाद्यनवच्छिन्ननित्यचिन्मात्रमूर्त्तये।
नमस्ते सर्वलोकैकपालकायार्त्तिनाशिने॥१०॥
ब्रह्मा त्वं हरिरुद्रोऽसि हव्यवाट् हुतमित्युत।
मन्त्रत्त्विक् देवताचासि यज्ञस्त्वं तत्फलात्मकः॥११॥
दयां कुरु महादेव प्रसीद परमेश्वर।
त्वयि प्रसन्ने लोकानां फलन्ते कामपादपाः॥१२॥

Nijanand App

श्रीमाहेश्वरतन्त्रम्

प्रथम अध्याय

श्रीकृष्ण को नमस्कार

श्री पार्वतीजी ने कहा—

1. शम्भु, शिव, पशुपतिनाथ, करुणा के सागर, देवाधिदेव, महादेव, शंकर का मैं नमन करती हूं।

2. समस्त देवों के देव, श्री गंगाजी को अपने सिर पर धारण करने वाले पिनाकी शिव को मैं नमस्कार करती हूं।

3. भक्तों को निर्भय करने वाले, श्मशान की भस्म से भूषित शरीर वाले तथा कर्पूर सदृश आभा मण्डल से सुशोभित, तीन नेत्रों वाले शिव को मैं नमन करती हूं।

4. चन्द्रमा की कला को धारण करने वाले, विषपान के कारण नीले कण्ठ वाले, महाभुजंगों से मण्डित जटा को धारण करने वाले, कल्याण प्रदाता महेश्वर को मैं नमस्कार करती हूं।

5. अणिमा, गरिमा आदि आठों सिद्धियों की प्राप्ति के लिए, अकिंचन तथा शुद्धता के लिए, भवसागर को पार करने में जिन महादेव के चरण-कमल नौका के सदृश हैं (उनको नमस्कार करती हूं)।

6. योगीश्वर, योगीपति, योगीजनों के हृदय कमल के लिए सूर्य रूप (जिस प्रकार सूर्य के प्रकाश से कमल खिल जाते हैं उसी प्रकार शिव के ध्यान से योगीजनों के हृदय प्रसन्न हो जाते हैं), योग से प्राप्त होने वाले आनन्द रूप शिव को नमस्कार करती हूं।

7. संसार की सृष्टि के लिए ब्रह्मा, संसार का भरण-पोषण करने में विष्णु तथा अन्त करने में रुद्र के तीन रूपों से मण्डित देवाधिदेव महादेव को मैं नमस्कार करती हूं।

8. वेद-वेदान्त के ज्ञाता, नित्य आनन्द मय, सत्, चित्, आनन्द समन्वित, शुद्ध, निरंजन, शिव को नमस्कार करती हूं।

9. अपेक्षाओं, आशाओं से परे समस्त जगत् के एकमात्र स्वामी, सूक्ष्म से सूक्ष्मतर तथा स्थूल से स्थूलतर अर्थात् सूक्ष्म या स्थूल सभी में समान भाव से विद्यमान, कालुष्य (कलुषता) रहित, हे महादेव! तुमको मैं नमस्कार करती हूं।

10. दिशा, काल इत्यादि से परे, नित्य ही चैतन्य रूप वाले, सभी लोकों के एकमात्र पालनकर्ता तथा सभी के कष्टों का नाश करने वाले शिव को मैं नमस्कार करती हूं।

11. हे देव! तुम्ही यज्ञ सम्पादनकर्ता ब्रह्मा, हव्यवाहन अग्नि, आहुति (पदार्थ), मन्त्र-ऋचाएं, यज्ञस्थल पर आह्वानित देवता, यज्ञ हो तथा उस यज्ञ-कर्म से प्राप्त होने वाले फल हो।

12. हे महादेव, दया करो। हे परमेश्वर, प्रसन्न हो। क्योंकि तुम्हारे प्रसन्न होने पर ही लोगों की कामना रूपी वृक्ष फलते हैं अर्थात् जन की कामनाएं पूर्ण होती हैं।

Nijanand App

त्वयाहं दीननाथेन शरीरार्द्धे निरूपिता।
कृतकृत्यास्मि तेनाहं किमन्यदवशेषितम्॥१३॥
तस्मात्संप्रष्टुमिच्छामि रहस्यं किञ्चिदुत्तमम्।
यद्यहं ते प्रियतमा ब्रूहि नाथ! तदाखिलम्॥१४॥
त्वया प्रोक्तानि तन्त्राणि चतुःषष्टिमितानि भोः।
न तेषु तत्वविज्ञानं प्रकटीकृतमीश्वर॥१५॥
तत्प्रकाशय देवेश प्रवक्तुं यदि मन्यसे॥१६॥

शिव उवाच

नैतज्ज्ञानं वरारोहे वक्तुं योग्यं वरानने।
राज्यं देयं शिरो देयं देयं सर्वस्वमप्युत।
न देयं ब्रह्मविज्ञानं सत्यं सत्यं शुचिस्मिते॥१७॥
ब्रह्महत्यासहस्त्राणि कृत्वा यत्पापमाप्नुयात्।
तत्पापं लभते देवि परमार्थप्रकाशनात्॥१८॥
बालहत्यासहस्त्राणि स्त्रीहत्यायुतमेव च।
गवां लक्षबधात्पापं तथा विश्वासघाततः॥१९॥
मित्रद्रोहाद्गुरुद्रोहात्साधुद्रोहाच्च यद्भवेत्।
तत्पापं लभते देवि परमार्थप्रकाशनात्॥२०॥
तस्मात्तु गोपयेद्विद्वान् जननीजारगर्भवत्।
भक्तासि त्वं प्रियतमा तस्मात्तेऽहं वदामि भोः॥२१॥
ज्ञानं तत्तु विजानीयात् येनात्मा भासते स्फुटः।
अज्ञानेनावृतो नित्यं मोहरूपेण नित्यदा॥२२॥
तावत्संसारभावः स्याद्यावदज्ञानमुल्लसेत्।
तावन्मोहो भ्रमस्तावत्तावदेव भयं भवेत्॥२३॥
अहं ममेत्यसद्भावो विस्मृतिर्दुःखदर्शनम्।
नानाधर्मानुरागश्च कर्मणां च फलैषणा॥२४॥
बन्धमोक्षविभागश्च जडदेहाद्यहंकृतिः।
तावदीश्वरभावः स्यात्पाषाणप्रतिमादिषु॥२५॥
जलादौ तीर्थभावश्च यावदज्ञानमुल्लसेत्।
उदिते तु परिज्ञाने नाऽयं लोको न कल्पना॥२६॥
न त्वं नाहं न वै किञ्चिन्निवृत्ते मोहविभ्रमे।
स्वयमेवात्मनात्मानमात्मन्यात्माभिपद्यते॥२७॥

Nijanand App

13. हे दीनों पर दया करने वाले शिव! आपने मुझको मात्र अपने अर्धांग में ही धारण किया है, उससे ही मैं धन्य-धन्य हो गई हूं। यदि सम्पूर्ण रूप से धारण करते तो उसके विषय में तो कुछ कहा ही नहीं जा सकता था।

14. इसी कारण मैं आपसे कुछ उत्तम रहस्य पूछना चाहती हूं। हे नाथ! यदि मैं आपकी प्रियतमा (परमप्रिया) हूं, तो आप वह सम्पूर्ण रहस्य मुझे बताएं।

15. हे देव! आपने जिन चौंसठ (64) तन्त्रों के विषय में बताया था, उन तन्त्रों का क्या तत्व विज्ञान है, इस विषय में, हे ईश्वर! आपने नहीं उपदिष्ट किया था।

16. हे देवेश! यदि आप उन तन्त्रों का प्रकाशन करना उचित मानते हैं, तो उनके विषय में कहिए।

शिव ने कहा—

17. हे सुमुखि। यह (ब्रह्म ज्ञान) कहने योग्य नहीं है। राज्य देने पर, शिर देने पर (जीवन देने पर) अथवा अपना सर्वस्व दे देने पर भी इस ब्रह्म ज्ञान का सत्य (रहस्य) दिया नहीं जा सकता। हे पवित्र मुस्कान वाली पार्वती! मैं तुमसे सत्य कह रहा हूं।

18. हजारों ब्रह्म हत्याओं को करने से जो पाप मनुष्य को लगता है, वही पाप इस रहस्य को किसी दूसरे से कहने पर लगता है।

19-20. हजार बाल हत्याओं, दस हजार स्त्रियों की हत्या तथा लाख गायों का वध करने से, विश्वासघात करने से, मित्र के साथ छल करने से अथवा गुरु या साधु (सज्जन पुरुष) से छल करने से जो पाप लगता है, वही इस तत्व ज्ञान को दूसरे से कहने पर लगता है।

21. इसी कारण विद्वान् इस रहस्य को उसी प्रकार अपने अन्तःकरण में छिपाए रहते हैं जैसे माता अपने अवैध गर्भ को छिपाए रहती है, परन्तु तुम भक्ति भाव रखने वाली हो तथा मेरी प्रियतमा हो, इस कारण तुमसे मैं इस तत्व ज्ञान के रहस्य को कहता हूं।

22. यह तत्व ज्ञान जानने योग्य है जिससे मोह रूपी अज्ञान से घिरी हुई नित्य आत्मा स्फुट रूप से प्रकाशित होती है अर्थात् मनुष्य को आत्म-साक्षात्कार होता है।

23. तभी तक सांसारिक भाव मनुष्य के मन में रहता है तथा मोह, भ्रम, भय आदि रहते हैं, जब तक वह अज्ञान के वश में होता है।

24. अज्ञान के वशीभूत होकर मनुष्य को "यह मेरा है। यह वस्तु मेरी है। यह मैं हूं", इस प्रकार का (अहम्) भाव होता है। साथ ही विस्मरण, दुःख, विभिन्न सांसारिक वस्तुओं के प्रति आसक्ति तथा अपने कर्मों के फलों की निरन्तर अभिलाषा रहती है।

25. जीव जब तक अज्ञान के वश में रहता है तभी तक वह अपनी आत्मा को सांसारिकता में बंधा हुआ, कभी मुक्त हुआ मानता है। वस्तुतः पुरुष (आत्मा) तो तटस्थ है, प्रकृति (अज्ञान) अपनी माया से स्वयं बंधती है, स्वयं मुक्त होती है। अज्ञानी ही अपनी देह को आत्मा समझता है। वही पत्थर की प्रतिमाओं में ईश्वर (परमेश्वर) को देखता है।

26. जब तक अज्ञान रहता है, तभी तक जल, तेज, अग्नि, पृथ्वी, आकाश महाभूतों में जीव अन्तर देखता है, परन्तु ज्ञान-प्राप्ति होने पर न तो पृथ्वी आदि लोकों का भेद रहता है, न ही उनकी कल्पना शेष रहती है।

27. मोह (अज्ञान) के नष्ट हो जाने पर जीव, तुम, मैं, इन भावनाओं से सर्वथा परे होकर स्वयं ही समस्त सृष्टि को आत्म-भाव से देखता है।

Nijanand App

तदा सुखसमुद्रस्य स्वरूपनिरतो भवेत्।
लयश्चात्यन्तिको देवि कदाचिद्वा भविष्यति॥२८॥
तदेवात्माक्षरः साक्षादेक एवावशिष्यते।
स शिवो विष्णुरेवेन्द्रः स एवावशिष्यते।
स शिवो विष्णुरेवेन्द्रः स एवामरदानवाः॥२९॥
स एव यक्षरक्षांसि सिद्धचारणकिन्नराः।
सनकाद्याश्च मुनयो ब्रह्मपुत्राश्च मानसाः॥३०॥
पशवः पक्षिणश्चैव पर्वतास्तृणवीरुधः।
स एवेदं जगत्सर्वं स्थूलसूक्ष्ममयं च यत्॥३१॥
अज्ञानाद्रजतं भाति शुक्तिकायां यथा प्रिये।
ज्ञानात्तद्रजतं देवि तस्यामेव विलीयते॥३२॥
तथाक्षरे परे ब्रह्मण्याभाति सकलं जगत्।
मोहेन केनचिद्देवि मोहनाशे तु शाङ्करि॥३३॥
अवशिष्यते परं ब्रह्म साक्षादक्षरमव्ययम्।
न त्वं नाहं तदा विष्णुर्लक्ष्मीर्ब्रह्मासरस्वती॥३४॥
नेश्वरो न शिवश्चापि यथापूर्वं भविष्यति।
मृदुद्भवानि कार्याणि मृच्छेशाणि यथाप्रिये॥३५॥
तथैवाखिललोकोयं ब्रह्मभूतो भविष्यति।
यथा वायुवशाद्देवि समुद्रे तरलोर्मयः।
प्रादुर्भवन्ति देवेशि तस्मिन् शान्ते तु पूर्ववत्॥३६॥
तथा विस्मारितज्ञानान्मोहाद्भ्रान्तं चराचरम्।
चतुर्विंशतितत्वोत्थं सत्यमित्येव रूपितम्॥३७॥
तत्र जाता इमे लोकाश्चतुर्दश महेश्वरि।
अधः सप्त तथा चोर्ध्वमेवं संख्याश्चतुर्दश॥३८॥
अतलं वितलं चैवं सुतलं च तलातलम्।
रसातलं च पातालं भूर्भुवः स्वस्तथोपरि॥३९॥
महर्जनस्तप इति सत्यं वैकुण्ठ इत्यपि।
शिवलोको देवलोकस्तथाऽवान्तर्गता अपि॥४०॥
मोहशान्तौ भविष्यन्ति सर्वे ब्रह्ममया इमे।
यावत्सर्पमयी भ्रान्ती रज्जौ तावद्भयं प्रिये॥४१॥
रज्जुत्त्वेन तु विज्ञाता भयं नोद्वहते पुनः।
अप्रपञ्चे प्रपञ्चोऽयं मोहादुन्मीलति स्फुटः॥४२॥

Nijanand App

28. तब (ज्ञान की प्राप्ति होने पर) सुख रूपी समुद्र का स्वरूप प्रकट होता है अर्थात् अध्येता को अक्षय असीम सुख (परमानन्द) की प्राप्ति होती है। हे पार्वती! कभी-कभी तो परमात्मा में सम्पूर्ण रूप से विलय भी हो जाता है।

29. उस समय आत्मा तथा अक्षर ब्रह्म एक रूप को प्राप्त हो जाते हैं। वही (एकात्मक रूप) शिव, विष्णु, देव, दानव इन विविध रूपों वाला होता है।

30. वही (अक्षर ब्रह्म का रूप) यक्ष, राक्षस, सिद्ध, चारण, किन्नर, सनकादि ऋषि तथा ब्रह्मा के मानस पुत्रों के रूप में विद्यमान रहता है।

31. समस्त पशु, पक्षी, पर्वत, घास, लताएं, जो कुछ भी स्थूल या सूक्ष्म जगत का रूप दिखाई पड़ता है, वह सब इसी अक्षर ब्रह्म का ही रूप है।

32. अज्ञान के वशीभूत होकर प्राणी को शुक्तिका (सीप) में रजत (चांदी) की भ्रान्ति हो जाती है, परन्तु ज्ञान से वह शुक्तिका में रजत की भ्रान्ति को जान लेता है।

33. तब (ज्ञानोदय होने पर) उस अक्षर ब्रह्म में सम्पूर्ण जगत् प्रतिभासित होता है। हे देवि! मोह रहते ऐसा सम्भव नहीं है, अपितु मोह नाश होने पर ही ऐसा सम्भव होता हैं।

34. हे पार्वती! आत्म-साक्षात्कार होने पर एकमात्र अक्षर ब्रह्म ही शेष रहता है। तुम, मैं, विष्णु, लक्ष्मी, ब्रह्मा या सरस्वती नहीं रहते।

35. हे प्रिय पार्वती! उस समय पहले की तरह न ईश्वर और न शिव रहते हैं। जिस प्रकार मिट्टी (कारण) से उत्पन्न होने वाली वस्तुएं (कार्य) टूटने पर मिट्टी ही हो जाती हैं।

36. हे देवि! उसी प्रकार से समस्त लोक ब्रह्ममय हो जाते हैं। जिस प्रकार वायु के कारण समुद्र में सब कुछ तरल हो जाता है और उसके पूर्ववत् शान्त होने पर पुनः समस्त लोक प्रकट हो जाता है।

37. उस अक्षर ब्रह्म में पुनः शान्ति उत्पन्न होती है तथा सृष्टि निर्माण के मोह से सर्वत्र फैले ज्ञान के प्रकाश में चराचर जगत् पुनः प्रकाशित होता है। (पुनः सृष्टि प्रक्रिया प्रारम्भ होती है) और सत्य के प्रतिभास वाले 24 तत्व प्रकट हो जाते हैं।

38. हे महेश्वरी! इन तत्वों से पुनः 14 लोकों का निर्माण होता है। सात ऊर्ध्व लोक तथा सात अधो लोकों के कारण चतुर्दश (14) लोक कहे जाते हैं।

39-40. अतल, वितल, सुतल, तलातल, महीतल, रसातल तथा पाताल यह सात अधो लोक तथा भूः, भुवः, स्वः, महः, जनः, तपः, सत (बैकुण्ठ) इन ऊर्ध्व लोकों का निर्माण होता है। शिव लोक, देव लोक इन ऊर्ध्व लोकों के अन्तर्गत ही आ जाते हैं।

41. मोह (अज्ञान) के नाश हो जाने पर ये समस्त चराचर लोक उसी प्रकार ब्रह्ममय हो जाते हैं, जिस प्रकार रज्जु (रस्सी) को सांप समझने वाले की भ्रान्ति दूर होने पर उसका भय नष्ट हो जाता है।

42. जिस प्रकार रस्सी में सर्प की भ्रान्ति दूर हो जाने पर पुनः उस रस्सी से उस व्यक्ति को भय नहीं लगता है, उसी प्रकार जीव को एक बार ब्रह्ममयता का ज्ञान हो जाने पर पुनः वह मोह से प्रपंच (मिथ्या रूप अज्ञान के आडम्बर) को अप्रपंच (सत्य) नहीं समझता है।

Nijanand App

तावद्भयप्रदोज्ञानं यावन्मोहं न विन्दते।
द्विधा त्रिधा पञ्चधा च चतुर्विंशतिधा पुनः॥४३॥
एकधा च पुनस्त्रैधा बहुधा च पुनः स्वयम्।
विस्तीर्णः स तु मोहोऽयं आवृत्य परमेश्वरम्॥४४॥
कालमायांशयोगेन ब्रह्माण्डमसृजत्प्रभुः।
कोटिब्रह्माण्डलक्षाणां स निर्माताक्षरो विभुः॥४५॥
न तस्येच्छा न कर्तव्या निर्गुणः प्रकृतेः परः।
तथापि बालवत् क्रीडन् कोटिब्रह्माण्डसंहतीः॥४६॥
सृजते संहरत्येषः कटाक्षाक्षेपमात्रतः।
चिन्मात्रः परमः शुद्धः कूटस्थः पुरुषः परः॥४७॥
विराट् तस्य वपुः स्थूलं पञ्चधा तु समुद्भवम्।
पातालं पादमूलेऽस्य पार्ष्णिदिशे रसातलम्॥४८॥
गुल्फे महातलं तस्य जङ्घयोश्च तलातलम्।
जंघयोपरि सुतलं वितलं कट्युत्तरं प्रिये॥४९॥
कटिमध्येऽतलमस्ति मर्त्यलोकोदरे तथा
पार्श्वदेशे भुवर्लोकस्तदूर्ध्वं च स्वरादयः।
सत्यलोको ब्रह्मरन्ध्रे बाह्वोरिन्द्रादयः सुराः॥५०॥
दिशः कर्णप्रदेशस्य शब्दस्तच्छ्रोत्रमध्यगः।
नासयोरस्य नासत्यौ मुखे वह्निः समाश्रितः॥५१॥
सूर्योऽस्य चक्षुषि गतः पक्ष्मणि ह्यहनीशितुः।
दंष्ट्रायां यमस्तस्य हास्ये माया महेश्वरि॥५२॥
उत्तरोष्ठे स्थिता लज्जा लोभः स्यादधरोष्ठके।
स्तनयोरस्य वै धर्मः पृष्ठेऽधर्मः समाश्रितः॥५३॥
कुक्षिष्वस्य समुद्रा वै पर्वता ह्यस्थिसन्धिषु।
आपगा नाडिदेशस्था वृक्षा रोमपथि स्थितः॥५४॥
मेघाः केशेषु हृदये चन्द्रमाः परिकीर्तितः।
इदं स्थूलशरीरं तु ब्रह्मणः परमात्मनः॥५५॥
इयत्तयाऽपरिच्छेद्यम् अन्तपारविवर्जितम्।
लिङ्गं नारायणस्तस्य ह्यक्षरस्य चिदात्मनः॥५६॥
हिरण्यगर्भं जगदीशितारं नारायणं यं प्रवदन्ति सन्तः।
सर्वस्य धातारमनन्तमाद्यं प्रधानपुंसोरपि हेतुमीशम्॥५७॥

Nijanand App

43. तभी तक भय से उत्पन्न ज्ञान रहता है जब तक मोह नहीं मिटता है। मोह (अज्ञान प्रकृति) दो, तीन, पांच तथा चौबीस प्रकारों में विभक्त होती है।

44. प्रकृति अपने एक रूप से तीन रूपों (सत्व, रज, तम) फिर महद, अहंकार, तन्मात्राएं, दस इन्द्रियां, पंच महाभूत, मन ये 24 प्रकारों वाली होकर परमेश्वर (पुरुष) को अज्ञान अन्धकार से ढक लेती है (ढका हुआ जानती है)।

45. काल माया के अंश योग से सर्वेश्वर स्वामी अक्षर ब्रह्म लाखों, करोड़ों ब्रह्माण्डो का सृजन करते हैं।

46. वह अक्षर ब्रह्म न तो किसी इच्छा तथा न ही किसी कर्तव्य के वशीभूत होकर ब्रह्माण्ड रचना करते हैं क्योंकि लोभ, मोह, आदि गुणों से युक्त माया से वे सर्वथा भिन्न हैं, अपितु जैसे कोई बालक खेलने के लिए खिलौने का निर्माण करता है उसी प्रकार अक्षर ब्रह्म करोड़ों ब्रह्माण्ड की सृष्टि करते हैं।

47. वह चैतन्य रूप, परम शुद्ध, कूटस्थ अक्षर ब्रह्म अपने द्वारा निर्मित ब्रह्माण्डों को पलक झपकने मात्र के समय में नष्ट कर देते हैं।

48. उस अक्षर ब्रह्म का विराट् शरीर पांच रूपों में उत्पन्न होता है। पाद मूल में पाताल तथा पार्ष्णि (पिंडली) में रसातल उत्पन्न होता है।

49. घुटनों में महातल, दोनों जंघाओं के ऊपर सुतल, कमर से ऊपर वितल, कटि मध्य में अतल, उदर में मृत्यु लोक, पीठ में भुर्वलोक और उससे ऊपर स्वर्गादि लोक उत्पन्न होते हैं। वक्षस्थल में ज्योति लोक, कण्ठ में महर्लोक उत्पन्न होते हैं।

50. मुख मण्डल में जनलोक, माथे में तपोलोक, ब्रह्मरन्ध्र में सत्यलोक तथा बाहुओं में इन्द्रादि सुरगण उत्पन्न होते हैं।

51. कर्ण प्रदेश में दिशाएं तथा शब्द एवं कर्ण के मध्य भाग हुए इस ब्रह्म की नासिका रन्ध्र में अश्विनीकुमार, मुख अग्नि से युक्त हुआ।

52. नेत्रों में सूर्य तथा पलकों में सूर्य की रश्मियां विराजित हुईं। दांतों मे यम, हास्य में माया स्थित हुई।

53. उत्तरोष्ठ (ऊपर के होंठ) में लज्जा तथा अधरोष्ठ (नीचे के होंठ) में लोभ स्थित हुए। स्तनों में धर्म तथा पीठ में अधर्म समाश्रित हुआ।

54. पेट में समुद्र, अस्थियों के जोड़ों में पर्वत, नाभि प्रदेश में वायु तथा रोमों में वृक्ष स्थित हुए।

55. केशों में मेघ, हृदय में चन्द्रमा कहे गए। इस प्रकार से श्रेष्ठ ब्रह्म का स्थूल शरीर उत्पन्न हुआ।

56. आदि अन्त से परे सब में वर्तमान चैतन्य रूप अक्षर ब्रह्म का नारायण नाम हुआ।

57. जिस नारायण को सन्त जन हिरण्यगर्भ, जगदीश कहकर गुणगान करते हैं, वह सभी चराचर को धारण करने वाला, अनन्त, प्रथम प्रधान पुरुष जो समस्त सृष्टि का हेतु (कारण) तथा स्वामी है।

Nijanand App

तं सर्वकालावयवं पुराणं परात्परं योगिभिरीड्यपादम्।
ब्रह्मेशविष्णुप्रमुखैकहेतुं यतः प्रवृत्तो निगमस्य पन्थाः॥५८॥
तं देवदेवं जगतां शरण्यं नारायणं यस्य वदन्ति लिङ्गम्।
यावन्न लिङ्गं प्रलयं प्रयाति स्थूलं वपुश्चावपि न शान्तिमेति॥५९॥
ततः परं कारणमेव तस्य वपुः परस्यात्मन एव मोहः।
यावद्विमोहः प्रशमं न याति न लिङ्गमुत्सीदति कार्यबद्धम्॥६०॥
न कारणं तावदुपैति शान्तिं चराचरस्यापि च बीजभूतम्।
यावन्महाकाणमंबिके तत् न शान्तिमायाति च बीजबीजम्॥६१॥
गुह्याद्गुह्यतरं शास्त्रमिदमुक्तं तवानघे।
न कस्याप्यग्रतो वाच्यं सत्यं सत्यं प्रियंवदे॥६२॥
न पद्मायै हरिः प्राह प्रार्थितोऽपि पुनः पुनः।
तन्मयात्र तव स्नेहात्प्रकटीकृतमुच्चकैः॥६३॥
न गुह्यायापि पुत्राय गजराजाय नन्दिने।
सुगोपितमिदं भद्रे तव स्नेहादुदीरितम्॥६४॥
तस्याद्गोप्यतरं भद्रे वराङ्गमिव सर्वतः।
इतीदं ते समाख्यातं किमन्यत्प्रष्टुमिच्छसि॥६५॥
इति श्रीपञ्चरात्रे माहेश्वरतन्त्रे ज्ञानखण्डे शिव-पार्वतीसंवादे प्रथमं पटलम् ॥१॥

द्वितीयं पटलम्

श्रीपार्वत्युवाच

भगवन्देवदेवेश लोकनाथ जगत्प्रभो।
धन्यास्म्यनुगृहीतास्मि सफलं जीवितं मम॥१॥
वाक्यपीयूषवर्षेण शीतलीकृतमानसा।
न जानामि परं श्रेयस्तत्वज्ञानकथादृते॥२॥
किमायुषा च दीर्घेण पाषाणस्येव दुर्मतेः।
क्षणं वै यस्यनो लग्नं चेतो वा तत्वचिन्तने॥३॥
यज्ञदानतपस्तीर्थव्रतानि नियमा यमाः।
न तुलामभिगच्छन्ति स्वात्मतत्वैकचिन्तया॥४॥
आत्मतत्वैकशुद्ध्यर्था (र्थं) यज्ञादीनामनुष्ठितिः।
शुद्धे मनसि तत्वस्य स्फुरणं भवति प्रिय॥५॥
तदेव यदि वा लब्धमनायासेन कुत्रचित्।
दैवाद्वा गुरुतोपाद्वा साधनैर्वापि शंकर॥६॥

Nijanand App

58. वह सभी कालों में विद्यमान, पुरातन, परात्पर, ब्रह्म योगी जनों के द्वारा स्तुति किए जाते हैं। ब्रह्मा, विष्णु का जो हेतु है उसी से निगम (मोक्ष) का पथ प्रशस्त होता है। अर्थात् उसी की शरणागति से जीव को मोक्ष प्राप्ति होती है।

59. जगत् के शरण देव को जिसके चिह्न को नारायण कहते हैं, जब तक यह (लिंग) प्रलय को नहीं पहुंचता है तब तक स्थूल शरीर भी शान्त नहीं होता।

60. उससे परे उनका कारण शरीर ही है, वही मोह है। जब तक विमोह शान्त नहीं होता तब तक कार्य से बंधा लिंग (शरीर) भी नष्ट नहीं होता।

61. कारण जो चराचर जगत बीज है तब तक शान्त नहीं होता जब तक महाकारण नहीं शान्त होता। बीज का बीज भी है। जब तक यह शान्त नहीं हो जाता तब तक महाकारण बना रहा है।

62. हे अनघे (पार्वती)! तुम्हारे लिए हमने गुह्य से गुह्यतर इस शास्त्र का कथन किया है। हे प्रियंवरे! यह किसी को कहने योग्य नहीं है। मेरा यह वचन सत्य है।

63. लक्ष्मी की प्रार्थना पर भी विष्णु (हरि) ने इसको नहीं कहा। उसी को मैंने तुम्हारे स्नेह से उच्च स्वर से कह दिया है।

64. इस ब्रह्मज्ञान के रहस्य को न तो मैंने गुप्तचर को, न पुत्र, न गजराज (ऐरावत), न ही नन्दी को बताया हैं। उस भली प्रकार छिपाए गए रहस्य को मैंने स्नेहवश, हे कल्याणकारिणी! तुम्हारे लिए कहा है।

65. कुलीन स्त्री जिस प्रकार अपने अंगों का गोपन (छिपाती) करती है, उसी प्रकार यह रहस्य हर प्रकार से छिपाने योग्य है। इस रहस्य को तो मैंने तुम्हारे लिए कह दिया है। यदि कुछ और पूछने की इच्छा हो तो प्रश्न करो (पूछो)।

शिव-पार्वती के संवाद के पञ्चरात्र में माहेश्वरतन्त्र के ज्ञान खण्ड का प्रथम पटल समाप्त हुआ।

दूसरा अध्याय

श्रीपार्वती ने कहा—

1. हे देवाधिदेव, लोकनाथ, समस्त संसार के स्वामी! मैं आपके वचनों से धन्य हुई, अनुग्रहीत हुई। मेरा जीवन धन्य हो गया।

2. हे स्वामी! आपके वाक्य रूपी अमृत की वर्षा से मेरा मन शीतल हो गया है। परम् कल्याण को प्रदान करने वाली तत्व ज्ञान की कथा के अतिरिक्त अब मैं कुछ नहीं जानती हूं।

3. पत्थर के समान दुर्गति वाले व्यक्ति की दीर्घ आयु से कोई लाभ नहीं है। वस्तुतः जिसका चित्त क्षणमात्र को भी तत्व चिन्तन में लग गया उसी का जन्म सार्थक है।

4. आत्मतत्व ज्ञान की यज्ञ, दान, तप, तीर्थ, व्रत, नियम, यम आदि से तुलना करने पर आत्मज्ञान यज्ञादि से अतुलनीय ही ठहरता है (सिद्ध होता है)।

5. आत्मतत्व की शुद्धि के लिए ही यज्ञादि का अनुष्ठान किया जाता है। हे प्रिय! यह तत्व ज्ञान शुद्ध मन में ही स्फुरित होता है।

6. फिर भी यह तत्व ज्ञान कभी-कभी दैव वश, गुरु की प्रसन्नता से अथवा कल्याणकारी (आनन्ददायक) साधनों से अनायास ही प्राप्त हो जाता है।

Nijanand App

किन्तु तस्यावशिष्टं वा साधनं स्वात्मदं परं।
तस्मान्महत्तरमिदं सर्वतस्तत्वचिन्तनम्॥७॥
श्रुतं मया महेशान पुनर्ब्रूहि यथातथम्।
प्रष्टव्यं बहुधा भाति तथाप्येकं वदेश्वर॥८॥
क्रमयोगेन तच्चापि पुनः पृच्छे कृपानिधे।
पद्मायै हरिणा नोक्तं यद्रहस्यं महाद्भुतम्।
तदत्र संशयो जातो तद्भवान् छेत्तुमर्हति॥९॥
या लक्ष्मीः परमा शक्तिः नित्यं तत्सहचारिणी।
तत्प्राणबल्लभा साध्वी किं तया पृष्टमुत्तमम्॥१०॥
किं रहस्यं किमध्यात्म्यं यन्नोक्तं हरिणा स्वयम्।
तदत्र ब्रूहि भगवन् प्रवक्तुं यदि मन्यसे॥११॥
न मे त्वत्तः परं किञ्चित् प्राणादप्यधिको भवान्।
तथाप्यहं तवैवास्मि यन्मेर्द्धं वपुराहितम्॥१२॥
न त्वयां तद्रहः कार्यं तेन गुप्तमिति प्रभो।
इत्युक्त्वा शिवपादाब्जप्रणताभूत्पुनः पुनः॥१३॥

शिव उवाच

अहो धन्यासि धन्यासि धन्यासि भुवनत्रये।
न त्वया सदृशीं पश्येत्प्रेयसीं प्राणवल्लभाम्॥१४॥
त्वद्वागमृततृप्तोहं प्रजल्पामि शृणुष्व तत्।
एकदा खलु वैकुण्ठे विष्णुरेकान्तसंस्थितः॥१५॥
सन्नियम्येन्द्रियगणं मनसा बुद्धिसारथिः।
किञ्चिद्दध्यौ महातेजाः प्रमोदभरनिर्वृतः॥१६॥
गलद्बाष्पांबुपूर्णाक्षः पुलकाङ्कितविग्रहः।
स्तिमितोद इवाम्भोधिः स्मृत्वा लीलारसाम्बुधिम्॥१७॥
प्राणेन्द्रियमनश्चेष्टा निमग्ना ध्यानवर्त्मनि।
अन्तःप्रमोदभरितो बहिः सम्वेदनाक्षमः॥१८॥
केवलेन शरीरेण स्थित इत्यद्भुतं च यत्।
क्रीडन्ती सखिभिः सार्द्धं तत्राभूद्भार्गवी हि सा॥१९॥
ध्यानवर्त्मनि संलीनप्राणेन्द्रियमनोमतिम्।
प्रध्वस्तबाह्यविज्ञानं दृष्ट्वा विस्मितमानसा॥२०॥
कोऽसौ त्रिलोकगुरुणा ध्यायते स्थिरचेतसा।
न चास्मादपरं लोके ध्येयं पश्यामि किञ्चन॥२१॥

Nijanand App

7. अन्य श्रेयस्कर आत्मचिन्तन के साधन से भी महत्वपूर्ण तत्वचिन्तन (प्रकृति पुरुषादि) है।

8. ईश्वर (स्वामी) एक होते हुए जो बहुत रूपों में कहा (पूछा) जाता है। हे कृपानिधि! उसी को क्रम से मैं पुनः पूछना चाहती हूं।

9. जिस तत्व ज्ञान के महान् अद्‌भुत रहस्य को विष्णु ने लक्ष्मी को नहीं बताया। उसी के विषय में मुझे संशय उत्पन्न हुआ है जिसको दूर करने में आप सक्षम हैं।

10. हे प्रभु! जो लक्ष्मी विष्णु की नित्य सहचारिणी तथा उनकी परमशक्ति है, उस प्राणप्रिय साध्वी लक्ष्मी ने अपने पति विष्णु से कौन-सा उत्तम रहस्य पूछा था?

11. वह कौन-सा रहस्य था, कौन अध्यात्म था जिसे हरि (विष्णु) ने नहीं कहा? यदि उस विषय को आप कहने योग्य मानें, तो उसको बताएं।

12. हे प्रभु! आपसे अधिक प्राणप्रिय मुझे अन्य कोई नहीं है। मैं आपकी ही हूं क्योंकि मैं आपकी अर्धांगिनी हूं।

13. इसलिए इस रहस्य को आपको गुप्त न रखना चाहिए। यह कहकर पार्वती ने शिव के चरणों में बारम्बार प्रणाम किया।

शिव बोले—

14. हे पार्वती! तुम तीनों लोकों में धन्य-धन्य हो। तुम्हारे समान कोई भी अन्य प्रियंकरी तथा प्राणप्रिया नहीं है।

15. तुम्हारी वाणी रूपी अमृत का पान करके तृप्त हुआ मैं उस तत्व (ज्ञान) के विषय में कहता हूं, तुम उसे सुनो! एक बार बैकुण्ठ में विष्णु एकान्तवास कर रहे थे।

16. इन्द्रियों को रोककर बुद्धि को सारथी बनाकर महातेजस्वी विष्णुजी ने सुख-भाव से शान्त होकर कुछ ध्यान किया।

17-19. गिरते हुए आंसुओं से पूर्ण आंखों वाले, पुलकित शरीर से आनन्द लीला के समुद्र का मानो स्मरण करते हुए शान्त समुद्र की तरह अन्तःकरण में आनन्द प्रदान करने वाले तथा बाह्य जगत् की गतिविधियों से अलग करने वाले ध्यान में प्राण, इन्द्रियों, मन तथा चेष्टाओं से निमग्न हुए। केवल शरीर से स्थित होना यह अत्यन्त अद्‌भुत है। उस समय भार्गवी सखियों के साथ क्रीड़ा करती हुई वहां स्थित थीं।

20. ध्यान के मार्ग में प्राण, इन्द्रिय, मन और बुद्धि को लीन करके बाह्य ज्ञान को ध्वस्त करके बैठे विष्णु को देखकर विस्मित मन होकर कहा—

21. स्थिर चित्त से तीनों लोकों के गुरु विष्णु द्वारा वह कौन-सा व्यक्ति ध्यान किया जा रहा है? मैं उनसे भिन्न किसी दूसरे को संसार में ध्येय नहीं समझती।

Nijanand App

ब्रह्मणो वापि रुद्रस्य कारणं दैवतं च यः।
यस्यावतारचरितं गायन्ते नारदादयः॥२२॥
यत्पदं प्राप्तुमिच्छन्तो वानप्रस्थं यतिव्रतम्।
चरन्ति ब्राह्मणाः शुद्धा धृतविद्यातपोवृत्ताः॥२३॥
न यत्समोन्यो लोकेस्मिन् ह्यधिकस्तु कुतो भवेत्।
यदुन्मेषाज्जगज्जातं यन्निमेषात्प्रलीयते॥२४॥
यस्मिन् चित्तं समाधाय योगिनो ज्ञाननिर्मलम्।
अविद्यां हृदयग्रन्थिमुन्मुंचन्ति गतक्लमाः॥२५॥
यस्य चेतस्ययं देवो वर्त्ततेसौ कृतार्थकः।
सोयं हरिः परानन्दः कस्मिंश्चितं दधात्यहो॥२६॥
इत्येवं सन्दिहाना सा सखीनां पुरतः स्थिता।
सस्मितं जगदे सख्या कयाचित्परया मुदा॥२७॥

सख्युवाच

अयं त्रिलोकेशगुरुः कमन्यं ध्यातुमर्हति।
देवासुरनरा नागा गन्धर्वाप्सरसां गणाः॥२८॥
सिद्धा योगेश्वरा रुद्रा आदित्या वसवस्तथा।
मरुद्गणाः सोमपाश्च पितरश्चापि चारणाः॥२९॥
यं पूजयन्ति सततं भक्तिप्रवणचेतसः।
न तस्मात् त्रिपु लोकेषु ह्यस्य पूज्यतमो भवेत्॥३०॥
त्वामेकां ध्यायते चित्ते प्रेयसीं प्राणवल्लभां।
प्रतिव्रतां पतिप्राणां प्राणनाथो रहो गतः॥३१॥
धन्यासि कृतकृत्यासि यत्त्वया हरिरीश्वरः।
शुद्धभावेन सततं सेवया च प्रसादितः॥३२॥
क्षणं तद्विरहं सोढुमशक्तो मिलितेक्षणः।
रहः स्थितः स्वहृदये त्वन्मूर्तिं ध्यायते हरिः॥३३॥
तस्माद्धन्याः स्त्रियो लोके याः पतिप्रेमभाजनम्।
इति हासच्छलेनोक्ता मेने वितथमेव सा॥३४॥

रमोवाच

अहो सखि यदात्थ त्वं निरर्थकमिदं वचः।
न मां स्मरति देवेशो ध्यानमार्गे कदाचन॥३५॥
मयि विरक्तः सततमकिञ्चनजनप्रियः।

Nijanand App

22. वही ब्रह्मा, रुद्र आदि सभी देवताओं के कारण हैं और जिनके अवतार चरित्र का नारदादि गायन करते हैं।

23. जिसके पद को पाने की इच्छा करते हुए विद्या, तप के व्रत को धारण करके शुद्ध ब्राह्मण, यतियों के व्रत रूप वाणप्रस्थ को धारण करते हैं।

24. जिनके समान संसार में कोई दूसरा नहीं है, अधिक कहां से होगा। जिनके उन्मेष से जगत् का उद्‌भव होता है तथा निमेष से प्रलय होता है।

25. जिनमें ज्ञान से निर्मल मन लगाकर योगी लोग अविद्या रूपी हृदय ग्रन्थि को बिना परिश्रम के खोल देते हैं।

26. जिसके मन में यह देव विद्यमान है, वह कृतार्थ हो जाता है। वह यह हरि परम् आनन्द स्वरूप है। किसे वह चित्त में धारण करते हैं?

27. ऐसा सन्देह करती हुई सखियों के आगे खड़ी उस लक्ष्मी से किसी सखी ने प्रसन्न होकर उनके अनुकूल कहा—

सखी ने कहा—

28. यह तीनों लोकों के स्वामी तथा गुरु अन्य देव, असुर, नर, नाग, गंधर्व, अप्सरा समूहों का ध्यान कर सकते हैं?

29-30. सिद्ध, योगेश्वर, रुद्र, आदित्य, वसु और मरुतगण, देवगण, पितर, चारण सब भक्तियुक्त चित्त से निरन्तर जिसकी पूजा करते हैं उससे बढ़कर तीनों लोकों में कोई नहीं है जो उनके लिए पूजनीय हो।

31. तुम्हीं एक प्राणबल्लभा, पतिव्रता, पतिप्राणा प्रेयसी हो जिसे एकान्त में बैठकर प्राणनाथ तुम्हारा ध्यान करते हैं।

32. तुम धन्य हो, कृतकृत्य हो कि तुम्हारे द्वारा ईश्वर हरि शुद्ध भाव से नित्य सेवा करके प्रसन्न किए गए हैं।

33. आंख बन्द करके ध्यान करते हुए अपने हृदय में तुम्हारी मूर्ति का ही ध्यान करते हैं। तुम्हारे विरह को क्षण भर भी सहन नहीं कर सकते।

34. इसलिए जो स्त्रियां पति के प्रेम की पात्र हैं संसार में वे धन्य हैं। हंसी में कहे जाने से लक्ष्मी ने उसे असत्य समझा।

लक्ष्मी ने कहा—

35. अरे सखि! जो तुम कहती हो, वह निरर्थक है। वह देवेश ध्यान में कभी मेरा स्मरण नहीं करते हैं।

Nijanand App

कथं मां ध्यायते चित्ते विरहं सोढुमक्षमः ।।३६।।
अकुण्ठितमहाबोधा प्रसादादस्य सन्ततम्।
जानामि सकले लोके भजतो मां दृढव्रतान्।।३७।।
ये चापि त्रिषु लोकेषु यत्र कुत्रापि संस्थिताः।
भजन्ते तानहं भक्तान् हृदि पश्यामि सन्ततम्।।३८।।
तदा कथं तु हरिणा चिते ध्यातापि तं सखि
न वेद्मि सर्वभावज्ञा सर्वलोकान्तरस्थिता।।३९।।
तस्मान्न मां न च विधिं न रुद्रमपि शंकरम्।
नान्यं वा प्राणसदृशं भक्तं वा ध्यायतीश्वरः।।४०।।
को वेदास्य परं चित्ते निहितः कश्चिदीश्वरः।
तस्मात्प्रबुध्यमानेऽस्मिन् सर्वं पृच्छाम्यसंशयम्।।४१।।
इत्युक्त्वा सखिवर्गेण कुतूहलसमन्विता।
पुरः तस्थौ परेशस्य प्रबद्धकरसम्पुटा।।४२।।
तावदेव हरिः साक्षान्मुक्तध्यानो ददर्श, तां।
बद्धहस्ताञ्जलिपुटां सखीमण्डलमध्यगां।।४३।।
विरोचयन्तीं प्रभया दिव्यालंकारभूषिताम्।
मणिकुण्डलनिर्भान्तकपोलविमलप्रभाम्।।४४।।
सुनासां सुदतीं सुभ्रूं चिबुकोद्देशशोभितां।
कम्बुकण्ठीं हृदि भ्राजन्मणिहारमनोहराम्।।४५।।
काञ्चीकलापरुचिरां वलयाङ्गदनूपुरां।
त्रिलोकीदेवतां साक्षाद्विनयावनतेक्षणाम्।।४६।।
दृष्ट्वा प्रबोधमापन्नं हरिं कमललोचनम्।
शीर्ष्णा स्पृशन्ती चरणं प्रोवाच विनयान्विता।।४७।।

रमोवाच

अहो देवेश भगवन् भक्तवत्सल भूधर।
कृपां कुरु जगन्नाथ सन्देहं विनिवारय।।४८।।
त्वमेकः सर्वलोकानां स्रष्टा हर्ता च पालकः।
दैवतं सर्वदेवानां न त्वया न समोऽधिकः।।४९।।
किं ध्यायसि रहः स्थित्वा विलीनकरणाशयः।
तद्ध्यानानन्दसन्दोहपुलकांकतनुर्भृशम्।।५०।।
अस्मिन् खिद्यति मच्चित्तं त्वत्तोऽप्यपरशंकया।
तं ब्रूहि करुणासिन्धो यथाहं प्रकृतिं व्रजे।।५१।।
इत्युक्तो रमया देव्या हरिरात्मा शरीरिणाम्।

Nijanand App

36. अकिंचन जनों के प्रिय निरन्तर मुझसे विरक्त हैं। विरह सहने में असमर्थ मुझे अपने चित्त में कैसे ध्यान करते हैं?

37. उन्हीं की कृपा से मेरा महान् ज्ञान अकुंठित है और इसी से मैं सारे संसार में अपने दृढ़ व्रत वाले (मेरा भजन करने वाले) भक्तों को जानती हूं।

38. तीनों लोकों में जहां कहीं जो भक्त स्थित हैं और मेरा भजन करते हैं उन भक्तों को मैं अपने हृदय में सदैव देखती हूं।

39. तो हरि के द्वारा चित्त में निरन्तर ध्यान की जाती हुई, हे सखी! सब भावों को जानने वाली और सारे संसार के अन्तर में स्थित मैं उनको नहीं जानती हूं।

40. इसलिए न मुझको, न ब्रह्मा को, न रुद्र, न शंकर को और न किसी अन्य प्राण सदृश भक्त को वह ईश्वर ध्यान करते हैं।

41. कौन जानता है कि उनके चित्त में कोई दूसरा ईश्वर बैठा हो, इसलिए उनके जागने पर मैं उनसे सब पूछूंगी।

42. सखियों से ऐसी बातें कहकर कौतूहल से युक्त होकर परमेश्वर के सम्मुख हाथ जोड़ कर बैठ गईं।

43. तभी हरि ने ध्यानमुक्त होकर साक्षात् देखा कि वह लक्ष्मी अपने हाथों की अंजलि बनाकर सखी मण्डल के मध्य में

44. अपनी प्रभा से चमकृत होती हुई दिव्य अलंकारों से सुशोभित, मणि जटित कुण्डल से चमक रही कपोलों की निर्मल प्रभा वाली

45. सुन्दर नासिका, दंत एवं भ्रू एवं चिबुक से सुशोभित, शंख के समान कण्ठ वाली, हृदय में चमकते हुए मणियों के हार से मनोहर

46. कांची समूह से सुन्दर वल्लभ अंग, नूपुर धारण किए हुए तीनों लोकों की स्वामिनी और विनय से झुकी आंखों वाली

47. लक्ष्मीजी ने कमल-लोचन हरि को जागे हुए देखकर मस्तक से चरण को स्पर्श करती हुई नम्रतापूर्वक बोलीं—

लक्ष्मी ने कहा—

48. हे देवेश! भगवन्, भक्त-वत्सल, भूधर, जगन्नाथ कृपा करें और मेरा सन्देह दूर करें।

49. आप ही सारे संसार के रचयिता, संहारक एवं पालक हैं। आप सब देवताओं के देवता हैं। न कोई आपके बराबर है न कोई अधिक है।

50. एकान्त में बैठकर अपने मन एवं चित्त को विलीन करके आनन्द समूह से अति पुलकित शरीर होकर किसका ध्यान कर रहे हैं?

51. आपसे बढ़कर कोई दूसरा भी है, इस शंका से मेरा चित्त खिन्न हो रहा है। हे करुणासिन्धु! आप हमें उसे बताएं जिससे मैं स्वस्थ हो जाऊं।

Nijanand App

गिरा मधुरया वाचा रमणी रमयन्निव॥५२॥

श्रीभगवानुवाच

अहो कल्याणि वचनं वदामि श्रृणु साम्प्रतम्।
अहं लोकगुरुः साक्षान्न मे ध्येयोऽस्ति कश्चन।
अहमात्माखिलाधारो ब्रह्मरुद्रेन्द्रवन्दितः॥५३॥
विश्वस्मिन्विततं पश्य मामेव सचराचरे।
विश्वं मयि ततं पश्य किमन्यज्ज्ञातुमिच्छसि॥५४॥
तस्य मे विश्वजीवस्य शक्तिस्त्वं समधर्मिणी।
आद्याखिलाधारमयी मदानन्दमयी शुभा॥५५॥
तां त्वां ब्रह्मादयो देवा ऋषयोऽथ धृतव्रताः।
इन्द्रादयस्तु दिक्पाला मुनयो नारदादयः॥५६॥
भजन्तोऽपि न ते सुभ्रु प्रसादकणिकास्पृशः।
सा त्वं मे हृदये लीना परमानन्दरूपिणी॥५७॥
यदा त्वां नैव पश्यामि जगदान्ध्यं विभाति मे।
दृष्टायां त्वयि देवेशि सम्यक् पश्याम्यहं पुनः॥५८॥
त्वं गता सखिभिः सार्धं पुष्पावचयहेतवे।
तावते विरहं सोढुमशक्तोऽहं वरानने॥५९॥
त्वच्चित्तो रहसि स्थित्वा त्वत्प्राणस्त्वन्मनाः प्रिये।
त्वामेव हृदये ध्यायन्निमीलितविलोचनः॥६०॥
ललने ललितं रूपं त्वदीयं सुरदुर्लभं।
ध्यायामि ध्यानयोगेन तावत्त्वं समुपागता॥६१॥
इत्येवं ते मया प्रोक्तं सत्यं जानीहि सुव्रते।

श्रीलक्ष्मीरुवाच

देवेश त्वत्प्रसादेन सर्वेषां हृदि चेष्टितम्।
जानामि सकलं नाथ यथाकर्म यथारुचि॥६२॥
अहं हृदि त्वया ध्याता विरहेणापि माधव।
त्वय्येव निवसाम्येव त्वदन्तःकरणैक्षिणी॥६३॥
अहो चित्रमिदं भाति त्वदन्तःस्थाप्यहं प्रभो।
न जानामि त्वदन्तःस्थं आत्मानमिवसन्मतिः॥६४॥
न प्रतारयितुं योग्या भक्ता तेतीव वल्लभा।
भक्तप्रतारकं लोके कथमन्यो भजिष्यते॥६५॥

Nijanand App

52. इस प्रकार रमादेवी के कहे जाने पर सभी शरीरधारियों की आत्मा स्वरूप हरि ने अपनी पत्नी को प्रसन्न करते हुए मधुर वाणी में कहा।

श्री भगवान् ने कहा—

53. अरे कल्याणी! मैं कह रहा हूं अब सुनो, मैं साक्षात् संसार का गुरु हूं। मेरा कोई ध्येय संसार में नहीं है। मैं आत्मा हूं, सबका आधार हूं। ब्रह्मा, रुद्र, इन्द्र सब मेरी वंदना करते हैं।

54. सारे चराचर संसार में व्याप्त मुझको ही देखो और मेरे में विश्व को व्याप्त देखो। तुम और क्या जानना चाहती हो?

55. संसार के जीव भूत मेरी समधर्मिणी शक्ति तुम हो। तुम आद्या हो, समस्त संसार की आधारमयी हो और मुझे आनन्द देने वाली हो और कल्याणकारी हो।

56. तुम मुझ विश्व के जीव के साथ रहने वाली शक्ति हो और तुम्हारी ब्रह्मा आदि देवता, व्रत धारण करने वाले ऋषि, इन्द्र, आदि दिगपाल, नारद आदि मुनि

57. भजन करते हुए भी, हे शुभे! तुम्हारे प्रसाद के कण का भी स्पर्श नहीं कर पाते हैं वह तुम मेरे हृदय में छिपी हुई परमानन्द रूपिणी हो।

58. जब मैं तुमको नहीं देखता हूं तो संसार में अंधेरा छा जाता है और मैं जगत् को नहीं देख पाता और तुम्हारे दीखने पर पुनः मैं संसार को देखने लगता हूं।

59. तुम सखियों के साथ फूल तोड़ने गई थीं। इतने में ही तुम्हारे विरह को सहने में अशक्त हो गया।

60. अतः, हे प्रिए! तुम्हारे में ही चित्त लगाकर एकान्त में स्थित होकर, तुम्हीं को प्राण एवं मन मानकर, तुम्ही को हृदय में ध्यान करता हुआ आंखें मूंद लीं।

61. हे ललने! तुम्हारे इस दुर्लभ रूप को ध्यान योग से ध्यान कर रहा था, तभी तुम आ गईं।

62. हे सुव्रते! मेरे द्वारा बताया गया यह रहस्य सत्य-सत्य जानो। श्री लक्ष्मी ने कहा—हे देवेश! तुम्हारी कृपा से सभी के हृदय की इच्छाएं, कर्म तथा रुचि सब जानती हूं।

63. हे माधव! तुमने विरह से भरे हृदय में मेरा ध्यान किया। मैं आप में ही निवास करती हूं, आपके अन्तःकरण को ही देखती हूं।

64. यह विचित्र बात मालूम पड़ती है कि तुम्हारे अन्तःकरण में बैठी हुई भी अज्ञानी व्यक्ति के समान मैं तुम्हारे अन्तःकरण में बैठे हुए अपने को नहीं जानती हूं।

Nijanand App

त्रिलोक्यां यदि वा कश्चित् भक्तं ध्यायसि दुर्गतं।
त्वदिच्छयैव तद्दुःखं सर्वं विलयमेति च॥६६॥
तस्मात्त्वदन्यो वै कश्चिदीश्वरस्त्वनुमीयते।
तं वै वदस्व देवेश यद्यहं तव वल्लभा॥६७॥
न चान्यो मे प्रियतमो नेश्वरो वा भवत्परः।
परं वेदितुमिच्छामि कौतुकेन समन्विता॥६८॥

विष्णुरुवाच

न कौतुकं त्वया कार्यं मदुक्त्या निर्वृतिं व्रज।
न चाग्रहं प्रकुर्वन्ति विद्वांसः साधवो जनाः॥६९॥
देव्याग्रहवतां पुंसां न धर्मार्थौ न कामना।
प्रसिध्यन्ति कदाचिद्वा बुद्धेः फलमनाग्रहः॥७०॥
प्रार्थितं तु शिरो देयं पशुद्रविणसम्पदः।
राज्यं कोशो मही दुर्गं तथान्यदपि सुन्दरि॥७१॥
धनैः प्राणैः शरीरैश्च त्यक्षद्भिर्नोपकुर्वते।
ते यास्यन्ति स्वयं त्यक्त्वा कालवेगेन कर्षिताः॥७२॥
याचकाशा हता येन हतं तेन चराचरम्।
तस्मात्प्राणादिकं सर्वं याचते देयमेव हि॥७३॥
अदेयं तु परं तत्वं लोकातीतं यतो हि तत्।
तस्माद्दुराग्रहं त्यक्त्वा प्रसन्नेनान्तरात्मना॥७४॥
वर्तितव्यं त्वया भद्रे मत्प्रसादपरीप्सया।
इत्युक्त्वा सा तदा लक्ष्मीर्विष्णुना प्रभविष्णुना।
ईषत्कोपसमाविष्टा कषायीभूतलोचना॥७५॥
आत्मानमात्मना धृत्वा प्रोवाच वचनं पुनः।
स्त्रीपुंसोर्देहभागाभ्यामेकमेव वपुः स्मृतम्॥७६॥
कथं पश्यसि भेदेन मामेकतनुरूपिणीम्।
पुरातनैश्च कविभिर्दाम्पत्ये प्रेम रूपितम्॥७७॥
तन्नाशितं त्वयैकेन प्रेमरीतिविदापि भोः।
पत्युः प्रेमबहिर्भूतां धिक् स्त्रियं विमतां गृहे।
पतिश्चापि शठस्तस्या यः साध्वीमप्युपेक्षते॥७८॥
तस्माद्देवाल्पपुण्याहं कथं प्राप्स्यामि चेप्सितं।
आप्रसादं च भवतः करिष्ये तप उल्बणं॥७९॥
येन प्रसन्नो भगवान् उपदेश्यति तत्पदं।

Nijanand App

65. मैं आपकी अतीव प्रिय भक्त हूं, मैं प्रताड़ना के योग्य नहीं हूं। संसार में कोई भी व्यक्ति अपने भक्त को प्रताड़ना देने वाले को कौन भजेगा (सेवा करेगा)।

66. तीनों लोकों में यदि कोई दु:खी भक्त है, यदि उसका आप ध्यान करते हो, तो आपकी इच्छा से ही उसके सारे दु:ख समाप्त हो जाते हैं। इसलिए मैं नहीं मानती कि आप किसी भक्त का ध्यान कर रहे हैं।

67. इससे यह अनुमान किया जाता है कि तुम से भिन्न कोई ईश्वर है। हे देवेश! यदि मैं तुम्हारी बल्लभा हूं, तो उसे हमें बताने की कृपा करें।

68. मुझसे भिन्न कोई प्रियतमा नहीं है और आपसे बढ़कर कोई ईश्वर नहीं है, तो कौतुक से युक्त होकर मैं जानना चाहती हूं कि आप किसका ध्यान कर रहे हैं?

विष्णु बोले—

69. तुम्हें आश्चर्य नहीं करना चाहिए। मेरे वाक्य से ही तुम शान्त हो जाओ। विद्वान् और साधु लोग आग्रह नहीं करते।

70. हे देवी! आग्रह करने वाले पुरुषों की धर्म, अर्थ की कोई कामना कभी सिद्ध नहीं होती। बुद्धि होने का फल है आग्रह न करना।

71. हे सुन्दरी! प्रार्थना करने पर सिर भी दे देना चाहिए। पशु, धन, सम्पत्ति, राज्य, कोष, पृथ्वी, दुर्ग आदि भी दे देना चाहिए।

72. जो धन, प्राण, शरीर त्याग करने पर भी उपकार नहीं करते हैं वह सभी काल के वेग से खींचे जाते हुए व्यक्ति को छोड़कर स्वयं चले जाते हैं।

73. जिसने याचकों की आशा को भंग किया, उसने सारे चराचर संसार को नष्ट कर दिया। इसलिए याचना करने वाले को प्राण आदि सब कुछ दे देना चाहिए।

74. परम तत्व ही अदेय है क्योंकि वह लोकातीत है। इसलिए दुराग्रह छोड़कर प्रसन्न मन से,

75. हे भद्रे! मेरी कृपा प्राप्त करने की इच्छा से तुम्हें रहना चाहिए। सर्वसमर्थ विष्णु के द्वारा इस प्रकार कही गई लक्ष्मी ने थोड़ा क्रुद्ध होकर आंखों को लाल कर लिया।

76. लक्ष्मी ने अपने को संभाल कर पुन: कहा—स्त्री और पुरुष देह के दो भाग हैं। उनसे बना कर एक ही शरीर कहा गया है।

77. एक शरीर रूपिणी मुझको भिन्न कैसे देखते हो? पुरातन विद्वानों ने दाम्पत्य में ही प्रेम का निरूपण किया है।

78. प्रेम की रीति जानने वाले होकर भी अकेले आपने उसे नष्ट किया है। पति के प्रेम से पृथक् होने वाली, घर में न सुनी जाने वाली स्त्री को धिक्कार है। उस स्त्री का पति भी शठ है जो साध्वी स्त्री की उपेक्षा करता है।

79-80. इसलिए अल्प पुण्य वाली मुझे चाही हुई वस्तु किस प्रकार मिलेगी? आपकी कृपा प्राप्ति तक मैं भयंकर तप करूंगी। जिससे आप प्रसन्न होकर उस पद को बता देंगे जिसे

Nijanand App

इत्युक्त्वा भगवत्पादं प्रणम्य च मुहुर्मुहुः।
प्रदक्षिणीकृत्य ययौ वैकुण्ठात्तपसे रमा॥८०॥
सामभिर्विविधैश्चापि वचनैश्च नयान्वितैः।
निवार्यमाणापि रमा न न्यवर्तत निश्चयात्॥८१॥

इति श्रीनारदपञ्चरात्रे माहेश्वरतन्त्रे ज्ञानखण्डे शिवोमासंवादे द्वितीयं पटलम्॥२॥

तृतीयं पटलम्

पार्वत्युवाच

भगवन् श्रोतुमिच्छामि परं कौतूहलं हि मे।
रमया परया साध्व्या प्रार्थितोपि पुनः पुनः॥१॥
नोक्तवान्परमं तत्वं तदर्थं तपसे गता।
महाश्चर्यतमं देव तन्मे व्याख्यातुमर्हसि॥२॥

शिव उवाच

शृणु सुन्दरि वक्ष्यामि तव स्नेहादशेषतः।
अवाच्यमन्यथा देवि कोटिकल्पशतैरपि॥३॥
प्रार्थितोपि यदा विष्णुर्नोक्तवान् स्वहृदि स्थितम्।
श्रवणेच्छाविघातेन विरहाग्निविधूतया॥४॥
कृतं महत्तपश्चोग्रं सर्वलोकोपतापनम्।
केतुमालं (ले) समासाद्य कृत्वा नियममात्मना॥५॥
साध्वी चकार प्रतिमां विष्णोः परमसुन्दराम्।
तत्र पर्यचरत् प्रीत्या गर्हयन्ती स्वकं वपुः॥६॥
स्नानेन त्रिषु कालेषु नियमेन दमेन च।
भावशुद्धि गता साध्वी स्थण्डिले शयने गता॥७॥
शीतकाले जले मग्ना ग्रीष्मे पञ्चाग्निसेविनी।
वर्षास्वपि स्थलगता वृष्टिवातसहा स्थिता॥८॥
स्त्रीत्वचाञ्चल्यमुत्सृज्य नानालंकारसम्पदम्।
भूम्यामशेत सततं चिन्तयन्ती हरिं हृदि॥९॥
स्वप्ने ददर्श सततं हरिं कमललोचनम्।
तत्रापि प्रार्थयन्तीदं सोपि नेत्याह विक्लवम्॥१०॥
सुप्ता सोत्थाय तत्रैव पुनरुद्बोधमागता।
एवं सा तन्मयीभूतहृदया विवशा भृशम्॥११॥
आत्मानं गर्हयामास मनोरथमपश्यति।

Nijanand App

छिपा रहे हैं। ऐसा कहकर बार-बार चरणों में प्रणाम कर, प्रदक्षिणा कर लक्ष्मी ने बैकुण्ठ से तपस्या के लिए प्रस्थान कर दिया। अनेक प्रकार से समझाने एवं नीति के वचनों से मना करने पर भी लक्ष्मीजी ने अपना निश्चय नहीं बदला।

शिव-पार्वती के संवाद के पञ्चरात्र में माहेश्वरतन्त्र के ज्ञान खण्ड का दूसरा अध्याय समाप्त हुआ।

तीसरा अध्याय

पार्वती ने कहा--

1. भगवन्! मैं सुनना चाहती हूं, क्योंकि मुझे अत्यन्त कौतूहल है कि परमसाध्वी रमा के द्वारा बार-बार प्रार्थना किए जाने पर भी (विष्णुजी ने) उन्हें—

2. परम तत्व नहीं बतलाया, इसलिए वह तप करने चली गईं। हे देव! मुझे महान् आश्चर्य है। यह सब बताने की कृपा कीजिए।

शिव बोले—

3. हे सुन्दरी! तुम्हारे स्नेह से सब कहूंगा। वैसे तो सैकड़ों-करोड़ों कल्पों में भी यह कहने योग्य नहीं है।

4. जब प्रार्थना करने पर भी विष्णु ने अपने हृदय की बात नहीं बताई तो सुनने की इच्छा भंग होने के कारण विरह की अग्नि से युक्त होकर

5. उन्होंने सारे संसार को तपाने वाला बड़ा उग्र तप किया। केतुमाल जाकर अपने आप नियम करके

6. साध्वी ने विष्णु की परम सुन्दर प्रतिमा बनाई और अपने शरीर की निन्दा करती हुई लक्ष्मी ने प्रीति से उस प्रतिमा का पूजन किया।

7. त्रिकाल स्नान, नियम, दम के द्वारा भाव को शुद्ध कर जमीन पर सोती हुई वह साध्वी (लक्ष्मी)

8. शीतकाल में जल में बैठकर, ग्रीष्म में पंचाग्नि सेवन कर, वर्षा में खुले मैदान में वर्षा, वायु आदि सहन करती हुई

9. स्त्रियोचित चंचलता को त्यागकर नाना अलंकारों की सम्पत्ति छोड़कर हरि का हृदय में निरन्तर चिन्तन करती हुई पृथ्वी पर शयन करने लगीं।

10. स्वप्न में निरन्तर कमल-लोचन हरि को देखती थीं तथा स्वप्न में भी वही प्रश्न पूछती थीं और वे उत्तर नहीं देते थे।

Nijanand App

यदा मनोरथं नैवं प्राप्ता देवी तपस्विनी।
तदैकपादेन भुवमाक्रम्यात्मनि निर्मला॥१२॥
निधाय स्वामिनं चित्ते तस्मिन् चित्तं निधाय च।
एकात्म्यं तु गता साध्वी तताप परमं तपः॥१३॥
तच्छिखायाः समुद्भूतः सधूमोग्निः परिज्वलन्।
तापयामास निखिलं ब्रह्माण्डं भयविह्वलम्॥१४॥
देवासुरनरा नागा गन्धर्वाप्सिरसस्तथा।
पिशाचा गुह्यकाः सिद्धा विद्याध्राः खगचारणाः॥१५॥
तपोमयेन ज्वलता वह्निना दुःसहेन च।
व्यथिताः शोकसंविग्ना न सुखं लेभिरे क्वचित्॥१६॥
ततश्चेन्द्रादयो देवा मरुतश्चोष्मपादयः।
आदित्या वसवो रुद्रा ह्यश्विनौ पितरस्तथा॥१७॥
ब्रह्माणं शरणं जग्मुः पितामहमनिन्दितम्।
ददृशुः परमं देवं ब्रह्माणं परमासने॥१८॥
प्राणायामेन युंजानं शुभ्रकूर्चं चतुर्मुखम्।
सनकाद्यैः परिवृतं नारदाद्यैरुपासितम्॥१९॥
मूर्तिमद्भिस्तथा वेदैः पृथक्सिंहासनस्थितैः।
पुराणैः संहिताभिश्च विद्याभिः परिवेष्टितम्॥२०॥
विचारयन्तमात्मानं परमं तमसः परम्।
पुण्योत्कर्षेण धर्मेण त्यागेन ज्ञानसम्पदा॥२१॥
विमर्षेणात्मनश्चापि ब्रह्मचर्येण संयमैः।
नियमैर्योगधर्मैश्च यत्र क्रीडन्ति सङ्गताः॥२२॥

दृष्ट्वामरास्ते परमासने स्थितं ब्रह्माणमाद्यं पुरुषं पुरातनम्
प्रणेमुरानन्दजलाकुलेक्षणाः कृष्यत्वचो गद्गदयाब्रुवन् गिरः॥२३॥

नमो नमस्ते जगदेककर्त्रे नमो नमस्ते जगदेकपात्रे।
नमो नमस्ते जगदेकहर्त्रेरजस्तमः सत्वगुणाय भूम्ने॥२४॥
अण्डं चतुर्विंशतितत्वजातं तस्मिन् भवानेष विरञ्चिनामा।
जगच्छरण्यो जगदुद्भवन्स्वयं पितामहस्त्वं परिगीयसे बुधैः॥२५॥

त्वं सर्वसाक्षी जगदन्तरात्मा हिरण्यगर्भो जगदेककर्ता।
हर्ता तथा पालयितासि देव त्वत्तो न चान्यत्परमस्ति किञ्चित्॥२६॥
त्वमादिदेवः पुरुषः पुराणः साक्षात् स्वयं ज्योतिरजः परेशः।
त्वन्मायया मोहितचेतसो ये पश्यन्ति नानात्वमहो त्वयीशे॥२७॥

Nijanand App

11. सोने से उठकर फिर उद्‌बोधित होती थीं। इस प्रकार से उन्हीं में मन लगाकर अत्यन्त विवश होकर

12. अपने मनोरथ को देखती हुई अपनी निन्दा करती थीं। जब इस तरह से तपस्विनी लक्ष्मी ने अपने मनोरथों को नहीं प्राप्त कर पाया तो एक पैर से पृथ्वी पर खड़े होकर अपने को निर्मल बनाकर,

13. स्वामी में चित्त लगाकर, अपने चित्त में स्वामी को बैठाकर उनके साथ एकात्म भाव को प्राप्त कर परम तप किया।

14. उनकी शिखा से धूम्र सहित जलती हुई अग्नि प्रकट हुई। यह भय से विह्वल समस्त ब्रह्माण्ड को जलाने लगी।

15. देव, असुर, नर, नाग, गन्धर्व, अप्सराएं, पिशाच, यक्ष, सिद्ध, विद्याधर, खग, चारण,

16. सब दु:सह तपोमय जलती हुई अग्नि से व्यथित होकर शोक से संविग्न कहीं भी सुख नहीं पाते थे।

17. तब इन्द्रादि देवता, मरुत, उष्मपा, आदित्य, वसु, रुद्र, अश्विनी-कुमार, पितर

18. आदि सब अनिन्दित ब्रह्मा, जो जगत् के पितामह हैं, की शरण में गए। ब्रह्मा को श्रेष्ठ आसन पर बैठे देखा।

19. प्राणायाम करते हुए सफेद दाढ़ी वाले चतुर्मुख सनकादि से घिरे हुए नारदादि से सेवा किए जाते हुए

20. अलग सिंहासन पर बैठे हुए मूर्तिमान वेदों, पुराणों, संहिताओं और विद्याओं से घिरे हुए

21. परम अन्धकार से ऊपर स्वयं अपने का ध्यान करते हुए, पुण्य के उत्कर्ष से, धर्म से, त्याग से, ज्ञान सम्पत्ति से,

22. आत्म विचार से, ब्रह्मचर्य से, संयम से, नियम से, योग से, धर्म से युक्त होकर वहां के निवासी जहां पर क्रीड़ा करते हैं,

23. उन देवताओं ने श्रेष्ठ आसन पर बैठे हुए आदि पुरुष, पुरातन ब्रह्माजी को देखकर प्रणाम किया। आनन्द के अश्रु से भरे हुए नेत्र वाले होकर गद्‌गद् वाणी से उनकी प्रार्थना की।

24. संसार के एकमात्र रचयिता तथा इसके पात्र, संसार के एकमात्र हर्ता, रज, तम एवं सत्व गुणों से युक्त रूप को प्रकट करने वाले भूमा (महान् स्वरूप वाले सर्व-व्याप्त) आपको नमस्कार है।

25. चौबीस तत्वों से एक अण्डा उत्पन्न हुआ, उसमें विरंचि नाम के आप प्रकट हुए। जगत् के लोगों को शरण देने वाले, स्वयं अपने से जगत् को प्रकट करने वाले पितामह विद्वानों के द्वारा आप स्तुति किए जाते हैं।

Nijanand App

त्वमाद्यः पुरुषः पूर्णस्त्वमनन्तो निराश्रयः।
सृजसि त्वं च भूतानि भूतैरेवात्ममायया॥२८॥
त्वया सृष्टमिदं विश्वं सचराचरमोजसा।
कथं न पालयस्येतत् ज्वलदाकस्मिकाग्निना॥२९॥
विनाशमेष्यति जगत् त्वया सृष्टमिदं प्रभो।
न जानीमो वयं तत्र कारणं तद्विचिन्त्यतां॥३०॥
कोयं वह्निरपूर्वोयमुत्थितः परितो ज्वलन्।
तेनोद्विग्नमिदं विश्वं ससुरासुरमानवम्॥३१॥
तस्य त्वं शमनोपायं विचारय महामते।
न चेदद्य भविष्यन्ति लोका भस्मावशेषितः॥३२॥
इति तेषां च गृणतां देवानामातुरं वचः।
विमृश्य ध्यानयोगेन तदिदं हृद्यवाप सः॥३३॥
ततः प्रोवाच वचनममरास्तु पितामहः।
शृणुध्वममराः सर्वे वचनं मदुदाहृतम्॥३४॥
तपस्यति रमा देवी साक्षात्पत्यावमानिता।
किं त्वं ध्यायसि देवेश परं तत्त्वं भवत्परम्॥
तद्वदस्वेति चाप्युक्तस्तथा नोवाच वै हरिः॥३५॥
ततो निर्बन्धनिर्विण्णा रमा देवी रुषान्विता।
केतुमालं समासाद्य तपो दारुणमाश्रिता॥३६॥
सा तपो लोकभयदं दारुणं विष्णुवल्लभा।
करोति तद्भालदेशादुत्थितोग्निस्तपोमयः॥३७॥
तेन लोकाः सुसन्तप्ता दग्धप्राया विचेतसः।
नाशमेष्यन्त्यसन्देहो यदि सा न तपस्त्यजेत्॥३८॥
तस्माद्वैकुण्ठनिलयं हरेर्गत्वा दिवौकसः।
विष्णुंप्रसादयिष्यामः सरुद्राः सर्व एव हि॥३९॥
एवं निश्चित्य ते सर्वे मम धाम समाययुः।
मामस्तुवन् गिरा माध्व्या प्रबद्धकरसम्पुटाः॥४०॥
मयापि सत्कृता देवि सेन्द्रा ब्रह्मपुरोगमाः।
दृष्ट्या सम्भाव्य देवेशं उपगुह्य पितामहम्॥४१॥
नत्वा बृहस्पतिं देवि यथा योग्यं तथापरान्।
निषीदध्वं निषीदध्वमित्युक्तास्ते मयामराः॥४२॥
निषेदुर्म्लानवदनाः सज्वरास्ते दिवौकसः।
अपि स्वित् कुशलं देवा भवतामनुवर्तते॥४३॥

Nijanand App

26. आप सबके साक्षी हैं, जगत की आत्मा हैं, हिरण्यगर्भ हैं, जगत् के एकमात्र कर्ता, हर्ता, पालनकर्ता आप ही हैं। हे देव! आपसे बढ़कर कोई अन्य नहीं है।

27. आप आदि-देव, साक्षात पुराण पुरुष, स्वयं ज्योति, अजन्मा और परेश हैं। आपकी माया से मोहित चित्त आपमें नानात्व के दर्शन करते हैं।

28. आप ही आदि पुरुष, पूर्ण, अनन्त, निराश्रय हैं। आप सभी प्राणियों को तथा पंच महाभूतों की अपनी माया द्वारा रचना करते हैं।

29. आपने ही अपनी शक्ति द्वारा इस चराचर विश्व की रचना की है। आकस्मिक अग्नि से जलते हुए इस संसार की आप क्यों नहीं रक्षा करते हैं?

30. हे प्रभो! आपके द्वारा बनाये संसार का विनाश हो जाएगा। हम इसका कारण नहीं जानते हैं। आप ही समझें।

31. यह अपूर्व चारों ओर से जलती हुई कौन-सी अग्नि प्रकट हुई है जिससे सुर, असुर, मानवयुक्त सारा संसार उद्विग्न है।

32. हे महामते! आप उसके शमन का उपाय विचार करें, नहीं तो आज यह लोक जलकर केवल भस्म के रूप में रह जाएंगे।

33. इस प्रकार आतुर वाणी बोलने वाले उन देवताओं के वचन को सुनकर ध्यान द्वारा देखकर और हृदय में कारण समझकर,

34. पितामह ने देवताओं से यह वचन कहा, हे देवताओ! मेरे द्वारा कहे गए वचनों को सभी सुनो।

35. रमा देवी (लक्ष्मीजी) साक्षात् पति के द्वारा अपमानित होकर तपस्या कर रही हैं। उन्होंने पूछा था कि हे देवेश! आपसे बढ़कर कौन परम तत्व है जिसका आप ध्यान कर रहे हैं। उसे आप बताएं। लक्ष्मी के कहने पर हरि ने उत्तर नहीं दिया।

36. तब विष्णु भगवान के हठ से दु:खी हो क्रुद्ध होकर रमा देवी केतुमाल द्वीप जाकर दारुण तप करने लगीं।

37. वह विष्णुप्रिया लोक को भय देने वाले दारुण तप को कर रही हैं। उनके मस्तक से यह तपोमय अग्नि प्रकट हुई है।

38. उस अग्नि से संतप्त चेतनारहित लोक नष्ट हो जाएंगे, यदि वह तप नहीं छोड़ेंगी। इसमें कोई सन्देह नहीं है।

39. इसलिए हरि के बैकुण्ठ लोक को रुद्रों सहित सभी देवता चलकर विष्णु को प्रसन्न करेंगे।

40. ऐसा निश्चित करके वह सब मेरे धाम को आए और अंजलि बांधकर श्रेष्ठ वाणी से मेरी स्तुति की।

41. हे देवि! ब्रह्माजी जिनके आगे थे वे इन्द्र सहित देवता मेरे द्वारा भी सत्कार किए गए। देवेश पितामह के नजदीक जाकर सम्मानित दृष्टि से,

Nijanand App

स्वागतं भो सुराः सर्वे यूयं मे चातिवल्लभाः।
दृष्टो मदीयो लोकोयमदृष्टो मत्पराङ्मुखैः॥४४॥
वनेषूपवनेष्वेव रमध्वमिह चेत्स्पृहा।
शृण्वन्तु रुचिरालापान् शुकसारसपक्षिणाम्॥४५॥
जिघ्रन्तु परमामोदमोहितानेकषटपदान्।
लतानामतिदिव्यानां सर्वर्तुकुसुमाकरान्॥४६॥
महामरकतक्लृप्तस्वर्णवेदिषु निर्भरम्।
गङ्गानिलसुखस्पर्शाः परिक्रीडन्तु चामराः॥४७॥
नदन्मत्तमरालासु सुधापूर्णासु नित्यशः।
खेलन्तु सस्त्रियः सर्वे दीर्घिकासु गतक्लमाः॥४८॥
यद्यद्वा मनसोभीष्टं तत्कुरुध्वमतन्द्रिताः।
किमर्थमिह सम्प्राप्ता ब्रह्मोपेन्द्रपुरोगमाः॥४९॥
निवेदयध्वं कर्तव्यं यदि चेदस्ति किञ्चन।
इत्येवं ते मया प्रोक्ता मामवोचन् दिवौकसः॥५०॥
भगवन् करुणासिन्धो भक्तवत्सल धूर्जटे।
त्वया सञ्चिन्त्यमानानां कुशलेषु च का कथा॥५१॥
तदेवाकुशलं विद्मस्त्वत्पादस्मरणच्युतिः।
जानीमः पूर्णमात्मानं अद्य तेनुग्रहोदयात्॥५२॥
किं ध्यायसि चिरं तात निरुध्य हृदये मनः।
लब्धानन्द इवाभासि स्वयमात्मापि देहिनाम्॥५३॥
एतदाचक्ष्व नो ब्रह्मन् प्रवक्तुं यदि मन्यसे।
अहमाकर्ण्य वै तेषां वाचं परमशोभनां।
मन आह्लादयन्नेषामवोचं परमोक्तिभिः॥५४॥
शृणुध्वं त्रिदशाः सर्वे भवद्भिर्यदुदाहृतम्।
किं ध्यायसि चिरं तात निरुध्य हृदये मनः॥५५॥
लब्धानन्द इवाभासि स्वयमात्मापि देहिनां।
तत्र वाच्यं मया देवा अपि कल्पायुतायुतैः॥५६॥
न यान्ति योगिनो योगैर्न यज्ञैस्तपआदिभिः।
न ज्ञानतीर्थवैराग्यैर्विना साधुनिषेवया॥५७॥
मायामात्रामिदं विश्वं वस्तुतो नास्ति किञ्चन।
भूरादिसप्तलोकाश्च कालेन कवलीकृताः॥५८॥
विषयानन्दसन्तुष्टा लोकाः सर्वेपि देवताः।

Nijanand App

42. बृहस्पति को नमस्कार कर और अन्य को यथायोग्य नमस्कार करके मैंने देवताओं से कहा कि आप लोग अपने-अपने आसन पर बैठ जाएं।

43. ताप से पीड़ित मलीन मुख वाले देवतागण बैठ गए। उन्होंने पूछा, हे देवताओ, आप लोग कुशल से तो हैं?

44. हे देवताओ! आपका स्वागत है। आप सभी मेरे अत्यन्त प्रिय हैं। आप लोगों ने मेरे इस लोक का दर्शन किया जो लोक हमसे मुख फेरने वाले लोगों द्वारा नहीं देखा जा सकता है।

45. यदि इच्छा हो तो वनों, उपवनों में ही रमण करें और शुक, सारस आदि पक्षियों के सुन्दर आलाप को सुनें।

46. जिनकी अति सुन्दर सुगन्धि से अनेक भंवरे मोहित होते हैं, उन लताओं और अति दिव्य सभी ऋतुओं में पुष्पों के समूह जिनमें लगे रहते हैं, उनकी सुगन्धि प्राप्त करें।

47. महा मरकत मणि जटित स्वर्ण की वेदियों पर गंगा की वायु के शीतल स्पर्श को करते हुए हे देवताओ! खूब क्रीड़ा करो।

48. जिन सुधापूर्ण बावलियों में मतवाले हंस नित्य नाद करते रहते हैं, उनमें भ्रम रहित होकर आप स्त्रियों सहित खेलें।

49. जो जो आपके मन में इष्ट हो वह सब बिना आलस्य के करें। ब्रह्मा, उपेन्द्र की अगुवाई में सब देवता मेरे यहां क्यों उपस्थित हुए हैं?

50. यदि मेरे द्वारा कुछ किया जाना हो, तो बताएं। इस प्रकार से मेरे कहे जाने पर देवताओं ने कहा—

51. हे भगवन! करुणा सिन्धु! भक्त वत्सल! धूर्जटे! जब आप ही हमारी चिन्ता कर रहे हैं तो हमारा कुशल तो होगा ही।

52. मैं उसी को विपत्ति मानता हूं जब आपके चरण का स्मरण न हो। आज आपके अनुग्रह के उदय होने से अपने को हम पूर्ण समझते हैं।

53. हे तात! सारे प्राणियों की स्वयं आत्मा होते हुए भी हृदय में मन को रोककर चिरकाल से आप किसका ध्यान कर रहे हैं? मालूम पड़ता है आपको आनन्द की प्राप्ति हो गई है।

54. हे ब्रह्म! यदि आप कहना उचित समझते हों तो हमें बतलाएं। मैंने उनकी परम शोभित वाणी को सुनकर उनके मन को आह्लादित करते हुए परम उक्तियों से उनसे कहा—

55. हे देवताओ! आपने जो कहा है कि हे तात! हृदय में मन को रोककर चिरकाल से मैं किसका ध्यान करता हूं?

56. आपको प्रतीत होता है कि मैं आनन्द अनुभव कर रहा हूं। हे देवताओ! जिसका ध्यान मैं कर रहा हूं वह दस हजार कल्पों में भी कहने योग्य नहीं है।

Nijanand App

न प्राप्नुवन्ति कणिकां नित्यानन्दमहोदधेः।।५९।।
वेदे कर्मप्रधानं हि ततः कर्ममयी गतिः।
कर्मभिर्भ्राम्यमाणा ये तृणानीवाम्भसो रयैः।।६०।।
न ते विन्दन्ति तत्तत्वं कोटिकल्पशतैरपि।
केचित्स्वर्गपरा लोके यजन्ते ज्ञानदुर्बलाः।।६१।।
केचिदष्टाङ्गयोगेन निगृहीतधियः परे।
वर्णाश्रमविधानेन तत्तदाचारशालिना।।६२।।
केचित्पत्राशनरता वायुभक्षास्तथेतरे।
केचिद्दिगम्बराः केचित् कृष्णरक्ताम्बराः परे।।६३।।
केचिन्मुण्डितमुण्डाश्च फलमूलाशने रताः।
केचिद्भस्मनि निष्णाता मोक्षमिच्छन्ति दुर्बलाः।।६४।।
नैव ते मुक्तिमायान्ति विना तत्वावमर्षणात्।
मायाम्भोधिरयं भाति ह्यसन्नपि सदात्मकः।।६५।।
अनेककोटिब्रह्माण्डबुद्बुदाकुलितो भृशम्।
तत्त्वोर्मिजालजटिलो वासनाजलगह्वरः।।६६।।
पापपुण्यतटोन्नद्धो मोहपंकप्रपूरितः।
सदसत्कर्मकमलकैरवानंतमण्डलः।।६७।।
अहन्ताशिशुमारेण निरन्तरमुपासितः।
तृष्णाफेनौघबहुलः कामनातटपादपः।।६८।।
कामक्रोधमहालोभगर्तपाषाणदुःखदः।
परनिन्दापरद्रोहभुजङ्गमभयानकः।।६९।।
श्रद्धोरुपद्मिनीयत्र अक्षयो मोहकल्पितः।
विषयतृडभिक्लान्ताः पतन्त्यस्मिन्ननेकशः।।७०।।
दृष्ट्वारमत वै कश्चित् सरागं कमलाकरं।
सेव्यमानोपि नातृप्यत् षट्पाद इव लोलुपः।।७१।।
अह्नः क्षयमजानन्वै लोभितात्माजितेन्द्रियः।
मधुलिट् मधुलोभेन तत्रैव विलयं व्रजेत्।।७२।।
यत्र हंसगणास्तूर्णमाघ्राय कमलाकरम्।
अशाश्वतमिति ज्ञात्वा सुखं नीडेषु शेरते।।७३।।
यत्र पंकेषु निर्मग्ना सीदन्ती गौस्तृषातुरा।
महात्मना समुद्धृत्य सुधासिन्धौ निवेशिता।।७४।।
यत्र खेलन्ति बहुशो मातङ्गाश्च करेणुभिः।

Nijanand App

57. योगी लोग योग, यज्ञ, तप, आदि के द्वारा और ज्ञान, तीर्थ, वैराग्य द्वारा जिसको बिना साधु सेवा के प्राप्त नहीं कर सकते हैं।

58. यह संसार केवल माया है, वस्तुतः यह कुछ नहीं है। पृथ्वी, आदि सात लोक काल द्वारा कवलित हो जाते हैं।

59. विषय के आनन्द से सन्तुष्ट संसार और सभी देवता इस नित्य आनन्द महासागर का एक कण भी नहीं प्राप्त करते हैं।

60. वेद में कर्म को प्रधानता दी गई है और उससे कर्ममयी गति होती है। जिस प्रकार पानी के वेग से एक तिनका घुमाया जाता है, ऐसे ही कर्म के द्वारा लोग घुमाए जाते हैं।

61. वे सैकड़ों-करोड़ों कल्प में भी उस तत्व को नहीं जान पाते हैं। कुछ कम ज्ञान वाले लोग स्वर्ग प्राप्ति के लिए यज्ञ करते हैं।

62. कुछ लोग अष्टांग योग द्वारा बुद्धि को वश में करके वर्ण और आश्रम व्यवस्था के आचारों का पालन करते हैं।

63. कुछ लोग पत्ते ही खाते हुए, कुछ वायु भक्षण करते हुए, कुछ दिगम्बर और कुछ काले लाल वस्त्र धारण कर,

64. कुछ सिर मुड़ाए हुए फल मूल खाने में तत्पर और कुछ लोग भस्म लगाकर एवं खाकर दुर्बल लोग मोक्ष चाहते हैं।

65. वे बिना तत्व-ज्ञान के इन तरीकों से मोक्ष प्राप्त नहीं कर सकते हैं। यह माया का सागर है जो न होता हुआ भी होता हुआ प्रतीत होता है।

66. अनेक करोड़ ब्रह्माण्ड रूप बुलबुलों से भरा है और तत्व रूपी तरंगों के समूह से जटिल है। वासना रूपी जल की गुफा है।

67. पाप-पुण्य सभी खूब ऊंचे-ऊंचे तट हैं। मोह रूपी कीचड़ भरा है। सत्-असत् कर्म के कमल एवं कैरव से पूरित अनन्त विश्व है।

68. अहंकार रूपी शिशुमार से निरन्तर उपासित रहता है। तृष्णा रूपी फेन समूह भरा रहता है। कामना तट के वृक्ष हैं।

69. काम, क्रोध, महालोभ रूपी गढ़े पत्थर दुःख देते हैं। परनिन्दा, परद्रोह ही इसके भयानक सर्प हैं।

70. श्रद्धा रूपी श्रेष्ठ कमलनियां इसमें हैं। नष्ट न होने वाला मोह इसको घेरे है। विषय, तृष्णा से पीड़ित होकर इसमें अनेक बार गिरते हैं।

71. इस रंगीन कमलों की खान को देखकर कोई इसी में रम जाता है। भंवरे की तरह लोभी वह इसका सेवन करते हुए भी तृप्त नहीं होता है।

72. दिन का अन्त न जानते हुए लोभित मन अजितेन्द्रिय भंवरा मधु के लोभ से उसी में विलीन हो जाता है।

Nijanand App

अतृप्यमानाः सततं कमलामोदलम्पटाः॥७५॥
यत्र मत्स्यगणान् बालान् निघ्नन्ति बलवत्तया।
मकरास्तानपि क्षिप्रं निगृह्णातीह जालिकः॥७६॥
शिशुमारभयोद्विग्नाः पिपासामतिवाह्य ते।
न पिबन्त्यपि पानीयं पद्मिनीछायमाश्रिताः॥७७॥
यत्र पान्थो भुजङ्गेन परिदष्टोम्बुलालसः।
चिकित्सकेन सुज्ञेन रसदानेन बोधितः॥७८॥
यत्राभिमानिनी वेश्या सेव्यमानातिनिर्घृणैः।
उपस्थिता पञ्चनटैर्नित्यसेवनतत्परैः॥७९॥
पिपासवो नटान् यान्ति प्रापयन्ति नटीं हि तान्।
ततः क्रीडन्ति वेगेन स्वच्छन्दं च तदाज्ञया॥८०॥
यदि सूर्यसहस्राणां प्रकाशपरमोज्वलम्।
उदेति ज्ञानविज्ञानं तदा शुष्यति नान्यथा॥८१॥
उदिते तु परे ज्ञाने नाहं यूयं न किञ्चन।
न यास्यन्ति तरं तत्वं मदाद्या अपि देवताः॥८२॥
किमुताल्पधियश्चान्ये स्वाप्निका इव जाग्रतम्।
यन्निर्बन्धसमाविष्टा प्राणेभ्योप्यति वल्लभा॥८३॥
नोपदिष्टा दूनचित्ता केतुमाले तपस्यति।
तस्मान्मदानन्दमूलं नाहं वक्ष्ये कथञ्चन॥८४॥
अन्यन्निवेद्यतां कृत्यं यदि योग्यं भवेन्मम।
इत्युक्तास्तेमराः सर्वे वीक्ष्यमाणाः परस्परं॥८५॥
परं विस्मयमापन्नाः श्रुत्वा शंकरभाषितम्।

देवा ऊचुः

देवदेव महादेव जगतां ज्ञानदो गुरुः॥८६॥
यदात्थ देव तत्सत्यं विष्णुपत्नी तपस्यति।
तत्तपो वह्निना विश्वं परितप्तं समन्ततः॥८७॥
किमद्य करणीयं वै तत्त्व शम्भो विचार्यताम्।

शिव उवाच

रमा देवी जगच्छक्तिः प्रकृत्यंशमयी शिवा।
विष्णोरानन्दलहरी यया भाति जगच्छिवम्॥८८॥
सा तपश्चरते तीव्रं जगद्दाहकरंमहत्।

Nijanand App

73. जहां पर हंसगण कमलाकर को सूंघकर शीघ्र ही उसे नश्वर जानकर सुख से अपने घोंसलों में जाकर शयन करते हैं।

74. जहां प्यास से व्याकुल गाय कीचड़ में फंस जाती है और महात्मा द्वारा वह निकाली जाकर सुधा सागर में बैठा दी जाती है।

75. जहां पर अपनी हथिनियों के साथ हाथी नाना प्रकार से खेलते हैं। कमल वन के आमोद के निरन्तर लोभी तृप्त नहीं होते हैं।

76. जहां पर मगर छोटी-छोटी मछलियों को शक्तिशाली होने के नाते खा जाते हैं और उन मगरों को जाल लेकर आने वाला व्यक्ति पकड़ लेता है।

77. जहां पर मत्स्यगण शिशुओं के मारने के भय से उद्विग्न होकर प्यास को भूलकर पानी नहीं पीते हैं और कमलिनी की छाया में बैठ जाते हैं।

78. जहां पर पानी की लालसा से गया हुआ पथिक सांप से डस लिया जाता है और जानकार चिकित्सक ज्ञान द्वारा उसे जगा देता है।

79. अभिमानी वेश्या अति निन्दनीय लोगों द्वारा सेवा की जाती हुई नित्य सेवा करने में तत्पर पांच नटों द्वारा उपस्थित होती है।

80. पिपासु लोग नटों के पास जाते हैं और वह लोग उसे नटी के पास पहुंचा देते हैं और उसकी आज्ञा से वे लोग स्वच्छन्द हो क्रीड़ा करते हैं।

81. यदि परम उज्ज्वल सहस्त्रों सूर्य के प्रकाश के समान ज्ञान-विज्ञान का उदय होता है तभी वह माया सागर सूखता है, अन्यथा नहीं।

82. और जब परम ज्ञान उदित होता है तो न मैं, न तुम और न कुछ और शेष रहता है। हमसे लेकर सभी देवता इसके (परम ज्ञान) बिना परम तत्व को प्राप्त नहीं कर सकते।

83. तो अल्पबुद्धि वालों जैसे स्वप्न देखने वाले व्यक्ति जाग्रत अवस्था को नहीं जा सकते, का कहना ही क्या। जिसके जानने का हठ करने वाली प्राणों से भी प्रिय

84. पत्नी को मैंने उपदेश नहीं दिया और वह दुःखी चित्त होकर केतुमाल में तपस्या करती हैं। इसलिए अपने आनन्द के मूल को मैं किसी प्रकार नहीं बताऊंगा।

85-86. यदि अन्य कोई कार्य हो तो मुझे बताएं। इस प्रकार शंकरजी द्वारा कहे गए वे देवता लोग एक-दूसरे को देखते हुए शंकर के कथन को सुनकर अत्यन्त विस्मित हुए। देवों ने कहा—हे देवाधिदेव! महादेव! संसार को ज्ञान देने वाले गुरु!

87. जो आप कहते हैं वह सत्य है कि विष्णु-पत्नी तपस्या कर रही हैं, उनकी तप की अग्नि से समस्त संसार तप्त हो रहा है।

Nijanand App

पतिव्रता पतिं त्यक्त्वा नान्यं चापि प्रभाषते॥८९॥
न तस्मादन्यसंसाध्या बिना स्वपतिमाधवम्।
तस्माद्विष्णुं व्रजामोद्य सर्वे चापि वयं सह॥९०॥
गत्वा निवेदयिष्यामो जगतामशिवं च यत्।
दृष्ट्वास्मानपि मानार्हान् जगद्भङ्गमपीक्ष्य च॥९१॥
निषेधयिष्यति रमां तपसोसौ दुरत्ययात्।
इति मे वाचमाकर्ण्य देवाः सर्वे गतज्वराः॥९२॥
अहं चापि च तैः सार्धं गतः प्रियानिकेतनम्।
यत्र सर्वे घनश्यामाः पीतकौशेयवाससः॥९३॥
किरीटिनः कुण्डलिनः शंखचक्रगदाधराः।
तत्र गत्वा जगन्नाथः स्तुतो देवगणैरपि॥९४॥
नमो मत्स्यकूर्मादिनानावतारैर्जगद्रक्षणायोद्यतायार्त्तिहर्त्रे।
जंगद्बन्धवे बन्धहर्त्रे च भर्त्रे जगद्विप्लवोपस्थितौ पालयित्रे॥९५॥
यदा वेदपन्थास्त्वदीयः पुराणः प्रभज्येत पाखण्ड चण्डोग्रवादैः।
तदा देवदेवेश सत्त्वेन सत्त्वं वपुश्चारु निर्माय रक्षां विधत्से॥९६॥
भूम्यम्बुतेजोनिलखात्मकं यत् ब्रह्माण्डमेतत्प्रविशन्निव त्वम्।
चराचरं जीव इति प्रसिद्धिं गतोसि तस्मान्न भवत्परं यत्॥९७॥
रक्षस्व नाथ लोकांस्त्वं तपसोग्रेण पद्मया।
दह्यमानान् गतानन्दान् रक्षितासीश्वरो यतः॥९८॥
निवर्तय परमां साध्वीं तव प्राणाधिकां प्रियां।
न वै स्त्रियो विरोद्धव्या गृहमेधिभिरन्वहम्॥९९॥
यद्गृहे स्त्री विरुद्धा स्याद्यदिवाप्यवमानिता।
न तद्गृहे सुखं सम्पन्नचारोग्यं प्रजासुखम्॥१००॥
कथं सुखेन वर्त्तेत विश्वमेतद्भवद्गृहम्।
त्वयि विरोधमापन्ने गृहिण्या समशीलया॥१०१॥
तस्माद्विश्वस्य रक्षार्थं सावधानो भव प्रभो।
इत्यावेद्यामराः सर्वे प्रणम्य जगतां पतिम्॥१०२॥
बद्धाञ्जलिपुटास्तूष्णीमासन् म्लानमुखाम्बुजाः॥१०३॥
इति श्रीपञ्चरात्रे माहेश्वरतन्त्रे उत्तरखण्डे शिवपार्वती संवादे तृतीयं पटलम्॥३॥

Nijanand App

88. हे शम्भो! आज इस अवस्था में क्या करना है, विचार करना चाहिए।

शिव ने कहा—

रमा देवी जगत् की शक्ति हैं, प्रकृति की अंश शिवा हैं, वह विष्णु की आनन्द लहरी हैं जिनके द्वारा जगत् रूपी शिव का आभास हो रहा है।

89. वह संसार को भस्म कर देने वाला महान् तप कर रही हैं। वह पतिंव्रता पति को छोड़कर किसी से बात भी नहीं करती हैं।

90. इसलिए अपने पति माधव के बिना दूसरे से कुछ नहीं हो सकता है। तो फिर हम सब लोग विष्णु के पास चलें।

91-92. और चलकर संसार का जो अनिष्ट हो रहा है, उसका निवेदन करें। वह संसार का विनाश देखकर और सम्माननीय हम लोगों को देखकर रमा को भयंकर तप से रोकेंगे। ऐसी मेरी वाणी को सुनकर उन देवताओं का कष्ट दूर हो गया।

93-94. मैं भी उन लोगों के साथ प्रिय विष्णु के निवास स्थान को गया, जहां पर सभी लोग घनश्याम पीले रेशमी वस्त्र धारण किए हुए मुकुट, कुण्डल, शंख, चक्र, गदा धारण किए हुए थे। वहां जाकर हम सभी ने जगन्नाथ की स्तुति की।

95. मत्स्य, कच्छप, आदि अनेक अवतारों के द्वारा जगत् की रक्षा को तत्पर, दुःख दूर करने वाले, संसार के बन्धन को काटने वाले स्वामी, संसार में विप्लव होने पर उसकी रक्षा करने वाले, आपको नमस्कार है।

96. जब आपका प्राचीन वेद मार्ग पाखण्डी प्रचण्ड उग्रवादी लोगों द्वारा भंग किया जाता है, तो हे देवेश! आप सत्व गुण द्वारा सत्व शरीर धारण करके संसार की रक्षा करते हैं।

97. पुनः पृथ्वी, जल, तेज, वायु एवं आकाश रूपी ब्रह्माण्ड में प्रवेश करते हुए से आप चराचर जीव की प्रसिद्धि पाते हैं, इसलिए आपसे भिन्न अथवा परे कोई संसार नहीं है।

98. हे नाथ! लक्ष्मी के उग्र तप से जलते हुए आनन्दरहित हम लोगों की आप रक्षा कीजिए क्योंकि आप ईश्वर हैं।

99. अपनी प्राण से अधिक प्रिया साध्वी रमा को मना कीजिए। गृहस्थों द्वारा प्रतिदिन स्त्रियों से विरोध नहीं करना चाहिए।

100. जिस घर में स्त्री से विरोध होता है या स्त्री अपमानित होती है, उस घर में सुख, सम्पत्ति, आरोग्य और सन्तान-सुख नहीं होता।

101. यह संसार आपका गृह है। शान्त स्वभाव वाली गृहिणी से आपका विरोध होने पर यह संसार कैसे सुखी रह सकता है।

102. इसलिए, हे प्रभो! आप विश्व की रक्षा के लिए सावधान हो जाएं। यह कहकर सभी देवता लोग जगतपति को प्रणाम करके

103. हाथ जोड़कर मुर्झाये हुए मुख कमल वाले होकर चुप हो गए।

Nijanand App

चतुर्थं पटलम्

शिव उवाच

अथ तेषां वचः श्रुत्वा देवानामतिविक्लवम्।
प्रहसन्वाचमकिरत् देवानां हृदयङ्गमां॥१॥

विष्णुरुवाच

भो महेश विधे ब्रह्मन् शक्राद्याः शृणुतामराः।
मम प्राणप्रिया देवी रमा देवी तपस्विनी॥२॥
कलहान्तरिता जाता केतुमाले तपस्यति।
तेनोग्रतपसा विश्वं परितप्तं समन्ततः॥३॥
न सा सन्तोषमायाति स्वनिश्चितमृते सुराः।
स्त्रीणां जातिस्वभावोयं कार्कश्यमविवेकिता॥४॥
अशौचं निर्दयत्वं च निर्बन्धः साहसं तथा।
लोभानृतं च कपटं मूर्खत्वमपदे च रुक्॥५॥
नष्टं कुलं कुतनयात् नष्टं राज्यं कुमन्त्रिणा।
ब्राह्मणः शूद्रसेवाभिरनभ्यासात्सरस्वती॥६॥
निद्रया नष्टमायुष्यं अनुद्योगात्समृद्धयः।
गुणा लोभैर्धनं पापैः सुखं नष्टं कुभार्यया॥७॥
यत्रानुकूल्यं दम्पत्योस्त्रिवर्गस्तत्र वर्द्धते।
प्रातिकूल्येन नश्येत ग्रीष्मे बीजांकुरा इव॥८॥
देवी निर्बन्धमापन्ना विरमेन्न कथञ्चन।
जगतामसुखं भूरि प्रवृत्तं तन्निवर्तते॥९॥
प्रतिक्रियां करिष्यामि यात यूयं मुदान्विताः।
इति देवा वचः श्रुत्वा परिक्रम्य जनार्दनम्॥१०॥
प्रणम्य पुनरायाताः स्वं स्वं धाम प्रहर्षिताः
ब्रह्मा विष्णुश्च ईशश्च केतुमालं गतास्तथा॥११॥
यत्र सा निश्चलवपुः पदांगुष्ठेन संस्थिता।
ऊर्ध्वदृष्टिर्निरुद्धान्तःपवना सा मनस्विनी॥१२॥
स्वभालशिखिविद्योतज्ज्वालाभिर्ग्रसतीव हि।
ब्रह्माण्डं कवलाकारं कल्पान्तेग्निशिखा यथा॥१३॥
दृष्ट्वा तां च तथाभूतां त्रयो ब्रह्मादिका वयं॥१३॥
परमं विस्मयं जग्मुर्देव्याश्चरितमद्भुतम्॥१४॥

Nijanand App

शिव-पार्वती के संवाद के पांच रातों के समय में माहेश्वरतन्त्र के उत्तर खण्ड का तीसरा अध्याय समाप्त हुआ।

चौथा अध्याय

शिव ने कहा—

1. इस प्रकार देवताओं के दु:खपूर्ण वचनों को सुनकर हंसते हुए विष्णु भगवान ने देवताओं को प्रसन्न करने वाली वाणी कही—

विष्णु ने कहा—

2. हे महेश, हे ब्रह्मा, इन्द्रादि देवताओ! सभी सुनो, मेरी प्राणप्रिया तपस्विनी रमा देवी

3. कलह करके चली गई और केतुमाल पर तपस्या कर रही है। उसके उग्र तप से संसार चारों ओर से संतप्त हो रहा है।

4. वह अपने निश्चय से भिन्न किसी अन्य से सन्तुष्ट नहीं हो रही है। हे देवताओ! यह कर्कशता और अविवेकता स्त्रियों का जातीय स्वभाव होता है।

5. अपवित्रता, निर्दयता, हठ, दु:साहस, लोभ, असत्य और कपट, मूर्खता तथा क्रोध स्त्रियों के स्वभाव में है।

6. कुपुत्र से कुल का नाश हो जाता है। खराब मन्त्री से राज्य का नाश हो जाता है। शूद्र की सेवा से ब्राह्मण का नाश हो जाता है। अभ्यास न करने से विद्या नष्ट हो जाती है।

7. निद्रा से आयु नष्ट हो जाती है। उपयोग न करने से सम्पत्ति नष्ट हो जाती है। लोभ से गुण, पाप से धन और दुष्ट पत्नी से सुख नष्ट हो जाता है।

8. जहां पर स्त्री-पुरुष में अनुकूलता होती है वहां धर्म, अर्थ, काम की वृद्धि होती है और प्रतिकूल होने पर जिस प्रकार ग्रीष्म में बीज के अंकुर नष्ट हो जाते हैं उसी प्रकार यह नष्ट हो जाते हैं।

9. देवी रमा हठ किए हुए हैं। किसी प्रकार रुक नहीं रही हैं। संसार का दु:ख उससे बहुत बढ़ रहा है।

10. मैं कोई उपाय करूंगा, आप लोग प्रसन्न होकर जाएं। देवता इस वाणी को सुनकर जनार्दन की परिक्रमा करके

11. और प्रणाम करके प्रसन्न होकर अपने-अपने घर चले आए और ब्रह्मा, विष्णु और शंकर तब केतुमाल को गए,

12. जहां पर वह (लक्ष्मी) निश्चल होकर पैर के अंगूठे पर स्थित होकर ऊपर की ओर दृष्टि लगाए अन्दर की वायु को रोके—

13. अपने मस्तक के अग्नि की चमकती हुई ज्वाला से काल के अन्त के समय जैसे प्रलयाग्नि की शिखा से संसार कवलित होता है वैसे ही मानो ब्रह्माण्ड को ग्रसित करने जा रही हों, हम तीनों ब्रह्मादिकों ने उन्हें इस अवस्था में देखा।

Nijanand App

ततस्तन्निकटं गत्वा हरिः प्राह हसन्निव।
रमे प्राणप्रिये देवि वृथा किं परितप्यसे॥१५॥
निवृत्तिमेहि तपसो वृथायाप्तफलादिह।
बह्वायासं चाल्पफलं न कर्माचरणं सताम्॥१६॥
ध्यानानन्दरसे लीनं तन्मनोवतरत् क्षणात्।
एवमुक्ते तु हरिणा प्रियां सान्त्वयता भृशम्॥१७॥
ददर्श प्रियमंकस्थं घनश्यामं चतुर्भुजं।
विरञ्चीशानसहितं वनमालाविभूषितम्॥१८॥
ननाम दण्डवद्भूमौ कृताञ्जलिपुटा रमा।
नोवाच वचनं किञ्चित् नोत्थितापि पुना रमा॥१९॥
हरिस्तत्प्रेम परमं स्वस्मिन् वीक्ष्य सुविस्मितः।
प्राह देवीं हरिः प्रीत्या शृण्वतो विधिरुद्रयोः॥२०॥

विष्णुरुवाच

अहो धन्यासि धन्यासि कमले लोकवन्दिते।
आत्मनोर्धं स्त्रियः साध्व्यः पुंसो धर्मपरायणाः॥२१॥
स्त्रीसाहाय्येन जेतव्या लोका धर्मपरायणैः।
अपत्नीकस्य ते सर्वे भवन्ति विफला यतः॥२२॥
स्त्रीमूलं सर्वधर्माणां तदभावात्कुतश्च ते।
तैर्विना न भवन्त्येव लोका ज्ञानमथापि वा॥२३॥
धिक् जीवितं स्त्री रहितस्य लोके जुगुप्सितं धर्मविदां समाजे।
देवा मुनीन्द्रातिथयोपि यस्य गृहाण्युपेक्षन्त इवाधनं जनाः॥२४॥
किं धनैर्विभवाकल्पैर्विभवैः किं सुखच्युतैः।
किं सुखं यस्य नो वेश्मन्युदारा धर्मचारिणी॥२५॥
दुःशीलं दुर्नयं दुष्टं दरिद्रं जरया प्लुतं।
पतिं पुष्णाति कुलजा तस्मात्स्त्री तु गरीयसी॥२६॥
न मित्रं स्त्रीसमं मन्ये न बन्धुं न सहोदरम्।
यतस्ते पृथगालोच्याः स्त्री तु नैव कदाचन॥२७॥
सुखे वा यदि वा दुःखे जीविते मरणेऽपि वा।
न मित्रं स्त्रीसमं क्वापि सत्यं सत्यं प्रियंवदे॥२८॥
तस्मात्त्वं तु विशेषेण स्त्रीरत्नं मम रोचसे।
मूर्धन्या पतिदेवानां यतस्त्वं परिगीयसे॥२९॥

Nijanand App

14. देवी के इस अद्‌भुत चरित्र से हम सभी विस्मित हुए।

15. इसके बाद विष्णु उनके पास जाकर हंसते हुए बोले, हे प्राणप्रिये लक्ष्मीजी! अनावश्यक रूप से क्यों अपने को सता रही हो?

16. आपके तप रूपी परिश्रम का फल व्यर्थ है, शांत हो जाओ। सज्जन लोग ऐसा कार्य नहीं करते जिसमें श्रम तो अधिक हो और लाभ कम हो।

17. इस प्रकार प्रिया को सांत्वना देते हुए हरि के कहने पर ध्यान के आनन्द रस में लीन उनका मन क्षण भर में ध्यान से अलग हो गया।

18. गोद में स्थित चार भुजाओं वाले, बादलों के समान वर्ण वाले, वन मालाओं से शोभित विष्णु भगवान को ब्रह्मा तथा शंकर के साथ देखा।

19. हाथ जोड़कर रमा ने भूमि पर दण्डवत् प्रणाम किया। उन्होंने न तो कुछ कहा और न उठीं।

20. हरि ने अपने प्रति उस महान् प्रेम को देखकर विस्मित होकर ब्रह्मा और शंकर को सुनाते हुए प्रीतिपूर्वक देवी से कहा—

विष्णु ने कहा—

21. हे कमला! लोगों से पूजित तुम धन्य हो, धन्य हो। धर्मपरायणा साध्वी स्त्रियां पुरुष का अपना आधा अंग होती हैं।

22. धर्मपरायण पुरुषों को चाहिए कि स्त्री की सहायता से लोकों को जीतें। पत्नीविहीन के लिए वे सभी लोक निष्फल होते हैं।

23. सब धर्मों का मूल स्त्री है। स्त्री के न होने पर वह धर्म कैसे प्राप्त हो सकते हैं? धर्म के बिना लोक और ज्ञान भी प्राप्त नहीं होता।

24. धर्मज्ञों के समाज में निन्दित संसार में स्त्रीरहित पुरुष के जीवन को धिक्कार है। देवता, मुनिराज, अतिथि भी जिस प्रकार निर्धन की उपेक्षा करते हैं, उसी प्रकार उसके घर की उपेक्षा करते हैं।

25. उस अपार धन-वैभव से क्या लाभ जो सुख न दे सके और वह क्या सुखी है जिसके घर में उदार धर्मचारिणी पत्नी नहीं है।

26. दु:शील, दुर्नय, दुष्ट, दरिद्र, वृद्ध पुरुष का भी अच्छी कुलीन स्त्री पोषण करती हैं। इसलिए स्त्री महान् है।

27. स्त्री के बराबर कोई मित्र नहीं, कोई बन्धु नहीं, कोई भाई नहीं है, क्योंकि उन पर विचार पृथक् किया जाता है और स्त्री पर अपने से पृथक् कोई विचार नहीं किया जाता।

28. सुख या दु:ख, जीवन या मरण इन सभी अवस्थाओं में स्त्री के समान कोई मित्र नहीं है। हे प्रियंवदे! मैं सत्य कह रहा हूं।

Nijanand App

स्त्रीणामपि परो धर्मः पतिशुश्रूषणं च यत्।
कायेन मनसा वाचा ततोऽन्यन्नास्ति किञ्चन॥३०॥
या स्त्री पतिव्रता लोके पतिधर्मपरायणा।
तदुक्तमेव कुर्वाणा सुखमक्षयमश्नुते॥३१॥
तस्मादहं ते तपसा परितुष्टोस्मि साम्प्रतम्।
उत्तिष्ठोत्तिष्ठ भद्रं ते तपसो लोकदुःखदात्॥३२॥
व्यतीयुः सप्तकल्पास्ते साधिकाः कोमलां तनुम्।
ग्लपयन्त्या ह्यनुदिनं नोचितस्ते वृथा श्रमः॥३३॥
पुष्पशय्यासु रुचिरं वपुस्ते परिखिद्यते।
सा कथं चण्डतिग्मांशुं सहते तापवर्षिणम्॥३४॥
शीतोष्णवातवर्षाभ्यां परिक्लिष्टा वपुर्लता।
वेणीभूता मूर्धजास्ते मनो मे खेदयन्ति च॥३५॥
मन्दास्मितप्रभोदारं मुखं बिम्बाधरं तव।
हिमक्लिष्टं न चाभाति हेमन्तकमलं यथा॥३६॥
चण्डतिग्मांशुतापेन कपोलौ श्यामलौ तव।
मुक्तादामश्रिया हीनौ न शोभा ते (शोभेते) यथा पुरा॥३७॥
अनञ्जनं च नयनं भालं काश्मीरवञ्चितम्।
मुखं ताम्बूलरहितं वीक्षतः कस्य ते सुखम्॥३८॥
मा शोषय वपू रम्यं तपसा दुर्द्धरेण वै।
मूर्ध्ना प्रणम्य ते पादं प्रार्थयामि पुनः पुनः॥३९॥
किं ध्यायसि रह इति यत्प्रष्टं कमले त्वया।
अवाच्यं तत्तु जानीहि अपि कल्पायुतायुतैः॥४०॥
तथापि कथयिष्यामि कृतस्ते तपसा ह्यहम्।
साक्षान्न जिह्वया वाच्यं तत्तु देवि कथञ्चन॥४१॥
तथापि कथयिष्यामि प्रकारं शृणु सुन्दरि।
द्वापरान्तेऽष्टाविंशतिमे असुरा नृपरूपिणः।
वेदमार्गविनाशाय यतिष्यन्ति दुराशयाः॥४२॥
स्त्रीगोब्रात्मणसाधूनां धर्मिष्ठानां तपस्विनां।
वर्णाश्रमाणां सेतूनां स्वस्वधर्मानुवर्तिनाम्॥४३॥
करिष्यन्ति यदा पीडां तदाहं धर्मगुप्तये।
वेदधर्मादिरक्षार्थं विनाशाय दुरात्मनाम्॥४४॥
ययातिकुलजातस्य यदुराजस्य वेश्मनि।
वासुदेवो भविष्यामि नाम्ना कृष्णेति विश्रुतः॥४५॥

Nijanand App

29. इसलिए तुम विशेष रूप से मुझे स्त्री रत्न के रूप में रुचिकर हो क्योंकि पति को देवता मानने वालियों में तुम मूर्धन्य कही गई हो।

30. स्त्रियों के लिए शरीर, मन तथा वाणी से पति की सेवा को परम धर्म कहा गया है, उससे बढ़कर कोई धर्म नहीं।

31. जो पतिव्रता स्त्री धर्मपरायण पति के कहे हुए कार्यों को संसार में करती है, वह अक्षय सुख प्राप्त करती है।

32. इसलिए अब मैं तुम्हारे तप से प्रसन्न हूं। संसार को दुःख देने वाले तप से तुम उठो, तुम्हारा कल्याण हो।

33. तप करते-करते सात से अधिक कल्प व्यतीत हो गए हैं। तुम अपने कोमल शरीर को दिनोंदिन गला रही हो।

34. तुम्हारा सुन्दर शरीर पुष्प-शैय्या पर भी खिन्न होता है। वह शरीर ताप की वर्षा करने वाले प्रचण्ड सूर्य की किरणों को कैसे सहन करता है।

35. तुम्हारी शरीर रूपी लता शीत, उष्ण वायु और वर्षा से कुम्हला गई है। तुम्हारे वेणीभूत केश मेरे मन को खिन्न बना रहे हैं।

36. मंदहास की प्रभा से सुन्दर तुम्हारा बिम्बाधर मुख हेमन्त ऋतु में जैसे कमल पाले से मुरझा जाता है, वैसे ही मुरझाया हुआ सुशोभित नहीं हो रहा है।

37. प्रचण्ड सूर्य की किरणों से संतप्त गाल काले पड़ गए हैं और मुक्ता की माला की श्री से रहित तुम्हारी शोभा पहले जैसी नहीं रही है।

38. अंजन रहित नेत्र, कस्तूरी रहित तुम्हारा मस्तक, ताम्बूल रहित मुख देखते हुए किसको सुख हो सकता है।

39. इस कठोर तप से सुन्दर शरीर को मत सुखाओ। मस्तक से तुम्हारे चरणों को प्रणाम कर पुनः-पुनः प्रार्थना कर रहा हूं।

40. हे कमले! तुमने जो मुझसे पूछा था कि एकान्त में किसका ध्यान कर रहे हो, वह करोड़ों कल्पों में भी अवर्णनीय है, उसे ऐसा समझो।

41. फिर भी तुम्हारे तप के कारण तुम्हारे लिए मैं कहूंगा। हे देवि! साक्षात् जिह्वा से वह किसी प्रकार नहीं कहा जा सकता है।

42. हे सुन्दरी! तथापि प्रकारान्तर से कहूंगा, सुनो। अट्ठाइसवें द्वापर के अन्त में राजा रूपी असुर वेद मार्ग के विनाश के लिए प्रयत्न करेंगे।

43-45. स्त्री, गऊ, ब्राह्मण, साधु, धार्मिक, तपस्वी, वर्णाश्रमों के सेतु, अपने-अपने धर्म पर चलने वाले लोगों को जब यह पीड़ित करेंगे, तब मैं धर्म की रक्षा के लिए और वेद धर्मों

Nijanand App

तत्रापि त्वं रुक्मिणीति भविष्यसि वराङ्गना।
तत्र त्वां केचन नृपा असुरा ज्ञानदुर्बला:।।४६।।
आयास्यन्ते समुद्वोढुं जित्वा तान् समरे खलान्।
उद्वहिष्यामि भवतीं मच्चितां नात्र संशय:।।४७।।
तदा कुलाङ्गना: पुत्रपतिवन्त्य: पतिव्रता:।
गास्यन्ति मङ्गलार्थं तु मच्चरित्राणि सुन्दरि।।४८।।
उपचारविधानेन तच्छ्रुत्वा हृदयं मम।
भविष्यति सुखापूर्णं यथाम्भोधिर्विधूदये।।४९।।
ईदृक्तादृगितिगिरां न वक्तुं भवतीं क्षमम्।
स्वयमेवानुभवति शर्कराक्षीरपानवत्।।५०।।
तत्सुखाम्भोनिधेर्देवि कणिकापि कथञ्चन।
न ब्रह्मादिषु देवेषु वर्ततेन्यत्र का कथा।।५१।।
नोपदिष्टं तु तद्वेति न शब्दैरुपदिश्यते।
केवलानुभाकारं वेत्येकोनुभवी सदा(१) ।।५२।।
अनुमानप्रमाणेन ह्यनुमेयं कथञ्चन।
लक्षणैर्देव देवेशि नान्योपायै: कथञ्चन।।५३।।
लक्षणानि तु ते वच्मि शृणु सुन्दरि यत्नत:।
अन्त: सुखसमुद्वेल्लो बहि: सन्धानविस्मृति:।।५४।।
नेत्रयोरश्रुसंवाह: कम्प: स्वेदोदयस्तथा।
रोमाञ्च: कण्ठरोधश्च लक्षणानि च वै विदु:।।५५।।
इत्येतैर्लक्षणैर्देवि मदन्त:करणस्थितं।
(१) सुखं मद्ध्यानयोग्यं यत्तज्जानिष्यसि केवलं।।५६।।
तावत्वं तं च समयं परिपालय वल्लभे।
इत्येतत्ते समाख्यातं सर्वस्वं मे न संशय:।।५७।।
श्रुतीनां चापि सर्वासां रहस्यं त्विदमेव हि।
इदमेव परं ज्ञानमिदमेव परा क्रिया।।५८।।
इदमेव परो योग इदमेव परो मख:।
इदमेव परं ध्येयमिदमेव परा गति:।।५९।।
इदमेव परं ज्ञेयमिदमेव महाधनं।
इदमेवाखिला सम्पत् सत्यं सत्यं पतिव्रते।।६०।।
इत्येवं विष्णुना प्रोक्ता रमा देवी पतिव्रता।
जहौ तापं च ग्रीष्मार्त्ता भूरिवाम्भोदतर्पिता।।६१।।

Nijanand App

आदि की रक्षा के लिए, दुष्टों के विनाश के लिए ययाति के कुल में उत्पन्न यदु राजा के घर में वासुदेव के रूप में कृष्ण नाम से मैं प्रसिद्ध होऊंगा।

46. उस जन्म में भी रुक्मिणी नाम से प्रसिद्ध सुन्दरी स्त्री तुम होगी। वहां पर ज्ञान

47. दुर्बल असुर राजा तुम्हारे साथ विवाह करने का प्रयास करेंगे। उन खलों को युद्ध में जीतकर मेरे में लगे चित्त वाली तुमसे मैं विवाह करूंगा। इसमें सन्देह नहीं है।

48. उस समय पुत्र और पति वाली पतिव्रता कुलीन स्त्रियां मंगल के लिए मेरे चरित्रों का गायन करेंगी।

49. इस उपचार के विधान से इस ज्ञान को सुनकर मेरा हृदय चन्द्रमा के उदय में समुद्र जैसे सुख से भर जाएगा।

50. शकरयुक्त दूध पीने वाला दूध ऐसा है या वैसा है, इसको कहने में सक्षम नहीं होता स्वयं अनुभव करता है।

51. उस सुख रूपी सागर की एक कणिका भी किसी भी प्रकार ब्रह्मादिक देवताओं में नहीं पाई जाती है, दूसरी जगह की बात क्या।

52. हमने उसका उपदेश नहीं किया क्योंकि शब्दों से उपदेश नहीं किया जा सकता। केवल अनुभव के आकार को अनुभवी ही सदा जानता है।

53. अनुमान प्रमाण से ही किसी प्रकार अनुमेय है। हे देवेशि! लक्षणों से ही उसे समझ सकते हैं। अन्य उपायों से किसी प्रकार नहीं समझ सकते।

54. हे सुन्दरि! तुम्हारे लिए मैं लक्षण बता रहा हूं, ध्यानपूर्वक सुनो। अन्तःसुख का उदय और बाह्य जगत् की विस्मृति,

55. नेत्र से आंसू बहना, कम्पन, पसीना निकलना, रोमांच और कण्ठरोध लक्षण बतलाए गए हैं।

56. हे देवि! इन लक्षणों से मेरे अन्तःकरण स्थित सुख जो मेरे ध्यान योग्य है, केवल उस सुख को जानोगी।

57. हे वल्लभे! उस समय तक तुम मेरी प्रतीक्षा करो। तुम्हें मैंने अपना सर्वस्व बता दिया, इसमें सन्देह नहीं है।

58. सारे वेदों का यही रहस्य है, यही परम ज्ञान है, यही परम क्रिया है।

59. यही परम योग है, व परम मख (यज्ञ) है, परम ध्येय है, और परम गति है।

60. यही परम ज्ञेय है, यही महाधन है। यही सम्पूर्ण सम्पत्ति है। हे पतिव्रते! मैं सत्य कहता हूं।

Nijanand App

विकसन्नयनाम्भोजा प्रमोदभरविह्वला।
पपात पादयोर्भर्त्तुः दण्डवत् विमलाशया।।६२।।
ब्रह्मणापि मया चापि संस्तुता बहुधा गिरा।
तपसा फलमभ्येता कृतार्थास्मित्यमन्यत्।।६३।।
मुमुचुः पुष्पवर्षाणि नेदुर्दुन्दुभयो दिवि।
जगुर्गन्धर्वपतयो ननृतुश्चाप्सरोगणाः।।६४।।
सप्तर्षयः समभ्येत्य तुष्टुवुस्तामनिन्दितां।
तापः शशाम जगतां सर्वत्रासीत् सुमङ्गलं।।६५।।
ववौ वायुः सुखस्पर्शो दिगासीद्विमलप्रभा।
जलान्यासन्प्रसन्नानि जज्वलुर्वह्नयः शुभाः।।६६।।
मनांस्यासन्प्रसन्नानि भूतानां नष्टचेतसां।
इत्येवं मङ्गले जाते प्रसन्ना दिवि देवताः।
पृथिव्यां मानवाः सर्वे पाताले पन्नगेश्वराः।।६७।।
ब्रह्मलोकं गतो ब्रह्मा अहं कैलासमागतः।
गृहीत्वा च करे लक्ष्मीं विष्णुः स्वनिलयं प्रति।।६८।।
इत्येवं ते मयाख्यातं त्वया पृष्टमनिन्दिते।
तत्वज्ञानं न सुलभं तस्माद्गोप्यतमं प्रिये।।६९।।
तत्वज्ञानाधिकारिण्यो विरलाः सन्ति केचन।
कालेन बहुना देवि तान्परीक्ष्य प्रकाशयेत्।।७०।।
स्नेहाल्लोभाद्भयाद्वापि योन्यस्मै वक्ति मूढधीः।
नासौ ज्ञानी भवेद्देवि उदरम्भरिरेव सः।।७१।।
सहसंवाससेवाभिस्ताडनैः परुषोक्तिभिः।
यदा न याति कालुष्यं सोधिकारी मतो मम।।७२।।
श्रुत्वा तत्वकथावादं वपू रोमाञ्चसंकुलं।
हर्षाश्रुव्याकुले नेत्रे सोधिकारी मतो मम।।७३।।
परापवादविमुखो परस्त्रीधननिस्पृहः।
अक्रोधी लोभनिर्मुक्तः शान्तः शास्त्रविचक्षणः।।७४।।
वेदशास्त्रार्थतत्वज्ञः श्रद्धालुर्गतसाध्वसः।
गुणरागी सदात्यागी विरागी बाह्यवस्तुषु।।७५।।
पापभीतो भवेद्द्वेषी विषयादिष्वलोलुपः।
अन्यैश्चापि शुभैर्देवि लक्षणैश्चापि लक्षितः।।७५।।
अधिकारीति विज्ञेयस्तस्मै देयमिदं रहः।

Nijanand App

61. इस प्रकार विष्णु द्वारा कही गई पतिव्रता देवि रमा ने जैसे ग्रीष्म ऋतु से तपी भूमि मेघों द्वारा तृप्त होने पर संताप त्याग करती है, ऐसे ही संताप त्याग दिया।

62. उनके नेत्र रूपी कमल खिल गए। आनन्द के भार से विह्वल, निर्मल चित्त होकर विष्णु भगवान के चरणों में दण्डवत् गिर पड़ीं।

63. ब्रह्मा ने भी और मैंने भी अनेक प्रकार वाणी द्वारा स्तुति की। तप के फल को पाकर कृतार्थ हूं, ऐसा माना।

64. पुष्पों की वर्षा हुई। आकाश में दुन्दुभी बजी, गन्धर्वपतियों ने गायन किया और अप्सराओं ने नृत्य किया।

65. सप्तर्षियों ने आकर अनिन्दित लक्ष्मी की स्तुति की। संसार का ताप शान्त हो गया। सर्वत्र मंगल होने लगा।

66. स्पर्श में सुख देने वाली वायु बहने लगी। दिशाएं निर्मल हो गईं। जल भी तत्काल निर्मल हो गए। शुभ अग्नि जलने लगी।

67. नष्टचित्त प्राणियों के मन प्रसन्न हो गए। इस प्रकार मंगल समय उपस्थित होने पर स्वर्ग में देवता प्रसन्न हुए, पृथ्वी में मनुष्य, पाताल में नागराज।

68. ब्रह्मा ब्रह्मलोक चले गए। मैं कैलाश चला आया। लक्ष्मी का हाथ पकड़ विष्णु विष्णुलोक चले गए।

69. हे अनिन्दिते पार्वती! तुमने जो पूछा था वह मैंने बता दिया। तत्वं ज्ञान सुलभ नहीं होता, इसलिए यह परम गोपनीय है।

70. तत्व ज्ञान के अधिकारी कोई बिरले ही होते हैं। बहुत समय परीक्षित कर इसे प्रकाशित करना चाहिए।

71. स्नेह, लोभ या भय से जो मूढ़ बुद्धि दूसरों को कहता है, वह ज्ञानी नहीं होता। केवल पेट भरने वाला होता है।

72. एक साथ रहने से, सेवा से, ताड़ना से, कठोर युक्तियों से जिसका मन कलुषित न हो, वह अधिकारी है, ऐसा मेरा मत है।

73. तत्व कथा को सुनकर जिसका शरीर रोमांचित हो जाय, हर्ष के आंसुओं से नेत्र भर जाएं, उसे मैं अधिकारी मानता हूं।

74-75. दूसरे की निन्दा से विमुख, दूसरे की स्त्री और धन को न चाहने वाला, क्रोध न करने वाला, लोभरहित, शान्त, शास्त्र जानने वाला, वेद और शास्त्रों के अर्थ तत्व को जानने वाला, श्रद्धालु, भयरहित, गुणानुरागी, सदात्यागी और बाह्य वस्तुओं से विराग रखने वाला पाप से डरने वाला, संसार से द्वेष रखने वाला, विषय आदि में लोभ न रखने वाला और अन्य शुभ लक्षणों से लक्षित हो,

Nijanand App

वेदगुह्यमिदं देवि नान्यथा तु प्रकाशयेत्।।७६।।
प्रकाशयन्विमूढात्मा स भवेदापदां पदम्।
न तस्य तत्वसंसिद्धिर्गुरोः शिष्यस्य चाप्यहो।।७७।।
तत्वज्ञेनोपदिष्टा ये तत्वज्ञा एव सुन्दरि।
अनर्हैरुपदिष्टा ये तेप्यनर्हा भवन्ति हि।।७८।।
अनर्हैरुपदिष्टा ये येनर्हाश्च स्वयं शिवे।
उभयभ्रंशदोषेण ते यान्ति नरकं प्रिये।।७९।।
लोकभ्रंशः कर्मलोपात् अयोग्यत्वात् फलाग्रहः।
तेषां तमः स्यादतुलं यावच्चन्द्रार्कतारकं।।८०।।
सुप्तं प्रबोधयेद्बुद्धो ह्यबुद्धस्तु च तं कथं।
पाषाणं तारयेत्तुम्बी न पाषाणः परस्परं।।८१।।
तस्मादेवं विनिश्चित्य सद्गुरोः शरणं गतः।
आत्मानं मोहविभ्रान्तं तारयेत्स च बुद्धिमान्।।८२।।
इत्येतन्मे समाख्यातं यत्पृष्टोहं त्वया प्रिये।
सभासेन महादेवि किमन्यत्प्रष्टुमिच्छसि।।८३।।

इति श्रीमाहेश्वरतन्त्रे उत्तरखण्डे शिवपार्वतीसंवादे चतुर्थं पटलम्।।४।।

पञ्चमं पटलम्

पार्वत्युवाच

भगवन् लोकनाथेश देव देवेश धूंर्जटि।
इयं कथा महापुण्या कथिता पापनाशिनी।।१।।
यद्रमायै न च प्राह भगवन् प्राणवल्लभः।
साक्षान्मुखेन देवेशाभिनयेन वदिष्यति।।२।।
तत्तु तत्वं कथयसि साक्षादेव मम प्रभो।
त्वमेव तादृशो देव दयालुर्नापरः प्रभो।।३।।
तत्तत्वज्ञानसामर्थ्याद्भोगाः सर्वेवधीरिताः।
दिग्वासा जटिलो नन्दी चरस्येकोपि पण्डितः।।४।।
त्वं गुरुः सर्वलोकस्य तत्वमार्गोपदेशकः।
न त्वया सदृशः कश्चित् तत्वज्ञानानुभूतिमान्।।५।।
अर्द्धाङ्गदानतो जाने तव प्राणाधिकास्म्यहम्।
अतो वदसि भो नाथ तत्वं गुह्यतमं च यत्।।६।।
न तच्चित्रं त्वयि विभो कृपासिन्धौ महेश्वरे।
अतस्त्वां प्रष्टुमिच्छामि सन्दिहाना महेश्वर।।७।।

Nijanand App

76. उसे अधिकारी जानना चाहिए। उसे इस रहस्य को देना चाहिए। हे देवि! इस रहस्य को जानो, इसको और तरीके से नहीं प्रकाशित करना चाहिए।

77. जो मूढ़ात्मा इसे प्रकाशित करता है, वह महान् आपत्ति का पात्र बनता है। उस गुरु या शिष्य किसी को भी तत्व की सिद्धि नहीं होती।

78. हे सुन्दरी! तत्वज्ञ के द्वारा जिनको उपदेश दिया जाता है, वह तत्वज्ञ ही होते हैं। अयोग्यों द्वारा उपदेश दिए गए अयोग्य होते हैं।

79. हे शिवे! अयोग्यों द्वारा उपदेश दिए गए तथा जो स्वयं अयोग्य हैं, वे दोनों ही भ्रष्ट होने के दोष से नरक जाते हैं।

80. कर्म लेश से भ्रष्ट लोगों को अयोग्य होने से फल प्राप्त नहीं होता है। जब तक आकाश में सूर्य, चन्द्रमा, तारे हैं तब तक उनके लिए अन्धकार ही रहता है।

81. जागा हुआ आदमी सोये हुए को जगा सकता है। जो स्वयं जागा नहीं है वह कैसे जगा सकता है। तुम्बी के ऊपर पत्थर रखा जाय तो वह पत्थर पार ले जा सकती है, किन्तु पत्थर तुम्बी को पार नहीं ले जा सकता।

82. इसलिए, इस प्रकार निश्चय करके जो व्यक्ति सद्गुरु के शरण में जाता है, वह बुद्धिमान मोह में भटकते स्वयं को पार ले जा सकता है।

83. हे प्रिये! महादेवि! तुमने जो पूछा था वह संक्षेप में बता दिया और क्या पूछना चाहती हो?

शिव-पार्वती के संवाद के माहेश्वरतन्त्र के उत्तर खण्ड का चौथा अध्याय समाप्त हुआ।

पांचवां अध्याय

पार्वती ने कहा—

1. भगवन, लोकनाथ, देवदेवेश, धूर्जटे! आपने यह पापनाशिनी, महापुण्यमयी कथा कही।

2. जो भगवान ने प्राणप्रिया लक्ष्मी से कहा कि मुख के द्वारा न बतला कर अभिनय से बताएंगे।

3. हे प्रभो! वह तत्व मुझसे आप साक्षात् बताएं, क्योंकि आप भी वैसे ही दयालु देवता हैं। आप से बढ़कर कोई दयालु नहीं है।

4. इसी तत्व ज्ञान के सामर्थ्य से आपने सभी भोगों को ठुकरा दिया है। जटाओं को बढ़ाए हुए, वस्त्र न पहने हुए, नंदी की सवारी किए हुए पण्डित आप अकेले ही घूमते हैं।

5. आप ही तत्व मार्ग के उपदेशक और सारे संसार के गुरु हैं। आपके समान कोई तत्व ज्ञान का अनुभव करने वाला नहीं है।

Nijanand App

यत्त्वयोक्तं पुरा मोहो जगत्कारणरूपकः।
यथा बीजादुद्भवन्ति पत्रपुष्पफलादयः॥८॥
एवं मोहात्समुद्भूतं सदेवासुरमानुषम्।
अज्ञानप्रभवो मोहो मोहाज्जातं चराचरम्॥९॥
स्त्रजं शुक्तिं समावृत्य यथाज्ञानं स्वशक्तितः॥
अहिं चरजतं चैव यथा दर्शयते स्फुटम्॥१०॥
तथाक्षरं परं ब्रह्म ह्यज्ञानं मोहकारणम्।
समावृत्यात्मशक्त्यैव विश्वं सृजति शंकर॥११॥
इत्युक्तं यत्त्वया देव तत्र मे संशयो महान्।
अक्षरं यत्त्वया प्रोक्तं निष्प्रपञ्चं निरामयम्॥
निर्दोषं, निर्मलं, शुद्धं निरीहं सङ्गवर्जितम्॥१२॥
स्वप्रकाशं गुणातीतं ज्ञानरूपं समं शिवम्।
निर्विकारं सदाभान्तं सदसद्भावतः परम्॥१३॥
तस्मिन्नज्ञानसंसर्गः को वा वक्तुं समीहते।
कथमज्ञानजो मोहस्तस्मिन् ज्ञानात्मनीश्वरे॥१४॥
स्वप्रकाशे यदज्ञानमावृतिं कुरुते यदि।
तमसापि कथं सूर्यो नाव्रियेत मनागपि॥१५॥
कथं वा मोहनाशेपि कैवल्यमवशिष्यते।
असत्यं सत्यवद्भाति संशयोत्र महान्मम्॥
छेत्तुमर्हसि देवेश तत्वज्ञानासिना प्रभो॥१६॥

शिव उवाच

शृणु सुन्दरि यत्नेन रहस्यं परमाद्भुतम्।
तव स्नेहवशाद्वच्मि प्रेम्णाहं प्रार्थितस्त्वया॥१७॥
न वाच्यं यस्य कस्यापि मातृजारसमं रहः।
गोपयेत्सर्वतो भद्रे विवदेन्न कथञ्चन॥१८॥
न वादितर्कविषयं परं ब्रह्मसनातनम्।
तर्कैककर्कशधियो वादिनो मूढबुद्धयः॥१९॥
सूर्यस्यावरणे शक्तं तिमिरं न कथञ्चन।
स्वप्रकाशे तथाज्ञानं कदाचित्प्रभवेन्नहि॥२०॥
इति प्रामाणिकैस्तर्कैर्विरुद्धमिव भासते।
मोहसृष्टिसमुद्भूता ये प्रमाणविदो जनाः॥२१॥
कथं ते वेदितुं शक्ताः प्रमाणैरपि पण्डिताः॥२२॥

Nijanand App

6. आपने मुझे अपनी अर्धांगिनी बनाया है। इसी से मैं जानती हूं कि मैं आपको प्राणों से अधिक प्रिय हूं। इसलिए आप मुझसे सबसे अधिक गोपनीय तत्व को कहें।

7. कृपासिन्धु! महेश्वर! आपके लिए वह कोई आश्चर्य की बात नहीं है। इसीलिए सन्देह होने पर मैं आपसे पूछना चाहती हूं।

8. आपने पहले जो कहा कि मोह जगत् का कारण रूप है। जैसे बीज से पत्र, पुष्प, फल आदि प्रकट होते हैं,

9. इसी प्रकार मोह से देवता, असुर, मनुष्य सभी उत्पन्न हुए हैं। मोह अज्ञान से उत्पन्न होता है और मोह से चराचर संसार उत्पन्न हुआ है।

10. जैसे अज्ञान अपनी शक्ति से माला और शुक्ति को घेरकर माला को सर्प के रूप में और शुक्ति को चांदी के रूप में स्पष्ट दिखा देता है।

11. इसी प्रकार मोह का कारण अज्ञान अक्षर ब्रह्म को घेरकर अपनी शक्ति से ही विश्व का निर्माण करता है।

12. आपने यह जो कहा इसमें मुझे बड़ा संशय है। आपने जो कहा अक्षर ब्रह्म निष्प्रपंच है और निरामय है, निर्दोष, निर्मल, शुद्ध, निरीह तथा संगवर्जित है।

13. स्वतः प्रकाशित, गुणातीत, ज्ञान रूपी, शिव, शान्त, निर्विकार, सदैव प्रकाशित, सत् और असत् दोनों से परे हैं।

14. उस ब्रह्म में अज्ञान का संसर्ग होना कौन कह सकता है। उस ज्ञानात्मा ईश्वर में अज्ञान से उत्पन्न मोह कैसे हो सकता है?

15. स्वयं के प्रकाश को यदि अज्ञान ढक सकता है, तो अन्धकार द्वारा सूर्य कभी भी आवृत क्यों नहीं होता।

16. अथवा मोह नाश होने पर भी कैवल्य ही क्यों शेष रह जाता है। असत्य सत्य की तरह परिलक्षित होता है। इसमें मुझे महान् संशय है। हे प्रभो! तत्व ज्ञान रूपी तलवार से मेरे इस संशय को काटने की कृपा कीजिए।

शिव ने कहा—

17. हे सुन्दरी! परम् अद्‌भुत रहस्य ध्यान से सुनो। तुम्हारे स्नेह से तुम्हारे द्वारा प्रार्थना करने पर मैं कह रहा हूं।

18. जिस प्रकार माता के जार को कोई नहीं बतलाता है, उसी प्रकार इस विषय को भी किसी से नहीं बतलाना चाहिए। सभी से छिपाना चाहिए और किसी प्रकार इस पर विवाद नहीं करना चाहिए।

19. सनातन परब्रह्म वादी के तर्क का विषय नहीं है। एकमात्र तर्क करने के कारण जिनकी बुद्धि कर्कश हो गई है, वह वादी मूढ़ बुद्धि होते हैं।

20. अन्धकार सूर्य को घेरने में किसी प्रकार समर्थ नहीं है। इसी प्रकार स्वयं प्रकाशित ब्रह्म को अज्ञान घेरने में समर्थ नहीं हो सकता।

Nijanand App

यथा स्वप्नजनो देवि स्वप्नद्रष्टारमेकलम्।
न जानाति तथा देवि प्रमाणान्यपि कृत्स्नशः।।
परे ब्रह्मण्यक्षरेऽस्मिन् अज्ञानावेशमाहितम्।।२३।।
तस्माद्युक्तिर्न कर्तव्या श्रुतिभिर्या विरुध्यते।
अनुकूला श्रुतिगिरां युक्तिः सा विदुषां मता।।२४।।
यथा न सत्यादनृतात्केवलाद् व्यावहारिकम्।
तथा सत्यानृताभ्यां तु व्यवहारः प्रवर्तितः।।२५।।
अनृतं तु तदज्ञानं सत्यं ब्रह्मैव केवलम्।
न तुषादंकुरोत्पत्तिः केवलात्तण्डुलादपि।।२६।।
तुषतण्डुलयोगेन जायतेङ्कुरविस्तृतिः।
ब्रह्मण्यज्ञानयोगेन जायते विश्वसम्भवः।।२७।।
तस्मान्न संशयः कार्यो ब्रह्मण्यज्ञानसम्भवे।
नापनेया मतिस्तर्कैर्भावा ये चाप्यलौकिकाः।।२८।।
न तांस्तर्केण युञ्जीतेत्याहुश्चोपनिषद्गिरः।
ब्रह्मण्यज्ञानसद्भावो लोकसिद्धो न विद्यते।।२९।।
विद्यते वेदसिद्धोऽयं तस्माद्वेदः प्रमाणकम्।
अलौकिकं न सिध्येत विरुद्धं यच्छ्रुतेः सह।।३०।।
अपरोक्षं लौकिकं च परोक्षं चाप्यलौकिकम्।
कथं सिध्येदप्रमाणं परोक्षं लौकिकोक्तिभिः।।३१।।
प्रमाणराजो यद्यादृक् निरूपयति केवलम्।
तत्तादृगेव मन्तव्यमन्यथा स बहिर्मुखः।।३२।।
अलौकिकं लौकिकं च तस्यैतदुभयं गतम्।
स चाण्डालमयीं योनिं प्रविशेत्तद्बहिर्मुखः।।३३।।
ब्रह्मक्षत्रियविट्शूद्राश्चैते वेदानुवर्तिनः।
वैदेस्त्यक्तास्त्यजन्तस्ते यान्ति नीचपरम्पराम्।।३४।।
प्रत्यक्षं चानुमानं च शब्दः सादृश्यमेव च।
चत्वार्येतानि देवेशि प्रमाणानि न संशयः।।३५।।
प्रत्यक्षं लौकिके सिद्धं न चैवालौकिके हि तत्।
पर्वतो वह्निमान् धूमादित्येवमनुमीयते।।३६।।
ब्रह्म केनात्र संसाध्यं सदसत्परमव्ययम्।
तस्माद्ब्रह्मण्यनुर्मिर्तिन सिध्येत कदाचन्।
सदृशाभावतो लोके सादृश्यं नापि सिध्यति।

Nijanand App

21. इन प्रामाणिक तर्कों से विरुद्ध की तरह प्रतीत होता है, जो प्रमाणवित् जन मोह सृष्टि से ही उत्पन्न हुए हैं।

22. वे बुद्धिमान् प्रमाणों से भी कैसे जान सकते हैं।

23. जैसे स्वप्न में देखा गया आदमी अकेले स्वप्नद्रष्टा को नहीं जानता है, इसी प्रकार सारे प्रमाण भी उसको नहीं जानते। इस अक्षर ब्रह्म में अज्ञान का आवेश स्थापित है।

24. इसलिए ऐसी कोई युक्ति नहीं करनी चाहिए जो श्रुति के विरुद्ध हो और श्रुतिवाक्य के अनुकूल युक्ति विद्वानों को इष्ट है।

25. जिस प्रकार से केवल सत्य अथवा केवल असत्य से व्यवहार नहीं चलता और सत्य एवं असत्य इनको मिलाने से व्यवहार चलता है।

26. असत्य ही अज्ञान है और केवल सत्य ही ब्रह्म है। भूसी से अंकुर नहीं निकल सकता है और न केवल चावल से।

27. भूसी और चावल के संयोग से अंकुर का विस्तार होता है। ऐसे ही ब्रह्म में जब अज्ञान का योग होता है तो विश्व का जन्म लेना सम्भव होता है।

28. इसलिए ब्रह्म में अज्ञान के सम्भव होने में संशय नहीं होना चाहिए। जो अलौकिक भाव है उनमें तर्कों के द्वारा अपनी बुद्धि नहीं लगानी चाहिए।

29. उपनिषद् की वाणी ने भी यही कहा है कि तर्क नहीं करना चाहिए। ब्रह्म में अज्ञान का होना लोकसिद्ध नहीं है।

30. यह वेद सिद्ध है इसलिए इसके वेद ही प्रमाण हैं। श्रुति से जिसका विरोध है, वह अलौकिक सिद्ध नहीं हो सकता है।

31. लौकिक जो अपरोक्ष (प्रत्यक्ष) होता है और अलौकिक जो परोक्ष (अप्रत्यक्ष) होता है, उस परोक्ष की सिद्धि लौकिकं युक्तियों द्वारा बिना प्रमाण के कैसे हो सकती है?

32. वह प्रमाणों का राजा जिसको जैसा निरूपित करता है, उसे वैसा ही मानना चाहिए अन्यथा वह उससे बहिर्मुख हो जाएगा।

33. और लौकिक-अलौकिक उसके दोनों ही नष्ट हो जाएंगे और वह चांडालमयी योनि में प्रवेश कर जाएगा।

34. ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र यह सभी वेद के अनुवर्ती हैं। उनको त्यागते हुए वे लोग वेदों से त्यक्त होकर नीच परम्परा को प्राप्त करते हैं।

35. प्रत्यक्ष, अनुमान, शब्द और सादृश्य, हे देवेशि! यह चार ही प्रमाण हैं, इसमें सन्देह नहीं।

36. प्रत्यक्ष से लौकिक वस्तुओं की सिद्धि होती है। अलौकिक में प्रत्यक्ष हितकर नहीं है। पर्वत पर धुएं से अग्नि की उपस्थिति का अनुमान किया जाता है।

Nijanand App

अनादिः शब्दब्रह्माख्यो ब्रह्मवक्तीह यादृशम्।
तादृशं तद्विजीनायात्पाखण्डी चान्यथा हि सः॥३८॥
ब्रह्माभासमया जीवा ब्रह्मैवेति विनिश्चयः।
अहं मनुष्य इत्याद्या अहं बुद्धिर्हि देहिनाम्॥३९॥
आत्मत्वेनैव गृह्णाति देहं चैनमचेतनम्।
विपरीतमिदं भद्रे सन्दिग्धमिदमेव हि॥४०॥
अलौकिकं हि सन्दिग्धं वेदेनैव निवर्त्तते।
न निश्चयं विना क्वापि मुक्तिर्भवति शाश्वती॥४१॥
तस्माद्वेदान्तवाक्यैश्च सहायैः सर्वतोधिकैः।
विचारयेत्परं ब्रह्म स्वात्मानं लभते हि सः॥४२॥
शब्दातीतं परं ब्रह्म शब्दगोचरमित्यपि।
तथाप्यनादिशब्दैस्तत् ज्ञायते नान्यथा प्रिये॥४३॥
प्रमाणराजो निगमादनुभूतिर्गरीयसी।
तथाप्यनुभवी साक्षात् शब्दैरेवोपदिश्यति॥४४॥
गुरूक्तं चापि वेदोक्तमेकार्थं यदि भासते।
तदा कृतार्थः पुरुषो मुक्तो भवति संशयात्॥४५॥
निवृत्ते संशये देवि जाते स्वानुभवोदये।
ब्रह्मण्यज्ञानमित्येषः सन्देहो नाशमेष्यति॥४६॥
यदि युक्त्या प्रमाणैश्चव विरुद्धं श्रुतिसम्मतम्।
नायं विरुद्धो विदुषां अनुभूतिमतामपि॥४७॥
जाग्रत्येतत्प्रतीयेत स्वप्ने तत्प्रातिभासिकम्।
सुषुप्तौ तन्निरासेऽपि मूलाज्ञानं हि तिष्ठति॥४८॥
आभासस्तदवच्छिन्नो जीवत्वेन प्रतीयते।
आभासो ज्ञानरूपो हि बहिरन्तः प्रकाशकः॥४९॥
तदज्ञानं तु देहादिरूपैः परिणतं प्रिये।
तत्र व्याप्ताश्चिवदाभास एवं स्याद्व्यवहारिकम्॥५०॥
मूलाज्ञानमिदं देवि यदात्मनि च धिष्ठितम्।
तन्निरासं बिना देवि जीवा आभासरूपिणः॥५१॥
न मुच्यन्ते कदाचिद्वा कथंचिद्वा सुरेश्वरि।
व्रतोपवासनियमैस्तपोभिर्विविधैरपि॥५२॥
स्वाध्यायाध्ययनैर्दानैस्तीर्थैर्वा चान्यसाधनैः।
ब्रह्मचर्यवानप्रस्थसन्न्यासाचरणैरपि।

Nijanand App

37. सत् और असत् से परे अव्यय (अविनाशी) ब्रह्म किस प्रमाण द्वारा सिद्ध किया जा सकता है? इसलिए ब्रह्म में अनुमान प्रमाण नहीं हो सकता।

38. ब्रह्म के सदृश कोई है नहीं, इसलिए सादृश्य प्रमाण से भी उसकी सिद्धि नहीं हो सकती। अनादि शब्द ब्रह्म है। वेद जैसा कहता है वैसा ही उसे जान लेना चाहिए। नहीं तो वह पाखण्डी कहा जाएगा।

39. जीव ब्रह्म का आभास मात्र है और ब्रह्म ही है, यह निश्चय है। जैसे मनुष्य इत्यादि रूप में मनुष्यों को अहम् की बुद्धि होती है और

40. इस अचेतन शरीर को भी आत्म रूप में ग्रहण करते हैं। यह विपरीत है और संदिग्ध भी है।

41. अलौकिक संदिग्ध होता है। इस सन्देह की निवृत्ति वेद से ही की जा सकती है और निश्चय के बिना कहीं भी शाश्वत मुक्ति नहीं मिलती।

42. इसलिए सर्वाधिक सहायक वेदान्त वाक्यों द्वारा परब्रह्म का विचार करना चाहिए। जो इस प्रकार विचार करता है, उसे आत्मा का ज्ञान हो जाता है।

43. हे प्रिये! परब्रह्म शब्दातीत है और शब्दगोचर भी है। फिर भी अनादि शब्दों (वेद) से वह जाना जाता है, अन्य प्रकार से नहीं।

44. निगम ही प्रमाण राज है और अनुभूति उससे ज्यादा महत्वपूर्ण है। फिर भी अनुभव करने वाला जब किसी को उपदेश करता है तो शब्दों से ही करता है।

45. गुरु के द्वारा कहा हुआ और वेद के द्वारा कहा हुआ यदि एक ही अर्थ वाला हो जाय तो उस समय पुरुष कृतार्थ होकर संशय-मुक्त हो जाता है।

46. संशयनिवृत्त होने पर और आत्मानुभव के उदय होने पर ब्रह्म में अज्ञान है, इस सन्देह का नाश हो जाएगा।

47. यदि युक्ति और प्रमाणों के विरुद्ध है और श्रुतिसम्मत है तो वह अनुभव करने वाले विद्वानों के विरुद्ध नहीं है।

48. जाग्रत अवस्था में अज्ञान प्रतीत होता है। स्वप्नावस्था में वह प्रतिभासित होता है और सुषुप्तावस्था में उसका विनाश होता है। उसके नाश होने पर भी मूल अज्ञान रहता है।

49. उस अज्ञान से अवच्छिन्न आभास जीव रूप में प्रतीत होता है। आभास ज्ञान रूप है। बाहर-अन्दर प्रकाश करने वाला है।

50. हे प्रिये! वह अज्ञान देह, आदि के रूप में परिणत होता है। उसमें चिदाभास व्याप्त रहता है। इस प्रकार वह व्यावहारिक होता है।

51. हे देवि! यह मूल अज्ञान है जो आत्मा में भी स्थित है। जब तक वह अज्ञान नष्ट नहीं होता है, तब तक जीव आभास रूप ही रहते हैं।

Nijanand App

अगाधाज्ञानपाथोधौ दुरन्ते पारवर्जिते॥५३॥
उन्मज्जन्ते निमज्जन्ते देवत्वजडतादिभिः।
नैव पारं गताः केचिन्नैव यास्यन्ति केचन॥५४॥
अहोत्र परमानन्दः पुरुषोत्तम ईश्वरः।
यानीक्षतेनुग्रहदृशा ते यास्यन्ति गिरीन्द्रजे॥५५॥
अस्मिन्नज्ञानपाथोधौ वयं ब्रह्मादयोऽपि च।
बुदबुदाकारतां प्राप्तास्तदिच्छावायुजृम्भिताः॥५६॥
वायूपशमने देवि बुद्बुदा नीरतां गताः।
तथा यास्यति ब्रह्माण्डमस्माभिरविशेषितम्॥५७॥
अप्रबोधो यथा स्वप्ने चित्रं सृजति कौतुकम्।
तथैवात्मा प्रबोधेन जातं सर्वं चराचरम्॥५८॥
प्रबोधाद्विलयं याति परं ब्रह्मावशिष्यते।
स्त्रजि सर्पलये यद्वत् स्त्रगेव परिशिष्यते॥५९॥
अध्यारोपापवादेन परं ब्रह्मैव शिष्यते।
इति ते सर्वमाख्यातं यत्पृष्टोहं त्वया प्रिये॥६०॥
समासेन महेशानि किं भूयः श्रोतुमिच्छसि॥६१॥

इति श्रीमाहेश्वरतन्त्रे उत्तरखण्डे शिवोमासंवादे पञ्चमं पटलम्॥५॥

षष्ठं पटलम्

देव्युवाच

देवदेव कृपासिन्धो दीनबन्धो जगत्पते।
आपीय भवतः सूक्तिं महानन्दः प्रवर्तते॥१॥
अज्ञानान्निखिलं जातं ब्रह्मादिस्थावरान्तकम्।
इति यद्भवता प्रोक्तं सङ्क्षेपेण महेश्वर॥२॥
प्रपञ्चय पुनः सर्वं सृष्टिसंहारभेदतः।

शिव उवाच

शृणु पार्वति वक्ष्यामि यत्त्वं पृच्छसि तत्त्वतः।
तस्य श्रवणमात्रेण परमात्मा प्रकाशते॥३॥
अज्ञानं यन्मया प्रोक्तं न सन्नासत्तदुच्यते।
सच्चेन्मुक्तिसमुच्छेदो ह्यसच्चेद्भासते कथम्॥४॥
अनिर्वाच्यमिदं तस्मात् त्रिगुणोत्पादकं तथा।
ज्ञाननाश्यं भावरूपं मूलाज्ञानं विदुः प्रिये॥५॥

Nijanand App

52. हे सुरेश्वरि! वह कभी और किसी तरह व्रत, उपवास, नियम, विविध तप,

53. स्वाध्याय, अध्ययन, दान, तीर्थ या अन्य साधन, ब्रह्मचर्य, वानप्रस्थ, संन्यास का आचरण आदि के करने से भी मुक्त नहीं होता। अगाध एवं अपार

54. अज्ञान समुद्र में देवत्व जड़ता आदि से डूबते-उतराते रहते हैं। कोई न इसके पार गए हैं और न जाएंगे।

55. हे पार्वती! परमानन्द पुरुषोत्तम ईश्वर है। जिस पर कृपा की दृष्टि से देखता है, वही पार जाएंगे।

56. इस अज्ञान के समुद्र में हम और ब्रह्मादिक देवता भी एक बुलबुले के आकार के उसी की इच्छा रूपी वायु से बने रहते हैं।

57. हे देवेशि! वायु के निकल जाने पर वह बुलबुले पानी रूप में हो जाते हैं। इसी प्रकार सामान्यत: हम लोगों के साथ ब्रह्माण्ड उसी में लीन हो जाएगा।

58. जिस प्रकार से प्रबोध (ज्ञान) न होने से स्वप्न अवस्था में विचित्र कौतुक उत्पन्न होता है और इसी प्रकार स्वप्नबोध से चराचर पैदा होता है।

59. प्रबोध होने से सब विलीन हो जाता है और परब्रह्म ही शेष रहता है। जैसे माला में सर्प बुद्धि के नष्ट हो जाने पर माला ही शेष रहता है।

60. यह अध्यारोप अपवाद से परब्रह्म ही शेष रह जाता है।

61. हे प्रिये! जो तुमने मुझसे पूछा था वह संक्षेप में सब तुम से कह दिया। और आगे क्या सुनना चाहती हो?

शिव-पार्वती के संवाद के माहेश्वरतन्त्र के उत्तर खण्ड का पांचवां अध्याय समाप्त हुआ।

छठा अध्याय

देवी बोलीं—

1. हे देवाधिदेव! कृपासिन्धु! दीनबन्धु! जगत् के स्वामी! आपके सुन्दर कथन को सुनकर बहुत आनन्द हो रहा है।

2. आपने संक्षेप में जो यह कहा कि ब्रह्मा से लेकर स्थावर तक सारा संसार अज्ञान से उत्पन्न है, उसे सृष्टि-संहार भेद से सब विस्तारपूर्वक बतलाइए।

शिव ने कहा—

3. हे पार्वती! जो तुम पूछ रही हो, उसे मैं यथार्थ रूप में कहूंगा, सुनो। उसके केवल श्रवण करने से परमात्मा प्रकाशित होता है।

Nijanand App

शशशृङ्गनरशृङ्गवन्ध्यापुत्रखपुष्पवत्।
अज्ञानं कथितं सद्भिः कथं सदिति चोच्यते॥६॥
नासत्तु कारणत्वेन ह्युपयुञ्जीत कर्हिचित्।
कथं सृजति ब्रह्माण्डं ब्रह्मादिस्थावरान्तकम्॥७॥
न शक्यस्तदभावोपि यस्मात्तत्रिगुणात्मकम्।
श्रुतिप्रसिद्धं व्योमादिरूपेण विवं च यत्॥८॥
सत्यवद्भासते वापि मूलाज्ञानं गिरीन्द्रजे।
दीपार्चिषेव तिमिरं ज्ञानेन विनिवर्त्तते॥९॥
स्वस्वरूपावबोधो हि ज्ञानमित्युच्यते प्रिये।
स्वस्वरूपभ्रमो देवि विकल्पो भवसंज्ञकः।
भ्रान्तात्मनस्तु शयने विकल्पो जायते महान्॥१०॥
प्राप्तात्मनः समूलोपि नश्यते तद्वदेव हि।
तदज्ञानं द्विधाभूतं कार्यकारणभेदतः॥११॥
अक्षरे परमानन्दे मूलं स्यात्कारणं परम्।
कार्यात्मकं बुद्धिभेदात् बुद्धिराभासदीपिता॥१२॥
सूते कार्यात्मकं पिण्डं ब्रह्माण्डं कारणात्मकम्।
ब्रह्माण्डपिण्डयोरैक्यं प्रवदन्ति विपश्चितः॥१३॥
सरःशरावयोर्मध्ये यथार्कः प्रतिबिम्बितः।
अक्षरः स्वावभासेन कार्यकारणसङ्गतः॥१४॥
यथोपाधिद्वयाभावे सूर्य एकः प्रतीयते।
तथोपाधिद्वयाभावे विशुद्धः केवलोक्षरः॥१५॥
मूलोपाधिर्विशुद्धश्च सत्वप्राधान्यतः प्रिये।
क्षुद्रोपाधिर्हि मलिनस्तमःप्राधान्यतो भवेत्॥१६॥
उत्कृष्टत्वाद्विशुद्धत्वात् सत्वप्राधान्यतस्तथा।
नारायणादिकान् सूते सर्वज्ञानोपबृंहितान्॥१७॥
कार्योपाधिर्निकृष्टत्वादशुद्धत्वाच्च तामसः।
जीवसृष्टिं वितनुते सर्वेशगुणवर्जिताम्॥१८॥
नारायणादिजीवन्ता सृष्टिर्मोहावधिस्थिता।
एकमेवाद्वितीयं च ब्रह्मेति श्रुतयो जगुः॥१९॥
बुद्धिवृत्तिस्त्रिधा यद्वज्जाग्रत्स्वप्नसुषुप्तिकाः।
आभासात्मनि जीवाख्ये वर्तन्ते ताः पुनः पुनः॥२०॥
तद्वद् ब्रह्मणि चाज्ञानं त्रिधैव परिवर्तते।
मूलाज्ञानं लयस्थानं सुषुप्तिः परिकीर्त्तिता॥२१॥

Nijanand App

4. मैंने जो अज्ञान कहा वह न तो सत् और न असत् कहा जा सकता है। यदि उसे सत् कहेंगे तो मुक्ति का ही अभाव हो जाएगा और यदि वह असत् है तो भासित कैसे होगा?

5. इसलिए इसे अकथनीय तथा तीनों गुणों को उत्पन्न करने वाला कहेंगे और ज्ञान नाश भाव रूप में मूल अज्ञान कहा जाता है।

6. खरगोश के सींग, मनुष्य के सींग, बांझ स्त्री के पुत्र, आकाश के पुष्प की तरह अज्ञान विद्वानों द्वारा कहा गया है। फिर उसे सत् कैसे कहा जा सकता है।

7. जो असत् है वह कभी भी कारण रूप में उपयुक्त नहीं हो सकता, तो वह ब्रह्मा से लेकर स्थावर तक इस ब्रह्माण्ड का निर्माण कैसे करता है?

8. उसका अभाव भी नहीं हो सकता क्योंकि वह त्रिगुणात्मक है। आकाशादि रूप में प्रसिद्ध शास्त्र में वर्णित है।

9. अथवा हे गिरिराजपुत्री! मूल अज्ञान सत्य की तरह भासित होता है। जैसे अन्धकार दीपक के प्रकाश से नष्ट हो जाता है, वैसे ही वह ज्ञान द्वारा निवृत्त हो जाता है।

10. अपने स्वरूप का ज्ञान ही ज्ञान कहा जाता है। अपने स्वरूप में भ्रम होना संसार में विकल्प कहलाता है। जिसकी आत्मा स्वप्नावस्था में भ्रान्त होती है उसको महान् विकल्प उत्पन्न होता है।

11. और जब भ्रम हट जाता है तो वह जड़ से नष्ट हो जाता है। वह अज्ञान कार्य और कारण भेद से दो प्रकार का होता है।

12. परमानन्द रूप अक्षर ब्रह्म में मूल अज्ञान परम कारण है। बुद्धि भेद के कारण वह कार्य रूप होता है। बुद्धि भी आभास से दीप्त होकर

13. कारणात्मक ब्रह्माण्ड को और कार्यात्मक पिण्ड को उत्पन्न करती है। इस प्रकार से ब्रह्माण्ड और पिण्ड में विद्वान लोग एकता कहते हैं।

14. जिस प्रकार तालाब और मिट्टी के पात्र में सूर्य प्रतिबिम्बित दिखाई पड़ता है, ऐसे ही अक्षर ब्रह्म अपने आभास से कार्यकारण रूप पिण्ड और ब्रह्माण्ड में दिखाई पड़ता है।

15. जिस प्रकार से दोनों उपाधियों के अभाव में सूर्य एक प्रतीत होता है, उसी प्रकार पिण्ड और ब्रह्माण्ड रूप उपाधि के न होने पर वह विशुद्ध अक्षर केवल ब्रह्म प्रतीत होता है।

16. विशुद्ध मूलोपाधि सत्व की प्रधानता के कारण होता है और मलिन तम की प्रधानता से क्षुद्रोपाधि होता है।

17. उत्कृष्ट होने, विशुद्ध होने तथा सत्व प्रधान होने से सभी ज्ञानों से युक्त नारायणादि को उत्पन्न करता है।

18. कार्य और उपाधि के निकृष्ट होने, अशुद्ध होने से तमोगुण सभी ईशित्व गुणों से रहित जीव सृष्टि का विस्तार करता है।

19. नारायण से लेकर जीव तक यह सृष्टि, मोह (अज्ञान) की अवधि तक है। श्रुतियों ने गान किया है कि ब्रह्म एक और अद्वितीय है।

Nijanand App

नारायणोपाधिकं यत्स्वप्नं तत्परिचक्षते।
विष्णूपाधिमयाज्ञानं जाग्रदित्यभिधीयते॥२२॥
आदिजीवो महाजीवो विष्णवाख्यः परिकीर्तितः।
स एव सर्वजीवाख्यः आभासात्मा परस्य तु॥२३॥
जाग्रत्स्थानगताज्ञानं नानारूपैर्विजृम्भितम्।
देवासुरमनुष्याद्यैर्गन्धर्वोरगकिन्नरैः॥२४॥
पशुकीटपतङ्गाद्यैर्विचित्रैः कर्मनिर्मितैः।
तानेतान्वासनारूढान्नानाभेदव्यवस्थितान्॥२५॥
नारायणेन रूपेण स्वयं पश्यति चाक्षरः।
जाग्रत्स्वप्ने विलीयेत स्वप्नस्तु शयनं व्रजेत्।
तत्तुरीयं लयं याते स्मृतिरत्रावशिष्यते॥२६॥
यथा जागरणे स्वप्नः स्वप्ने जागरणं यथा।
तथा वृत्तमिदं देवि यो जानाति स मुच्यते॥२७॥
अक्षरः परमात्मायं जाग्रत्स्वप्नं प्रपश्यति।
जीवो जाग्रति वै स्वप्ने चित् क्षरस्य परात्मनः।
स्वप्नं तज्जागरश्चापि द्वयमेतद्गतार्थकम्॥२८॥
स्थूलार्थोपासत्तिकालो जागरः परिकीर्तितः।
स्थूलं त्यक्त्वा तु सूक्ष्मार्थोपासत्तिः स्वाप्निकी मता॥२९॥
सूक्ष्मार्थानामप्यभावोपासत्तिः शयनात्मिका।
शयनं तत्तु चाज्ञानं मोहरूपं वरानने॥३०॥
कारणं तद्विजानीयात् महाकारणनिर्मितम्।
कार्यरूपेण विततं क्रमात्स्थूलविभेदतः॥३१॥
तदहं ते प्रवक्ष्यामि शृणुष्वैकाग्रचेतसा।
अज्ञानं प्रकृतिर्माया मोहोव्यक्तं प्रधानकम्।
अदृष्टं चेति बहुधा वादिनस्तत्प्रचक्षते॥३२॥
एकार्थमेव तत्सर्वं गुणस्तत्वाविरोधतः।
नाममात्रेण कलहो नार्थं दृष्ट्वा कदाचन।
प्रकृतिश्चापि पुरुषो यतस्तत्सृष्टिसम्भवौ॥३३॥
कार्यकारणयोर्भेदः अभेदाख्यः प्रकीर्त्तितः।
मृत्सुवर्णादिकानां च घटादेर्वलयस्य च॥३४॥
भेदोथाभेद एव स्यात् तद्वदेतत्प्रकीर्त्यते॥३५॥
तदज्ञानस्य शक्ती द्वे विक्षेपावरणात्मिके।

Nijanand App

20. जिस प्रकार जाग्रत, स्वप्न और सुषुप्ति—यह तीन प्रकार की बुद्धि की वृत्तियां जीव नामक आभास रूप आत्मा में पुनः-पुनः वर्तमान रहती हैं,

21. इसी प्रकार ब्रह्म में अज्ञान भी तीन प्रकार से होता रहता है। इसे मूल अज्ञान, लय स्थान तथा सुषुप्ति कहा गया है।

22. नारायण उपाधि वाला अज्ञान स्वप्न कहलाता है। विष्णु उपाधिमय अज्ञान जाग्रत कहलाता है।

23. आदि जीव, महाजीव विष्णु के नाम से कहा गया है। वही सभी जीव कहे जाने वालों का अपना दूसरा आभास है।

24. जाग्रत स्थान में जो अज्ञान होता है, वह नाना रूपों में प्रकट होता है। देवता, राक्षस, मनुष्य, आदि, गन्धर्व, सर्प, किन्नर,

25. पशु, कीट-पतंग आदि कर्म निर्मित विचित्र रूपों में प्रकाशित होता है। इन वासनारूढ़ नाना भेदों से स्थिति को

26. अक्षर ब्रह्म स्वयं नारायण के रूप से देखता है। जाग्रत का स्वप्न में विलय होता है और स्वप्न का सुषुप्ति में विलय होता है। सुषुप्ति तुरीय में जब लय हो जाता है तो यहां पर स्मृति ही अवशेष रह जाती है।

27. हे देवी! किस प्रकार जागरण में स्वप्न और स्वप्न में जागरण घटित होता है और इस बात को जो जानता है, वही मुक्त होता है।

28. यह अक्षर परमात्मा जाग्रत स्वप्न को देखता है। जीव में क्षर के परात्म के चेतन के स्वप्न में जागता है। स्वप्न और जागृति दोनों ही इस प्रकार कहे जाते हैं।

29. जिस समय स्थूल वस्तुओं का हम अनुभव करते हैं उसे जाग्रत काल कहते हैं और स्थूल को छोड़कर सूक्ष्म पदार्थों का अनुभव करते हैं तो वह स्वप्नावस्था कहलाती है।

30. और जब सूक्ष्म वस्तुओं के भी अभाव की स्थिति होती है तो वह शयनात्मिका (सुषुप्ति) होती है और वह शयन, हे वरानने! मोह रूप अज्ञान है।

31. महाकारण द्वारा निर्मित वह कारण क्रमशः स्थूल भेद से कार्य रूप में विस्तृत जानना चाहिए।

32. मैं उसे कह रहा हूं, एकाग्र मन से सुनो। प्रकृति, माया, अव्यक्त मोह की प्रधानता वाले अदृष्ट अज्ञान को वादी लोग अनेक प्रकार से बतलाते हैं।

33. वस्तुतः वह सब एक हैं क्योंकि उनमें तत्व तथा गुण का कोई विरोध नहीं है। विवाद केवल नाममात्र का है। अर्थ को जानकर यह नहीं है। प्रकृति और पुरुष दोनों से ही सृष्टि सम्भव है।

Nijanand App

ब्रह्मावृणोति सहसा शक्त्यावरणसंज्ञया॥३६॥
यथाच्छादयति स्वल्पो मेघो भानुं सहस्त्रगुम्।
तथाच्छादयते मिथ्या ब्रह्मानन्तमखण्डकम्॥३७॥
अनावृतोपि पूर्णात्मा निःसङ्गो निर्विकल्पकः।
तद्वासनानुवशगस्तिमितात्मा चिदक्षरः॥३८॥
अथ विक्षेपशक्तिः सा यथा बहिरिवान्तरे।
दर्शयामास विततं प्रपञ्चं सकुतूहलम्॥३९॥
ददर्शासौ तदात्मानं नारायणमिति स्थितम्।
वेदानां वेदमार्गाणां लोकानां च परायणम्॥४०॥
नारायणेन रूपेण स्वयं पश्यति चाक्षरः।
स वेदात्मोपदेवोऽपि बहुस्यामित्यमन्यत।
अहंकारस्ततो जातो विकुर्वन्समभूत्त्रिधा॥४१॥
सात्विको राजसश्चैव तामसश्चेति वै त्रिधा।
तामसादप्यहंकाराज्जडमासीन्नभः प्रिये॥४२॥
तस्य शब्दो गुणश्चासीदेक एव सुलोचने।
सत्वानुविद्धान्नभसो जातं श्रोत्रमथेन्द्रियम्।
शब्दस्तु विषयस्तस्य सात्विकी दिक्च देवता॥४३॥
रजो गुणप्रधानात्तु वागासीद्वचनग्रहा।
अग्निस्तत्राभवद्देवः सात्विकः सुरवन्दिते॥४४॥
अथाकाशादभूद्वायुः शब्दस्पर्शौ च तद्गुणौ।
सत्त्वानुविद्धात्पवनात् त्वगासीदिन्द्रियं प्रिये॥४५॥
रजोनुविद्धात्पवनादासीत्पाणीन्द्रियं प्रिये।
आदानं तस्य विषये इन्द्रस्तस्याधिदेवता॥४६॥
अथ वायोरभूदग्निः शब्दस्पर्शस्वरूपवान्।
तेजसः सत्वविद्धाद्वै चक्षु रूपगृहं सति॥४७॥
रजोगुणप्रधानात्तु पादेन्द्रियमभूत्प्रिये।
उपेन्द्रः सात्विको देवो गमनं विषयो भवेत्॥४८॥
आपस्तेजःसमुद्भूता रसाधिकगुणास्त्रयः।
सत्त्वानुविद्धात्सलिलाद्रसनं तद्रसग्रहम्॥४९॥
वरुणः सात्विको देवो बभूव सुरवन्दिते।
रजःप्रधानात्सलिलात् पाय्वासीच्च विसर्गकृत्॥५०॥
यमोधिदेवता तत्र सात्विकः सम्बभूव ह।

Nijanand App

34. कार्य और कारण के भेद को ही अभेद कहा गया है। जैसे मिट्टी से बने घर, सुवर्णादि से बने कंगन आदि आभूषण मिट्टी और सुवर्ण से भिन्न नहीं हैं।

35. भेद होते हुए भी उनमें अभेद होता है। उसी तरह प्रकृति और पुरुष से निर्मित इस जगत् में भी अभेद ही है।

36. इस अज्ञान की दो शक्तियां होती हैं—विक्षेपा और आवरण। आवरण शक्ति से वह अज्ञान सहसा ब्रह्म को आवृत्त करता है।

37. जिस प्रकार से मेघ का छोटा टुकड़ा सहस्र किरणों वाले सूर्य को आच्छादित कर लेता है, उसी प्रकार यह मिथ्या (अज्ञान) अखण्ड ब्रह्म को आच्छादित करता है।

38. वह स्वयं पूर्ण रहता है, आवरण से रहित रहता है। वह निःसंग, निर्विकल्प रहते हुए भी जब अज्ञान (वासना) के वश में होता है तो अक्षर का चेतन भ्रमित हो जाता है।

39. इसके पश्चात् वह विक्षेपा शक्ति है जो बाहर की तरह अन्दर भी फैले हुए इस संसार को कौतूहल से दिखाती है।

40. उस समय वह अपने को स्वयं नारायण रूप में स्थित देखता है, जो नारायण वेद-मार्ग तथा संसार के आधार हैं।

41. वह अक्षर ब्रह्म स्वयं को नारायण रूप में देखता है। वह वेदात्मा परम देव जब यह मानता है कि हम बहुत हो जायं तब उससे अहंकार की उत्पत्ति होती है और वह अहंकार उत्पन्न होता हुआ तीन रूपों में प्रकट होता है।

42. सात्विक, राजस और तामस तीन प्रकार के अहंकार से ही जड़ आकाश निर्मित होता है।

43. उस आकाश का, हे सुलोचने! शब्द ही एक गुण होता है और सत्व से उक्त आकाश से श्रवण इन्द्रिय उत्पन्न होती है। उसका विषय शब्द होता है। सात्विक दिशा ही देवता है।

44. रजोगुण प्रधानता से वाणी, जो वचन को ग्रहण करती है, वह प्रकट होती है। हे देवताओं से वन्दित! फिर सात्विक अग्नि देवता प्रकट होता है।

45. आकाश से वायु की उत्पत्ति होती है। उसके शब्द और स्पर्श दो गुण होते हैं। सत्व सम्बद्ध वायु से त्वचा इन्द्रिय उत्पन्न होती है।

46. और रजोगुण सम्बद्ध वायु से हस्त इन्द्रिय प्रकट होती है। उसका विषय आदान और अधिदेवता इन्द्र होता है।

47. वायु से अग्नि की उत्पत्ति होती है उसके शब्द, स्पर्श और रूप गुण होते हैं। हे सती! सत्व सम्बद्ध तेज से रूप का घर नेत्र उत्पन्न होता है।

48. और रजोगुण प्रधान वायु से पैर इन्द्रिय निर्मित होती है। उसके देवता सात्विक उपेन्द्र हैं और गमन उसका विषय है।

Nijanand App

अद्भ्योभवद्वसुमती शब्दादिगुणपञ्चका।
पृथिव्याः सत्वविद्धायाः घ्राणं गन्धग्रहं शिवे।।५१।।
नासत्यौ देवता तत्र सात्विकी सम्बभूव हा।
रजोनुविद्धया चासीदिन्द्रियं गुह्यसंज्ञकम्।।५२।।
आनन्दानुभवस्तेन जायते सुरवन्दिते।
देवः प्रजापतिस्तत्र सात्विकः परिकीर्तितः।।५३।।
रजःप्रधानभूतेभ्यो मिलितेभ्यः सुरेश्वरि।
क्रियाशक्त्यात्मकं प्राणपञ्चकं जायते शिवे।।५४।।
सत्वप्रधानभूतेभ्यो मिलितेभ्यः सुरेश्वरि।
ज्ञानशक्तिप्रधानं तु ह्यन्तःकरणमुच्यते।।५५।।
मनोबुद्धिरहंकारश्चित्तमित्यन्तरात्मकम्।
त्वक्चक्षूरसनाघ्राणंश्रोत्रंज्ञानेन्द्रियाणि च।।५६।।
वाक् पाणिपादपायूपस्थानि कर्मेन्द्रियाणि च।।५७।।
दिक्वातार्कप्रचेतोऽश्विवह्नींद्रोपेन्द्रमित्रकाः।
दशेन्द्रियाधिदेवाश्च मया ते परिकीर्तिताः।।५८।।
पृथिव्यधिपतिर्ब्रह्मा विष्णुः सलिलनायकः।
तेजसोधिपतिः शम्भुर्वायोरीश्वर एव च।।५९।।
व्योम्नः सदाशिवः प्रोक्त इत्येता भूतदेवताः।
दशेन्द्रियाणि बुद्धिश्च मनःप्राणादिपञ्चकम्।
एतल्लिङ्गं समाख्यातं जीवोपाधिरिति स्फुटम्।।६०।।
विशेषं तत्र देवेशि वर्णयामि शृणुष्व तत्।
प्राणादिपञ्चकं देवि! कर्मेन्द्रियसमन्वितम्।।६१।।
प्राणकोश इति ख्यातः क्षुत्पिपासादिधर्मवान्।
मनोज्ञानेन्द्रियैर्युक्तं मनःकोश उदीरितः।।६२।।
बुद्धिज्ञानेन्द्रियैर्युक्तो विज्ञानाख्यः प्रकीर्तितः।
इदं कोशत्रयं देवि व्यष्ट्या लिङ्गमुदाहृतम्।।६३।।
तत्राभासमयो जीवो याति चायाति सुन्दरि।
जडं कोशत्रयं देवि ब्रह्माभासेन चेष्टते।।६४।।
यथायस्कान्तसान्निध्ये यथा लोहं सुरेश्वरि।
यज्जडं तदसद्देवि यत्सत्तत्सदिति प्रिये।।६५।।
तस्मात्तच्चेतनं ब्रह्म सत्यमित्येव सुन्दरि।
समुदायस्तु लिङ्गानां तत्राभासस्तु यः प्रिये।।६६।।
हिरण्यगर्भं तं प्राहुः सूत्रात्मानं पुनस्तथा।।६७।।

Nijanand App

49. तेज से उत्पन्न जल में पूर्वोक्त तीन और रस यह चार गुण होते हैं। सतो गुण युक्त जल से रस ग्रहण करने वाली रसना इन्द्रिय उत्पन्न होती है।

50-51. वरुण सात्विक देव होते हैं और रजो गुण प्रधान जल से मल विसर्जन करने वाली गुदा इन्द्रिय और यम सात्विक देवता प्रकट होते हैं। जल से शब्दादि पांचों गुणों से युक्त पृथ्वी प्रकट होती है। सत्व सम्बद्ध पृथ्वी से गन्ध ग्रहण करने वाली घ्राण इन्द्रिय प्रकट होती है।

52. यहां सात्विक देवता दोनों अश्विनी कुमार उत्पन्न होते हैं। रजोगुण सम्बद्ध पृथ्वी से गुह्य नामक इन्द्रिय उत्पन्न होती है।

53. हे सुरवंदिते! इससे आनन्द का अनुभव किया जाता है और उससे सात्विक प्रजापति देव सम्बद्ध बताए गए हैं।

54. रजोगुण प्रधान पंचमहाभूतों से सम्मिलित अवस्था में क्रिया शक्ति रूपी पांच प्राणों की उत्पत्ति होती है।

55. सत्व प्रधान महाभूतों के सम्मेलन से ज्ञान शक्ति प्रधान अन्तःकरण उत्पन्न होता है।

56. मन, बुद्धि, अहंकार एवं चित्त यह अन्तःकरण होते हैं। त्वचा, नेत्र, रसना, नासिका, कर्ण यह ज्ञानेन्द्रियां हैं।

57. वाणी, हस्त, पाद, गुह्य, उपस्थ यह कर्मेन्द्रियां हैं।

58. दिशा, वायु, सूर्य, प्रचेता, अश्विनी कुमार, अग्नि, इन्द्र, उपेन्द्र, मित्र यह दस इन्द्रियों के अधिदेवताओं का मैंने तुमसे कथन किया है।

59. पृथ्वी के अधिपति ब्रह्मा, जल के नायक विष्णु, तेज के अधिपति शम्भु और वायु के ईश्वर देवता होते हैं।

60. आकाश के देवता सदाशिव होते हैं। इस प्रकार महाभूतों के देवताओं का कथन किया गया है। दस इन्द्रिय, बुद्धि, मन, पंचप्राणादि वायु को लिंग शरीर कहा गया है। जीव इसकी संज्ञा है।

61-62. हे देवेशि! इसमें जो विशेष है उसका मैं वर्णन करता हूं, सुनो। पांच प्राणादि कर्मेन्द्रिय से संयुक्त होते हैं, तो उसे प्राणकोश कहते हैं। उसके भूख, प्यास आदि धर्म होते हैं। जब मन ज्ञानेन्द्रियों से युक्त होता है तो उसे मनःकोश कहते हैं।

63. जब बुद्धि ज्ञानेन्द्रियों से युक्त होती है तो विज्ञान कोश होता है। यह तीन कोश ही व्यष्टि के रूप में लिंग कहा गया है।

64. इस लिंग शरीर में आभास मय जीव आता है और जाता है। यह तीनों कोश जड़ हैं। इसमें चेष्टा ब्रह्म के आभास से होती है।

Nijanand App

इति ते कथितं देवि यत्पृष्टोहं त्वया शुभे।
समासेन महेशानि किं भूयः श्रोतुमिच्छसि।।६८।।

इति श्रीमाहेश्वरतन्त्रे उत्तरखण्डे तत्वसारे शिवोमासंवादे षष्ठं पटलम्।।६।।

सप्तमं पटलम्

पार्वत्युवाच

देवदेव महादेव करुणार्णव शंकर।
श्रुत्वा त्वदीयवचनं नात्मा मे परितुष्यति।।१।।
नारायणादिरूपाणि त्वयोक्तानि च शंकर।
तदुद्भवे हेतुमात्रं ब्रह्माज्ञानं निरूपितम्।।२।।
ब्रह्मण्यज्ञानसम्बन्धः सन्देहस्ते निवारितः।
कारणं ब्रूहि देवेश मोहोत्पत्तौ विशेषतः।।३।।

शिव उवाच

शृणु देवि प्रवक्ष्यामि रहस्यं वेदगोपितम्।
यस्य कस्यापि नो वाच्यं वाच्यं सर्वस्वदायिने।।४।।
तव स्नेहवशाद्देवि कथयामि न चान्यथा।
सच्चिदानन्दकं ब्रह्म सदंशेन क्षरं जगत्।।५।।
चिद्रूपं ब्रह्म परमं नित्यमक्षरमव्ययम्।
बाललीलाविनोदेन कोटिब्रह्माण्डसंहतीः।।
सृजते संहरत्येव निर्विकारं तथापि यत्।।६।।
तस्मादप्यक्षराद्दूर्ध्वं परमानन्दसुन्दरम्।
नित्यवृन्दावनानन्दि नानाक्रीडारसार्णवम्।।७।।
विराजति ब्रह्मपुरे मनोवाग्विषयातिगम्।
अंभोजकर्णिकावच्च नित्यवृन्दावनान्तरे।।
तत्पत्रंवदनेकैश्चिन्महोद्यानैर्विराजितम्।।८।।
निजं धाम रसानन्द स्वप्रकाशं महोज्वलम्।
कालिन्दी यत्र कोट्यर्कभास्वद्रत्नतटोन्नता।।९।।
हंससारसकारण्डनानापक्षिनिनादिता।
फुल्लाम्भोजवनामोदलुब्धभ्रमरमण्डला।।१०।।
नवरत्नमयीभिस्तु सिकताभिरलंकृता।
महामणितटात्तुङ्गकुट्टिमैः परिमण्डिता।।११।।
नानादिव्यलताकुञ्जैरम्लानकुसुमोज्वलैः।

Nijanand App

65. हे सुरेश्वरि! जैसे लोहे में चुम्बक के समीप होने पर क्रिया पैदा होती है। जो जड़ है, वह असत् है और जो चेतन है, वह सत् है।

66-67. इसलिए वह चेतन ब्रह्म ही सत्य है, यही जानना चाहिए। लिंगों का जो समुदाय है और उनमें जो आभास है, उसे हिरण्यगर्भ और सूत्रात्मा कहते हैं।

68. हे पार्वती! जो तुमने पूछा था उसको संक्षेप में कह दिया। तुम अब और क्या सुनना चाहती हो।

माहेश्वरतन्त्र के उत्तर खण्ड का तत्वसार नामक शिव-पार्वती संवाद का छठा अध्याय समाप्त हुआ।

सातवां अध्याय

पार्वती ने कहा—

1. हे महादेव! करुणा सागर! शंकर! आपके वचनों को सुनकर मेरी आत्मा सन्तुष्ट नहीं है।

2. आपने नारायणादि रूप कहे हैं और उनके उद्‌भव में ब्रह्म का अज्ञान ही एकमात्र कारण है, ऐसा कहा है।

3. ब्रह्म में अज्ञान का सम्बन्ध कैसे होता है इस सन्देह का भी निवारण कर दिया है। अब कृपा करके मोह उत्पत्ति में क्या कारण है, विशेषकर बताएं।

शिव ने कहा—

4. हे देवि! वेदों के गुप्त रहस्य को कहूंगा, सुनो। यह हर किसी को नहीं बताना चाहिए। जो अपना सर्वस्व दे सकता हो, उसी को बताना चाहिए।

5. हे देवि! तुम्हारे स्नेहवश मैं कह रहा हूं, अन्यथा नहीं कहता। सच्चिदानन्द ब्रह्म के सत् अंश से क्षर जगत् उत्पन्न होता है।

6. चित् रूप में वह नित्य, अक्षर, अविनाशी परब्रह्म बाल लीला के विनोद में करोड़ों ब्रह्माण्ड के समूह उत्पन्न करता है और संहार करता है, फिर भी निर्विकार रहता है।

7-8. उस अक्षर से भी ऊंचे परमानन्द सुन्दर नित्य वृन्दावन में आनन्द करने वाला, नाना क्रीड़ा रसों का सागर, ब्रह्मपुर में मन और वाणी के विषय से दूर नित्य वृन्दावन के मध्य में कंवलगट्टा के समान और उसके पत्ते के रूप में अनेक महान् उद्यानों से विराजित निजधाम है।

9. उसमें रसों का आनन्द है, स्वप्रकाशित है, महान् उज्ज्वल है, जिसमें करोड़ों सूर्य से चमकते हुए रत्न के समान ऊंचे-ऊंचे तटों वाली यमुना नदी में

Nijanand App

दिव्यगन्धसमाकृष्टभृङ्गझङ्कारपेशलैः ॥१२॥
सप्ततीर्थैर्दिव्यरत्नराजिराजितभूतलैः।
उपरिस्थमणिभ्राजत्कुट्टिमैर्दिव्यमण्डपैः ॥१३॥
शोभमानामृतजला स्वर्णपङ्कजमालिनी।
रक्ततुण्डपदैश्चित्रपक्षैः पक्षिगणैः शिवे॥१४॥
सेव्यमाना सुखस्पर्शैर्वायुभिश्चलपङ्कजा।
क्वचित्पर्यस्तमुक्तालिमहामरकतावनौ।
शुद्धतामसहृद्युच्चैर्भाति भक्त्यंकुरा इव॥१५॥
यत्रोन्नदन्तःशुकसारसाद्याः पठन्ति दिव्यां गुणचित्रसत्कथाम्।
शाखास्थिताः कल्पमहीरुहाणां मन्दानिलान्दोलितपल्लवश्रियाम्॥१६॥
न यत्र शोको न भयं मृतिर्वा कालो न यत्र प्रभवेदनन्तः।
यदेत्य शोचन्ति पुनर्नहीश्वराः कुञ्जेषु लीलावपुषोमलाशयाः॥१७॥
प्रतप्तजाम्बूनदसुन्दरत्विषः कटाक्षविक्षेपविलोभितेश्वराः।
चरन्ति मूर्ता इव विद्युतः स्फुटा घनेषु कुञ्जध्वनियोषिताङ्गणाः॥१८॥
प्रफुल्लचाम्पेय वनोल्लसल्लताशतोपशाङ्कं ययिता समीरणः।
तनुष्विवानन्दपरंपरां परां तनोति तारुण्यभृतोत्रतभुवाम्॥१९॥
सख्यः कुशेशयदृशो विलसद्विभूषाः
प्रोत्तुङ्गपीनकुचमण्डललम्बिहाराः।
काश्मीरनीरलुलिताम्बररश्मिमाला
निर्भत्सितोदितदिवाकरबिम्बशोभाः॥२०॥
दिव्यन्ति यत्र सुरसिद्धदुरापलोकाः
श्रुत्युल्लसत्कनककुण्डललोलगल्लाः॥२१॥
द्युमणिमणिसमुद्यत्कान्तिसन्दोहरम्याः
विशदमरकतानामंशुकिर्मीरिताश्च।
प्रचलदचलशोभैः पद्मरागैः सरागैः
प्रकटपरमशोभा भूमयो यत्र भान्ति॥२२॥
नीलाद्रिकान्तिसन्दोहैरूर्ध्वगैः सर्वतः प्लुतैः।
दूरादाभाति वसुधा हरितृणमयांकुरा॥२३॥
परापरविभागेन नीलपुष्पमयौ गिरी।
नानाश्चर्यमयौ दिव्यौ दिव्योद्यानमनोहरौ॥२४॥
स्फुरन्मयूखमालाभिः प्रकाशितदिगन्तरः।
पद्मरागाचलः श्रीमानास्ते यत्र महार्द्धिमान्॥२५॥

Nijanand App

10. हंस, सारस, बत्तख आदि नाना पक्षियों के शब्दों से निनादित, खिले हुए कमल वनों के सुगन्धि के लोभी भ्रमर समूहों से युक्त, नव रत्नों वाली बालू से अलंकृत,

11. महामणियों के तट के ऊंची-ऊंची फर्शों से सुशोभित,

12. उनके दिव्य लताओं के कुंजों और न मुरझाने वाले पुष्पों से उज्ज्वल, दिव्य सुगन्ध से आकृष्ट भंवरों के झंकार से युक्त

13. सप्त तीर्थों, दिव्य रत्नों की पंक्तियों से शोभित भूतलों और उसके ऊपर स्थित मणियों से चमकती फर्श के दिव्य मण्डपों से

14. शोभित अमृतोपम जल वाली, सुवर्ण कमल की पंक्तियों वाली, लाल चोंच और पैर, चितकबरे पंख वाले पक्षीगणों से

15. सेवा की जाती हुई और स्पर्श में सुख देने वाली वायु से कमल हिल रहे हैं, कहीं पर मरकत मणि की भूमि पर बिखरी हुई मुक्ता माला वैसे ही शोभित होती है जैसे कि तामस हृदय के शुद्ध हो जाने पर भक्ति के अंकुर शोभित होते हैं।

16. मन्द वायु से जिन कल्प वृक्षों के पत्ते हिल रहे हैं उनकी शाखाओं पर बैठकर चहचहाते हुए तोता, सारस आदि दिव्य गुणों की विचित्र सत् कथा पढ़ते हैं।

17. जहां पर शोक, भय, मृत्यु नहीं है और अनन्त काल भी अपना प्रभाव नहीं डालता। जहां पर पहुंच कर ईश्वर भी निर्मल हृदय होकर कुन्जों में अपने को भूल जाते हैं।

18. जहां पर तपाए हुए स्वर्ण के समान सुन्दर कान्ति वाली अपने कटाक्षों से ईश्वर को भी लुभाने वाली स्त्रियों के समूह मेघों में चलती बिजली के समान विचरण करते हैं।

19. खिले हुए चम्पा के वनों में लिपटी हुई सैकड़ों लताओं की शंका वायु उत्पन्न कर रही है। ऊंची भौहें वाली युवती स्त्रियों के शरीर स्पर्श करके वायु उत्तरोत्तर आनन्द उत्पन्न कर रही है।

20. कमल के समान नेत्रों वाली आभूषणों से चमत्कृत लटकते हुए हारों वाले उन्नत स्थूल कुच मण्डल से उदित सूर्य के बिम्ब को भी लज्जित करने वाली, कस्तूरी युक्त जल से रंगे और रश्मि समूह वाले वस्त्रों को धारण किए हुए सखियां,

21. सुर और सिद्धों द्वारा जिनके लोक कठिनाई से प्राप्त किए जा सकते हैं, जिन सखियों के कानों में सुवर्ण के कुण्डल हिल रहे हैं, शोभा पा रही हैं।

22. सूर्यकान्त मणि के प्रकट होते हुए कान्ति समूह से जो सुन्दर हैं और स्वच्छ मरकत मणियों के किरणों से मिली हुई अचल शोभा वाले लाल रंग की पद्मराग मणियों से जिनकी परम शोभा प्रकट होती है, ऐसी भूमियां जहां संशोभित हो रही हैं।

Nijanand App

सरांसि यत्र भूयांसि चित्सुधारसवन्ति च।
विलसन्ति महारत्नशिलाबद्धानि सर्वतः॥२६॥
यत्रोद्यानलताकुल्या वमन्ति मधुरां सुधाम्।
यूथशः खेलमानास्ताः पिबन्त्यानन्दनिर्भराः॥२७॥
यत्रैव कुञ्जसदनानि हसन्मुखानि
व्याकीर्णकाञ्चनभुगासनमण्डितानि।
प्रत्याहसन्मणिविजृम्भितकुट्टिमानि
कूजद्विहङ्गमकुलानि शिवानि नित्यम्॥२८॥
स्फूर्जन्मणिमप्रवितितिर्वितनोति लक्ष्मीं
विस्फूर्जदूरुशशिकान्तशिलातलेषु।
कूलप्ररूढनलिनीदलरश्मिबिम्बा
रूढेषु काममपि नितान्त मुदः प्रणाली॥२९॥
वैदूर्यवीरुध इह प्रतिभान्ति विष्वक्
यासूल्लसन्त्यरुणविद्रुमनर्त्तनानि।
दूरादुपेतसितमौक्तिकरश्मिलेश
शोभां दधाति विमलां विलसन्तमार्याम्॥३०॥
यत्रैव चम्पकवनानि जयन्ति विष्वक्
मत्तभ्रमद्भ्रमरदूरतरोज्झितानि।
प्रत्युन्नदन्ति विटपेष्वनिशं द्विजेन्द्रा
गीतध्वनिं सुखसमरीसमुन्नमत्सु॥३१॥
श्यामोदरद्युतिसरोजवनोस्थिताभिः
कान्तिच्छटाभिरभितोधृतदुर्दिनेषु।
प्रोत्फुल्लपङ्कजकदम्बपरागपुञ्जो
विद्युच्छविं वहति गन्धवहः प्रणुन्नः॥३२॥
क्रीडासरः स्फुटमुदञ्चति कुञ्जलीनगुञ्जद्द्विरेफपटलाकुलयंकजश्रि।
वप्रप्ररूढगुणरूढकदम्बलम्बद्दोलासहस्त्रकमनीय गुणं गुणोरू॥३३॥
दूरादिहाद्रितनये कमलाकराणामुद्यत्परागपटलैश्च समीरवेगात्।
स्फारीभवत्सुरभिगन्धसुधामयाम्भश्चेतः सरो रमयतीत्यनुरागिभावम्
मध्योल्लसद्विपुलविद्रुमदेहलीकविश्रान्तिमण्डपसमृद्धसमस्तभोगम्।
सोपानवर्त्मसु निविष्टसखीसहस्त्रव्याहन्यमानमृदुमर्दलपूर्णकुञ्जम्॥३५॥
उद्यन्मयूखमयशुद्धसुधातिवर्षे रत्नेन्दुरुल्लसति नित्यमनस्त भावः।
नित्याभिरन्विततमः स्वकलाभिरन्तः शुद्धेतरप्रथितपक्षविपक्षधामा॥३६॥

Nijanand App

23. नील पर्वत के ऊर्ध्वगामी कान्ति समूह के सर्वत्र पड़ने से हरित घास रूपी अंकुर वाली पृथ्वी दूर से चमक रही है।

24. पर और अपर विभाग से नील पुष्पों से भरे पर्वत जिनमें दिव्य उद्यान हैं, वे नाना प्रकार के आश्चर्यों से युक्त हैं।

25. जहां पर चमकती हुई किरणों की मालाओं से दिगन्तर को प्रकाशित करने वाला शोभायमान महान् सम्पत्ति वाला पद्मराग मणि का पर्वत है।

26. चित्त में सुधारस का संचार करने वाले महारत्नों की शिलाओं से चारों तरफ से बंधे हुए जहां बहुत-से तालाब सुशोभित होते हैं।

27. जहां पर उद्यान की लताएं छोटी नदियों के समान मधुर सुधा बहाती हैं और झुण्डों में खेलती हुई सी वे लताएं आनन्द विभोर होकर उस जल का उपयोग करती हैं।

28. जहां पर हंसते हुए द्वारों वाले कुंज भवन जिनमें सोने के आसन सुशोभित हैं और जहां चमकती हुई मणियों वाली फर्श है और बोलते हुए पक्षियों के समूह नित्य कल्याणकारी हैं।

29. चमकती हुई मणियों का समूह चन्द्रकान्त मणि के शिला तलों पर विचित्र शोभा फैलाता है। जिनके किनारे पर उगे हुए कमल के पत्तों की किरणों वाली और उनके भी अत्यन्त आनन्द की कोई प्रणाली प्रकट हो रही है।

30. चारों ओर वैदूर्य की लताएं जिनमें लाल वृक्ष नृत्य करते से लगते हैं, सुशोभित हो रही हैं। सफेद मोती का रश्मि समूह दूर से आता हुआ धरती को स्वच्छ शोभा दे रहा है।

31. यहां पर चारों ओर चम्पा के वन मतवाले भ्रमण करने वाले भ्रमरों से व्यक्त दूर से ही सुशोभित हो रहे हैं। यहां पर वृक्षों पर पक्षी सुखमय वायु के चलने पर दिन-रात गीत की ध्वनि का उच्चारण करते हैं।

32. श्याम द्युति वाले कमल वन में स्थित कान्ति की छटा से ऐसा प्रतीत हो रहा है कि खिले हुए कमलों के पराग का हिलता हुआ समूह बिजली की छवि को धारण कर रहा है।

33. कुंजों में छिपे हुए गुंजन करते हुए भौंरों के समूह-से उक्त कमलों की शोभा वाले क्रीड़ा सरोवर स्पष्ट दिखाई पड़ते हैं। उनके तट पर उगे हुए कदम्ब वृक्षों में पड़े हुए सहस्रों झूलों की शोभा विद्यमान है।

Nijanand App

यत्रामृताम्भोनिधिमध्यविस्फुरद्रत्नोल्लसद्द्वीपनिवेशमद्भुतम्।
चकास्ति तस्मिन्परमाद्भुतं महन्नकेन भास्वन्मणिना विनिर्मितम्॥३७॥
निजालयं मन्दिरमद्भुताकृति महामणिस्तम्भविराजमानम्।
समोदितानेकदिवाकरेन्दुरुक्प्रभावनिर्भर्त्सनरत्नमण्डितम्॥३८॥
नानाविधानन्दविहारभूमिका दशैव यस्मिन् प्रतिभांति पेशलाः।
विहारशय्यासनचारुचामरामृतानुलेपोत्तमगन्धसाधना॥३९॥
गवाक्षमालापथचारिभिर्महागरुद्भवैर्धूमवरैः सुगन्धिभिः।
इतस्ततः केलिवनानिलोद्धतैः सुवासयन्त्यो वनपुष्पसम्पदः॥४०॥

क्वचिद्दिनमणिज्योत्स्नाजालैर्मध्याह्नसूचकम्।
क्वचिदञ्जनसङ्काशैर्मणिभिर्दर्शितक्षपम्॥४१॥
उदितार्कमिवान्यत्र पद्मरागप्रभारुणम्।
सन्ध्यायमानमेकत्र इन्द्रनीलमणित्विषा॥४२॥
जलजाकृतिमत्यम्बुचतुरस्त्रावर्वेदिका।
तस्याश्चतुर्षुकोणेषु हेमकुम्भाः सुधाभृताः॥४३॥
रत्नपंकजसंशोभैर्मुखा यत्र चकासते।
मुक्तामयवितानानि मणिभूमिप्रभांकुरैः॥४४॥
निर्भिन्नानीह लक्ष्यन्ते नानाचित्राकृतीनि च।
कर्णिकावन्महासौधं परितस्तस्य सुन्दरि॥४५॥
द्वादशैव सहस्त्राणि प्रियाणां सौधपंक्तयः।
प्रवालदेहलीकानि मणिद्वाराणि पार्वति।
मुक्तातोरणवन्त्युच्चैर्नानाश्चर्यमयान्यपि॥४६॥
नानावर्णैर्महाचित्रैश्चित्रितानि समन्ततः।
गवाक्षमालाविलसन्मणिदीपोज्वलानि च॥४७॥
दीर्घिकाभिश्च दीर्घाभिर्विकचोत्पलपङ्क्तिभिः।
गाहमानाभिरनिशं सखीवृन्दैर्विभूषितैः॥४८॥
क्वणत्कनकभूषाढ्यैः कौशम्भाम्बरशोभितैः।
नानाकेलिरसास्वादविघूर्णितविलोचनैः॥४९॥
महाद्वारमहं बन्दे भास्वद्रत्नकपाटकम्।
सन्मुखं दूरतो यस्य विभाति यमुना नदी॥५०॥

तत्प्राङ्गणं कुंकुमपङ्कपिच्छलं समुद्यदादित्यसहस्त्रभास्वरम्।
मुक्तामयूखावलिमिश्रितैर्महामणिप्रकाशैररुणीकृतान्तरम्॥५१॥

यत्र कार्त्तस्वरमयी पर्यस्तमणिमौक्तिका।
परमानन्दभवनं विभाति विविधास्थली॥५२॥

Nijanand App

34. हे पर्वतराजपुत्री! कमल के सरोवरों से वायु वेग से उड़ने वाले पराग से युक्त हो जाने के कारण सुगन्धित हुए सरोवर मन में अनुरागी भाव पैदा करते हैं।

35. उसके मध्य में विशाल मूंगे की देहरी वाला समस्त भोगों से युक्त विश्राम मण्डप है। जिसमें सीढ़ियों का मार्ग है। उस पर आरोहण करती हुई हजारों सखियों के चरणों से दबने वाली कुंज लताएं हैं।

36. जहां रत्न रूपी चन्द्रमा नित्य बिना अस्त हुए शुद्ध सुधा की वर्षा करने वाली अपनी किरणों से सुशोभित होता है और नित्य अपनी कलाओं के अन्धकार से सम्बन्ध स्थापित करता हुआ शुद्ध एवं शुद्धेत्तर तथा पक्ष एवं विपक्ष दोनों को एक जगह दिखा रहा है।

37. जहां पर अमृत के सागर के मध्य से निकलने वाले रत्नों से सुशोभित एक द्वीप है। प्रकाशित होने वाली एक ही मणि से बना हुआ महान् एवं परम अद्भुत भवन है।

38. महामणियों के खम्भों से युक्त अद्भुत आकार का अपना निवास (मन्दिर) है जो एक साथ उदय होने वाले सूर्य तथा चन्द्रमा के प्रकाश को तुच्छ बना देने वाले रत्नों से मण्डित है।

39. उस धाम में अनेक प्रकार के आनन्दयुक्त विहार की भूमिका वाली दस भूमिकाएं हैं जिनमें विहार, शैय्या, आसन, अमृत के समान गन्ध अनुलेपन के नाना साधन हैं।

40. अनेक गवाक्षों (झरोखों) के मार्ग से निकल कर आने वाली अगर-धूप की सुगन्धि जो वायु के द्वारा इधर-उधर ले जाई जाती है, वन के पुष्पों की सम्पत्ति को भी सुगन्धि प्रदान करती है।

41. कहीं पर सूर्य के ज्योत्स्ना जाल (प्रकाश) से मध्याह्न दिखाई पड़ता है। कहीं काली मणियों के प्रकाश से रात्रि दिखाई पड़ती है

42. अन्यत्र पद्मराग मणि की प्रभा से अरुण होने के कारण उदय होते हुए सूर्य जैसा और कहीं इन्द्र नील मणि की कान्ति से संध्या जैसा दिखाई पड़ता है।

43. कहीं कमल के आकार की चौकोर वेदियां हैं। उनके चारों कोणों में सुधा से भरे सुवर्ण कुम्भ हैं।

44. रत्नों के कमल की शोभा वाले जिनके द्वार शोभित होते हैं और मुक्ता के मणि भूमि की प्रभा रूपी अंकुरों से मुक्तामय शामियाना सुशोभित है।

45. हे सुन्दरी! उसके चारों ओर कंवलगट्टे के आकार का बहुत बड़ा महल है जिसमें अनेक चित्रों की आकृतियां लगी हुई-सी दिखाई पड़ती हैं।

46. हे पार्वती! ब्रह्म-प्रियाओं के महलों की बारह हजार पंक्तियां हैं जिनमें मोती के फाटक लगे हैं और आश्चर्यमय मूंगे की दहलीज हैं।

47. अनेक वर्ण के बड़े-बड़े चित्रों से चारों ओर चित्रित गवाक्षों में जगमगाते हुए मणियों के दीपकों से उज्ज्वल

48. बड़ी-बड़ी बावलियां जिनमें नील की पंक्तियां विकसित हैं, वे नित्य स्नान करने वाली सखियों से विभूषित हैं।

49. वे सखियां बजते हुए स्वर्णाभूषणों, रेशमी वस्त्रों से सुशोभित तथा अनेक प्रकार के क्रीड़ा रस के आस्वादन से दोलायित नेत्रों वाली हैं।

Nijanand App

सव्यापसव्ययोर्यस्य पुरश्चसुरवन्दिते।
कुट्टिमानि विचित्राणि भान्ति भूयांसि यत्र वै॥५३॥
यत्र जाम्बूनदस्तम्भेष्वारोपितमणिव्रजाः।
प्रपुष्णान्ति महीदीपशोभामधूतवर्चसः॥५४॥
तन्मध्यतो जयति कश्चिदनर्घ्यमुक्ता
मणिक्यराशिरचितो विलसत्पताकः।
वैदूर्यविद्रुमविनिर्मितदेहलीकः
श्रीमण्डपः कुसुमराशिभिरुद्यतश्रीः॥५५॥
नृत्यन्ति कूजदलघुध्वनिनूपुराणां
केयूरचारुवलयावलिभासुराणाम्।
यूथानि सस्मितमुखद्युतिनर्त्तकीना
मादर्शिताभिनयमुच्चलकुण्डलश्रिः॥५६॥
यत्रेन्द्रनीलमणिनिर्मितनीलपद्मेषूभ्रान्तभृङ्गवनितापटलीविभाति।
यत्रेल्लसत्स्फटिकभूमितलोपविष्टाहंसाविशेषमभजन्पदचञ्चुभासा
॥५७॥
आमोदमोदितदिगन्तरभृङ्गसङ्घकल्पद्रुकोमलपरागसरागमार्गे॥५८॥
मन्मानसं गिरिसुते सितसैन्धवीयः।
खण्डो निमज्जतु महामणिमण्डपान्तः॥५९॥
यमुनायाः परे कूले निजं धाम प्रतिष्ठितम्।
अपरस्मिन्महेशानि धाम स्यादक्षरस्य तु॥६०॥
धाम्नोभिमुखमीशानि वनान्युपवनानि च।
चिदानन्दमयी वापी मणिमण्डपमण्डिता॥६१॥
पारिजातवनं यत्र प्रवालकुसुमोज्वलम्।
पद्मरागमयाकारनानावृक्षैर्विराजितम्॥६२॥
वैदूर्यमयवल्लीनां पद्मरागपलाशकैः।
मुक्तास्तवकयुक्तैश्च कांचनांकुरसंगतैः॥६३॥
यूथैर्विराजितं विष्वक् नानाक्रीडारसालयम्।
सपादलक्षयोजनानां संख्यायां विमलं सरः॥६४॥
मणिरत्नशिलाबद्धमणिकुट्टिममण्डपम्।
प्रवालपद्मरागाद्यैः क्लृप्तसोपानसुन्दरम्॥६५॥
तत्रस्था भर्तुरुद्दाम यशो गायन्ति योषितः।
काश्चिल्लम्बन्ति दोलाभिर्गायन्त्यो मधुरस्वरम्॥६६॥

Nijanand App

50. चमकते हुए रत्न के किवाड़ वाले महाद्वार की मैं वंदना करता हूं जिसके सामने दूर से ही यमुना नदी दिखाई पड़ती है।

51. कुंकुम के कीचड़ से युक्त उदय होते हुए सहस्त्रों सूर्यों से प्रकाशित, मुक्ता की किरणों से युक्त महामणियों के प्रकाश से जिसका अन्त:भाग लाल दिखाई दे रहा है, वहां ऐसा आंगन है।

52. जहां मणियां और मोती फैले हुए हैं, ऐसी विविध प्रकार की स्वर्णमयी भूमि परम आनन्द प्रदान करने वाली सुशोभित होती है।

53. जिसके दाहिने एवं बाएं बहुत-सी विचित्र फर्श सुशोभित होती हैं।

54. जहां पर सुवर्ण के खम्भों में लटकते हुए मणि महान् द्वीपों की शोभा को हर रहे हैं।

55. उसके मध्य में अमूल्य मुक्ता, माणिक्य राशि से बनी हुई पताका सुशोभित हो रही है। वैदूर्य (नीलम) और विद्रुम (मूंगा) की देहरी वाला, पुष्पों की राशि से बढ़ती शोभा वाला ऐसा श्री मण्डप है।

56. जहां पर मन्द स्वर में बजते हुए नूपुरों वाली और सुन्दर बाजूबन्द से अलंकृत मुस्कराते हुए मुख वाली तथा चंचल कुण्डलों की शोभा वाली नर्तकियां अपनी नृत्य कला दिखाती हैं।

57. जहां पर इन्द्र नील मणि से निर्मित नील कमलों में भटकी हुई-सी भ्रमरियों का समूह सुशोभित होता है। जहां पर स्फटिक मणि के बने हुए फर्शों पर बैठे हुए हंस अपने मुख से शब्दों का उच्चारण कर रहे हैं।

58. सुगन्धि से सुगन्धित भौंरों के समूह से युक्त कल्पद्रुम के कोमल पराग से जहां का मार्ग रँगा है।

59. हे पर्वतपुत्री! मणि-मण्डप के अन्तर्गत स्वच्छ सिन्धु प्रदेश के एक भाग में मेरा मन निमग्न हो रहा है।

60. यमुना के एक किनारे पर निजधाम प्रतिष्ठित है और दूसरे किनारे पर अक्षर का धाम है।

61. हे ईशानी! उस धाम के सम्मुख वन और उपवन हैं। चिदानन्दमयी वापी मणियों के मण्डप से सुशोभित है।

62. प्रबाल के कुसुमों से उज्ज्वल पारिजात का वन पद्मराग मणि के आकार के नाना प्रकार के वृक्षों से सुशोभित है।

63-64. वैदूर्य भरी लताओं के पद्मराग मणियों के पत्तों तथा मुक्ता के गुच्छों और सुवर्ण के अंकुर वाली लताओं से चारों तरफ से सुशोभित ब्रह्म प्रिया समूहों के अनेक क्रीड़ाओं के रस स्थान सवा लाख योजन का विस्तृत तालाब है।

Nijanand App

काश्चिन्मृदङ्गवीणाद्यैर्नानाक्रीडारसोज्वलाः।
खेलन्ति परमानन्दाः सखीसख्यो मुदान्विताः॥६७॥
महापद्मवनं यत्र पद्मरागमयाम्बुजम्।
वैदूर्थदण्डपत्रालिस्फुरद्वैडूर्यपद्मिनी॥६८॥
प्रवालकेसरोद्भासिदिव्यगन्धमनोहरम्।
सृजद्वितानमाकाशे रजोभिर्वायुनोद्धतैः॥६९॥
संख्यया परितो देवि लक्षयोजनविस्तृतम्।
यद्गन्धानन्दसंसर्गात् ब्रह्मानन्दपरम्पराः॥७०॥
अप्रार्थनीयतमाभान्ति केनचित्सर्वथा सदा।
रमते भगवान् क्वापि सप्रियाभिः समन्वितः॥७१॥
बसन्ते कुंकुमाम्भोभिर्जलयन्त्रैर्विनिर्गतैः।
बसन्तपुष्पाभरणैः स्फुरन्मुक्ताविभूषणैः॥७२॥
प्रच्छन्नाभिः प्रकाशाभिः क्रीडाभिरितरेतरम्।
नानापरिमलोद्गारैर्नानापक्षिगणस्वनैः॥७३॥
पिककोलाहलैर्दिव्यैर्नित्यानन्दविवर्द्धनैः।
स्फुरत्तडितमेघालिध्वनन्नभसि प्रावृषि॥७४॥
भूमिकासु सखीवृन्दैर्गायमानः प्रमोदत्ते।
एवं क्रमेण भगवान् क्रीडते ऋतुचर्यया॥७५॥
कदाचिन्मणिगेहस्थकुट्टिमे सुमनोहरे।
चतुर्दिक्षुमहारत्नस्तम्भैः षोडशभिर्युतैः॥७६॥
अन्योन्यमतिबिम्बत्वादन्योन्येतरथागतैः।
प्रियामध्यगतो भाति तारामध्ये तथा शशी॥७७॥
नानानर्मविनोदैश्च नानाक्रीडाकुतूहलैः।
रमते भगवान् यत्र स्वयं रसमयः पुमान्॥७८॥
अक्षरः परमात्मा च पुरुषोत्तमसंज्ञकः।
उभावप्येक एवार्थो लीलाभेदेन सुन्दरि॥७९॥
अक्षरे सृष्टिकर्तृत्वान्न शृङ्गाररसोदयः।
अमायत्वाद्रसात्मत्वात्त्रापरः सृष्टिकृत्प्रिये॥८०॥
दिदृक्षा ह्यक्षरस्यासील्लीलाया दर्शने प्रिये।
पूर्णप्रियाप्रेम पश्ये विलसत्पुरुषोत्तमे॥८१॥
तज्ज्ञात्वा पुरुषः श्रेष्ठः प्रियास्विच्छां दधे प्रिये।
प्रार्थयामासुरेतास्तं श्रीस्वामिन्या समन्विताः॥८२॥

Nijanand App

65. मणियों और रत्नों के शिलाओं से बना हुआ मण्डप और प्रबाल पद्मरागों से बने सोपानों से सुन्दर है।

66. उसमें रहने वाली स्त्रियां अपने स्वामी के महान् यश का गान करती हैं। फूलों में खड़ी होकर मधुर स्वर से गान करती हैं।

67. कुछ मृदंग, वीणा आदि के द्वारा अनेक क्रीड़ाओं के आनन्द का अनुभव करती हुई सखियां खेलती हैं।

68. जहां पर महापद्म वन है जिसमें पद्मराग के कमल और वैदूर्य के पत्तों पर बैठे हुए भंवरे ही वैदूर्य कमलिनी मालूम पड़ते हैं।

69. प्रवाल की केशर से प्रकट होने वाली दिव्य मनोहारी गन्ध, वायु के द्वारा उड़ाई गई रज से आकाश में शामियाना जैसा बना रही है।

70. हे देवि! उसके चारों तरफ एक लाख योजन विस्तृत एक स्थान है जिसकी गन्ध का आनन्द पाकर ब्रह्मानन्द का सुख मिलता है।

71. वह आनंद की परम्परा बिना प्रार्थना के ही किसी के द्वारा प्राप्त की जाती है और यहीं पर कहीं प्रियाओं के साथ भगवान रमण करते हैं।

72-77. जल यन्त्रों से निकले हुए कुंकुम जल और बसन्त में खिलने वाले पुष्पों के आभूषण और मुक्ताओं के आभूषणों से युक्त होकर प्रच्छन्न और प्रकाश में क्रीड़ाओं के द्वारा नाना सुगन्धियों को बिखेरते हुए नाना पक्षियों के कलरव, कोयलों की आवाज से बसन्त में चमकती हुई बिजलियों वाले मेघों से युक्त गर्जते हुए आकाश में वर्षाकाल में सखियों से जिनका यशोगान किया जाता है, वहाँ भगवान आनन्द प्राप्त करते हैं। इस प्रकार वह भगवान ऋतु के अनुसार क्रीड़ा करते हैं। कभी चारों दिशाओं में महान् रत्नों के सोलह खम्भों से युक्त मणिमय गृह के सुन्दर फर्श पर प्रियाओं के मध्य में स्थित तारागणों के बीच में चन्द्रमा के समान सुशोभित होते हैं।

78. जहां पर रसमय पुरुष भगवान् स्वयं नाना प्रकार के विनोदों से नाना क्रीड़ा-कौतुक से रमण करते हैं।

79. हे सुन्दरी! अक्षर तथा परमात्मा का ही पुरुषोत्तम नाम है। दोनों ही पर्यायवाची हैं। अन्तर केवल उनकी लीलाओं का है।

Nijanand App

सख्य ऊचुः

भो भो स्वामिन्परान्द परात्परतर प्रभो।
वयं प्रियोः प्रियोऽसि त्वं तस्मान्नः प्रियमाचर॥८३॥
अक्षरात्मा तु भगवान् या लीलाः सृजते प्रभुः।
अस्माभिर्नानुभूतास्ताः कीदृशीः किंविधा इति॥८४॥
तद्दिदृक्षितचित्तानां कामो नः प्रतिबाधते।
कारयानुभवं तस्याः कारुण्येन कृपानिधे॥८५॥

श्रीकृष्ण उवाच

प्रियाः शृणुत मे वाक्यं सावधानेन चेतसा।
न यूयं दर्शने योग्याः नित्यानन्दपदेस्थिताः॥८६॥
यत्रानन्दस्वरूपस्य हानिर्भवति सर्वथा।
त्रिगुणायास्तु लीलाया दर्शनेन प्रियंवदाः॥८७॥
मायावेशाद्विचित्रत्वं भावरूपात्मनां भवेत्।
स्वलीलासहितं मां च नद्रक्ष्यथ कदाचन॥८८॥
दुःखानुभव एवास्ति न सुखस्य कदाचन।
विस्मरिष्यथ मां तत्र किमन्यत्तु वदामि भोः॥८९॥
इत्युक्तास्ताः प्रियाः सर्वाः प्रत्यूचुः पुरुषोत्तमम्।
तथापि प्रिय तत्सर्वं नानुभूतं कदाचन॥९०॥
तस्मादनुभवारूढं यथा भवति तत्कुरु।
दुःखकामो विना दुःखदर्शनं न निवर्तते॥९१॥
विना दुःखं न च सुखं स्वरूपेण प्रतीयते।
तस्मात्साधय नः कामं गुणलीलानुदर्शने॥९२॥
एवमुक्ते प्रियाभिस्तु तथास्त्विति जगाद सः।

इति श्रीमाहेश्वरतन्त्रे उत्तरखण्डे शिवोमासंवादे सप्तमं पटम्॥७॥

अष्टमं पटलम्

शिव उवाच

इच्छया ससृजे निद्रा त्रिगुणा मोहरूपिणी।
तथा विस्त्रंसितज्ञानो मुमोह जगदीश्वरः॥१॥
मोहरूपं तदज्ञानं यस्य शक्तिद्वयं प्रिये।
आवरणा प्रथमा देवि विक्षेपात्मा परा मता॥२॥
स्वप्रकाशं यथा दीपमभ्रपत्रावृत्तिर्यथा।

Nijanand App

80. अक्षर सृष्टिकर्ता हैं। अतः उसमें श्रृंगार रस का उदय नहीं होता। वह माया रहित रसात्मा है। अतः उससे भिन्न कोई सृष्टिकर्ता नहीं।

81. हे प्रिये! जब अक्षर को लीला के दर्शन की इच्छा हुई कि पुरुषोत्तम को पूर्ण प्रेम से ब्रह्मप्रियाओं के साथ विलास करते हुए देखूं।

82. उसे जानकर पुरुष श्रेष्ठ ने प्रियाओं में वही इच्छा प्रकट कर दी और श्री स्वामिनी के साथ सखियों ने उनसे प्रार्थना की।

सखियों ने कहा—

83. हे स्वामी! परानन्द! परात्पर प्रभो! हम प्रिया हैं, आप प्रिय हैं, इसलिए हमारा प्रिय कीजिए।

84. अक्षरआत्मा भगवान् जिन लीलाओं का निर्माण करते हैं हमने उनका अनुभव नहीं किया है कि वह लीलाएं कैसी और किस प्रकार की हैं।

85. उसको देखने की चित्त में इच्छा हो रही है। हे कृपानिधि! कृपा करके उसका अनुभव कराइए।

श्री कृष्ण बोले—

86. हे प्रियाओ! सावधान चित्त से मेरी बात सुनो। नित्यानन्द पद में स्थित रहने से तुम वह लीलाएं देखने लायक नहीं हो।

87. उन तीन गुणों वाली लीलाओं को देखने से हर प्रकार से आनन्द स्वरूप की हानि होती है।

88. उन लीलाओं में माया का आवेश होता है और विचित्रता तथा भावरूपता उनमें आती है। अपनी लीला सहित मुझको तुम कभी नहीं देख पाओगी।

89. उसमें दुःख का ही अनुभव है, सुख का नहीं। उस अवस्था में तुम मुझे भूल जाओगी। और क्या कहूं?

90. इस प्रकार कहे जाने पर उन सबने पुरुषोत्तम से फिर कहा, हे प्रिय! वह सब जैसा आप कहते हैं वैसा ही है, फिर भी हमने उसका अनुभव तो नहीं किया है।

91. इसलिए हमें उसका अनुभव कराइए। दुःख की कामना करने वाले का दुःख बिना देखे निवृत्त नहीं होता।

92. बिना दुःख के सुख अपने स्वरूप से प्रतीत नहीं होता। इसलिए त्रिगुण लीला देखने की हमारी कामना पूर्ण कीजिए।

93. प्रियाओं के ऐसा कहने पर उन्होंने "तथास्तु" कहा।

शिव-पार्वती के संवाद का माहेश्वरतन्त्र के ज्ञान खण्ड का सातवां अध्याय समाप्त हुआ।

Nijanand App

निगुह्यैतं जितानेन नानाभावान्प्रदर्शयेत्॥३॥
एवं कूटस्थपुरुषमावृत्यावरणात्मिका।
ततो विक्षेपरूपेण विश्वमात्मन्यदर्शयत्॥४॥
शक्तिद्वयसमापेतमज्ञानमिति तद्विदुः।
यथा शयानः पुरुषो जाग्रद्दृष्टं विमुञ्चति॥५॥
तद्वासनावासितायां बुद्धौ स्वप्नं प्रपश्यति।
तथा ददर्शविश्वात्मा स्वप्नारूढं जगत्प्रिये॥६॥
यथाशयानः पुरुषः स्वप्ने राजा यथा भवेत्।
राजदेहेन प्रकृतीः सर्वा एव नियच्छति॥७॥
तथा नारायणं रूपं धत्ते देवश्चिदात्मकः।
तेन रूपेण देवेशि स्वप्नलीलां प्रपश्यति॥८॥
सत्वं रजस्तम इति पृथिव्यादीनि सुन्दरि।
तत्र जातानि देवेशि येभ्योण्डमभवत्प्रिये॥९॥
तत्र जाता इमे लोकाः सप्त चोर्ध्वमधस्तथा।
सप्तार्णवाः सप्तद्वीपा जम्बूद्वीपस्तु मध्यमः॥१०॥
तन्मध्ये भारतं वर्षं माथुरं तत्र मण्डलम्।
तन्मध्ये गोकुलं जातं स्वाप्निकं सुरसुन्दरि॥११॥
बर्हिवत् भासते विश्वं निद्रयान्तर्गतं प्रिये।
ब्रह्मसत्तैव तत्सत्ता पृथक् सत्ता न विद्यते॥१२॥
भित्यन्तर्गतचित्राणि यथाधिष्ठानतः पृथक्।
न सन्ति देवदेवेशि तदा त्रासमयान्यपि॥१३॥
एवं विश्वमयं चित्रं आत्मभित्तिमधिष्ठितम्।
न पृथक् देवि कुत्रापि पृथक् जानन्त्यपण्डिताः॥१४॥
ब्रह्मगुह्यमिदं देवि वक्तुं जिह्वाजड़ायते।
गात्राणि शिथिलायन्ते वाणी मे गद्गदायते।
तथापि प्रेमवशगो दिङ्मात्रं प्रब्रवीमिते॥१५॥
एकदा पुरुषः साक्षात्पुरुषोत्तमसंज्ञकः।
सखीनां मण्डलगतः स्वामिन्या श्लिष्टया प्रभुः॥१६॥
रत्नसिंहासनासीनः पदाक्रान्तमहीतलः।
पाणिना भ्रामयन्पद्मं पदावष्टब्धविग्रहः॥१७॥
दिव्यक्रीडारसानन्दो दिव्यभूषणभूषितः।
दिव्यमाणिक्यमुकुटो दिव्यकुंडलमण्डितः॥१८॥
निश्चलालिकुलाकारकुटिलः स्निग्धकुन्तलः।

Nijanand App

आठवां अध्याय

शिव ने कहा—

1. जगदीश्वर ने इच्छा से त्रिगुणात्मक मोह रूपी निद्रा का सृजन किया। उससे निकले अज्ञान से मोह हुआ।

2. वह अज्ञान मोह रूप है, जिसकी दो शक्तियों में से प्रथम आवरणा शक्ति और द्वितीय विक्षेपा शक्ति है।

3. जिस प्रकार से दीपक को किसी ढकने वाली वस्तु से ढक दिया जाय, इसी प्रकार स्वप्रकाश को ढककर यह नाना भावों को प्रदर्शित करती है।

4. इसी प्रकार कूटस्थ पुरुष को आवरण शक्ति से आवृत्त कर विक्षेपा रूप से अपने में विश्व को दिखलाती है।

5-6. दोनों शक्तियों से युक्त अज्ञान होता है। जिस प्रकार सोने वाला पुरुष जाग्रत और स्वप्न दोनों को छोड़ देता है, उसकी वासना बुद्धि में रहकर स्वप्न देखती है। इसी प्रकार विश्वात्मा अपने स्वप्न में आरूढ़ जगत को देखता है।

7. जिस प्रकार सोने वाला पुरुष स्वप्न में राजा बन बैठता है और राजा के शरीर से प्रजाओं पर नियन्त्रण करता है।

:. इसी प्रकार चिदात्मक देव नारायण रूप धारण करता है। हे देवेशि! उसी रूप से स्वप्न की लीला देखता है।

9. हे सुन्दरी! सत्व, रज, तम तथा उनसे पृथ्वी आदि उत्पन्न होते हैं, जिनसे यह ब्रह्माण्ड होता है।

10. ब्रह्माण्ड में यह सात ऊर्ध्वलोक, सात अधोलोक, सात समुद्र, सात द्वीप जिनके मध्य में जम्बू द्वीप है, उत्पन्न हुए।

11. जम्बू द्वीप में भारतवर्ष, भारतवर्ष में मथुरा मण्डल और मथुरा मण्डल में गोकुल स्वप्न के समान उत्पन्न होता है।

12. हे प्रिये! निद्रा के द्वारा अन्तर्गत विश्व बाहर की तरह भासित होता है। उस विश्व की सत्ता ब्रह्म की सत्ता से ही है, पृथक् सत्ता नहीं है।

13. दीवार पर बने चित्र जिस प्रकार अपने अधिष्ठान से पृथक् नहीं होते हैं और तब वे डरावने भी होते हैं।

14. इस प्रकार आत्मा की दीवार पर स्थित विश्वमय चित्र, हे देवि! कहीं भी पृथक् नहीं है। पृथक् जानते हैं, वह पण्डित नहीं हैं।

Nijanand App

शरत्पद्मलसद्वक्त्रो नयनानन्दवर्षणः॥१९॥
दिव्यहीरालिदशनः प्रवालदशनच्छदः।
अनंगधनुराकारकुटिलभ्रूलतोत्सवः॥२०॥
स्मितमाधुर्यविजितमाधुर्यरससागरः।
कंबुकंठलसद्रेखात्रयशोभामनोहरः॥२१॥
मुक्ताहारलसद्वक्षः स्फुरमाणमणिप्रभः।
कांचीकपालविस्फुर्जत्किंकिणीजालमण्डितः॥२२॥
वलयांगदकेयूरोर्मिकावृन्दविभूषितः।
सुनासः सुन्दरमुखः स्मितोदारमुखांम्बुजः॥२३॥
दिव्यगंधानुलिप्तांगो दिव्याम्बरविभूषितः।
सुधासमुद्रलहरीशीतलाकृतिसुन्दरः॥२४॥
गंभीरावर्तनाभ्युद्यत्तनुरोमलतांकुरः।
स्वामिनी संस्थिता तस्य वामदेशे सहासना॥२५॥
अचञ्चलतडित्कोटिद्युतिभूषणभूषिता।
दिव्यधात्रीफलस्थूलनासानटितमौक्तिका॥२६॥
शृङ्गाररससम्पूर्णनेत्रांदोलनविभ्रमैः।
विलुम्पन्तीव देवेशि भर्त्तुश्चित्तगभीरताम्॥२७॥
मधुरोल्लापमाधुर्यविनिर्भर्त्सितकच्छपी।
मन्दस्मितप्रभापूरमज्जत्प्राणेशमानसा॥२८॥
मुखामोदविलुब्धालिझङ्कारोद्विग्नलोचना।
भ्रुलताजितकन्दर्पवरकार्मुकविभ्रमा॥२९॥
मणिमंजीरनिर्ह्रादविमोहितमरालिका।
नखेन्दुरुचिसंदोहमज्जन्नूपुरमण्डला॥३०॥
आनन्दसागरोद्वेलविधूपममुखाम्बुजा।
कुचकुम्भलसन्मुक्ताहारभारमनोहरा॥३१॥
ग्रैवेयाभरणोद्दीप्ता कम्बुकण्ठी शुचिस्मिता।
सख्यः प्रियां पुरस्कृत्य प्राहुः प्राणेश्वरं मुदा॥३२॥

सख्य ऊचुः

प्राणनाथ प्रियायास्ते मनोरथमहाद्रुमः।
फलितो नैव दृश्येत त्वयि भर्त्तरि किं पुनः॥३३॥
मनोरथविघातेन दुनोत्येव प्रियामनः।
बाललीलादिदृक्षास्मान् बाधते हृदयस्थिता॥३४॥

Nijanand App

15. वेदों के द्वारा भी गुह्य इस विषय को कहने में मेरी जिह्वा जड़ हो रही है, अंग शिथिल हो रहे हैं, वाणी गद्‌गद्‌ हो रही है तथापि प्रेमवश थोड़े में कथन कर रहा हूं।

16. एक बार पुरुषोत्तम नाम वाले पुरुष सखियों के मध्य में स्वामिनी से आलिंगित

17. स्वामी रत्न सिंहासन पर विराजमान पैरों को पृथ्वी पर रखे हुए, हाथ में कमल घुमाते हुए, पैरों पर शरीर को रोके हुए,

18. दिव्य क्रीड़ा रस का आनन्द लेते हुए, दिव्य भूषण से भूषित, दिव्य माणिक्य मुकुट एवं कुण्डल धारण किए हुए,

19. निश्चल भंवरों के समूह के आकार के केशों वाले, शरदकालीन कमल के समान मुख वाले, आंखों से आनन्द की वर्षा करने वाले,

20. दिव्य हीरों के समान दांतों की पंक्ति वाले, प्रबाल के समान लाल होठों वाले, कामदेव के धनुष के आकार की टेढ़ी भौंहों वाले,

21. मुस्कान की मधुरता से सौन्दर्य रस के सागर को जीतने वाले, शंख के समान.तीन रेखाओं से सुशोभित हाथ वाले,

22. वक्ष पर मोतियों का हार धारण किए, मणि प्रभा से युक्त, कांची में लगे हुए छोटे घुंघरुओं के समूह से मण्डित,

23. वलय, अंगद और केयूर समूहों से विभूषित, सुन्दर नासिका वाले मुख कमल में हास्य वाले,

24. दिव्य गन्ध शरीर में लगाए, दिव्य वस्त्रों से सुशोभित, अमृत समुद्र की लहरों से शीतल आकृति वाले,

25. गम्भीर नाभि से निकलने वाली रोम लताओं से युक्त पुरुषोत्तम जिनके बाईं ओर आसन पर स्वामिनी बैठी हैं,

26. करोड़ों स्थायी बिजलियों की कांति वाले आभूषणों से विभूषित, दिव्य आंवले के फल के बराबर मोतियों को नासिका में धारण किए हुए,

27. शृंगार रस से सम्पूर्ण नेत्रों के चलाने से, हे देवेशि! मानो अपने स्वामी के चित्त की गम्भीरता को मिटा रही हों।

28. अपनी मधुर वार्ता की मधुरता से कच्छपी वीणा को भी तुच्छ बनाती हुई और मन्द मुस्कान की प्रभा के सागर में प्राणेश के मन को डुबोती हुई,

29. मुख की सुगन्धि से लुभाए हुए भौंरों के झंकार से उद्विग्न हो रहे नेत्र तथा अपनी भ्रूलता से कामदेव के धनुष की शोभा को जीत लेने वाली,

30. मणि के मंजीर के शब्द से हंसों को जीतने वाली, नख रूपी चन्द्रमा की कांति समूह में नूपुर मण्डल को डुबोती हुई,

Nijanand App

यथेन्दोश्चन्द्रिकायाश्च यथा कुसुमगन्धयोः।
शब्दार्थयोर्यथैवेश यथा बह्न्यर्चिषोः प्रभो॥३५॥
अनाद्यभेदो देवेशि स्वामिन्यापि तथैव ते।
अस्माकमपि भो स्वामिन् स्वामिन्यापि तथैव सः॥३६॥
कस्य हेतोर्न कुरुषे तन्मनोरथपूरणम्।
अविलम्बितमेवैतत्कुरुष्व हृदयस्थितम्॥३७॥
इति श्रीमाहेश्वरतन्त्रे उत्तरखण्डे शिवपार्वती संवादे अष्टमं पटलम्॥८॥

नवमं पटलम्

श्री शिव उवाच

अथ श्रुत्वा सखीवाक्यं दर्शनावश्यकं प्रिये।
तूष्णीं स्थितोपि मनसा मेने सर्वं भवत्विति॥१॥
स्वामिनीसहिताः सर्वाः सख्यस्तन्मुखपङ्कजम्।
वीक्ष्यमाणा इवातस्थुः प्रभुश्चापि तथा स्थितः॥२॥
वासनांशैर्गताः सर्वा मथुरामण्डलस्थिते।
गोकुले गोपिका जाता गोपगेहेषु ताः पृथक्॥३॥
वृषभानुगृहे जाता राधिकेति च विश्रुता।
स्वामिनीवासनालेशः केनाप्यंशेन सुन्दरि॥४॥
तत्सख्यश्चापि सञ्जातास्तासां नामानि कानिचित्।
कथयिष्यामि देवेशि शृणुष्वैकाग्रमानसा॥५॥
सुन्दरी स्वर्णवर्णा च रम्याङ्गी स्वर्णमालिनी।
ललिता चित्रवर्णा च विशाखा विजया जया॥६॥
सुकुण्डला कुण्डलिनी मालिनी स्वर्णमञ्जरी।
मञ्जुघोषा विचित्रा च देवसेना वरूथिनी॥७॥

Nijanand App

31. चन्द्रोपम मुख कमल से आनन्द सागर को उद्वेलित करती हुई, कुम्भ के समान कुचों पर शोभित मुक्ताहार से मन को हरने वाली,

32. गले में धारण किए गए आभूषण से सुशोभित शंख समान कण्ठ एवं पवित्र मुस्कान वाली सखियां अपने स्वामिनी प्रिया को आगे करके बोलीं

सखियां बोलीं—

33. हे प्राणनाथ! तुम्हारी प्रियाओं का मनोरथ रूपी महावृक्ष आपके स्वामी होते हुए फलित होता हुआ नहीं दिखाई देता है।

34. मनोरथ पूर्ण न होने से प्रियाओं का मन दु:खी है। बाल लीला देखने की हृदय की इच्छा हम लोगों को कष्ट दे रही है।

35. हे प्रभो! जैसे चन्द्रमा और चन्द्रिका, फूल और गन्ध, शब्द और अर्थ, अग्नि और ज्वाला का अभेद अनादि है,

36. ऐसे ही स्वामिनी से भी आपका अभेद अनादि है। हे स्वामी! हम लोगों का भी और स्वामिनी का भी उसी प्रकार अभेद है।

37. इसलिए उन मनोरथों की पूर्ति आप किसलिए नहीं कर रहे हैं? हृदय में स्थित मनोरथ को शीघ्र पूरा करने की कृपा करें।

माहेश्वरतन्त्र के उत्तर खण्ड का शिव-पार्वती संवाद का आठवां अध्याय समाप्त हुआ।

नवां अध्याय

शिव ने कहा—

1. इस प्रकार के सखियों के वचनों को सुनकर मन में ऐसा माना कि चुपचाप रहने पर भी ऐसा ही हो जाय।

2. स्वामिनी सहित सभी सखियां उनके मुख की तरफ देखती हुई स्थिर हो गईं और प्रभु भी वैसे ही स्थित हो गए।

3. वासना के अंश से वे सभी वहां से चलकर मथुरा मण्डल के गोकुल के गोपों के घर में गोपिकाएं हो गईं।

4. हे सुन्दरी! स्वामिनी भी वासना के अंश से वृषभानु के यहां राधिका हो गईं।

5. सखियां भी गोपिकाओं से जुड़ गईं। उनमें कुछ के नाम कहता हूं, सुनो।

6. सुन्दरी, स्वर्णवर्णा, रम्यांगी, स्वर्णमालिनी, ललिता, चित्रवर्णा, विशाखा, विजया, जया,

7. सुकुण्डला, कुण्डलिनी, मालिनी, स्वर्णमंजरी, मंजुघोषा, विचित्रा, देवसेना, वरुथिनी,

Nijanand App

गौरी चित्राम्बरा तन्वी चन्द्रलेखा मनोजवा।
अजिता जयिनी श्यामा बलाकी विमलप्रभा॥८॥
तारा कुरङ्गनयना कमला वनमालिका।
नित्या विलासिनी ताम्रा अनङ्गानङ्गमालिनी॥९॥
अनङ्गमेखला माध्वी मोहिनी मदनावती।
पुष्पावती हेमलता हेममाला मनोजवा॥१०॥
कर्पूरगन्धा काश्मीरी पद्मगन्धा विहारिणी।
हंसिनी चित्रिणी चित्रा सुनन्दा बिन्दुमालिनी॥११॥
मनोजापाङ्गलालित्या वैताली विमलप्रभा।
पद्मरागा विचित्राङ्गी नित्यानन्दा निरंकुशा॥१२॥
इत्येवं कोटिशः ख्याताः सख्यः कुवलयेक्षणाः।
न संख्यया परिच्छेद्या नित्यवृन्दावनाश्रयाः॥१३॥
तासां द्वादश साहस्त्री संख्या प्रोक्ता तथापि या।
अन्तःपुरगतानां च रहोमिलितचेतसां॥१४॥
जाग्रत्स्वप्नं गताः सर्वाः स्वात्मानं ददृशुस्तदा।
नन्दव्रजमिवोपेतमनुल्लङ्घितकेतनाः॥१५॥
यथा समीरवेगेन नीयते पद्मसौरभः।
न पद्मस्याधिकं किञ्चिन्न्यूनं वा भवति प्रिये॥१६॥
तथा मोहेन ता नीता अपि स्वप्नं परात्मनः।
अनुभूतवन्त्यस्तास्तत्र स्वप्नमायामनोरथम्॥१७॥
परात्मा भगवांश्चापि लीलामेता ददर्श सः।

पार्वत्युवाच

नन्दगोपव्रजं प्राप्ताः सख्यो या भवतोदिताः।
कूटस्थलीलानुभवप्रकारं वद शंकर॥१८॥
परात्मा भगवांश्चापि कथं लीलां ददर्श सः।
कीदृशी सा भवेल्लीला सगुणानिर्गुणापि वा॥१९॥
अनित्या वाथ नित्या वा यथार्थं ब्रूहि शंकर।

शिव उवाच

शृणु पार्वति वक्ष्यामि तव प्रश्नान् सुगोपितान्॥२०॥
न नास्तिकेभ्यो धूर्तेभ्यो हैतुकेभ्यः सुरेश्वरि।
न वेदनिन्दकेभ्यश्च नाविश्वासाय कर्हिचित्॥२१॥

Nijanand App

8. गौरी, चित्राम्बरा, तन्वी, चन्द्रलेखा, मनोजवा, अजिता, जयिनी, श्यामा, बलाकी, विमलप्रभा,

9. तारा, कुरंगनयना, कमला, वनमालिका, नित्या, विलासिनी, ताम्रा, अनंगमालिनी,

10-11. अनंगमेखला, माध्वी, मोहिनी, मदनावती, पुष्पावती, हेमलता, हेममाला, मनोजवा, कर्पूरगंधा, काश्मीरी, पद्मगंधा, विहारिणी, हंसिनी, चित्रिणी, चित्रा, सुनन्दा, बिन्दुमालिनी,

12. मनोजा, अपांगलालित्या, वैताली, विमलप्रभा, पद्मरागा, विचित्रांगी, नित्यानन्दा, निरंकुशा,

13 . इस प्रकार कमल के समान नेत्रों वाली करोड़ों सखियां प्रसिद्ध हैं। नित्य वृन्दावन में रहने वाली उन सखियों की संख्या नहीं की जा सकती।

14. अन्तःपुर में रहने वाली और एकान्त में जिसका चित्त जुड़ा हुआ है, उनकी संख्या बारह हजार कही गई है।

15. यह सभी जाग्रत अवस्था में ही स्वप्न में चली गईं और अपने घर में बैठी ही अपने को नन्द के ब्रज में देखने लगीं।

16. जिस प्रकार कमल की सुगन्धि वायु द्वारा ले जाई जाती है परन्तु कमल में कोई वृद्धि या हानि नहीं होती।

17. उसी प्रकार मोह से स्वप्नावस्था में पहुंचाई गई परात्म से वह स्वप्न में माया देखने की इच्छा का अनुभव करने लगीं।

18. भगवान के परात्म ने भी इस लीला को देखा।

पार्वती ने कहा—

आपने यह कहा कि नन्द गोप के ब्रज में सखियां पहुंचीं तो उन्होंने कूटस्थ अक्षर ब्रह्म की लीलाओं का किस प्रकार अनुभव किया, वह बताइए।

19. भगवान के परात्म ने भी किस प्रकार उस लीला को देखा। वह लीला किस प्रकार की है सगुण अथवा निर्गुण?

20. नित्य है या अनित्य? यथार्थ रूप में कहिए। शिव बोले, हे पार्वती! तुम्हारे अति गुप्त प्रश्नों को मैं कह रहा हूं, सुनो।

21. नास्तिकों, धूर्तों, तार्किकों, वेद-निन्दकों, अविश्वासियों को कभी न बताना।

Nijanand App

वेदशास्त्रपुराणादिश्रद्धापूतान्तरात्मने।
अनिन्दकाय शुद्धाय सर्वत्र ब्रह्मदर्शिने॥२२॥
अलोलुपाय शान्ताय निर्मलाय महेश्वरि।
कृतज्ञाय क्रियाकाण्डाचारसंशुद्धचेतसे॥२३॥
स्नानदानदयादाक्ष्यदमाद्यमलमूर्त्तये।
परीक्ष्य शतधा देवि दद्यान्नान्यत्र कर्हिचित्॥२४॥
स्नेहाद्वा धनलोभाद्वा अज्ञानाद्वा भयादपि।
प्रकाशयति मूढात्मा नारक्याचन्द्रतारकम्॥२५॥
तस्मात्त्वयापि देवेशि गोपितव्यं सुरेश्वरि।
सखीनां ब्रह्मलीलाया दर्शनं तु यथा भवेत्॥२६॥
तत्प्रकारं प्रवक्ष्यामि शृणुष्वैकाग्रमानसा।
मथुराधिपतिः कंसः उग्रसेनसुतः खलः॥२७॥
श्रुत्वात्ममृत्युं देवक्याः पुत्रद्वारेण दुष्टधीः।
भगिनीं हन्तुमारेभे खड्गेन तरसा बली॥२८॥
वारितो वसुदेवेन नीत्या चाध्यात्मशिक्षया।
न निवृत्तः खलः पापस्तदोषायमचिन्तयत्॥२९॥
न चास्यास्ते भयं वीर पुत्रेभ्यश्चेद्भयं तव।
समर्पयिष्ये तान्पुत्रान्यानसौ प्रसविष्यति॥३०॥
न सन्देहस्त्वया कार्यो यतः सत्यमयः पुमान्।
सत्ये नष्टे स्वयं नष्टो विशतेन्धं महत्तमः॥३१॥
इत्युक्तो मोहितमतिर्मुमोच भगिनीं खलः।
तया प्रसूतः समये पुत्रः पावकसन्निभः॥३२॥
तमादाय गतः कंसं वसुदेवः प्रसादयन्।
अर्पयामास तनयं कंसायात्मजमृत्यवे॥३३॥
औग्रसेनिस्तु तं दृष्ट्वा प्रसन्नेनान्तरात्मना।
प्रत्यर्पयन् सुतं प्राह प्रसन्नोहं तवानघ॥३४॥
न चास्मान्मे भयं शूरतस्मान्नो हन्मि ते शिशुम्।
युवयोरष्टमाद्गर्भान्मृत्युर्मे संश्रुतः पुरः॥३५॥
वृथा किमर्थं ते बालान् हन्मि लोकविगर्हितः।
अष्टमस्तु यदा पुत्रो भविष्यति तवानघ॥३६॥
तदा मां तूर्णमासाद्य निवेदयतु वै भवान्।
स्वस्त्यस्तु ते चिरं याहि मा भयं धेहि सर्वथा॥३७॥

Nijanand App

22. वेद शास्त्र, पुराण आदि में श्रद्धा से पवित्र अन्त:करण वाले अनिन्दक, सर्वत्र ब्रह्म देखने वाले, शुद्ध,

23. लोभरहित, शान्त, निर्मल, कृतज्ञ, क्रियाकाण्ड, आचार से शुद्ध चित्त,

24. स्नान, दान, दया, सच्चाई, दम आदि से निर्मल शरीर पुरुषों को सौ बार परीक्षा ले करके यह ज्ञान देना चाहिए, अन्यथा नहीं।

25. जो स्नेह से, धन के लोभ से, अज्ञान से, भय से मूर्ख पुरुष इस ज्ञान को अयोग्य पुरुषों को देता है तो वह जब तक सूर्य-चन्द्रमा आकाश मण्डल में हैं तब तक नरक में रहता है।

26. हे देवेशि! इसलिए तुम्हें भी इसको गुप्त रखना चाहिए। सखियों को ब्रह्म लीला का जिस प्रकार दर्शन होता है, उसे मैं कहूंगा, एकाग्र होकर सुनो।

27. मथुरा का राजा कंस दुष्ट था और यह उग्रसेन का पुत्र था।

28. जब देवकी के पुत्र द्वारा अपनी मृत्यु को सुना, तो वह दुर्बुद्धि अपनी बहन को तलवार से मारने को तत्पर हुआ।

29. वसुदेव अध्यात्म तथा नीति शिक्षा द्वारा उसे रोकते हैं, परन्तु वह दुष्ट नहीं रुका। तो उपाय सोचा।

30. हे वीर! इससे (देवकी से) तुम्हें कोई भय नहीं है। यदि पुत्रों से तुम्हें भय है तो जिन पुत्रों को यह जन्म देगी उन्हें लाकर मैं तुम्हें सौंप दूंगा।

31. तुम्हें सन्देह नहीं करना चाहिए। पुरुष सत्यमय होता है। सत्य के नष्ट होने पर स्वयं नष्ट हो जाता है और महान् अन्धकार में प्रवेश करता है।

32. इस प्रकार से उनके कहने पर उस बुद्धिभ्रष्ट दुष्ट ने बहन को छोड़ दिया। कालान्तर में देवकी ने अग्नि सदृश पुत्र को जन्म दिया।

33. वसुदेव ने उसे लेकर कंस को खुश करते हुए अपने पुत्र को मारने के लिए अर्पित किया।

34. उग्रसेन पुत्र कंस ने उसको देखकर प्रसन्न होकर पुत्र को लौटा दिया और कहा, हम आप पर प्रसन्न हैं।

35. इससे मुझ सरीखे बलवान् को भय नहीं है, इसलिए मैं इसे नहीं मारूंगा। तुम दोनों के आठवें गर्भ से मेरी मृत्यु है, ऐसा पहले सुन रखा है।

36. तो, मैं व्यर्थ में तुम्हारे बालकों को मारकर क्यों निन्दित बनूं। हे निष्पाप! जब तुम्हारे आठवां पुत्र हो,

37. तो शीघ्र मेरे पास लाकर समर्पित करना। तुम्हारा कल्याण हो, तुम निर्भय हो और जाओ।

Nijanand App

इति कंससमादिष्टो वसुदेवो महाशयः।
निवृत्तः सुतमादाय कंसवाक्ये ससंशयः॥३८॥
ततो नारदवाक्येन विमोहितमतिः खलः।
अहनत्तं सुतं भूयस्तत्र गत्वा रुषान्वितः॥३९॥
जग्राह निगडे चोभौ वसुदेवं च देवकीम्।
यान्यान्पुत्रान्प्रसुश्रुवे मारयामास तान् खलः॥४०॥
दधार सप्तमं गर्भं शेषसंज्ञं सुदुःसहम्।
आदिष्टा देवदेवेन योगमाया महेश्वरि।
गर्भमाकृष्य देवक्या रोहिणीं प्रणिनाय सा॥४१॥
स्वयं प्रादुरभूतास्मिन् देवकीजठरे प्रभुः।
शङ्खचक्रगदापद्मधरश्चारुचतुर्भुजः॥४२॥
पीतवासा घनश्यामः स्फुरन्मकरकुण्डलः।
स्फुरन्माणिक्यमुकुटो वलयाङ्गदभूषितः॥४३॥
वसुदेवस्तु तं दृष्ट्वा विस्मयोदारलोचनः।
तुष्टावोपनिषद्वाग्भिस्ततस्तुष्टोऽब्रवीद्वचः॥४४॥

विष्णुरुवाच

त्वयाहं तोषितः पूर्वं तपसा दुश्चरेण हि।
प्रश्निगर्भेति विख्यातो नाम्ना पुत्रोऽभवं तव॥४५॥
द्वितीये जन्मनि तथा कश्यपस्त्वं प्रजापतिः।
उपेन्द्र इति विख्यातिं गतोऽहं यदुनन्दन॥४६॥
वसुदेव तृतीयेस्मिन् भवे जातो भवद्गृहे।
मुक्तिदानाय भवते प्रादुर्भूतोस्मि साम्प्रतम्॥४७॥
नय मां गोकुलं यत्र यशोदा नन्दगेहिनी।
तत्र जाता महामाया तां नयस्व स्वकं गृहम्॥४८॥
तव मास्तु भयं क्वापि कंसान्मज्जन्मशङ्कितात्।
इत्युक्त्वा देवदेवेशो दम्पत्योः पश्यतोः पुरः॥४९॥
अक्षरस्य तु या चित्तवृत्तिर्लीलावलोकने।
तदुपाधिकतत्सत्तारूपे व्यूहत्त्वमागतः॥५०॥
बभूव द्विभुजः सद्यः शिशुभावं गतः प्रभुः।
तस्मिन्नाविविशे साक्षाद्रसरूपी स्वयं प्रभुः॥५१॥
निनाय गोकुले नन्दगेहं निद्राविमोहिते।
आदाय योगनिद्रां तां वसुदेवो गृहं गतः॥५२॥

Nijanand App

38. कंस की आज्ञा पाकर वसुदेव महाशय पुत्र लेकर लौटे। किन्तु कंस की बात पर सन्देह था।

39. इसके पश्चात् नारद के कथन से मोहित बुद्धिवाले उस खल ने क्रुद्ध होकर वहां जाकर पुत्र को मार डाला।

40. देवकी और वसुदेव को हथकड़ी बेड़ी डालकर जेल में बन्द कर दिया और जिन-जिन पुत्रों को उन्होंने जन्म दिया, उन्हें मार डाला।

41. अत्यन्त दुःसह शेष के तेज से देवकी ने सप्तम् गर्भ धारण किया और देवाधिदेव के आदेश से महेश्वरी योगमाया ने देवकी का गर्भ खींचकर रोहिणी के गर्भ में पहुंचा दिया।

42. और फिर शंख, चक्र, गदा, पद्म धारण करने वाले चार भुजाओं वाले स्वयं प्रभु देवकी के गर्भ में चले गए।

43. पीताम्बर धारी, घनश्याम, मकर की आकृति के कुण्डल वाले, माणिक्य मुकुट वाले, कंकण और बाजूबन्द से सुशोभित भगवान स्वयं प्रकट हुए।

44. वसुदेव की उनको देखकर विस्मय से आंखें फैल गईं और उनकी स्तुति की। प्रसन्न होकर प्रभु ने यह कहा।

विष्णु ने कहा—

45. पहले घोर तप करके तुमने मुझे प्रसन्न किया था। मैं तुम्हारा प्रश्निगर्भ नामक पुत्र हुआ था।

46. यदुनन्दन द्वितीय जन्म में आप प्रजापति कश्यप और मैं उपेन्द्र नाम से विख्यात हुआ।

47. हे वसुदेव! तीसरे जन्म में तुमको मुक्ति देने के लिए मैं अब तुम्हारे घर में उत्पन्न हुआ हूं।

48. मुझे गोकुल ले चलो, जहां नन्द की पत्नी यशोदा हैं। उनके यहां महामाया ने जन्म लिया है, उनको अपने घर लाओ।

49. मेरे जन्म से शंकित तुमको कहीं भय न हो। ऐसा कहकर दोनों के देखते हुए

50. अक्षर ब्रह्म की लीलाओं के देखने की जो चित्तवृत्ति थी, उसी उपाधि की सत्ता रूप का उन्होंने व्यूह (रूप) धारण कर लिया।

51. द्विभुज शिशु बन गए। उस रूप में साक्षात् रस रूपी प्रभु ने स्वयं प्रवेश किया।

52. जिस समय गोकुल में सभी सो रहे थे, वसुदेवजी पुत्र को नन्द के घर ले गए और योगनिद्रा को लेकर घर लौट आए।

Nijanand App

देवकीप्रसवं प्रातः कंसायाचख्युरुत्सुकाः।
गृहपाला ध्वनिं श्रुत्वा बालस्येति त्वरान्विताः॥५३॥
कंसस्त्वरितमागम्य हठादाक्षिप्य तां खलः।
भूपृष्ठे प्रोथयद्देवीं ततः सा दिवमुत्पतत्॥५४॥
सा प्रोवाच वचः क्रुद्धा हरिर्जातस्तवान्तकृत्।
यो वेदधर्मरक्षार्थं पाखण्डविनिवृत्तये॥५५॥
असुराणां विनाशार्थमाविर्भवति लीलया।
युगान्ते तमसा ग्रस्तान् वेदानुद्धर्तुमिच्छया।
मत्स्यरूपी स्वयं जातः सर्वज्ञः सर्वशक्तिमान्॥५६॥
कूर्मरूपेण यः पृष्ठे दधार मन्दराचलम्।
उद्दिधीर्षुर्भुवं मूढ योऽसृजत् शौकरीं तनुम्॥५७॥
स्वभक्तद्रोहिणं हन्तुं त्रातुं भक्तजनं तु यः।
नृसिंहरूपी यः स्तम्भात्प्रादुरासीत्कृपानिधिः॥५८॥
आत्मानं वामनं कृत्वा भक्तकार्यार्थमुद्यतः।
बलिं बध्वा मघवते त्रिलोकीमददात्प्रभुः॥५९॥
क्षत्रियान् दुर्नयान् दृष्ट्वा जमदग्निगृहे तु यः।
जातश्चकार पृथिवीं क्षत्रवीजविवर्जिताम्॥६०॥
योसौ दाशरथिर्भूत्वा रावणं लोकरावणम्।
जघान समरे दुष्टं शरण्यः शत्रुसूदनः॥६१॥
कलौ जनिष्यमाणानां असुराणां दुरात्मनाम्।
वेदमार्गप्रवृत्तानां अतदर्हतया तु यः॥६२॥
अरुच्युत्पादनार्थाय नानापाषण्डकल्पनाम्।
कृत्वा विनाशमेतेषां करिष्यति परः प्रभुः॥६३॥
स जातो यत्र कुत्रापि मृत्युस्तव विमूढधे।
इत्युक्त्वान्तर्दधे माया कंसस्तु विमनाः स्थितः॥६४॥

इति श्रीपञ्चरात्रे माहेश्वरतन्त्रे उत्तरखण्डे शिव-पार्वतीसंवादे नवमं पटलम् ॥९॥

दशमं पटलम्

शिव उवाच

अथ नन्दगृहे जातः प्रातरेव महोत्सवः।
नन्दः स्नातः शुचिर्विप्रानाहूयागमपारगान्।
ददौ महामना गावो वासांस्याभरणानि च॥१॥

Nijanand App

53. प्रातःकाल गृह रक्षकों ने बच्चे के रुदन को सुनकर देवकी के प्रसव की सूचना कंस को शीघ्र दी।

54. दुष्ट कंस ने शीघ्र आकर बच्ची को जबरदस्ती खींचकर जमीन पर उस देवी को पटक दिया। वह आकाश में चली गई।

55-56. उसने क्रुद्ध होकर कहा, तेरा मारने वाला हरि पैदा हो गया है। वह वेद और धर्म की रक्षा के लिए, पाखण्ड नाश के लिए, असुरों के विनाश के लिए अपनी लीला से प्रकट होते हैं। युगान्त में जब तमोगुण द्वारा वेद ग्रस्त हुए तो उनके उद्धार के लिए मत्स्य रूप में सर्वज्ञ, सर्वशक्तिमान प्रकट हुए।

57. जिन्होंने कच्छप रूप धारण कर मंदराचल को पीठ पर उठा लिया, पृथ्वी को समुद्र से बाहर निकालने के लिए जिन्होंने शूकर रूप धारण किया।

58. जो कृपानिधि अपने भक्तों की रक्षा करने के लिए, अपने भक्त के द्रोही को मारने के लिए खम्भे से नृसिंह रूप में प्रकट हुए।

59. भक्तों के कार्य के लिए वामन रूप धारण कर बलि को बांधकर त्रिलोकी का राज्य इन्द्र को दिया।

60. अनीति करने वाले क्षत्रियों को देखकर यमदग्नि के घर जन्म लेकर पृथ्वी को क्षत्रियविहीन कर दिया।

61. जिसने दशरथ-पुत्र होकर संसार को रुलाने वाले रावण को युद्ध में मारा।

62. कलियुग में ऐसे दुष्ट राक्षस उत्पन्न होंगे जो वेद मार्ग के योग्य नहीं होंगे।

63. वेदों से रुचि उत्पन्न करने के लिए नाना पाखण्डों की रचना करके उनका विनाश करेंगे।

64. वह जहां कहीं तुम्हारी मृत्यु के लिए उत्पन्न हो गए हैं, यह कहकर महामाया अन्तर्ध्यान हो गईं और कंस दुःखी होकर बैठ गया।

पंचरात्र माहेश्वरतन्त्र के उत्तर खण्ड के शिव-पार्वती संवाद का नवां अध्याय समाप्त हुआ।

दसवां अध्याय

शिव बोले—

1. इसके पश्चात् प्रातःकाल ही नन्द के घर में महोत्सव प्रारम्भ हुआ। नन्द ने स्नान कर शुद्ध हो वेदों में पारंगत ब्राह्मणों को बुलाकर गाय, आभूषण, वस्त्र आदि दिए।

Nijanand App

गोपा गोप्यो ययुर्हृष्टा नानाभूषाम्बरावृत्ताः।
नन्दं वर्धापयामासुराशीर्भिः सर्वतो मुखम्॥२॥
यशोदां च महाभागां गत्वा गोप्योति हर्षिताः।
उत्सुकानि मनांस्यासां बभूवुः कृष्ण दर्शने॥३॥
श्रीकृष्णादर्शनानन्दनिमग्नानिजमूर्त्तयः।
बभूवुर्गोपिकाः सर्वाः निजलोकं गता इव॥४॥
गृहे गृहे समभवन्महोत्सवपरम्पराः।
याचका वन्दिनः सूता मागधाः समुपाययुः॥५॥
तेभ्यो ददौ महार्हाणि भूषावासांसि गोपराट्।
अथ कंससमादिष्टा पूतना बालघातिनी॥६॥
निघ्नन्ती बालकान् जातान् चचार परितो व्रजम्।
शिशवस्ते पराभूताः प्रविष्टाः पूतनान्तरं॥७॥
नन्दगृहे पुत्रजनिं श्रुत्वा तस्य जिघांसया।
कृत्वा विमोहनं रूपं दिव्यालङ्कारचर्चितम्॥८॥
दिव्यमालाम्बरधरं दिव्यगन्धमनोहरम्।
मनोहरन्ती नन्दस्य प्रविवेश शनैर्गृहम्॥९॥
अथ सा सूतिकागारमभ्येत्य क्रूरनिश्चया।
मोहयित्वा वचोभिस्तां बहिःप्रेमनिरूपितैः॥१०॥
सुप्ताहिमिव जग्राह बालं कमललोचनम्।
अङ्कमारोप्य बहुधा लालयन्ती शुचिस्मिता॥११॥
ददौ हालाहलालिप्तं स्तनं तन्मुखपङ्कजे।
तदन्तःस्थशिशून् प्राणान् पूतनायाः पपौ हरिः॥१२॥
सार्द्धयोजनविस्तारो देहस्तस्या महीतले।
पपात पातध्वनिना कम्पयन् व्रजमण्डलम्॥१३॥
स्तन्यं हालाहलमयं हरये परमात्मने।
दत्वापि सद्गतिं प्राप्ता किं पुनः साधुकारिणः॥१४॥

पार्वत्युवाच

व्रजस्थाः शिशवो ये च तया व्यापादिता इति।
पूतनायां स्थितान् सर्वान् तत्प्राणैरपिबद्धरिः॥१५॥
इति यद्भवता प्रोक्तं केतेत्र शिशवः प्रभो।

Nijanand App

2. गोप और गोपियां अनेक प्रकार के वस्त्राभूषणों से सुशोभित एवं प्रसन्न होकर नन्द को आशीर्वाद देने के लिए गए और बधाई दी।

3. गोपियों ने अत्यन्त प्रसन्न होकर यशोदा को बधाई दी। गोपियों के मन कृष्ण के दर्शन को उत्सुक थे।

4. श्री कृष्ण के दर्शन के आनन्द में डूबे हुए शरीर वाली गोपिकाएं मानो अपने लोक में चली गईं।

5. घर-घर में महोत्सव होने लगे। याचक, बन्दी, सूत, मागध सब आए।

6-7. उन सबको नन्दजी ने बहुमूल्य वस्त्र और आभूषण दिए। इसके पश्चात् कंस के द्वारा भेजी गई बालघातिनी पूतना पैदा हुए बच्चों को मारती हुई ब्रज में घूमने लगी। उसके द्वारा मारे गए बच्चे उसके पेट में समा गए।

8-9. नन्द के घर में पुत्र-जन्म सुनकर उसको मारने की इच्छा से दिव्य अलंकारों से शोभित मोहक रूप धारण करके, दिव्य माला, वस्त्र, दिव्य गन्ध से मनोहर होकर सबके मनों को हरती हुई पूतना ने नन्द के घर में प्रवेश किया।

10-12. इसके पश्चात् वह क्रूर निश्चय वाली पूतना प्रसूति गृह में जाकर बाहर से प्रेम दिखाने वाले शब्दों से यशोदा को मोहित कर सोये हुए सर्प के समान कमल लोचन बालक को उठा लिया। गोद में लेकर अनेक प्रकार से दुलराती हुई, मुस्कराती हुई, उसके मुख कमल में विष से लिप्त स्तन दे दिया। हरि ने उसके पेट में मर कर चले गए बच्चों को और पूतना के प्राणों को पी लिया।

13. डेढ़ योजन का उसका लम्बा शरीर अपने गिरने के शब्द से ब्रज मण्डल को कंपाता हुआ पृथ्वी पर गिर पड़ा।

14. परमात्मा हरि को विष-मिश्रित स्तन देकर भी पूतना को सद्गति प्राप्त हुई। फिर सत् कर्म करने वालों को सद्गति क्यों न प्राप्त होगी?

पार्वती ने कहा—

15. ब्रज के जिन बच्चों को उसने मारा था और पूतना के शरीर में वे स्थित थे उन सब को पूतना के प्राणों के साथ हरि ने पी लिया।

16. यह जो आपने कहा, हे प्रभु! वे शिशु कौन थे?

शिव बोले—

Nijanand App

शिव उवाच

एकदा ब्रह्मणः सत्रे देवगन्धर्वपन्नगाः॥१६॥
सिद्धा विद्याधराः सर्वे समाजग्मुमहर्षयः।
आदित्या वसवो रुद्रा मरुतः पितरस्तथा॥१७॥
अग्नयो वायवश्चान्ये तेषामासीन्महासदः।
जगुर्गन्धर्वपतयो ननृतुश्चाप्सरोगणाः॥१८॥
अप्सरोदर्शनक्षुब्धस्मरग्रस्तोन्यथा मतिः।
न शशाक मनो यन्तुं यतन्नपि पितामहः॥१९॥
चस्कन्द रतस्तस्याशु तपो विद्यामयं महत्।
अज्ञात्वा तस्य संस्थानं कुण्डाग्नावजुहोत्प्रभुः॥२०॥
अग्निमध्यात्समुद्भूताः कुमारा वह्नितेजसः।
बद्धाञ्जलिपुटाः सर्वे प्रणेमुस्ते पितामहम्॥२१॥
ब्रह्मन् पितासि नः कामं वयं ते तनयाः प्रभो।
उत्पादिताश्च भवता किंकुर्मस्तदुदीर्यताम्॥२२॥

ब्रह्मोवाच

अग्नौ क्षिप्तं मया रेतस्तपोविद्यामयं शुभम्।
तत्र जाता भवन्तो हि तस्मादग्निकुमारकाः॥२३॥
दण्डकारण्यमासाद्य तपश्चरत पुत्रकाः।
इत्युक्ता ब्रह्मणा सर्वे दण्डकारण्यमाश्रिताः॥२४॥
तपः कुर्वन्तो यत्नेन ब्रह्मणोद्देशयन्त्रिताः।
ततः कतिपये काले रामो दाशरथिः स्वयम्॥२५॥
रावणं समरे हत्वा राज्यं कृत्वा विभीषणे।
विमानं वरमारूढो दण्डकारण्यमाश्रितः॥२६॥
तत्रागस्त्याश्रमं रामो गत्वा चक्रेभिवादनम्।
मुनिः सम्भावयामास कन्दैर्मूलफलादिभिः॥२७॥
रामस्य दर्शनं चक्रुर्मुनयोपि धृतव्रताः।
उवास रामः कतिचिद्दिनानि मुनिसत्कृतः॥२८॥
एकदा जानकी द्रष्टुं मुनीनामाश्रमान् शुभान्।
जगाम मुनिपत्नीनां सौहार्देनापि सुन्दरि॥२९॥
चक्रे रामकथाः पुण्याः रावणस्य वधं प्रति।
सत्कृता मुनिपत्नीभिः मुनिभिः साधुभिस्तथा॥३०॥

Nijanand App

17. एक बार ब्रह्मा के यज्ञ में देवता, गन्धर्व, पन्नग (सर्प), सिद्ध, विद्याधर, महर्षि, आदित्य, वसु, रुद्र, मरुत, पितर,

18. अग्नि, वायु तथा अन्य आए और उनका महान् समाज इकट्ठा हो गया। उस समय गन्धर्वों ने गान किया, अप्सराओं ने नृत्य किया।

19. उस समय अप्सराओं के दर्शन से क्षुब्ध होकर काम-पीड़ित पितामह अपने मन को नहीं रोक सके।

20. उनका तप विद्यामय वीर्य (रेतस) स्खलित हुआ। उसके लिए स्थान न देख अग्नि में हवन कर दिया।

21. अग्नि के मध्य से अग्नि के समान तेजस्वी कुमार प्रकट हुए। हाथ जोड़कर उन सभी ने पितामह को प्रणाम किया।

22. हे ब्रह्मा! आप हमारे पिता हैं, हम आपके पुत्र हैं। आपने हमें जन्म दिया है। हम क्या करें, आप बताएं।

ब्रह्मा ने कहा—

23. मैंने तप और विद्यामय रेतस अग्नि में डाल दिया था। उसमें से आप लोगों का जन्म हुआ, इसलिए आप अग्नि कुमार हैं।

24. दण्डकारण्य में जाकर आप तप करें। ब्रह्मा के यह कहने पर वे सब दण्डकारण्य चले गए।

25. ब्रह्मा के आदेश से बंधे हुए वे लोग बड़े प्रयत्न से तप करने लगे। कुछ समय व्यतीत होने पर दशरथ-पुत्र राम वहां उपस्थित हुए।

26. रावण को युद्ध में जीतकर, विभीषण को राज्य देकर पुष्पक विमान पर आरूढ़ होकर दण्डकारण्य आए।

27. वहां अगस्त्याश्रम में जाकर राम ने अगस्त्यजी का अभिवादन किया। उन्होंने कंद, मूल, फल आदि से उनका सत्कार किया।

28. व्रत धारण करने वाले मुनियों ने राम के दर्शन किए। राम वहां कुछ दिन रहे।

29. एक दिन मुनि पत्नियों के सौहार्द्र से जानकी मुनियों का आश्रम देखने गईं।

30. रावण के वध से सम्बद्ध राम की पुण्य कथाएं हुईं। मुनि पत्नी, मुनि एवं साधुओं ने उनका सत्कार किया।

Nijanand App

निवृत्ता जानकी तत्र जगामाग्निकुमारकान्।
द्रष्टुं तपस्यतः पूर्णान् मुनिकन्यासमावृता॥३१॥
जानकी तान्नमस्कृत्य कुमाराननलप्रभान्।
निषसाद क्षणं तत्र वनशोभाहितेक्षणा:॥३२॥
ते विचित्रेण दैवेन प्रेर्यमाणाः कुमारकाः।
अमर्षजननं वाक्यमब्रुवन्कृतहेलनाः॥३३॥
अहो सीते प्रभुः साक्षादीश्वरो जगतां पतिः।
वेदरक्षाविधानार्थमवतीर्णो महीतले॥३४॥
न यस्य स्वपरो वापि न द्वेष्यः प्रिय एव च।
सत्यसन्धः क्षमी शूरो रामः कमललोचनः॥३५॥
जटीवल्कलसंवीतो मोहमग्नो वने वने।
भ्रान्तश्चचार निर्विण्णः पृच्छमानो वनस्पतीन्॥३६॥
इयं कान्तेति वै मत्वा मोहविभ्रंशिताशयः।
कचित्पल्लविनीं हृद्यां लतामालिंग्य निर्वृतः॥३७॥
निवारितो लक्ष्मणेन नेयं कान्तेति जल्पता।
दधाराम्भोनिधौ सेतुं सख्यं कृत्वा च वानरैः॥३८॥
त्वन्निमित्तमिदं सीते प्रभोरपि बिडम्बनम्।
तस्मात्स्त्रियः पापरूपा दोषैकनिलयाः सदा॥३९॥
न धार्या सुखमिच्छद्भिः कदाचित् कापि पण्डितैः।
इत्येवं वचनं तेषां श्रुत्वा दाशरथेः प्रिया॥४०॥
चुक्रोध रक्तनयना शापं दातुं मनोदधे।

सीतोवाच

मन्निन्दायाः फलं शीघ्रमवाप्स्यथ कुमारकाः॥४१॥
द्विधाविदीर्णदेहाश्च यूयं पण्डितमानिनः।
पतन्तु भूतले सर्वे सर्वे स्वात्मकृतं भुजः॥४२॥
इत्युक्ते सीतया तूर्णं द्विधाभूतकलेवराः।
व्यसवः पेतुरुर्व्यान्ते मुनिपत्न्यो विसिस्मिरे॥४३॥
हाहाकारो महानासीन्मुनीनां तत्र शृण्वताम्।
एवं शप्त्वा कुमारांस्तान् ययौ सीता निकेतनम्॥४४॥
रामः श्रुत्वाथ तां वार्त्तामप्रियां दुर्मना भृशम्।
निनिन्द सीतां मनसा किमेतद्दुर्विनीतया॥४५॥

Nijanand App

31. वहां से लौटती हुई जानकी मुनि कन्याओं के साथ पूर्ण तपस्या करते हुए अग्नि कुमारों को देखने आईं।

32. अग्नि के समान प्रभा वाले उनको नमस्कार कर वन की शोभा देखती हुई सीता कुछ क्षण वहां बैठीं।

33. विचित्र दैव से प्रेरित होकर कुमारों ने तिरस्कार करते हुए क्रोधजनक वाक्य कहे।

34. हे सीता! प्रभु जगत्पति साक्षात् ईश्वर हैं, वेदों की रक्षा के लिए पृथ्वी पर उनका अवतार हुआ है।

35. जिसका कोई अपना-पराया नहीं, शत्रु-मित्र नहीं, जो सत्य प्रतिज्ञा वाले, क्षमा करने वाले, शूर, कमल लोचन श्री राम हैं।

36. वे जटा और वल्कल वस्त्र धारण कर मोहित हो वन-वन में दु:खी होकर वनस्पतियों से पूछते घूमें।

37. मोह से उनका मन, हृदय इतना टूट गया कि वे पत्तों वाली सुन्दर लता को आलिंगन कर, यही मेरी कान्ता है, ऐसा मानते रहे।

38. लक्ष्मण ने उनको मना किया कि यह कान्ता नहीं हैं। वानरों से मित्रता करके समुद्र में सेतु बांधा।

39. हे सीते! तुम्हारे लिए प्रभु का यह करना प्रभु की विडम्बना है। इसलिए स्त्रियां पापरूपिणी तथा सभी दोषों का घर होती हैं।

40. सुख चाहने वाले पण्डितों को कभी भी स्त्रियों का साथ नहीं करना चाहिए। उनके वचनों को सुनकर राम की प्रिया ने

41. क्रोध से लाल नेत्र करके शाप देने का मन बनाया।

सीता ने कहा—

कुमारो! हमारी निन्दा का फल तुम शीघ्र पाओगे।

42. तुम अपने को बहुत पण्डित मानते हो, तुम्हारे शरीर के दो टुकड़े होकर जमीन पर गिर जाएं। अपने किए का फल भोगो।

43. सीता के यह कहते-कहते उनके शरीर के दो टुकड़े हो गए और मर कर गिर गए। मुनि-पत्नियों को अत्यन्त विस्मय हुआ।

44. इस वार्ता को सुनकर मुनियों में हाहाकार मच गया। सीता शाप देकर अपने निवास चली आईं।

45. राम ने इस अप्रिय वार्ता को सुनकर दु:खी होकर सीता की मन से निन्दा की कि दुराग्रही ने क्या कर डाला।

Nijanand App

अविचारितमेवेह कृतं नष्टविमर्षया।
अहो मूढधियो दुष्टाः स्त्रियो दारुणचेतसः।।४६।।
श्रेयसां परिपन्थिन्यो मायेयं दैवनिर्मिता।
संसारान्मुक्तिकामानां याः स्वयं निगडोपमाः।।४७।।
महामोहस्य मञ्जूषा स्वार्थायानर्थतत्पराः।
क्रोधलोभानृतधियो न विश्वस्ताः कदाचन।।४८।।
न च ता विश्वसेत्क्वापि विश्वस्तानघ्नन्त्यसंशयम्।
अल्पार्थे बह्वनर्थेषु प्रवर्त्तन्ते दुराशयाः।।४९।।
न विद्वान् स्त्रीवशं गच्छेद्वशं प्राप्तो विनश्यति।
इत्याकलय्य हृदये जानकीं प्राह स प्रभुः।।५०।।

राम उवाच

किमेतत्साधुचरिते विनिन्दितमचीकरः।
नास्माकमुचितं कर्म यत्कुमारविहिंसनम्।।५१।।
तपोविद्याधृतधियो विनयाचारशालिनः।
न चैते शापमर्हन्ति यदि घ्नन्त्यपि सुन्दरि।।५२।।
यथार्थवादिनां पुंसा श्रुत्वा वाचो यथार्थकाः।
कुप्यन्ति ये मूढधियो न तेषां निष्कृतिः क्वचित्।।५३।।
सीते यथार्थमुक्तं तैर्मामुद्दिश्य दयालुभिः।
तेष्वमर्षः कथं जात ईदृशोनर्थदर्शनः।।५४।।
यदि स्वल्पोपराधोपि तस्मिन् दण्डो महान् धृतः।
न चैतदुचितं चण्डि क्षत्रियाणां दयावताम्।।५५।।
वनेचराणामस्माकं मुन्याश्रमवासिनाम्।
साध्वीत्थमुक्ता रामेण लज्जया नम्रकन्धरा।।५६।।
बद्धहस्ताञ्जलिः प्राह भर्तृवाक्यविबोधिता।

सीतोवाच

अपराधो महान् देव कृतो मे नात्र संशयः।।५७।।
अदण्डेष्वप्यपापेषु यन्मया ह्युद्दमः कृतः।
अपि मे दुर्नयं देव क्षमस्व त्वं दयानिधे।।५८।।
तेष्वनुग्रहमाधत्स्व साधुष्वपि तपस्विषु।

राम उवाच

न करिष्याम्यहं भद्रे कुमाराणामनुग्रहम्।।५९।।

Nijanand App

46. क्रोध से विचार शक्ति के नष्ट होने पर उन्होंने ऐसा विचार कर नहीं किया। आश्चर्य है कि स्त्रियां, मूढ़-बुद्धि वाली, दुष्ट और कठोर चित्त होती हैं।

47. कल्याण की बाधक होती हैं। यह देव-निर्मित माया हैं। संसार से मुक्ति की कामना करने वालों के लिए यह बेड़ी हैं।

48. यह महामोह की पिटारी हैं। अपने स्वार्थ के लिए अनर्थ करने वाली, क्रोध, लोभ, झूठ की बुद्धि वाली होने से कभी विश्वास-योग्य नहीं होतीं।

49. उनका कभी विश्वास नहीं करना चाहिए। विश्वस्तों को निःसन्देह वे मार देती हैं। दुष्ट मन वाली वे थोड़े के लिए बहुत बड़े अनर्थ में लग जाती हैं।

50. विद्वान को स्त्रियों के वश में नहीं होना चाहिए। वश में जाने वाला नष्ट हो जाता है। हृदय में यह विचार कर प्रभु ने जानकी से कहा।

राम बोले—

51. हे साधु चरिते! यह निन्दित कर्म तुमने क्यों कर डाला। कुमारों की हिंसा का कर्म हमारे लिए उचित नहीं है।

52. हे सुन्दरी! तप, विद्या धारण करने वाले, विनय आचारशील यह हम को यदि मार भी डालें, तब भी शाप के योग्य नहीं हैं।

53. सत्य बोलने वाले पुरुषों की यथार्थ वाणी सुनकर जो मूढ़ क्रोध करते हैं, उनका कहीं भी उद्धार नहीं होता।

54. हे सीते! हमारे लिए उन दयालु पुरुषों ने जो कहा वह यथार्थ था। उससे अनर्थ उत्पन्न करने वाला क्रोध तुम्हें क्यों उत्पन्न हुआ?

55. यदि इसे हम हल्का-सा अपराध भी मान लें तो उसके लिए इतना बड़ा दण्ड नहीं देना चाहिए। हे चण्डी! दयालु क्षत्रियों के लिए ऐसा उचित नहीं।

56. फिर हम तो बनेचर हैं। मुनियों के आश्रम में ही रहते हैं। उन्हीं के अधीन हैं।

57. राम के ऐसा कहने पर लज्जित होकर सीता ने पति के वाक्य से ज्ञान प्राप्त कर हाथ जोड़कर कहा।

सीता बोलीं—

हे नाथ! हमने महान् अपराध किया है, इसमें सन्देह नहीं है।

58. हे दयानिधि! अदण्डनीय, निष्पाप इन लोगों पर हमने क्रोध किया। मेरे इस अन्याय को क्षमा कीजिए।

59. साधुओं, तपस्वियों पर भी अनुग्रह कीजिए।

Nijanand App

मया त्वनुग्रहीतानां मुक्तिः स्याज्जलवज्जले।
वेदवेदान्तसङ्गीतः परमात्मा परः प्रभुः।
करोत्वनुग्रहं तेषामनुभूतिर्यथा भवेत्।।६०।।
तस्मादिमे लिङ्गदेहमात्रशेषाः सुलोचने।
मयि स्थास्यंति सततं कालाविर्भावहेतवे।।६१।।
रामे च भगवत्पेते विलीनास्ते ततः परम्।
वसुदेवगृहे साक्षादवतीर्णे हरौ स्वयम्।।६२।।
तेवतीर्णा व्रजभुवि तद्देहस्थाः कुमारकाः।
पूतनायां स्थिताः सर्वे तया व्यापादिता इति।।६३।।
तत्प्राणैरपिबद्बालान् दक्षिणांगव्यवस्थितान्।
वामांगभूताः सकलाः गौडदेशेऽभवन् स्त्रियः।।६४।।
कुमारीरानयामास परचक्रं जिघांसता।
निरूद्धा राजधर्मेण नन्दस्तद्देशमागतः।।६५।।
इति ते कथितं देवि यत्पृष्टोऽहं सुलोचने।
समासेन महेशानि किं भूयः श्रोतुमिच्छसि।।६६।।

इति श्रीपञ्चरात्रे माहेश्वरतन्त्रे उत्तरखण्डे शिवपार्वतीसंवादे दशमं पटलम्।।१०।।

एकादशं पटलम्

शिव उवाच

हत्वाथ पूतनाप्राणान् सहबालान् कृपानिधिः।
शकटं पातयामास पादपल्लवलीलया।।१।।
तृणावर्त्तमथाकाशे हरन्तमहनद्धरिः।
स्तनं पीत्वा यशोदायै जृम्भमागस्तु केवलम्।।२।।
मुखे प्रदर्शयामास भुवनानि चतुर्दश।
बाललीलाविनोदेन मृदमश्नन् कृपानिधिः।
अकल्पयद्देहयोगं कुमाराणामलौकिकम्।।३।।
नाश्नाति मृदमानन्दो दधिदुग्धान्यपि स्वयम्।
पुष्ट्यर्थं च कुमाराणामकरोत्सकलं प्रभुः।।४।।
व्रजस्था गोपिकाः सर्वाः कृष्णलीलाहृताशयाः।
विलोभयन्त्यः श्रीकृष्णं दास्ये दुग्धं दधीन्यपि।।५।।
मृदूनि नवनीतानीत्युक्त्वा निन्युर्गृहान् स्वकान्।
ततोप्येकान्त आहूय दत्वा दधिमधूनि च।।६।।

Nijanand App

राम ने कहा—

हे भ्रद्रे। मैं कुमारों पर अनुग्रह नहीं करूंगा।

60. हमारे अनुग्रह करने पर जैसे जल में जल डाल दिया जाय तो उसमें कोई अन्तर नहीं रहता, ऐसे ही सारूप्य मुक्ति मिल जाएगी। वेद, वेदान्त के द्वारा गाए गए परमात्मा परम प्रभु इनके ऊपर अनुग्रह करें जिससे उनको इसकी अनुभूति हो।

61. इसलिए यह लिंग देह मात्र मेरे में स्थित रहेंगे और समय आने पर प्रकट होंगे।

62. तब से लेकर यह सब भगवान राम में लीन थे और जब वे वसुदेव के घर में अवतीर्ण हुए,

63. तब कुमारों ने भी उनके शरीर से निकलकर ब्रज में जन्म लिया और पूतना से मारे गए, पूतना में स्थित थे।

64. पूतना के दाहिने अंग में स्थित बालकों को प्राणों के साथ पान कर लिया। जो बाएं अंग में थे उन्होंने गौड़ देश में स्त्रियों के रूप में जन्म लिया।

65. शत्रुओं के समूह को नष्ट करने की इच्छा से, राजाज्ञा से निरुद्ध हो गई कुमारियों को लेकर नन्द उस देश में आए।

66. हे देवी पार्वती! जो तुमने पूछा था, संक्षेप में बता दिया, आगे क्या कहूं?

पंच रात्र माहेश्वर तन्त्र के उत्तर खण्ड के शिव-पार्वती संवाद का दसवां अध्याय समाप्त हुआ।

ग्यारहवां अध्याय

शिव बोले—

1. कृपानिधि ने बालकों के साथ पूतना के प्राणों को हर कर खेल-खेल में अपने पैरों से शकटासुर को गिरा दिया।

2. हरि ने आकाश में हर कर ले जाते हुए तृणावर्त को मारा। दुग्ध पान करके जंभाई लेते समय

3. यशोदा को आधे मुख में चौदह भुवन दिखाए। कृपानिधि ने बाल लीला के विनोद में मिट्टी खाते हुए कुमारों की अलौकिक देह की कल्पना की।

4. वह भगवान मिट्टी नहीं खाते थे, दही-दूध भी स्वयं नहीं खाते थे। कुमारों की पुष्टि के लिए वे इन वस्तुओं को ग्रहण करते हैं।

5. कृष्ण की लीला से आकृष्ट चित्त गोकुल की गोपिकाएं श्रीकृष्ण को दूध और दही से लुभातीं।

6. मृदु मक्खन हम देंगी, ऐसा कहकर अपने घर ले जातीं और एकान्त में ले जाकर दही मक्खन उन्हें देतीं।

Nijanand App

कृष्णमालिङ्गयामासुश्चुचुम्बुर्मुखपङ्कजम्।
बालोभूत्वापि लोकस्य यशोदानन्दयोरपि।।७।।
आलिङ्गत्यालिंग्यमानः प्रतिचुम्बति चुम्बितः।
गोपिकाहृदयानन्दं वर्धयन् रतिचेष्टितैः।।८।।
रतिज्ञमिव तं मत्वा गोपिका रतिचेष्टया।
कुतूहलनिमग्नास्ता न वक्तुं शेकुरुत्सुकाः।।९।।
अन्यापि गृहमानीय खाद्यपानैरतोषयत्।
भूषयित्वांजनाकल्पैरङ्गरागैः सुगन्धिभिः।।१०।।
शुभासने समारोप्य दत्वा ताम्बूलवीटिकाम्।
इहैव बालकैरेतैः परिक्रीडस्व निर्भयः।।११।।
मान्यत्र गच्छ ते माता ज्ञापिता ताडयिष्यति।
इत्याहुर्गोपिकाः काश्चित्प्रेमबद्धा व्रजार्भके।।१२।।
व्रजेश्वरसुतं नीत्वा गृहमूचुः पराः स्त्रियः।
यदि नृत्यति सत्कृष्ण भवान् दास्ये मनोरथम्।।१३।।
इत्युक्तो नृत्यति स्मासौ रभसा वै मुदान्वितः।
हरन् कटाक्षमालाभिर्भावपूर्णाभिरावृतः।।१४।।
वव्रे नृत्यविधानार्थं कामं देहि प्रतिश्रुतम्।
कस्ते कामस्तयोक्तेसौ वव्रे कृष्णः स्ववांछितम्।।१५।।
त्वदीयहृदये भाति कन्दुकद्वयमुत्तमम्।
देह्येतद्रमणार्थाय मित्रैः गोपसुतैः सह।।१६।।
जहास गोपीकृष्णस्य वाक्यश्रवणहर्षिता।
वृषभानोः सुता देवि राधिकानामविश्रुता।।१७।।
स्वामिनी वासना जाता श्रीकृष्णप्रेमविह्वला।
द्वादशैवसहस्त्राणि याः सख्यः परिकीर्त्तिताः।।१८।।
तदंगभूतास्ताः सर्वाः वस्तुभेदो न किंचन।
स्वामिन्यात्मा भवेत्कृष्णः कृष्णात्मा स्वामिनी हि सा।।१९।।
न तयोर्विद्यते भेदश्चन्द्रचन्द्रिकयोरिव।
रसात्मकं रसभोक्तृ परं ब्रह्म श्रुतीरितम्।।२०।।
रसः शृंगार एवोक्तो रसशास्त्रविशारदैः।
संयोगो विप्रलंभश्च शृंगारो द्विविधो मतः।।२१।।
संयुक्तयोश्च संयोगो विप्रलंभो वियुक्तयोः।
रसनित्यतया जातो वियोगस्तद्दलात्मकः।।२२।।

Nijanand App

7. कृष्ण का आलिंगन करतीं, मुख कमल चूमती हैं। संसार के लिए बाल होते हुए भी यशोदा और नन्द के द्वारा

8. आलिंगन किए जाने पर आलिंगन करते और चुम्बन लिए जाने पर चुम्बन लेते। गोपिकाओं के हृदय को रति चेष्टाओं द्वारा आनन्दित करते।

9. गोपिकाएं भी उनको रति क्रियाओं के जानकार मानते हुए रति चेष्टाएं करतीं। कुतूहल में निमग्न होकर वह कुछ नहीं कह सकतीं।

10. गोपिकाएं कृष्ण को घर लाकर खान-पान से सन्तुष्ट करतीं, अंजन, अंगराग, सुगन्धि लगातीं।

11. आसन पर बिठाकर ताम्बूल एवं गुल्ली-डण्डा देकर कहतीं कि इन बच्चों के साथ यहीं पर निर्भय खेलो।

12. अन्यत्र मत जाओ। बतलाने पर तुम्हारी माता पीटेगी। इस प्रकार ब्रज बालक के प्रेम से आबद्ध कुछ गोपिकाएं कहतीं।

13. ब्रज राज के पुत्र को कुछ स्त्रियां घर लाकर कहतीं—"कृष्ण, यदि तुम नाचोगे, तो जो तुम कहोगे, हम देंगी।"

14. ऐसा कहे जाने पर प्रसन्न होकर भावपूर्ण कटाक्षों द्वारा मन को हरते हुए शीघ्र नाचने लगते।

15. नृत्य विधान के लिए वे कहते जो तुमने कहा था, वह दो। जब वे कहतीं क्या चाहते हो, तो वह अपने मन की बात कहते।

16. हम तो बच्चे हैं, गेंद खेलते हैं। तुम्हारे हृदय में दो गेंद मौजूद हैं। गोपों के साथ खेलने के लिए वह हमें दो।

17. कृष्ण के वाक्यों को सुनकर प्रसन्न गोपी हंसतीं। हे देवि! वृषभानु की पुत्री राधिका नाम से प्रसिद्ध,

18. स्वामिनी की वासना श्रीकृष्ण के प्रेम में विह्वल हो जाती और जो बारह हजार सखियां कही गई हैं,

19. वे उन्हीं के अंगभूत हैं। उनमें वास्तव में कोई भेद नहीं है। स्वामिनी की आत्मा कृष्ण हैं और कृष्ण की आत्मा स्वामिनी।

20. जिस प्रकार चन्द्रमा और चन्द्रिका में कोई भेद नहीं होता, उसी प्रकार उन दोनों में कोई भेद नहीं है।

रसात्मक परब्रह्म रसभोक्ता भी हैं, ऐसा श्रुतियों ने कहा है।

21. रसशास्त्रों ने रस को शृंगार ही कहा है। शृंगार के संयोग और विप्रलम्भ (वियोग) दो भेद माने गए हैं।

22. दोनों के साथ रहने पर संयोग होता है और विलग रहने पर वियोग होता है। रस की नित्यता से वियोग भी उसी का दूसरा रूप है।

Nijanand App

रसस्वभाव एवायं यत्संयोगवियोगवान्।
अन्यथा ह्यक्षरे कस्माद्दिदृक्षा जायते तथा॥२३॥
कथं प्रियाणां च तथा रसस्तमाद्धि तादृशः।
सच्चिदानन्दकं ब्रह्म यदुक्तं श्रुतिमौलिभिः॥२४॥
चिदानन्दौ तु कूटस्थे पुरुषोत्तम एव च।
उभावपि भवेद्ब्रह्म ब्रह्मभेदैर्विवर्जितम्॥२५॥
सजातीयविजातीयस्वगतैश्च सुलोचने।
ब्रह्मत्वे ह्यक्षरस्यापि आनन्दो द्विदलात्मकः॥२६॥
सदंशबीजमूला च प्रकृतिर्ह्यक्षरात्मगा।
न तस्माद्रसलीलायाः स्थितिः कूटस्थ ईश्वरे।
प्रकृतेश्च परत्वाच्च निर्गुणत्त्वान्महेश्वरि॥२७॥
उत्तमे पुरुषे पूर्णे ह्यानन्दात्मनि केवले।
लीला रसमयी रम्या प्रतिक्षणनवा स्थिता॥२८॥
दिदृक्षितान्तःकरणवृत्तिः स्यादक्षरस्य या।
पुरुषोत्तमावेशवती जाता नन्दगृहे तु सा॥२९॥
गुणलीलादिदृक्षायुक्वासनास्तत्प्रियासु याः।
ता एव व्रजसुन्दर्यस्ताभिः संक्रीडते रसः॥३०॥
स्वामिनीवासना राधा स्वयं वृन्दावनेश्वरी।
लवमात्रकालावच्छिन्नो विरहोऽभूद्रसात्मकः॥३१॥
नलिनीपत्रसंहत्याः सूक्ष्मसूच्यभिवेधने।
दले दले च यः कालः स कालो लववाचकः॥३२॥
अत्रापि संयोगवियोगभावैः क्रीडति वै हरिः।
कृष्णो राधास्वरूपेण विरहाक्रान्तचेतनः॥३३॥
कथं सा संगता मे स्यादिति चिंतापरोभवत्।
तत्सखीकृतमैत्रस्तु तत्कथाः कुरुतेऽनिशम्॥३४॥
नित्यं स्वरूपस्तवनैर्गीतिहासनिरूपणैः।
वस्त्रमद्यतनं हृद्यं तव सख्याः परिस्कृतम्॥३५॥
इत्यावेदितहार्दास्ताः सख्यः प्राहुश्च राधिकाम्।
राधे नन्दसुतः सोयं सुन्दरः प्रतिभाति मे॥३६॥
तव रूपानुरूपोयं चतुरो व्रजवल्लभः।
नित्यं च त्वत्कथालापः त्वत्प्राणस्त्वन्मनाः सदा॥
त्वामेव ध्यायते चित्ते सङ्गमस्ते यथा भवेत्॥३७॥

Nijanand App

23. रस का यह स्वभाव है कि उसमें संयोग और वियोग हुआ करता है। अन्यथा अक्षर ब्रह्म में इस प्रकार के दर्शन की इच्छा नहीं उत्पन्न होती।

24. और प्रियाओं में इस प्रकार का रस कैसे होता क्योंकि श्रुतियों ने यह कहा है कि ब्रह्म सच्चिदानन्द है।

25. सर्वोच्च पद पर स्थित चित् और आनन्द ही पुरुषोत्तम होता है। दोनों ही ब्रह्म हैं। इन दोनों में कोई भेद नहीं।

26. सजातीय, विजातीय और स्वगत भेद ब्रह्म में नहीं है। अक्षर के ब्रह्मत्व में जो आनन्द है, वह भी द्विदल रूप है।

27. सद् अंश रूपी बीज जिसका मूल है, ऐसी प्रकृति अक्षर ब्रह्म के मन की उपज है। इसलिए कूटस्थ ईश्वर में रस लीला की स्थिति नहीं होती क्योंकि वह, हे महेश्वरि! गुणरहित होता है और प्रकृति से परे होता है।

28. उत्तम पूर्ण पुरुष के स्वयं के आनन्द में प्रतिक्षण, नवीन रसमयी रम्य लीलाएं होती हैं।

29. अक्षर ब्रह्म की जब उसको देखने की मनोवृत्ति हुई, तब पुरुषोत्तम का आवेश लेकर वह नन्द-गृह में उत्पन्न हुए।

30. इसी प्रकार गुण लीला के दर्शन की इच्छायुक्त वासनाएं जब प्रियाओं में होती हैं तो वे ब्रज सुन्दरी के रूप में प्रकट होती हैं और उनके साथ ब्रह्म क्रीड़ा करते हैं।

31. स्वामिनी की वासना स्वयं राधा हैं। वह वृन्दावन की ईश्वरी हैं। क्षणमात्र समय का विरह होने पर वह रसात्मक हो जाती हैं।

32. कमल के अनेक पंखुड़ियों के समूह को महीन सुई से छेदने पर प्रत्येक पंखुड़ी के छेदने में जितना समय लगता है, उसे लव कहते हैं।

33. उस लव मात्र समय में भी संयोग वियोग भाव से हरि की क्रीड़ा होती है। कृष्ण राधा के स्वरूप के विरह से युक्त चित्त हो जाते हैं

34. और यह चिन्ता करने लगते हैं कि किस प्रकार उसकी संगति हो। उनकी सखियों से मित्रता करके निरन्तर उनकी कथाएं कहते हैं।

35. नित्य उनके रूप की प्रशंसा करते हैं। उनकी चाल, उनके हास का निरूपण करते हैं और यह कहते हैं कि तुम्हारी सखी के इस प्रिय वस्त्र का मैंने परिष्कार किया है।

36. इस प्रकार कृष्ण के द्वारा मनोभावों के बतलाने पर सखियां राधा से कहती हैं, हे राधे! यह नन्द का पुत्र मुझे बहुत सुन्दर लगता है।

37. यह ब्रजबल्लभ बड़ा ही चतुर और तुम्हारे योग्य है। नित्य तुम्हारी कथाएं कहता है। उसके मन प्राण तुम्हीं में लगे हैं और तुम्हारा ही मन में ध्यान करता है कि किस प्रकार तुमसे संगम हो।

Nijanand App

राधोवाच

कुत्र सङ्गतिरेतेन मम स्यात्सखि चिन्तय।
अहमप्यस्य रूपेण सौन्दर्येण गुणेन च।
मोहितास्मि क्षणं नैनं विस्मरामि कथंचन॥३८॥
यशोदानन्दनं कृष्णं स्वप्ने पश्यामि सन्ततम्।
क्रीडमानं मया सार्द्धं पिबन्तमधरासवं॥३९॥
यस्मिन् दृष्टे ममांगेषु स्वेदरोमांचकंचुकं।
वेपथुः स्वरभङ्गो वा जायते साम्प्रतं सखि॥४०॥
यत्सौंदर्यरसांभोधौ निमग्नं सखि मे मनः।
न निवृत्तिमवाप्नोति बिना तद्दर्शनं क्वचित्॥४१॥
कृष्णामूर्तिं प्रपश्यामि भ्रमान्त्रिकटवर्तिनीम्।
क्षणादन्तर्हितां दृष्ट्वा मदात्मा तप्यते भृशम्॥४२॥
किं करोमि क्व गच्छामि कस्याग्रे कथयाम्यहम्।
नय मां नन्दतनयं कृष्णं प्राणाधिकं मम॥४३॥
विरहाग्निमहाज्वालावलीढा मे वपुर्लता।
कृष्णाधरसुधापूरप्लाविता शान्तिमेष्यति॥४४॥
तस्य मे सङ्गमोपायं विचारय निजे हृदि।
गच्छ कृष्णागमे यत्नं कुरु सेङ्केतसद्मनि॥४५॥
इत्येवं राधया प्रोक्ता सखी प्राणपतिं ययौ॥४६॥

इति श्रीपञ्चरात्रे माहेश्वरतन्त्रे उत्तरखण्डे शिवोमासंवादे एकादशं पटलम्॥११॥

द्वादशं पटलम्

शिव उवाच

कृष्णस्तामागतां दृष्ट्वा हर्षाकुलितचेतसाम्।
कार्यसिद्धिमिमां ज्ञात्वा हर्षादुल्लसितेक्षणः॥१॥
पप्रच्छ तां सखीं प्रेम्णा किमुक्तं राधया सखि।
तदिदानीं ममाचक्ष्व श्रुत्वा सन्तोषमाप्नुयाम्॥२॥
त्वयि गतायां यावन्तः कालस्यावयवा ययुः।
तावन्त्येव युगान्यासन् विरहाकुलितस्य मे॥३॥

सख्युवाच

त्वत्सङ्गविरहात्कृष्ण राधापि क्लिश्यतेतराम्।
न निवृत्तिमवाप्नोति विना ते दर्शनं क्वचित्॥४॥

Nijanand App

राधा ने कहा—

38. हे सखी! सोचो कहां पर उनके साथ संगति होगी। मैं भी उनके रूप-सौन्दर्य एवं गुण से मोहित हूं। क्षणभर भी किसी प्रकार नहीं भूलती हूं।

39. यशोदानन्दन कृष्ण को मैं हमेशा स्वप्न में अपने साथ अधरामृत पान करने की क्रीड़ा करते हुए देखती हूं।

40. जिनके सामने देखे जाने पर मेरे अंगों में स्वेद, रोमांच, कम्पन, स्वर भंग उत्पन्न होता है।

41. जिनके सौन्दर्य रस सागर में डूबा हुआ मेरा मन कहीं भी उनके दर्शन के बिना शान्त नहीं होता है।

42. मैं भ्रमवश कृष्ण का शरीर समीप में देखती हूं और क्षण भर में छिपा हुआ पाकर मेरी आत्मा बहुत संतप्त होती है।

43. क्या करूं, कहां जाऊं, किसके सम्मुख कहूं? मुझे प्राण से अधिक प्रिय नन्द पुत्र कृष्ण के पास ले चलो।

44. विरह की अग्नि रूपी ज्वाला से जलती हुई मेरी शरीर लता कृष्ण की अधर सुधा के प्रवाह में ही शान्त होगी।

45. अपने हृदय में उनके संगम का उपाय विचारो और जाओ, संकेत-गृह में कृष्ण के आने का प्रयत्न करो।

46. इस प्रकार राधा द्वारा कही गई सखी प्राणनाथ कृष्ण के पास गई।

पंचरात्र माहेश्वरतन्त्र के उत्तरखण्ड में शिव-पार्वती सम्वाद का ग्यारहवां अध्याय समाप्त हुआ।

बारहवां अध्याय

शिव ने कहा—

1. कृष्ण ने हर्ष से पूरित चित्त वाली सखी को आई हुई देखकर हर्षोल्लास से, काम बन गया, जानकर प्रसन्न हो गए।

2. सखी से प्रेमपूर्वक पूछा कि राधा ने क्या कहा है? तुम मुझे बतलाओ जिससे मैं सन्तोष प्राप्त करूं।

3. तुम्हारे चले जाने पर समय के जितने क्षण व्यतीत हुए हैं, मुझ विरही के लिए उतने युग बीत गए।

सखी ने कहा—

4. तुम्हारे संग के विरह से राधा भी बहुत क्लेश अनुभव कर रही हैं। तुम्हारे दर्शन के बिना कहीं भी शान्ति नहीं पाती हैं।

Nijanand App

कृष्ण कृष्णेत्यमुं मन्त्रं विरहाकुलया तया।
जप्यतेऽहर्निशं मन्यमानया निकटे मृतिम्॥५॥
विरहानलनिर्दग्धा शोभते न वपुर्लता।
हिमक्लिष्टेव हेमन्ते मृदुला पद्मिनी यथा॥६॥
दिवारात्रौ तु रहसि कृत्वा चित्रमयीं प्रभो।
मूर्तिं निधाय हृदये शेते विरहकर्षिता॥७॥
शुष्कौ बिम्बाधरौ तस्यास्तन्द्रा लोचनयोः स्थिता।
अन्यथा भाषणं वक्त्रात्किमन्यत्कथयामि ते॥८॥
नानुसन्धानमाधत्ते मनोवृत्तिर्मनागपि।
अन्यथासिद्ध एवासौ कामस्ते नन्दनन्दन॥९॥
तस्मात्तन्निकटं याहि सङ्केते कृतनिश्चयः।
इति सख्योदितं श्रुत्वा उल्ललास हृदि प्रभुः॥१०॥

श्रीकृष्ण उवाच

अहं तत्रागमिष्यामि सङ्केते कृतनिश्चयात्।
तत्र तामानय क्षिप्रं वेषगुप्तिं विधाय च॥११॥
कस्यापि न भयं भीरु त्वया कर्तव्यमण्वपि।
वञ्चयिष्ये जनान् सर्वान् इन्द्रजालकलादिभिः॥१२॥
राधिकायै प्रणामं मे तत्र गत्वा निवेदय।
त्वं मे प्रियासि नितरां प्राणादप्यधिका मम॥१३॥
नावयोरन्तरं किञ्चित् प्राणरूपात्मनामपि।
त्वन्नामस्मरणाच्चाहं यथा तुष्यामि सुन्दरि।
मत्सेवया मम ध्यानात्तथा तुष्टिर्न मे क्वचित्॥१४॥
इत्यादि मम वाक्यानि राधिकायै निवेदय।
पुनर्याता सखी राधामुवाच सकलं हि तत्॥१५॥
सुधामाधुर्यधिक्कारक्षमं कृष्णवचोमृतम्।
पीत्वोल्ललास हृदयं ग्रीष्मतप्तेव भूर्यथा॥१६॥
अथ सङ्केतसदने शय्या पुष्पमयोचिता।
नानागन्धमहामोदपुष्पराजिविराजिते॥१७॥
निर्दग्धागरुसद्धूमधूपिते च समन्ततः।
पानयोग्यरसैर्दिव्यैस्ताम्बूलैरङ्गलेपनैः॥१८॥
सत्कृते सदने रम्ये राधा सख्यावृता ययौ।
तत्रासनगता राधा काङ्क्षन्ती प्रियसङ्गमम्॥१९॥

Nijanand App

5. विरह से व्याकुल राधा 'कृष्ण कृष्ण' मन्त्र को अपनी मृत्यु निकट समझकर दिन-रात जपती हैं।

6. शीत ऋतु में बर्फ से ढकी हुई कोमल कमलिनी जिस प्रकार शोभित नहीं होती है वैसे ही विरहाग्नि से दग्ध उसकी शरीर लता शोभित नहीं हो रही है।

7. विरह से कर्षित वह दिन-रात एकान्त में चित्तमयी मूर्ति हृदय में रखकर लेटी रहती है।

8. उसके लाल होंठ सूख गए हैं, नेत्रों में तन्द्रा है। मुख से उल्टा-सीधा बोलती है और मैं क्या कहूं।

9. उनकी मनोवृत्ति थोड़ी भी ठीक नहीं हो रही है। हे नन्दनन्दन! मैं समझती हूं तुम्हारी कामना अन्यथा ही सिद्ध है।

10. इसलिए निश्चय करके संकेत-गृह में जाओ। सखी से इन शब्दों को सुनकर कृष्ण प्रसन्न हो गए।

कृष्ण ने कहा—

11. निश्चय करके मैं संकेत-गृह में आऊंगा। तुम गुप्त वेश बनाकर शीघ्र उसे ले जाओ।

12. हे भीरु! तुमको किसी का भी कुछ भी भय नहीं करना चाहिए। इन्द्रजाल की कला से मैं सब लोगों को वंचित करूंगा।

13. वहां जाकर राधिका से मेरा प्रणाम कहो। तुम मेरी प्रिया हो और सदैव मुझे प्राणों से भी अधिक प्रिय हो।

14. हमारे-तुम्हारे में कोई अन्तर नहीं है। तुम मेरी प्राण रूपा हो। तुम्हारे नाम के स्मरण से मैं जितना प्रसन्न होता हूं उतना अपनी सेवा और ध्यान से नहीं।

15. इत्यादि वाक्य राधिका से कहना। सखी ने आकर राधिका से वह सब बताया।

16. अमृत की भी मधुरता को तिरस्कृत करने वाले कृष्ण के वाक्यों का अमृत पान कर राधिका का हृदय उल्लसित हो गया जैसे गर्मी में शीतल जल को पाकर संतप्त पृथ्वी।

17. संकेत-गृह में पुष्पमयी शैय्या थी। संकेत सदन अनेक प्रकार के गन्धों वाले पुष्पों से सुशोभित था।

18. चारों ओर से जलती हुई धूप से वह स्थान व्याप्त था। पीने योग्य रस, ताम्बूल, अंग लेपों से युक्त था।

19. ऐसे सुन्दर सदन में सखियों से युक्त राधा गईं। वहां आसन पर बैठी राधा प्रिय के मिलन की कामना कर रही थीं।

Nijanand App

अचञ्चलतडित्कोटिप्रभापिञ्जरिताम्बरा।
समावृत्तसुवृत्तोरुजघनस्तनमण्डला॥२०॥
कटाक्षसरणीनिर्यद्रसमोहितमन्मथा।
शुकाकारसमाकारनासाभरणभासुरा॥२१॥
दाडिमीबीजसन्देहकारिदशनहीरका।
वीणारवघृणादायिनिजवाणीगुणोदया।
कर्पूरबीटिकामोदसुगन्धितदिगन्तरा॥२२॥
मणिदर्पणदर्पघ्नकपोलफलकप्रभा।
मणिमङ्गलसूत्रेण विलसत्कम्बुकन्धरा॥२३॥
रत्नाङ्गुलीयनिवहोल्लसदङ्गुलिपल्लवा।
कुचभारलसन्मध्यत्रिवलीललितोदरा॥२४॥
चन्दनागरुकस्तूरीकर्पूरादिसुगन्धिनी।
निःश्वासहारिकुर्पासनिबद्धस्तनमण्डला॥२५॥
कुचोपरिलसन्मुक्ताहारतारसुशोभिता।
क्वणन्माणिक्यमञ्जीरप्रभाभिर्बद्धमण्डला॥२६॥
रेजे राधासनगता कथंचक्रे प्रियश्रया।
कथं नाद्यावधि प्रेयानागतः सखि तर्कय॥२७॥
रुद्धः कयाचित्प्रियया किं वा त्वं तेन वञ्चिता।
तद्वचः किमतथ्यं वा तथ्यं वा ज्ञायते कथं॥२८॥
नागमिष्यति चेत्कान्तः प्राणांस्त्यक्ष्याम्यसंशयं।
वयस्यामेतदाश्राव्य कृत्वा करतले मुखम्॥२९॥
विरहाग्निशिखात्युष्णं निशश्वास प्रियंवदा।
ताम्बूलगन्धपुष्पादिरतिसाधनमाहितं।
निनिन्द मनसा सर्वं वियोगज्वरविप्लुता॥३०॥
तद्वक्रं हसितेन्दुमण्डलमतिस्फारं तदालोकितम्
सा वाणीजितकामकार्मुकरवा सौन्दर्यमेतस्य तत्।
इत्थं सन्ततमालि वल्लभतमध्यानप्रसक्तात्मन
श्चेतश्चुम्बितकालकूटमिव मे कस्मादिदं मुह्यति॥३१॥
तदैव कृष्णः सङ्केतं प्राप्तः प्राण इव स्वयम्।
स्वासनात्तूर्णमुत्तस्थौ राधा कमललोचना॥३२॥
समानासनसमासीनौ परस्पररतिप्रियौ॥
भावपूरितदृक्प्रान्तनिक्षेपान्योन्यमोहितौ॥३३॥

Nijanand App

20. राधा के वस्त्र करोड़ों स्थिर विद्युत से पूरित आकाश की प्रभा के समान चमक रहे थे। जंघाएं और स्तन मण्डल सुडौल, गोल तथा सुन्दर थे।

21. कटाक्ष के रास्ते से निकलने वाले रस से कामदेव भी मोहित हो रहा था। शुक के आकार की नासिका में धारण किए गए आभूषण से चमकती,

22. अनार के बीज का सन्देह उत्पन्न करने वाली दन्तावलि से शोभित, वीणा के शब्द को भी मात देने वाली वाणी बोलती हुई, कपूर की बेल सी-दिशाओं को सुगन्धित करती हुई,

23. मणि के दर्पण के अभिमान को मिटा देने वाले कपोलों की शोभा वाली, मणिमय मंगल सूत्र से गर्दन सुशोभित हो रही थी।

24. रत्न की अंगूठियों से उंगलियां सुशोभित हो रही थीं। कुच भार से झुकता हुए मध्य भाग में तीन रेखाओं से शोभित उदर था।

25. चन्दन, अगर, कस्तूरी, कपूर आदि से सुगन्धित श्वास की वायु को रोकती हुई चोली से स्तन मण्डल बंधे हुए थे।

26. कुच के ऊपर लटकते हुए मोती के हार से सुशोभित, बजते हुए माणिक्य के नूपुरों को पैर में धारण किए हुए,

27. आसन पर बैठी हुई राधा सुशोभित हो रही थीं। प्रिय से सम्बन्धित कथाएं हो रही थीं। राधा ने कहा, हे सखि! अभी तक मेरे प्रिय नहीं आए, तुम्हारा क्या तर्क है?

28. क्या किसी प्रिया ने उन्हें रोक लिया या उन्होंने तुम्हें धोखा दिया। उनके वाक्य झूठे हैं या सत्य, यह कैसे जाना जाय?

29. यदि मेरे प्रेमी नहीं आएंगे तो निःसन्देह मैं प्राण त्याग दूंगी। अपनी सखी से यह कहकर हाथों पर मुख रखकर

30. विरहाग्नि की शिखा जैसे अति उष्ण श्वास लेने लगीं। वियोग के ज्वर से संतप्त होकर ताम्बूल, गन्ध, पुष्पादि सामग्री की निन्दा करने लगीं।

31. चन्द्र मण्डल के समान हंसता हुआ वह मुख, आंखें फैलाकर वह अवलोकन, कामदेव के धनुष की आवाज को जीतने वाली वह वाणी, उनका वह सौन्दर्य इस प्रकार से निरन्तर, हे सखी! प्रियतम के ध्यान में लगा मेरा चित्त मानो काल-कूट को चूमे हुए के समान मोह को कैसे प्राप्त हो रहा है?

32. स्वयं प्राणों के समान कृष्ण उसी समय संकेत-गृह पहुंच गए। कमललोचना राधा उसी समय अपने आसन पर खड़ी हो गईं।

33. एक ही आसन पर बैठे हुए एक-दूसरे को रति प्रेम रखने वाले भाव विह्वल नेत्रों से एक-दूसरे पर मोहित होकर दोनों देखने लगे।

Nijanand App

श्रीकृष्ण उवाच

प्रिये त्वद्विरहज्वालवलीढवपुषो हि मे।
न शान्तये सुधाम्भोधिकोटिपीयूषसेचनम्।।३४।।
त्वदीयविरहे राधे प्रियमप्यास विप्रियम्।
अमृतांशोरपिकराश्चण्डांशोरिव दारुणाः।।३५।।
ग्लपयन्ति वपुर्वल्लीं विरहे तव सुन्दरि।
शय्या पीयूषरचिता वह्न्यङ्गारचितेव सा।।३६।।
मलयालेपनं देहे व्यथते विस्फुलिङ्गवत्।
कोटिकल्पायते रात्रिः पुष्पं सूचीफलायते।
दावाग्निज्वालेव मरुत् शीतलो व्यथयेत्तनुम्।।३७।।
ध्यायामि त्वां दिवारात्रौ त्वत्प्राणस्त्वन्मनाः प्रिये।
राधिके राधिके चेति महामन्त्रजपेन च।।३८।।
विरहाहिविषं प्राणहारि प्रशमयाम्यहम्।
अद्य लब्धासि भो कान्ते निधानमिव निर्धनैः।।३९।।

विवेकविद्याविनयप्रसादमहेन्धने चासुविदीप्यमाने।
वियोगवातद्विगुणीकृतेन्तः स्मरानले गोपि जुहोमि देहम्।।४०।।
इतः क्षणं वा च ततः क्षणं वा गृहे क्षणं वा शयने क्षणं वा।
बहिस्तथान्तः क्षणमात्मनस्त्वद्ग्रहग्रहीतस्य निवृत्तिरस्ता।।४१।।
कियन्त्य एवात्र न सन्ति राधे सुलोचना मां तु न हर्षयन्ति।
पयोदबिन्दुप्रतिरुद्धबुद्धेर्विहङ्गमस्येव जलोपकण्ठम्।।४२।।
दिशां मुखेषु प्रमदे त्वदीयां भ्रमोपनीतामपि वीक्ष्य मूर्तिम्।
गतावधिव्याप्तिमुपैति चित्ते हर्षस्य वैयर्थ्यमुदीक्ष्य शोकम्।।४३।।
समुद्ररुद्रौ प्रथितौ जगत्यामौर्वेण हालाहलधारणेन।
अहं तु कल्पान्तहुताशकल्पवियोगदग्धोपि न चित्रमेतत्।।४४।।
अपि प्रिये त्वद्विरहानलोत्थज्वालाहुतीभूतशरीरयष्टेः।
त्वमेव मे जन्मनि जन्मनि स्याः प्रिया सखी चेति विधिर्व्यधत्ताम्।।४५।।
अपि प्रिये केतककुड्मलौघाः स्फुटन्ति मे हृदयेन साकम्।
विलोचनाभ्यां तु समं पयोदाः किरन्ति वारिप्रकरानमन्दान्।।४६।।
वियोगदावानल एष एव क्षणात् क्षिणोत्येव तनुं मदीयाम्।
यदा सुधारस्मिसहोदरास्यमसङ्कुचध्यानपथादपैति।।४७।।
धुन्वन्पयोदावलिविस्फुरन्तस्तडित्प्रकाशाः शिखिनर्त्तनानि।
सुकेतकामोदमुचश्च वाताः सहस्रधा मे हृदयं दलन्ति।।४८।।

Nijanand App

श्रीकृष्ण ने कहा—

34. प्रिये! तुम्हारे विरह की ज्वाला से दग्ध मेरा शरीर कोटि सुधा सागर के अमृत से सींचने से भी शान्त नहीं हो रहा है।

35. हे राधे! तुम्हारे विरह में प्रिय भी अप्रिय हो रहा है। चन्द्रमा की किरणें सूर्य की किरणों के समान दाह उत्पन्न कर रही हैं।

36. हे सुन्दरी! तुम्हारे विरह में पीयूष रचित शैय्या आग के अंगारों से भरी हुई चिता के समान मेरे शरीर को जला रही है।

37. मलयागिरि चन्दन का भी लेप मेरे शरीर में आग जैसी व्यथा उत्पन्न कर रहा है। रात्रि कोटिकल्पों के समान हो रही है। पुष्प सुई के समान चुभने वाले हो रहे हैं। शीतल वायु दावाग्नि ज्वाला के समान व्यथा पहुंचा रही है।

38. अपने प्राण तथा मन तुम्हीं में लगा कर 'राधिका राधिका' इस महान् मन्त्र का जप करते हुए तुम्हारा ध्यान करता हूं।

39. विरह रूपी सर्प का विष जो प्राणों को हरने वाला है उसको मैं किसी तरह शान्त कर रहा हूं। हे कान्ते! तुम आज मुझे ऐसे ही मिली हो जैसे निर्धन को खजाना मिल जाए।

40. विवेक, विद्या, विनय, प्रसाद रूपी महान् ईंधन में प्राणों के जलने के समय और वियोग की वायु से कामाग्नि के दुगुने बढ़ जाने पर, हे गोपी! शरीर को मैं हवन कर रहा हूं।

41. वहां क्षणभर घर में, क्षणभर शैय्या पर, क्षणभर बाहर, क्षणभर अन्दर में घूम रहा हूं। तुम्हारी ग्रह से ग्रहीत मुझे शान्ति कहां। मेरी शान्ति की तो निवृत्ति हो गई।

42. हे राधे! यहां पर कितनी ही सुलोचनाएं मौजूद हैं, पर यह मुझे हर्षित नहीं करतीं। जिस प्रकार मेघ के बूंद को पाने के लिए जिसकी बुद्धि लगी है उस पक्षी को जल के समीप पहुंचना हर्ष नहीं देता है।

43. हे प्रमदे! दिशाओं के मुख में भ्रमवश तुम्हारी ही मूर्ति देखकर जब कुछ समय तक तुमको नहीं पाता हूं तो हर्ष को व्यर्थ देखकर शोक होता है।

44. संसार में हलाहल को धारण करने वाले दो प्रसिद्ध हुए—समुद्र और रुद्र। मैं तो प्रलयकाल की अग्नि के समान वियोग से दग्ध हुआ, इसमें कोई आश्चर्य नहीं है।

45. हे प्रिये! तुम्हारी विरहाग्नि से उठने वाली ज्वाला से दग्ध शरीर मेरी प्रिय सखी हर जन्म में तुम्ही हो, ऐसा विधान भाग्य करे।

46. हे प्रिये! मेरे हृदय के साथ-साथ केतकी के कलियों के समूह फट रहे हैं और आंखों के साथ-साथ मेघ जल की वर्षा कर रहे हैं।

47. यह वियोग दावाग्नि मेरे शरीर को क्षण भर में नष्ट कर देगी। जब चन्द्र सहोदर तुम्हारे मुख के ध्यान-पथ से अलग हो जाता है।

48. मेघ मालाओं में बिजली चमक रही है। मेघ शब्द को सुनकर मोर नाच रहे हैं। केतकी की सुगन्धि को लेकर वायु चल रही है। यह सब मेरे हृदय को हजारों टुकड़ों में फाड़ रहे हैं।

Nijanand App

स्मराशुगीभूतविलोचने द्वे भ्रूभ्यां धनुर्भावमुपागताभ्यां।
स्फुटं वहन्ती जनमोहविद्या विद्या किमेषा मम मोक्षकर्त्री।।४९।।
स्मितोदयादर्शितदन्तपंक्तिप्रभावलीढाननपङ्कजेन।
परिस्फुरल्लोचनषट्पदेन विमोहयन्ती हृदयं मदीयम्।।५०।।
ध्येयं ममैतत्तवपादपङ्कजं गेयं ममैतत्तव रूपसौभगम्।
त्वत्तो न किञ्चित्प्रतिभाति तत्वं त्वया विनांध्यं जगतो विभाति।।५१।।
इत्थं प्रियामनुनयन् वचोभिः प्रेमगर्भितैः।
रेमे कृष्णः कुचतटीपरिरम्भादिभिस्तथा।।५२।।
इति श्रीमाहेश्वरतन्त्रे उत्तरखण्डे शिवपार्वतीसंवादे द्वादशं पटलम्।।१२।।

त्रयोदशं पटलम्

शिव उवाच

एकदा तु कुमार्यस्ता व्रतं चेरुः समाहिताः।
कात्यायनीमर्चयन्त्यः कृष्णो भर्त्ता भवेदिति।।१।।
मासान्ते फलदानाय गतः कृष्णः सरित्तटम्।
तीरस्थितानि वासांसि हृत्वा नीपमथारुहत्।।२।।
कुमार्यः कृष्णचरितं दृष्ट्वा प्रेमपरिप्लुताः।
लज्जितस्मेरवदनाः कृष्णमूचुः कदम्बकम्।।३।।
कृष्ण, वासांसि नो देहि खिन्नाः स्म सलिले वयम्।
त्वं वृद्धसम्मतो भूत्वा नैतत्कर्तुं त्वमर्हसि।।४।।
यदि जानाति वै कश्चित्तदायं दुर्नयो महान्।
जानिष्यति यदा राजा कंसः क्रूरमतिर्मनाक्।।५।।
तदा ह्यनर्थ एवायमस्माकं भवतोपि च।

श्रीकृष्ण उवाच

इहागत्य प्रतीच्छध्वं स्वं स्वं वासः सुलोचनाः।।६।।
अन्यथा न ददाम्येव कंसभीत्या विभीषितः।
निशम्य वचनं तस्य गोप्यो लज्जास्मितेक्षणाः।
जलादुत्तीर्य वासांसि कृष्ण देहीति चाब्रुवन्।।७।।
कृष्णः प्रीतमनास्ताभ्यो वासांसि पृथगाददौ।।८।।
तत्तद्भागैश्च ताः सर्वाः स्वान्तःस्थैः सन्नियुज्य च।
चक्रे पूर्णतराः कृष्णो रसयोग्या रसप्रियः।।९।।
ततः प्रसन्नो भगवान् कुमारीभ्यो वरं ददौ।

Nijanand App

49. तुम्हारे दोनों नेत्र कामदेव के बाण हैं और दोनों भौंहें धनुष के रूप में हैं। इन दोनों से बहती हुई मनुष्यों को मोहने वाली विद्या क्या मुझको मोक्ष देने वाली विद्या बनेगी।

50. मुस्कराने से प्रकट होने वाली दन्त-पंक्ति की प्रभा से युक्त मुख कमल जिसमें नेत्र रूपी भौंरे फड़फड़ा रहे हैं, ऐसे अपने मुख से तुम मुझे मोहित कर रही हो।

51. तुम्हारे चरण-कमल ही मेरे ध्येय हैं। तुम्हारी रूप-सम्पत्ति मेरा गीत है। तुमसे बढ़कर मुझे कोई तत्व नहीं दिख रहा है। तुम्हारे बिना यह संसार अन्धकार ही अन्धकार दिखाई पड़ता है।

52. इस प्रकार प्रेम गर्भित वचनों से प्रिया का अनुनय करते हुए कृष्ण आलिंगनादि विहार करते रहे।

पंच रात्र माहेश्वरतन्त्र के उत्तर खण्ड के शिव-पार्वती संवाद का बारहवां अध्याय समाप्त हुआ।

तेरहवां अध्याय

शिव ने कहा—

1. एक बार गोप कुमारियों ने कृष्ण के पति होने की कामना से कात्यायनी देवी की पूजा करते हुए व्रत किया।

2. मास के अन्त में व्रत का फल देने के लिए कृष्ण नदी तट पर गए और वहां पर रखे वस्त्रों को लेकर कदंब पर चढ़ गए।

3. कृष्ण के इस आचरण को देखकर प्रेमयुक्त कुमारियों ने लज्जायुक्त मुख से कदंब पर बैठे कृष्ण से कहा—

4. हे कृष्ण! हमारे वस्त्र दे दो, जल में हम बहुत कष्ट उठा रही हैं। वृद्धों की आज्ञा पालक! तुम्हें ऐसा नहीं करना चाहिए।

5. यदि कोई इस बात को जान जायगा तो बड़ी गड़बड़ होगी। यदि क्रूरमति राजा कंस जान जायगा,

6. तो हमारा और तुम्हारा दोनों का अनर्थ होगा।

श्रीकृष्ण ने कहा—

हे सुलोचनाओ! यहां आकर अपने-अपने वस्त्र ले लो।

7. कंस के डर से डरकर मैं वस्त्र नहीं दूंगा। उनके वचनों को सुनकर गोपियां लज्जित होकर जल से बाहर आकर कृष्ण वस्त्र दे दो, ऐसा बोलीं।

8. कृष्ण ने प्रसन्न होकर उन्हें अलग-अलग वस्त्र दे दिए।

9. कृष्ण ने अपने अन्तर्स्थित उन-उन भागों को उनको देकर उन्हें पूर्ण रसयोग्य बना दिया।

Nijanand App

श्रीकृष्ण उवाच

रात्रयो ह्याधिदैविक्यो मपि तिष्ठन्ति ताः प्रियाः॥१०॥
पश्यध्वं रमयिष्यामि तासु वः पद्मलोचनाः।
प्रतियात गृहं तस्मात्कामः कालेन सेत्स्यति॥११॥
ततो लब्धवराः सर्वा गोप्यः पूर्णमनोरथाः।
गृहं जग्मुः प्रगायन्त्यः कृष्णालीलां मुदान्विताः॥१२॥
जनयन् मन्युमिन्द्रस्य कृत्वा गोर्वधनोत्सवम्।
इन्द्रोत्सृष्टजलैरत्रैः सङ्कर्षणमहीश्वरम्॥१३॥
वर्षद्वादशकं योसौ त्यक्ताम्बुफलमूलकः।
तर्पयामास तं कृष्णः पुरूहूतमदं नुदन्॥१४॥
एकदा कृष्ण एवैको गतो वृन्दावनं शुभम्।
रमणाय मतिं चक्रे सखीभिः सह केवलम्॥१५॥
दृष्ट्वा वृन्दावनं रम्यं नमत्कुसुमपादपम्।
कूजत्पक्षिमरालालिप्रतिध्वनिमनोहरम्॥१६॥
प्रफुल्लमल्लिकाम्भोजं मन्दमारुतकम्पितम्।
योगमायामथो कृष्णः कालमायाविनाशिनीं॥१७॥
जाग्रदन्ते सुषुप्त्यादौ स्फुरणायोपलभ्यते।
तादृशीमकरोद्देवि लीलार्थं पुरुषोत्तमः॥१८॥
प्रकाशा चाप्रकाशा च द्विधा सेयं व्यवस्थिता।
दर्शनांशे प्रकाशा च दृष्टत्वाच्छादने तथा॥१९॥
बहिः प्रकाशं विच्छिद्य अन्तराकाशते यथा।
योगमायेति विख्याता जाग्रत्स्वप्नमयीशितुः॥२०॥
कालमाया हता तूर्णं तया तच्चित्स्वरूपया।
तत्कार्यमात्रमखिलं लीनं स्थावरजङ्गमम्॥२१॥
योगमायोद्भवं स्वप्नमक्षरः संददर्श ह।
अन्यूनाधिकमीशानि भूतेन्द्रियगुणात्मकम्॥२२॥
दिव्यमाणिक्यमुकुटं स्फुरन्मकरकुण्डलम्।
दिव्यमुक्तामणिभ्राजन्नानाभूषणभूषितम्॥२३॥
कृष्णरूपमभूत्तत्र योगमायोपबृंहितम्।
अलौकिकलतादिव्यकुसुमामोदवायुना॥२४॥
सेवितं सर्वतः श्रीमद् वृन्दावनमहाद्भुतम्।
खगा मृगा लता वृक्षा वायवश्चन्द्रतारकाः॥

Nijanand App

10. तब प्रसन्न होकर भगवान ने कुमारिकाओं को वर दिया।

श्रीकृष्ण ने कहा---

रात्रियां अधिदैव रूप में मेरे में हैं, उनको तुम लोग देखो।

11. उन रात्रियों में मैं तुम कमल नयनियों को रमण कराऊंगा। इसलिए तुम लोग अपने-अपने घर जाओ। समय आने पर तुम्हारी कामना पूर्ण होगी।

12. तब वर प्राप्त कर पूर्ण मनोरथ होकर कृष्ण लीला गान करती हुई अपने-अपने घर चली गईं।

13. गोवर्धन उत्सव मनाकर इन्द्र को क्रुद्ध करते हुए इन्द्र द्वारा जल के बरसाए जाने पर गोबर्धन को उठाया।

14. बारह वर्ष की ही अवस्था में कृष्ण ने जल, फल, मूल को त्यागकर इन्द्र के मद को नष्ट करते हुए गोबर्धन को तृप्त किया।

15. एक बार कृष्ण अकेले ही वृन्दावन गए। वहां केवल सखियों के साथ रमण करने का मन बनाया।

16. फूलों से लदकर झुके हुए वृक्षों वाले और चहचहाते हुए पक्षियों, हंसों, भ्रमरों की ध्वनि से मनोहर वृन्दावन को देखा।

17. खिले हुए मल्लिका और कमल मन्द वायु से हिलाए जाते हुए वृन्दावन को देखकर काल माया का नाश करने वाली योग माया उत्पन्न की।

18. जाग्रत अवस्था के अन्त में और सुषुप्ति की आदि में स्फुरण करने के लिए जो प्राप्त होता है, ऐसी लीला पुरुषोत्तम ने की।

19. यह प्रकाश और अप्रकाश दो रूपों में स्थित है। दर्शन अंश में प्रकाश है और दृष्टि-लोप अंश में अप्रकाश है।

20. जिस प्रकार बाह्य प्रकाश को नष्ट कर अन्तःप्रकाश होता है, वैसे ही जाग्रत स्वप्नमयी परमात्मा की योगमाया होती है।

21. चित् स्वरूप द्वारा काल माया शीघ्र हरण कर ली जाती है और उस काल माया का कार्य रूप सम्पूर्ण स्थावर जंगम रूप लीन हो जाता है।

22. योगमाया से होने वाला स्वप्न अक्षर देखता है। यह स्वप्न भूत, इन्द्रिय, गुण, रूप न तो न्यून और न अधिक होता है।

23. दिव्य माणिक्य का मुकुट धारण किए हुए, मकराकृति कुण्डल युक्त दिव्य मुक्ता मणियों से जटित, नाना भूषणों से भूषित,

24. योग माया से युक्त कृष्ण रूप उसमें प्रकट हुआ। अलौकिक लताओं के दिव्य पुष्पों के सुगन्धित वायु से

Nijanand App

ऋतुः पुष्पाणि रात्रिश्च सर्वमासीन्नवं प्रिये॥२५॥
प्रससारोत्सृजन्ती सा ग्रसन्ती विश्वमोजसा।
उत्सारयन्ती तिमिरं यथा दीपशिखाम्बभोः॥२६॥
योगमायाप्रपञ्चोपि सदेवासुरमानवः।
तासु सङ्कल्पमकरोन्मनसा पुरुषोत्तमः॥२७॥
अबोधयत्पूर्वकामं कामरूपतया हृदि।
यावदंकुरितो भूयात् हृदि कामस्तु सुभ्रुवाम्॥२८॥
तावत्तद्वर्धनार्थाय वेणुनादमथाकरोत्।
योगमायोद्भवाकाशे वेणुनादः प्रतिष्ठितः।
तं नादमेव गोप्यस्ताः शुश्रुवुः प्रथमं प्रिये॥२९॥
अधरामृतसंसिक्तवेणुनादः सहानिलः।
प्रविश्य कर्णरन्ध्रेण हृच्छयं समतेजयत्॥३०॥
ततस्ताः सहसा हित्वा शयनासनभोजनम्।
सात्विकी राजसी चैव तामसी चेति विश्रुताः॥३१॥
श्रुतिरूपा कुमार्यश्च आजग्मुर्नादमोहिताः।
निषिद्धा अपि यत्नेन बन्धुवर्गैरनेकधा॥३२॥
न निवृत्ता यथा वेगः सरितामर्णवं प्रति॥३३॥
बलात् रुद्धा अपि जहुः प्राणान् विरहकर्षिताः।
काश्चिद्गोप्यः क्षणादेव दिव्यदेहाः समाययुः॥३४॥
पुरः प्रकाशः पश्चात्तु शून्यमासीत् व्रजस्त्रियः।
प्रविष्टा मण्डलं सर्वा योगमायिकमुत्तमम्॥३५॥
कुमार्यो द्वादश प्रोक्ताः सहस्राणि तथा पराः।
तावन्त्यः किल विज्ञेयाः श्रुत्वा वेणुरवं निशि॥३६॥
चत्त्वारिंशत्तु यूथानि तासां प्रोक्तानि योषितां।
तासां द्वादशसाहस्त्री संख्या संयोगभावतः॥३७॥
प्रियसङ्गार्हमेतासां माया वेषमरीरचत्।
भूषामालाम्बराण्यासन् लोकसिद्धेतराणि च॥३८॥
समानवेषाभरणाः सर्वाः सवयसः प्रिये।
समचित्ताः समरसाः कृष्णस्य निकटं ययुः॥३९॥
वेदस्थित्यर्थमेवासौ क्रीडन्नपि समाहितः।
मर्यादामुक्तवान् वाचा वागासीत्कारणोदया॥४०॥

Nijanand App

25. महान् अद्भुत वृन्दावन चारों ओर शोभायुक्त हो गया। हे प्रिये पार्वती! पक्षी, मृग, लता, वृक्ष, वायु, चन्द्र, तारागण, ऋतु, पुष्प तथा रात्रि सभी नवीन थे।

26. वह माया विश्व को अपनी शक्ति से ग्रसित करती हुई, दीपशिखा के समान अन्धकार को हटाती हुई

27. योग माया के प्रपुंच रूप देवता, राक्षस, मनुष्यों का मन से पुरुषोत्तम ने संकल्प किया।

28. उन्होंने अपने हृदय में सबसे पहले कामदेव को जगाया। जब तक वह सुन्दरियों के हृदय में अंकुरित हो,

29. तब तक उसको बढ़ाने के लिए वंशी बजाई। योगमाया से उत्पन्न आकाश में वह वंशी की ध्वनि प्रतिष्ठित हो गई। गोपियों ने ही उस नाद को सबसे पहले सुना।

30. अधर के अमृत से सींची गई वंशी ध्वनि ने वायु के साथ कर्ण छिद्रों में प्रवेश कर काम को उत्तेजित किया।

31. इसके द्वारा उन्होंने शयन, आसन, भोजन सबको सहसा छोड़कर सात्विकी, राजसी एवं तामसी तीनों प्रकार की प्रसिद्ध

32. वेद की श्रुति रूपी कुमारिकाएं ध्वनि से मोहित होकर बन्धुओं के द्वारा रोके जाने पर भी

33. वह वैसे ही आने से नहीं रुकीं जैसे समुद्र के पास जाने के लिए नदियों का वेग नहीं रुकता है।

34. कुछ ने जबरदस्ती रोके जाने पर विरह पीड़ित होकर प्राण त्याग दिया और क्षण भर में ही दिव्य शरीर धारण कर आ गईं।

35. सामने प्रकाश और पीछे शून्य था। सभी ब्रज की नारियां योग माया निर्मित उत्तम मण्डल में प्रविष्ट हुईं।

36. बारह हजार दूसरी कुमारिकाएं और उतनी ही और रात्रि में वंशी के शब्दों को सुनकर आ गईं।

37. उन स्त्रियों के चालीस यूथ (झुण्ड) थे। संयोग भाव से उनकी बारह हजार संख्या है।

38. प्रिय से समागम के लिए योग माया ने इनके वेश की रचना की। उनके आभूषण, माला, वस्त्र सभी अलौकिक थे।

39. उनके एक जैसे वेश, आभूषण और अवस्था थी। समान रस होकर कृष्ण के निकट आईं।

40. क्रीड़ा करते हुए भी वेद की स्थिति के लिए समाहित रहे और वाणी से मर्यादा का कथन किया। कारण को उदय करने वाली वाणी थी।

Nijanand App

न निषिद्धाः स्वरूपेण स्वरूपं वागगोचरम्।
रसभोक्तृरसात्मत्वं विरुध्येतान्यथा प्रिये॥४१॥

श्रीकृष्ण उवाच

किमर्थमागताः सर्वाः मिलिताश्च परस्परं।
रात्र्यामघटमानं तु वनेष्वागमनं स्त्रियः॥४२॥
स्त्रीधर्मं सहसा हित्वा भर्तृसेवामयं शुभम्।
ऐहिकं पारलौकिक्यं स्त्रियो नाशयति ध्रुवम्॥४३॥
येन संतुष्यते भर्त्ता स धर्म उचितः स्त्रियः।
तं विहाय ध्रुवं नारी पतत्येव न संशयः॥४४॥
तस्माद्व्रजं स्त्रियो यात मदुक्त्या यन्त्रिताशयाः।
गोप्यस्तद्वाक्यमाकर्ण्य तीक्ष्णं हालाहलोपमम्॥४५॥
किं वज्रनिर्घातहता इव पेतुः क्षितेस्तले॥४६॥

इति श्रीमाहेश्वरतन्त्रे गुप्तसारे शिवोमासंवादे त्रयोदशं पटलम॥१३॥

चतुर्दशं पटलम्

पार्वत्युवाच

देवेश परमेशान धूर्जटि नीललोहित।
ततः किमभवत्तत्र तन्मे ब्रूहि सदाशिव॥१॥

शिव उवाच

रूक्षं वचनमाश्रुत्य सहसा जातसम्भ्रमाः।
गतप्राणा इवासंस्ताः प्राणरूपी प्रियोभवत्॥२॥
दुःखाकुला रुद्धवाचो निरुछ्वासा व्रजस्त्रियः।
अश्रूण्यमुञ्चन्नेत्रेभ्यस्तापेनोष्णतराणि च॥३॥
अब्रुवन् धैर्यमालम्ब्य तामस्यो विरहातुराः।
किमेवं भाषसे कृष्ण विचाररहितं वचः॥४॥
अविचारितवक्तारो लोके मूर्खा इति स्थिताः।
तस्माद्विचार्य वक्तव्यं सर्वज्ञोसि यतः स्वयम्॥५॥
वयं गोप्यो भवद्दास्यस्त्वच्चित्तास्त्वत्परायणाः।
त्वत्प्राणास्त्वन्मयाः कृष्ण नान्यत्पश्यामि किञ्चन॥६॥
नास्माकं पतयः पुत्रा भ्रातरो न च बान्धवाः।
वयं त्वदेकशरणाः त्वन्यस्तात्मकलेवराः॥७॥

Nijanand App

41. स्वरूप ने निषेध नहीं किया। स्वरूप वाणी का अगोचर था। हे प्रिये (पार्वती)! अन्यथा रसभोक्ता रस स्वरूप है, यह कहना विरुद्ध हो जाता।

श्रीकृष्ण बोले—

42. तुम सब लोग एक साथ इकट्ठा होकर किसलिए आई हो? रात्रि में वन में स्त्रियों का आना अनुचित है।

43. स्त्रियों का धर्म पति सेवा होता है। उस शुभ कर्म को जो स्त्री सहसा त्याग देती है वह निश्चय ही अपने इह लोक और पर लोक को खो देती है।

44. जिससे पति सन्तुष्ट हो, वही स्त्री का उचित धर्म है। उस धर्म को छोड़ने वाली स्त्री अवश्य ही पतित हो जाती है।

45. हमारी उक्ति से बंधी हुई चित्त होकर ऐ स्त्रियो! तुम ब्रज लौट जाओ। तीक्ष्ण हलाहल के समान वचनों को सुनकर गोपियां

46. वज्र के आघात के समान हत हुई पृथ्वी पर गिर पड़ीं।

गुप्तसार माहेश्वरतन्त्र के उत्तरखण्ड के शिव-पार्वती संवाद का तेरहवां अध्याय समाप्त हुआ।

चौदहवां अध्याय

पार्वती ने कहा—

1. हे देवेश! परमेशान! धूर्जटे! नील लोहित! भगवन! सदाशिव! उसके बाद क्या हुआ, यह बतलाने की कृपा करें।

2. श्रीकृष्ण के रूखे वचनों को सुनकर चकित होकर वे गोपियां प्राण रहित के समान हो गईं और प्रिय की प्राणरूपा हो गईं।

3. दु:ख से व्याकुल रुंधी हुई वाणी, श्वास रहित ब्रज की स्त्रियां, सन्ताप के कारण गर्म-गर्म आंसू बहाने लगीं।

4. विरह कातर तामसी सखियां धैर्य धारण करके बोलीं, हे कृष्ण! इस प्रकार विचार रहित वचन आप क्यों कह रहे हैं?

5. जो बिना विचारे बोलते हैं, संसार में वे मूर्ख कहे जाते हैं। इसलिए विचार करके ही कुछ कहना चाहिए। आप तो स्वयं सर्वज्ञ हैं।

6. हम गोपियां आपकी दासी हैं। आप में ही हमारा मन लगा है। प्राण तुम्हारे हैं, तुम में लगे हैं हम और कुछ नहीं देखती हैं।

7. न तो हमारे पति हैं, न पुत्र, न भाई, न बन्धु। आप ही हमारे एकमात्र शरण हैं। अपनी आत्मा और शरीर हमने आप में ही लगा दिया है।

Nijanand App

अहं स्त्री मत्पतिश्चायमिति यासां मतिः स्थिता।
तासामयं परो धर्मो यस्त्वया चोपदिश्यते॥८॥
यस्याधिकारो यद्धर्मे त्यजेत्तं न कदाचन।
नोचेत्सन्न्यासिनः कुर्युः कथं न गृहिवादिनाम्॥९॥
देहातीता गृहातीता लोकातीता वयं प्रभो।
त्वामेव शरणं प्राप्ताः कथमर्हन्ति लौकिकम्॥१०॥
विकारेऽहमिति भ्रान्तिः पुत्रदारधनादिषु।
तदध्यासवशात्तेषां देहधर्माधिकारिता॥११॥
प्रवृत्ते ह्यधिकारे तु धर्मं लुम्पति यः खलः।
पतत्येव न सन्देहो यतः स वासनान्तरे॥१२॥
अहं ममायमित्येषः पतिपुत्रादिषु स्थितः।
समूलमाग्रहो नष्टः कथं तत्र नियुञ्जसि॥१३॥
न प्रेम्णि बाधकं किञ्चित्प्रेमस्थितिरलौकिकी।
वयं प्रेमसमाकृष्टा निशि प्राप्ता वनान्तरे॥१४॥
अविद्वानिव तद्विद्वानपि त्वं किं प्रजल्पसि।
लोकवेदपथांस्त्यक्त्वा समूलान्विपिनान्तरे॥१५॥
निशि स्त्रियो वयं प्राप्तास्ता अपि त्यजता त्वया।
विनाशिता प्रेमरीतिः कृतघ्नत्वमुपार्जितम्॥१६॥
वयं तु न गमिष्यामस्त्यक्तसर्वपरिग्रहाः।
विरहाग्नौ तनूर्हुत्वा त्वामेष्यामो न संशयः॥१७॥
तस्माद्भजस्व गोविन्द नोपेक्ष्या गोपिका वयम्।
त्यजाग्रहमिमं कृष्ण प्रेमरीतिं समाश्रय॥१८॥
इत्यावेदितमाकर्ण्य गोपिकानां यथार्थतः।
वचःपीयूषधाराभिस्तासामाह्लादयन्मनः॥१९॥
उवाच वचनं कृष्णो मधुरस्मितवीक्षणः।
धन्यातिधन्या भो गोप्यो यूयं मत्प्राणवल्लभाः॥२०॥
न निवार्याः कदाचिद्वा भवत्प्राणमयेन मे।
निषेधो वाग्विलासोत्थो मयि युज्यो न कर्हिचित्॥२१॥
जानेऽहं भवतीः प्रेमबद्धा एव मयि स्फुटम्।
त्वद्वचः श्रोतुकामत्वान्निषेधोयं न वास्तवः॥२२॥
जिज्ञासूनामसन्दिग्धो रूपितो धर्मनिर्णयः।
पतिसेवापरं शास्त्रं मामेव पतिरूपिणम्॥२३॥

Nijanand App

8. मैं स्त्री हूं और यह मेरा पति है, ऐसी जिनकी बुद्धि स्थित होती है, उनका वह परम धर्म है जो आपने उपदेश दिया।

9. जिसका जिस धर्म में अधिकार है उसको उसे कभी नहीं त्यागना चाहिए। नहीं तो संन्यासी लोग गृहस्थों का धर्म क्यों न पालन करने लगते।

10. हे स्वामी! हम देह से ऊपर, घर से ऊपर, लोक से ऊपर उठ गई हैं। आप ही की शरण प्राप्त हैं। लौकिक धर्म के हम योग्य नहीं।

11. विकार में पुत्र, स्त्री, धन आदि में जो अहं की भ्रान्ति होती है, वह मिथ्या ज्ञान के नाते है। इसी कारण उनको देह धर्म का अधिकार प्राप्त होता है।

12. अधिकार होने पर जो दुष्ट धर्म का लोप करता है, निःसन्देह पतित हो जाता है क्योंकि वह वासना के अन्दर होता है।

13. पति, पुत्र, आदि में, यह मैं हूं, यह मेरा है, इस प्रकार का हमारा आग्रह जड़ सहित नष्ट हो चुका है। आप मुझे उसमें क्यों लगा रहे हैं?

14. प्रेम में कोई चीज बाधक नहीं है। प्रेम की स्थिति लोक से ऊपर है। हम लोग प्रेम से आकृष्ट होकर रात्रि में इस वन में आई हैं।

15. विद्वान् होते हुए भी अविद्वान की तरह आप क्यों बक रहे हैं। लोक और वेद दोनों के मार्गों को छोड़कर इस जंगल के मध्य में

16. रात्रि में हम स्त्रियां उपस्थित हुई हैं। उन सबको त्याग करते हुए आपने प्रेम की रीति नष्ट कर दी और कृतघ्नता अर्जित कर ली।

17. हम सब कुछ त्याग चुकी हैं। अब हम लौट कर नहीं जाएंगी। आप ऐसे स्वीकार नहीं करेंगे तो विरह की आग में शरीर भस्म करके आपके पास पहुंच जाएंगी।

18. इसलिए हे गोविन्द! हम लोगों को स्वीकार करो। हम उपेक्षा योग्य नहीं हैं। आग्रह छोड़ो, प्रेम रीति का आश्रय लो।

19. इस प्रकार उन गोपिकाओं के यथार्थ कथन को सुनकर वाणी रूपी अमृत की धारा से उनके मन को आह्लादित करते हुए,

20. मधुर मुस्कान से कृष्ण ने कहा, गोपियो! तुम हमारी प्राण बल्लभा हो, तुम सभी अति धन्य हो।

21. तुम्हारा प्राणरूप मैं हूं। मुझे तुमको मना नहीं करना चाहिए। वाणी के विलास से उत्पन्न निषेध मेरे में प्रयोग करने योग्य कभी नहीं है।

22. मैं स्पष्ट जानता हूं कि तुम सब प्रेमबद्ध हो। यह मेरा निषेध वास्तविक नहीं है। केवल तुम्हारे वचनों को सुनने की कामना से मैंने यह कहा है।

23. जो जिज्ञासु होते हैं, उनके लिए मैंने निःसन्देह धर्म निर्णय कहा है। जो शास्त्र पति सेवा परायण होने की बात करता है, वह पति रूप में मुझे ही

Nijanand App

निरूपयत्यलब्धत्वाद्भावनामात्रमन्यतः।
भवतीनां पतिस्तस्मादहमेव सनातनः॥२४॥
इत्युक्त्वा मध्यगस्तासां रेमे रामाभिरन्वितः।
पृथगालिंग्य ताः सर्वा बिम्बाधरसुधां पपौ॥२५॥
हासयन प्रहसन्कृष्णो नानाक्रीडाकुतूहलैः।
नीवीराकर्षयन्कासां कासामास्यं पिबन्नपि॥२६॥
आलिङ्गतीर्विहायान्या अन्यां आलिङ्गयन्नपि।
पिबन्नधरपीयूषं कासाञ्चिद्द्विरादशत्॥२७॥
सीत्कृतान्यसृजन् गोप्यः अर्द्धमीलितलोचनाः।
एवं रसवशः कृष्णो रेमे तन्मण्डले प्रभुः॥२८॥
अत्यातुरमिति ज्ञात्वा कृष्णं स्ववशमागतम्।
मेनिरे गोपिकाः सर्वाः स भावोपि रासात्मकः॥२९॥
रसः परिणतः सोयं मानरूपेण निश्चितम्।
एषा श्रृङ्गारमर्य्यादा रसशास्त्रनिरूपिता॥३०॥
कारणं श्रृणु तत्रापि यत्र वाच्यं कथञ्चन।
अक्षरस्य दिदृक्षाय या पूरणार्थमपेक्षिता॥३१॥
अन्तर्द्धानं च तत्रापि मानो हेतुतयोद्गतः।
अथ मानवतीर्वीक्ष्य तासामेव हृदि प्रभुः।
रसरूपो विलीनोभून्मानमुत्सादयन्निव॥३२॥
अक्षरस्य मनोवृत्तिरावेशरहिता पुनः।
स्थानं प्राप्ता रासलीलावासनावासिता सती॥३३॥
तया विहितविज्ञानो मण्डलस्थमतर्कयत्।
एवं ददर्श भगवान् रासक्रीडामहोदयम्॥३४॥
इति श्रीमाहेश्वरतन्त्रे शिवपार्वतीसंवादे चतुर्दशं पटलम्॥१४॥

पञ्चदशं पटलम्

शिव उवाच

अन्तर्भूते परानन्दे द्विधा च हृदि मण्डले।
अदृष्ट्वा निजनाथं तमतप्यन्विरहातुराः॥१॥
मनस्यानन्दसम्पूर्णे लतावृक्षादिषु स्फुटम्।
चैतन्यस्फुर्त्तिरभवत्ततोऽपृच्छंस्तरूँल्लताः॥२॥

Nijanand App

24. दूसरी जगह भावना मात्र के न मिलने से निरूपित करता है। इसलिए आप लोगों का सनातन पति मैं ही हूं।

25. ऐसा कह करके उनके मध्य में खड़े होकर उनका अलग-अलग आलिंगन कर बिम्बाधर का पान किया।

26. अनेक क्रीड़ाओं के कौतूहल से हंसते हुए और हंसाते हुए कुछ की नीवी खींचते और कुछ का मुखामृत पान करते हुए,

27. एक आलिंगन करती हुई को छोड़कर दूसरों का आलिंगन करते हुए, अधरामृत का पान करते हुए, कुछ को दांतों से काट लिया।

28. सीत्कार करने पर उन्हें छोड़ दिया। गोपियों के नेत्र आधे बन्द थे। इस प्रकार रसाधीन कृष्ण ने उनके मण्डल में क्रीड़ाएं कीं।

29. गोपिकाओं ने कृष्ण को अति आतुर और अपने वश में आए जान लिया। वह भाव भी गोपियों का रसात्मक ही था।

30. रस ही मान के रूप में परिणत हो गया था। रस से ही मान का उदय होता है, यह शास्त्र में निरूपित श्रृंगार की मर्यादा है।

31. इस विषय में भी कारण जिसे किसी प्रकार कहना नहीं चाहिए, सुनो। अक्षर ब्रह्म की देखने की इच्छा को पूर्ण करने के लिए

32. उसमें भी अन्तर्ध्यान होना और हेतु रूप में मान का उदय होना आवश्यक था। उनको मानवती देखकर मान भंग करते हुए की तरह रस रूप कृष्ण विलीन हो गए।

33. अक्षर ब्रह्म की मनोवृत्ति आवेशरहित होकर रस लीला की वासना से वासित होती हुई अपने स्थान को प्राप्त हुई।

34. उस लीला के द्वारा विज्ञान के होने से अपने को मण्डल में स्थित ही माना। इस प्रकार भगवान् (अक्षर ब्रह्म) महोदय को रास क्रीड़ा दिखाई।

माहेश्वर तन्त्र में शिव-पार्वती के सम्वाद का चौदहवां अध्याय समाप्त हुआ।

पन्द्रहवां अध्याय

शिव ने कहा—

1. परानन्द रूप कृष्ण के हृदय तथा मण्डल में दो प्रकार से अन्तर्भूत होने पर अपने नाथ को न देखकर विरह से व्याकुल उन स्त्रियों ने

2. आनन्द सम्पूर्ण मन में लता वृक्षादि में चैतन्य की स्फूर्ति हुई और इसलिए तरुओं और लताओं से उनके सम्बन्ध में पूछा।

Nijanand App

यो नादादुत्तरं तं तं निनिन्दुर्धृतनिश्चयाः।
कृष्णावेशात्कृष्णभावं गताः कृष्णोहमूचिरे॥३॥
एवं नानाविधा लीलाः कुर्वन्त्यो विरहातुराः।
तामसीशिक्षया सर्वा एकीभूत्वाथ यूथशः॥४॥
व्रजस्य लीलानुकृतिं चक्रुस्तत्प्राप्तिसाधनम्।
पूतनावधमारभ्य यावद्दाम्ना निबन्धनम्॥५॥
व्रजलीला विधेर्भाविश्चित्तगो भूत्परात्मनः।
नित्याखण्डा व्रजस्येयं लीला वेदेनुवर्णिता॥६॥
पुनरक्षरचित्तवृत्तिराविष्टाविर्बभौ ततः।
सखीनां मण्डलादेव विस्मितोदारमुखाम्बुजः॥७॥
तडित्प्रकाशवसनस्तारहारविराजितः।
स्फुरत्कटाक्षमालाभिः सुधाभिरिव शीलयन्॥८॥
तं दृष्ट्वा विरहाक्रान्ता दुःखमात्यन्तिकं गताः।
पुनरानन्दसन्दोहमग्ना एव हि केवलम्॥९॥
रुदन्तीनां मुखान्यश्रुप्रवाहकलुषान्यपि।
स्ववस्त्राञ्चलमादाय करेणामृजदच्युतः॥१०॥
आलिङ्गनानि चुम्बानि नानाभावनिदर्शनम्।
चकार भगवांस्ताभी रसलीलामहोदयम्॥११॥
सखीभिर्विरहे दुःखमनुभूतमभूच्च यत्॥
तच्चानन्दसुधाम्भोधौ विलापितमभूदहो॥१२॥
जलक्रीडां ततश्चक्रे यमुनाया जले शुचौ।
तीरे स्थित्वा पुनर्गोप्यो विवादांश्चक्रिरे ततः॥१३॥
समाहिता भगवता परमानन्दसम्प्लुताः।
इत्येषा रासलीलायाः स्थितिः प्रोक्ता तवानघे॥१४॥

शिव उवाच

अवशिष्टस्य कामस्य सखीनां पूरणाय च।
आविश्चकार कालमायां पुनस्तां पुरुषोत्तमः॥१५॥
अपश्यदक्षरः स्वप्नं कालमायाविजृम्भितम्।
प्रातर्नन्दगृहे सुप्तः प्रबुद्धोस्मीति निश्चितम्॥१६॥
सखीश्च ददृशे सर्वा गोपगेहेभ्य उत्थिताः।
नमूलावेशतः किञ्चित् कूटस्थस्यैव वासना॥१७॥

Nijanand App

3. जिस वृक्ष ने उत्तर नहीं दिया उसकी निन्दा की। कृष्णमय होने के कारण कुछ ने कहा हम ही कृष्ण हैं।

4. इस प्रकार नाना प्रकार की लीलाएं करती हुई विरहातुर तामसी सखियों की शिक्षा से इकट्ठी होकर

5. श्रीकृष्ण की प्राप्ति के लिए उनकी लीला का अनुकरण (स्वांग) पूतना वध से लेकर रस्सी से बांधने तक किया।

6. व्रज लीला की विधि का यह भाव परमात्मा के हृदय में था। नित्य अखण्ड व्रज की यह लीला वेद में वर्णित है।

7. पुनः अक्षर की चित्तवृत्ति सखी मण्डल से प्रकट हुई।

8. विद्युत के प्रकाश के समान चमकीले वस्त्र, चंचल कटाक्षों की मालाओं से सुधा पूरित सुशोभित भगवान को देखा।

9. विरह से आक्रान्त स्त्रियों को उनको देखकर दुःख हुआ। पुनः वे आनन्द समूह में मग्न हो गईं।

10. रोती हुई उनके अश्रु प्रवाह से मैले उनके मुखों को अपने वस्त्र के आंचल से पोंछ दिया।

11. आलिंगन, चुम्बन आदि नाना भावों को दिखाते हुए उन लोगों के साथ रास लीला की।

12. विरह में सखियों ने जो दुःख अनुभव किया था वह आनन्द सागर में डूब गया।

13. यमुना के पवित्र जल में जल क्रीड़ा करने लगे। पुनः कुछ गोपियां तट पर खड़ी होकर विवाद करने लगीं।

14. परमानन्द से परिपूर्ण भगवान द्वारा की गई रास लीला की स्थिति का, हे निष्पाप पार्वती! मैंने वर्णन किया।

शिव बोले—

15. सखियों के अवशिष्ट इच्छा की पूर्ति के लिए पुरुषोत्तम ने पुनः उस काल माया को प्रकट किया।

16. अक्षर ब्रह्म ने काल माया द्वारा फैलाई गई स्वप्नावस्था को देखा और यह अनुभव किया कि नन्द के घर में सोकर प्रातः जगा हूं।

17. और देखा कि सभी सखियां गोपों के घर से उठ पड़ी हैं। यह मूल के आवेश से नहीं अपितु कूटस्थ की ही वासनाएं

Nijanand App

उज्जृम्भिता बहुविधा तदद्भुतमिवाभवत्।
कुमार्य्यः श्रुतयश्चापि कालमायाप्रपञ्चगाः॥१८॥
अत्युग्रविरहावेशादुद्धवस्यापि शिक्षया।
कूटस्थान्तर्हृदि स्फुर्जद्व्रजलीलारसोदधौ॥१९॥
निम्नगा इव तिष्ठन्ति तच्चित्तस्य रसस्पृशः।
अथ कंससमादिष्टो ह्यक्रूरो गोकुलं गतः॥२०॥
तेन साकं गते कृष्णे गोपिका विरहातुराः।
दुःखेन निन्युर्दिवसान् तत्कथा ख्यापनादिभिः॥२१॥
हत्वा कंसं मल्लयुद्धे चाणूरं मुष्टिकं तथा।
बद्धकच्छोल्लसद्धूलिधूसरश्चासृगांकितः॥२२॥
पश्यतां सर्वलोकानां प्राप्तः कारागृहं गृहम्।
देवकी वसुदेवश्च यत्रैवासतुरुत्सुकौ॥२३॥
ववन्दे चरणौ मातुः पितुः प्रणयविह्वलः।
बद्धाञ्जलिर्जगादेदं क्षम्यतामिति मां प्रति॥२४॥
प्रसाद्य पितरं कृष्णो मातरं च विशेषतः।
यमुनायां ततः स्नात्वा शुचिदिव्याम्बरं दधौ॥२५॥
जरासन्धादिकान् हत्वा समुद्वाह्य सुलोचनाः।
षोडशैव सहस्राणि शतमष्टोत्तरं तथा॥२६॥
हत्वासुरभरं पृथ्व्याः यादवैरूपबृंहितम्।
भारं जिहीर्षुर्भगवान् कुले शापमपातयत्॥२७॥
शापदग्धधियः सर्वे यादवाश्च परस्परम्।
विनेशुर्भगवांस्तत्र प्रभासे रहसि स्थितः॥२८॥
चतुर्भुजः कञ्जपलाशलोचनःपीताम्बरः कौस्तुभशोभिताकृतिः।
स्वपाञ्चजन्याम्बुजचक्रसद्गदः प्रगल्भसङ्गीतगुणो बभौ हरिः॥२९॥
व्याधेन शरसंस्पृष्टः पादे मृगविशङ्कितः।
वैकुण्ठमगमत्साक्षाद्धरिः कमललोचनः॥३०॥
कालमायागृहीताङ्गा मूलसख्यस्तुयाः स्थिताः।
ता अपि स्वप्नलीलायां विचित्राकृतयोऽभवन्॥३१॥
तद्वासनास्तासु लीना भविष्यन्ति यदा प्रिये।
बोधमाप्स्यति कूटस्थः प्रलयोयं महान् शिवे॥३२॥
मोहनाशे भविष्यन्ति सर्वे ब्रह्ममया इमे।
इत्येतत्ते समाख्यातं यत्पृष्टोहं त्वया शिवे॥३३॥

Nijanand App

18. अनेक रूपों में प्रकट हुई हैं। यह अद्भुत-सा हो गया। कुमारिकाएं और वेद की श्रुतियां काल माया के प्रपंच को पहुंच गईं।

19. अति उग्र विरह के आवेश से और उद्धव की शिक्षा पर भी कूटस्थ के हृदय में उदय होते हुए ब्रज लीला सागर में

20. उनके चित्त रस को स्पर्श करती हुई नदियों के समान रहती हैं। इसके बाद कंस के आदेश पर अक्रूर गोकुल आए।

21. उनके साथ कृष्ण के चले जाने पर विरहातुर गोपिकाएं उनकी कथाएं कहती हुई दुःख से दिन बिताने लगीं।

22. कंस को मारकर और कुश्ती में चाणूर और मुष्टिक को मार कर वटि बांधे हुए, धूल-धूसरित, रक्त से चिन्हित

23. सब लोगों को देखते-देखते कारागार पहुंच गए। जहां पर देवकी और वसुदेव उत्सुक बैठे थे।

24. माता और पिता के प्रेम में विह्वल होकर उनके चरणों की वन्दना की। हाथ जोड़कर कहा कि मुझे क्षमा कीजिए।

25. पिता को, विशेष रूप से माता को प्रसन्न कर यमुना में स्नान कर दिव्य वस्त्र धारण किया।

26. जरासंध आदि राजाओं को मारकर सोलह हजार एक सौ आठ स्त्रियों के साथ विवाह किया।

27. इस प्रकार पृथ्वी पर जो असुरों का भार था उसको उतार कर और यादवों के रूप में जो भार था उसको हरने की इच्छा से भगवान ने अपने कुल पर श्राप डलवा दिया।

28. श्राप से दग्ध बुद्धि वाले वह सब यादव जबकि कृष्ण प्रभास (द्वारिका के पास एक तीर्थ-स्थान) में एकान्त में बैठे थे उसी समय यादव परस्पर युद्ध करके नष्ट हो गए।

29. चार भुजा, कमल के पंखुड़ियों के समान नेत्र, पीताम्बर, कौस्तुभ मणि से शोभित, शंख, चक्र, गदा, पद्म धारण किए हुए भगवान सुशोभित हो रहे थे।

30. उसी समय एक बहेलिए ने मृग समझ कर पैर में वाण मार दिया और कमल लोचन हरि बैंकुण्ठ चले गए।

31. काल माया से जिनके अंग ग्रहण कर लिए गए हैं ऐसी जो मूल सखियां थीं वे भी स्वप्न लीला में विचित्र आकृति वाली हो गईं।

32. हे प्रिये (पार्वती)! वह वासनाएं जब उनमें लीन होंगी तो कूटस्थ अक्षर ब्रह्म को भी बोध प्राप्त होगा। यह महान् प्रलय होगा।

33. मोह के नाश होने पर यह सब ब्रह्म मय हो जाएंगे। हे शिवे! तुमने जो पूछा था, वह मैंने बता दिया।

Nijanand App

गुह्याद्गुह्यतरं शास्त्रमिदमुक्तं मयानघे।
गोपितव्यं प्रयत्नेन जननीजारगर्भवत्।।३४।।
इति श्रीमाहेश्वरतन्त्रे शिवपार्वतीसंवादे पञ्चदशं पटलम् ।।१५।।

षोडशं पटलम्

श्रीदेव्युवाच

देवेश भगवन् शम्भो यत्त्वयोक्तमलौकिकम्।
तच्छ्रुत्वा हृदयं मेद्य मज्जते विस्मयोदधौ।।१।।
तत्रोक्तं यत्त्वया देव प्रिया भगवतस्तु याः।
कामशेषानुभूत्यर्थमिहासन्निति शङ्कर।।२।।
अवशिष्टः कथं कामोऽनुभूतस्ताभिरीश्वर।
कथं वा लक्षयेयुस्ता लक्षणैरिति तद्वद।।३।।
मर्त्यलोकं गतानां च कृष्णस्त्रीणां महेश्वर।
गुरुभावं गतोसि त्वं प्रोक्तवानसि यद्रहः।।४।।
योगिनो ज्ञानिनो भक्ताः कर्मनिष्ठास्तपोधनाः।
तेषां गुरुस्त्वमाद्यो हि तत्तत्त्वोपदेशकः।।५।।
त्वामनादृत्य ये पापाः प्रवर्तन्ते स्वकर्मसु।
न तेषां जायते सिद्धिः कोटिकल्पशतैरपि।।६।।
त्वमेव सर्वधर्माणां कर्ता वक्ताभिरक्षिता।
त्वद्भक्त्यैव हि संसिद्धिर्नृणां भवति कर्मजा।।७।।
त्वदुक्त्या बोधमाप्स्यन्ति भूतले भगवत्प्रियाः।
मर्त्यदेहगतानां तु गुरुभूतोसि शङ्कर।।८।।
तस्मादवश्यमेवैतदुपदेष्टव्यमीश्वर।
मय्यपि कृपया नूनं रहस्यमिदमद्भुतम्।।९।।

शिव उवाच

धन्यासि देवदेवेशि ललितं ते परं वचः।
श्रुत्वा प्रसन्नहृदयः कथयिष्ये कथां शुभाम्।।१०।।
अहं लोकगुरुः साक्षात् धर्मवक्ता जगत्त्रये।
तं मां निन्दन्ति ये मूढास्तेषां सिद्धिः कथं भवेत्।।११।।
नानादैवतसद्भक्त्या नानाधर्मैर्व्यवस्थिताः।।
तत्र तत्रोपदेष्टाऽहं तं मां निन्दन्ति पामराः।।१२।।

Nijanand App

34. हे अनघे! गोपनीय से भी गोपनीय शास्त्र है जो मैंने तुम्हें बताया है। इसे माता के जार गर्भ के समान गुप्त रखने का प्रयत्न करना चाहिए।

माहेश्वरतन्त्र के शिव-पार्वती संवाद का पन्द्रहवां अध्याय समाप्त हुआ।

सोलहवां अध्याय

देवी ने कहा—

1. हे शम्भो! आपने जो अलौकिक कथन किया इसको सुनकर मेरा हृदय विस्मय के समुद्र में डूब रहा है।

2. उसमें भी आपने जो कहा कि भगवान की जो प्रियाएं थीं, वह अवशिष्ट काम की अनुभूति के लिए यहां पर प्रकट हुई थीं।

3. हे ईश्वर! उन लोगों ने अवशिष्ट काम का किस प्रकार अनुभव किया और किन लक्षणों से उनको कैसे जाना जाय, यह बताइए।

4. हे माहेश्वर! मृत्यु लोक में जन्म लेने वाली कृष्ण की स्त्रियों के आप गुरु बन गए थे यह रहस्य भी आपने कहा है।

5. ज्ञानी, योगी, भक्त, कर्मनिष्ठ, तपस्वियों के उन तत्वों के उपदेशक, आदि गुरु आप हैं।

6. आपको अनादर करके जो पापी अपने कर्म में लगते हैं उनको सैकड़ों करोड़ों कल्पों में भी सिद्धि नहीं मिलती।

7. आप ही सब धर्मों के कर्ता, वक्ता एवं रक्षक हैं। मनुष्यों की कर्म से होने वाली सिद्धि आपकी भक्ति से ही होती है।

8. भगवान के प्रिय आपकी उक्ति से ही ज्ञान प्राप्त करते हैं और मृत्यु लोक में जन्म लेने वालों के लिए आप गुरु हैं ही।

9. इसलिए आपको अवश्य उपदेश करना चाहिए। यह अद्भुत रहस्य है, मेरे ऊपर कृपा करके इसका कथन करें।

शिव बोले—

10. हे देवि! देवेशि! आप धन्य हैं। आपके वचन बहुत ही सुन्दर हैं। उनको सुनकर प्रसन्न हृदय होकर शुभ कथा मैं कहूंगा।

11. मैं तीनों लोकों में धर्म वक्ता साक्षात् गुरु हूं। जो मूढ़ मेरी निन्दा करते हैं उनको सिद्धि कैसे प्राप्त हो सकती है?

12. अनेक देवताओं की भक्ति करके, अनेक धर्मों में लगे हुए पामर (मूर्ख) लोग मेरी निन्दा करते हैं और वहां मैं उनको उपदेश देता हूं।

Nijanand App

किं न कुर्वन्ति ते मूढाः यतो माया महेशितुः।
बलीयसी विमोहार्हान् विमोहयति नापरान्॥१३॥
भविता फलरूपश्च येषां धर्मः सनातनः।
ते न निन्दन्ति देवांश्च धर्मान्वेदान्मतानि च॥१४॥
पाखण्डवादनिरता वेदधर्मविनिन्दकाः।
नरकं प्रतिपद्यन्ते न निवर्त्तन्ति कर्हिचित्॥१५॥
इदमेव लक्षणं देवि मर्त्यलोकगतासु तत्।
अक्षरः परमात्मा च स्वभिन्नौ पुरुषावुभौ॥१६॥
शब्दब्रह्म परब्रह्म ह्येतदप्यद्वयं प्रिये।
शब्दब्रह्मोदिः धर्माः कर्मज्ञानादयः प्रिये॥१७॥
ते सर्वे स्वामबोधाय यदि कामविवर्जिताः।
धर्मानुष्ठातृनिन्दाभिर्धर्मा एव विनिन्दिताः॥१८॥
तत्र धर्मस्य निन्दाभिः शब्दब्रह्मैव निन्दितम्।
तन्निन्दया परब्रह्म अक्षरः स्याद्विगर्हितम्॥१९॥
गर्हिते ह्यक्षरे देवि गर्हितः पुरुषोत्तमः।
स्वभर्त्तुर्निन्दया देवि तत्प्रियाणां कुतो गतिः॥२०॥
न निन्देन्मनसा वाचा धर्मान्वेदपथान् शिवान्।
ब्राह्मणान्कर्मनिष्ठांश्च हविः कामदुघाश्च गाः॥२१॥
तस्मादित्यादिकं सर्वं मनसा वेद्य तत्वतः।
निन्दाद्वेषादिरहितो भजते पुरुषोत्तमं॥२२॥
प्रतिविंद्याद्देवदेवेशि कृष्णस्येव प्रियेति ताम्।
सर्वमक्षरसम्भूतं विदित्वानन्यभावतः॥२३॥
प्रणमेन्मनसा वाचा तमाहुः कृष्णवल्लभा।
पातिव्रत्यमिदं देवि तदनन्यविभावनम्॥२४॥
स एवेदं बभूवाग्रे पश्चादप्येनमेव सः।
क एवान्योस्ति देवेशि तत्त्वदृष्ट्यावलोकने॥२५॥
तस्मादिदं पातिव्रत्यं कृष्णस्त्रीणां मयोदितं।
पातिव्रत्यपरिज्ञानं यो न जानाति केवलं॥२६॥
न तस्मिन्वासनालेशो निश्चितं सुरवन्दिते।
पतिव्रताधर्मिमिमं सद्गुरोः शास्त्रतोपि वा॥२७॥
निशम्याप्नोति तन्निष्ठां तमाहुः कृष्णवल्लभा।
केचिद्वदन्ति वै मूढाः पातिव्रत्यमितोन्यथा॥२८॥

Nijanand App

13. महान् ईश की माया के वश होकर मूढ़ लोग क्या नहीं करते हैं। वह बलवती माया इससे मोहित होने योग्य लोगों को मोहित करती है।

14. जिनका सनातन धर्म फल देने वाला होता है, वे देवताओं, धर्मों, वेदों और मतों की निन्दा नहीं करते हैं।

15. पाखण्ड वाद में लगे हुए वेद धर्म के निन्दक नरक जाते हैं और वहां से कभी भी बाहर नहीं आते हैं।

16. मृत्यु लोक में आई हुई उन गोपिकाओं का यही लक्षण है। अक्षर और परमात्मा दोनों ही पुरुष स्वयं अभिन्न हैं।

17. शब्द ब्रह्म और पर ब्रह्म यह भी दो नहीं हैं। शब्द ब्रह्म में कहे गए धर्म, कर्म, ज्ञान, आदि हैं।

18. वे सब यदि कामना रहित हैं तो अपने बोध के लिए होते हैं। धर्म का अनुष्ठान करने वाले पुरुषों की निन्दा करने से धर्म ही निन्दित होते हैं।

19. धर्म की निन्दा से शब्द ब्रह्म ही निन्दित होता है। शब्द ब्रह्म की निन्दा से अक्षर ब्रह्म निन्दित होता है।

20. और अक्षर के निन्दित होने पर पुरुषोत्तम निन्दित होता है। अपने स्वामी की निन्दा से उनके प्रियों की सद्गति कैसे हो सकती है?

21. धर्म, वेद के कल्याणकारी मार्गों, कर्मनिष्ठ, ब्राह्मण, हवि और कामनाएं पूर्ण करने वाली गायों की मन और वाणी से निन्दा नहीं करनी चाहिए।

22. इसलिए उपरोक्त सब यथार्थ रूप से समझकर निन्दा और द्वेष आदि न करते हुए पुरुषोत्तम का भजन करना चाहिए।

23. हे देव देवेशि! जो ऐसा करती है उसको कृष्ण या प्रिया ही समझिए। अनन्य भाव से सारा जगत् अक्षर से उत्पन्न हुआ है, यह जानकर

24. जो मन और वाणी से प्रणाम करता है, उसे कृष्ण बल्लभा कहते हैं। हे देवि! यही पतिव्रत धर्म है। इससे भिन्न कोई पतिव्रत धर्म नहीं है।

25. वह ही सृष्टि के आदि में हुआ था और पश्चात् भी वही सृष्टि के रूप में रहेगा। तत्व दृष्टि से देखने पर अन्य कौन है?

26-28. इसलिए मैंने कृष्ण की स्त्रियों के पतिव्रत का वर्णन किया। जो पतिव्रत का ज्ञान नहीं रखता है, उसमें लेशमात्र भी वासना नहीं होती। जो इस पतिव्रत धर्म को सद्गुरु से या शास्त्र से प्राप्त करता है, उसे कृष्ण-निष्ठ कृष्ण प्रिया कहते हैं। कुछ मूढ़ लोग इससे भिन्न पतिव्रत धर्म बतलाते हैं।

Nijanand App

एक एव पतिः सेव्यो नान्यो मान्यः कदाचन।
अन्यस्य सेवया लोके योषित्सा पतिता भवेत्॥२९॥
पातिव्रत्यमिदं देवि लौकिकं न त्वलौकिकम्।
अनीश्वरः परिच्छिन्नः सदोषो लौकिकः पतिः॥३०॥
योषित्सापि तथा लोके पातिव्रत्यमतस्तथा।
ईश्वरस्तु विभुः साक्षाद्विश्वात्मा विश्वविग्रहः॥३१॥
स एव सर्वरूपैश्च नामभिः ख्यातिमागतः।
सर्वनामस्वरूपं च ज्ञात्वा ब्रह्म सनातनम्॥३२॥
दृष्ट्याऽविषमया देवि सर्वत्र परिपश्यति।
पातिव्रत्यमिदं भद्रे मयैतत्कथितं शुभम्॥३३॥
इत्येतन्निर्णयाज्ञानाद्विभ्रमन्ति विमोहिताः।
षट् दर्शनानि मेङ्गानि पादौ कुक्षी करौ शिरः॥३४॥
तेषु भेदं तु यः कुर्यान्मदङ्गच्छेदको हि सः॥
एवं पतिव्रताधर्मं सम्यक् ज्ञात्वा गुरोर्मुखात्॥३५॥
पतिं परिचरेद्यस्तु तमाहुः कृष्णवल्लभा।
श्रुत्वा कृष्णकथालापं यद्वपुः पुलकाङ्कितम्।
आनन्दाश्रुजलं नेत्रे तमाहुः कृष्णवल्लभाम्॥३६॥

श्री पार्वत्युवाच

कामसङ्कल्परहितं कर्म वर्णाश्रमोचितं।
कस्मात्करोति यस्येच्छा कामसङ्कल्पवर्जिता॥३७॥
अनुद्दिश्य फलं देव न बालोपि प्रवर्त्तते।
ब्रह्मसृष्टि गतो जीवः कस्माद्यर्थं प्रवर्तते॥३८॥
मोहसृष्टिसमुद्भूताः स्वर्णादिफलमोहिताः।
ते कर्मणि प्रवर्त्तन्ते न तच्चित्रं महेश्वर॥३९॥
कृष्णप्रियाः कृष्णरूपा वासनाभिः समागताः।
कथं ताः कर्मणि व्यर्थे नियोजयसि शङ्कर॥४०॥

शिव उवाच

अप्रबुद्धः प्रबुद्धो वा कर्म कुर्यात्सदाहितम्।
सकामं निन्दितं कर्म मुमुक्षुं प्रति मानिनि॥४१॥
क्रियावान् पुरुषः श्रेष्ठो भवाब्धिं तरते सुखम्।
क्रियाविरहिता लोके धर्मभ्रष्टा विभान्ति मे॥४२॥

Nijanand App

29. एकमात्र पति की सेवा करनी चाहिए, अन्य कभी भी मान्य नहीं है। अन्य की सेवा से स्त्री संसार में पतित हो जाती है।

30. हे देवि! यह पातिव्रत्य जिसका मैंने अभी वर्णन किया है, वह लौकिक है अलौकिक नहीं और यह उस पति के लिए व्रत है जो ईश्वर नहीं है। यह परिच्छिन्न है और सदोष है।

31. इस संसार में स्त्री भी ऐसी ही होती है और पतिव्रत भी ऐसा होता है। ईश्वर तो विभु, साक्षात् विश्वात्मा और विश्व विग्रह हैं।

32. वह सभी रूपों और नामों से विख्यात है। वह सनातन ब्रह्म सभी नाम और स्वरूप वाला है।

33. समान दृष्टि से वह सर्वत्र देखता है। हे भद्रे! मैंने इस पतिव्रत का कथन तुम्हारे लिए किया।

34. इस निर्णय को न जानकर, मोहित होकर लोग मोह में पड़ते हैं। जैसे पैर, कुक्षि, हाथ, सिर अंग होते हैं ऐसे ही षड् दर्शन मेरे अंग हैं।

35. जो इनमें भेद करता है वह मेरे अंगों को काटने वाला होता है। इस प्रकार गुरु के मुख से पतिव्रत धर्म को ठीक से जानकर

36. जो पति की परिचर्या करता/करती है, उसे कृष्ण बल्लभा कहते हैं। कृष्ण के सम्बन्ध की कथाओं और वार्ताओं को सुनकर जिसका शरीर रोमांच युक्त हो जाता है, नेत्र में आनन्द के आंसू आ जाते हैं, उसे कृष्ण बल्लभा कहते हैं।

पार्वती ने कहा—

37. काम के संकल्प से रहित कर्म वर्णाश्रम के लिए उचित हैं। जिसकी इच्छा काम संकल्प से रहित है, वह कर्म क्यों करता है?

38. हे देव! बिना किसी फल के उद्देश्य से कोई बच्चा भी काम में नहीं लगता है और ब्रह्म सृष्टि का जीव व्यर्थ के कार्य में कैसे लगेगा?

39. मोह सृष्टि से उत्पन्न होने वाले स्वर्ग आदि के फल से जो मोहित हैं, वे ही कर्म में प्रवृत्त होते हैं। उसमें आश्चर्य नहीं है।

40. हे सुखदाता! कृष्ण की प्रियाएं कृष्ण रूप हैं और वासना से वे आई हैं, उन्हें व्यर्थ के काम में क्यों लगा रहे हो?

शिव बोले—

41. प्रबुद्ध हो या अप्रबुद्ध, हर सदाशयी व्यक्ति को हितकारी कर्म करने चाहिए। हे मानिनी! मुमुक्षु के लिए सकाम कर्म निन्दित है।

42. क्रियावान पुरुष ही श्रेष्ठ है और वह सुख से भवसागर पार करता है। क्रिया रहित लोग संसार में मुझे धर्म भ्रष्ट दिखाई देते हैं।

Nijanand App

अश्रद्दधानात् धर्मेषु विद्वांसः कृपया विभो।
नोपदेश्यन्ति शास्त्रार्थमुपरे बीजवत्प्रिये।।४३।।
न च तत्वस्य निर्धारः शास्त्रहीनस्य जायते।
तदर्थं निर्णयं शास्त्रं त्यक्त्वान्यत् साधनं मुधा।।४४।।
श्वपुच्छालम्बनं यद्वत्तितीर्षोः सागरं यथा।
बिना तत्वस्य निर्धारं शङ्कापि न निवर्तते।।४५।।
शङ्कापङ्काङ्कमलिने हृदये नैव सुन्दरि।
प्रेमार्कप्रतिबिम्बः स्याद्येन कृष्णः प्रभासते।।४६।।
तस्माद्वर्णाश्रमाचारभ्रष्टे नरचतुष्पदे।
नैष ज्ञानं तथा भक्तिर्यथार्थोदेति निश्चयः।।४७।।
नित्यं नैमित्तिकं तस्मात्कर्तव्यं तदशङ्कया।
काम्यं निषिद्धं यत्कर्म तत्तुदूरात्परित्यजेत्।।४८।।
नित्यं नैमित्तिकं कर्म फलं बध्नाति न क्वचित्।
अननुष्ठानमात्रेण प्रस्तावायस्तु जायते।।४९।।
अनुष्ठाने फलं नास्ति चित्तशुद्धिं विनेतरत्।
काम्यादिकर्मकर्त्तारो देहभाजः पुनः पुनः।।५०।।
तस्मात्काम्यं परित्यज्य नित्यं विद्वान् समाचरेत्।
अप्रबुद्धदशायां च प्रबुद्धायामपि प्रिये।।५१।।
कर्तव्यं सहजं कर्म न तान्विघ्नः प्रभूयते।
प्रबुद्धस्यापि यत्कर्म तत्र मे निर्णयं शृणु।।५२।।
वार्तामात्रेण विज्ञानं प्रबोधो नैव वास्तवः।
साक्षात्प्रबोधे देवेशि देहः सद्यो विलीयते।।५३।।
तस्माच्छाब्दप्रबोधोयं परमार्थो न विद्यते।
संसारमोहनाशाय शाब्दबोधो न हि क्षमः।।५४।।
न निवर्त्तेत तिमिरं कदाचिद्दीपवार्तया।
ज्वलितः पतितो देहो यदा विरहवह्निना।।५५।।
तदा विंद्यादात्मबोधमन्यथा शाब्द एव सः।
शाब्दप्रबोधमात्रेण नित्यं नैमित्तिकं त्यजेत्।।५६।।
प्रत्यवायी स विज्ञेयो नासौ बोधमवाप्नुयात्।
यावद्देहाभिमानः स्यान्ममता तावदेव हि।।५७।।
तावद्देहानुबन्धित्वात्कर्म कर्तव्यमेव हि।
शास्त्रोक्तं कर्म कर्तव्यं विकर्म विनिवृत्तये।।५८।।

Nijanand App

43. हे प्रिए! जो विद्वान लोग लोक धर्म में श्रद्धा नहीं रखते हैं उन्हें शास्त्र का अर्थ इसी प्रकार उपदेश नहीं करते हैं जैसे ऊसर में बीज का बोना।

44. शास्त्रहीन पुरुष को तत्व निर्धारिण नहीं होता है। तत्व निर्धारिण के लिए शास्त्र को छोड़कर अन्य साधन करना व्यर्थ है।

45. कुत्ते की पूंछ के सहारे समुद्र को पार करने की इच्छा के समान तत्व निर्धारण के बिना शंका निवृत्त नहीं होती है।

46. हे सुन्दरी! शंका के कीचड़ से मलिन हृदय में प्रेम रूपी सूर्य का प्रतिबिम्ब नहीं पड़ सकता। जब प्रेम नहीं होगा तो कृष्ण भासित नहीं हो सकते। इसलिए शंकारहित हृदय होकर प्रेम करने से कृष्ण भासित हो सकते हैं।

47. इसलिए वर्णों और आश्रमों के आचार से भ्रष्ट नर रूपी चौपाए में यथार्थ रूप में ज्ञान और भक्ति का उदय नहीं हो सकता। यह निश्चित है।

48. इसलिए शंकारहित होकर नित्य और नैमित्तिक कर्म करने चाहिए। निषिद्ध कर्म दूर से ही त्याग देना चाहिए।

49. नित्य नैमित्तिक कर्म बिना किए हुए फल प्रदान नहीं करते और न किए जाने पर प्रत्यवाय (पाप) लगता है।

50. चित्त शुद्धि के बिना किसी भी अनुष्ठान के करने में फल नहीं होता। काम्यादि कर्म के कर्ता पुनः पुनः शरीर पाते हैं।

51. हे प्रिए! इसलिए काम्य को छोड़कर नित्य कर्म करना चाहिए। चाहे अप्रबुद्ध दशा हो या प्रबुद्ध।

52. सहज कर्म करना चाहिए। इसको करने वालों को विघ्न नहीं पड़ता। प्रबुद्ध के लिए जो कर्म है उसके विषय में निर्णय सुनो।

53. केवल वार्ता से वास्तविक प्रबोध या विज्ञान नहीं होता। हे देवेशि, साक्षात् प्रबोध होने पर तत्क्षण देह का विलय हो जाता है।

54. इसलिए यह शब्द प्रबोध परमार्थ नहीं है। संसार के मोह नाश के लिए शब्द बोध समर्थ नहीं है।

55. दीपक की बात करने से ही कभी अन्धकार दूर नहीं होता। जब विरह की अग्नि से जलता हुआ शरीर गिर पड़ता है,

56. तब समझना चाहिए आत्मज्ञान हो गया। अन्यथा वह शब्द ज्ञान ही रहता है। केवल शब्द ज्ञान से नित्य और नैमित्तिक कर्म का जो त्याग कर देता है,

57. वह पाप करने वाला होता है, उसे बोध नहीं प्राप्त होता। जब तक देह का अभिमान है तब तक ममता रहती है।

58. तब तक देह से सम्बद्ध होने के कारण कर्म करना ही पड़ता है। विकर्म से छुटकारा पाने के लिए शास्त्रोक्त कर्म करना चाहिए।

Nijanand App

विकर्मणि प्रवृत्तिस्तु नृणां स्वाभाविकी यतः।
विकर्मणः प्रभावेन देहभाजः पुनः पुनः॥५९॥
नित्यं नैमित्तिकं देवि फलं सङ्कल्पवर्ज्जितं।
चित्तं शोधयते साध्वि न तु देहाय जायते॥६०॥
का हानिस्तत्र देवेशि निष्कामाचरणे नृणां।
इत्येवं निर्णयाज्ञानान्मूढाः पण्डितमानिनः॥६१॥
त्यजन्तः शोधनं कर्म पापचित्ता भ्रमन्ति वै।
सांसारिकसुखासक्तं ब्रह्मज्ञोस्मीति वादिनम्॥६२॥
कर्मब्रह्मोभयभ्रष्टं तं त्यजेदन्त्यजं यथा।
देहेन्द्रियसुखासक्तो ब्रह्मज्ञोस्मीति यो वदेत्॥६३॥
न तं वैज्ञानिनं मन्ये मणिभूषितगर्दभम्।
ब्रह्मवादं पुरस्कृत्य वर्णाश्रमनिबन्धनाः॥६४॥
विलुंपन्तः क्रियाः सर्वाः लोकनाशकरा हि ते।
ब्रह्मवादः कलियुगे गेहे गेहे जने जने॥६५॥
भविष्यति ततः काले धर्मकर्मविलोपनं।
धर्मकर्मविहीनानां पापमेवानुसेवतां॥६६॥
तेषामासुरजीवानां नरकं न निवर्त्तते।
तस्मादेवं सुनिर्णीय धर्मकर्मपरायणाः॥६७॥
कृष्णमेवानुसेवन्तस्तान्मन्ये कृष्णवल्लभाः।
इति ते कथितं देवि वासनालक्षणं मया॥६८॥
यज्ज्ञात्वा ह्यचिरादेव स्वात्मबोधः प्रजायते॥६९॥
इति श्रीपञ्चरात्रे श्रीमाहेश्वरतन्त्रे शिवपार्वतीसंवादे षोडशं पटलम्॥१६॥

सप्तदशं पटलम्

पार्वत्युवाच

भगवन् देवदेवेश निर्णयः साधुसंमतः।
कथितोयं सदाचारलक्षणः पावनो नृणाम्॥१॥
धर्मकर्मविहीनानां सदाचारं विमुञ्चतां।
मलीमसानां दुष्टानां ब्रह्मसिद्धिर्न जायते॥२॥
यथा जह्यात् शनैरम्भः सोपानानि क्रमात् क्रमात्।
तथा देहानुसम्बन्धान् शनैर्जह्यात् स पण्डितः॥३॥

Nijanand App

59. क्योंकि मनुष्यों की विकर्म में प्रवृत्ति स्वाभाविक होती है। विकर्म के प्रभाव से मनुष्य को बार-बार शरीर मिलता है।

60. हे देवि! संकल्प रहित नित्य नैमित्तिक कर्म चित्त को शुद्ध कर देते हैं तथा पुनः जन्म नहीं होता।

61. हे देवेशि! मनुष्यों को निष्काम भाव से कर्म करने में कौन-सी हानि है? इस प्रकार के अज्ञान से मूढ़ अपने को पण्डित मानने वाले शुद्ध करने वाले

62. कर्म को छोड़कर पाप चित्त घूमते रहते हैं। संसार के सुख में आसक्त अपने को ब्रह्मज्ञ मानते हैं।

63. कर्म और ब्रह्म दोनों से भ्रष्ट को चाण्डाल की तरह त्याग देना चाहिए, जो देह और इन्द्रियों के सुख में आसक्त हों और अपने को ब्रह्मज्ञ कहते हों।

64. मणियों से भूषित गधे को हम ज्ञानी नहीं मानते। ब्रह्मवाद को आगे करके वर्ण और आश्रम के

65. बन्धन में पड़कर सभी क्रियाओं का जो लोप करते हैं वे लोक का नाश करने वाले होते हैं। कलियुग में ब्रह्म की वार्ता घर-घर में जन-जन में होगी।

66. इसके पश्चात् धर्म कर्म का लोप होगा। धर्म कर्म से विहीन पाप कर्म ही करने वाले,

67. आसुरी प्रवृत्ति वाले जीवों का नरक निवृत्त नहीं होगा। इसलिए ठीक निर्णय करके धर्म कर्म में परायण

68. कृष्ण की ही जो सेवा करते हैं, उन्हें हम कृष्ण बल्लभा मानते हैं। हे देवि! मैंने तुमसे वासना के लक्षण बता दिया,

69. जिसको जानकर शीघ्र आत्मज्ञान उत्पन्न हो जाता है।

माहेश्वरतन्त्र में शिव-पार्वती संवाद का सोलहवां अध्याय समाप्त हुआ।

सत्रहवां अध्याय

पार्वती बोलीं—

1. हे भगवन! देव देवेश! आपने मनुष्यों के पावन सदाचार रूपी साधु सम्मत निर्णय कहा है।

2. जो धर्म कर्म विहीन हैं, सदाचार रहित हैं, मलिन हैं, दुष्ट हैं, उन्हें ब्रह्म सिद्धि नहीं होती।

3. जिस प्रकार से पानी सीढ़ियों को धीरे-धीरे छोड़ता है इसी प्रकार देह सम्बन्धों को जो धीरे-धीरे छोड़ता है, वही पण्डित है।

Nijanand App

देहाभिमाने गलिते विज्ञाते स्वात्मनि स्वयम्।
अश्मकाञ्चनयोस्तुल्यं भावप्राप्तौ समस्थितौ॥४॥
उदासीनारिमित्रेषु स्वानन्दानुभवोदये।
न कर्मभिस्तदा कार्यं सम्राजो भिक्षया यथा॥५॥
यथामृतेन तृप्तस्य नाहारेण प्रयोजनम्।
स्वात्मानन्दोदये तद्वत्कर्मभिर्न प्रयोजनम्॥६॥
तालवृन्तेन किं कार्यं लब्धे मलयमारुते।
स्वात्मानन्दोदये जाते कर्मणा किं प्रयोजनम्॥७॥
साध्वेतद्व्याहृतं देव त्वया भागवता प्रभो।
परं वेदितुमिच्छामि सन्देहाकुलमानसा॥८॥
ब्रह्मवादः कलियुगे गेहे गेहे जने जने।
धर्मकर्मविलोपार्थं भविष्यति न संशयः॥९॥
इति यद्भवता प्रोक्तं तत्र मे संशयोमहान्।
ब्रह्मवादेन सदृशं पवित्रं नहि किञ्चन॥१०॥
तपो दानं क्रिया योगः स्वाध्यायनियमा यमाः।
समाप्यन्ते महेशान ब्रह्मज्ञानोदयादनु॥११॥
ब्रह्मज्ञानैकनिष्ठानां महादेव महात्मनां
सर्वं सम्पूर्णतां याति नित्यं नैमित्तिकं च यत्॥१२॥
ब्रह्मज्ञानेन मुच्येत यदि चेद्विश्वघातकः।
न तस्य कर्मलोपोस्ति पद्मस्येवाम्भसा यथा॥१३॥
कलिस्तु सुमहान् पापस्तामसात्मा मलीमसः।
अधर्मे रमते नित्यं येन स्पृष्टा प्रजा भुवि॥१४॥
यत्रोदेष्यन्ति पाषण्डा धर्मनिर्नाशहेतवः।
वर्णानां सङ्करो यत्र स्वस्वकर्मविलुम्पतां॥१५॥
कन्या विक्रयिणश्चैव वेदविक्रयिणो द्विजाः।
म्लेच्छाचाररता लोके म्लेच्छाभाषाविशारदाः॥१६॥
म्लेच्छान्नपानपुष्टाङ्गा धर्मकर्मविनिन्दकाः।
स्वाहास्वधाविरहिताः शिश्नोदरपरायणाः॥१७॥
परस्त्रीपरधनलोभाय हेतुवादपरायणाः।
कलौ सर्वे भविष्यन्ति सर्वधर्मविवर्जिताः॥१८॥
ब्रह्मवादः कलियुगे गेहे गेहे जने जने।
असम्भाव्यमिवाभाति ममैतत्सुरपूजित॥१९॥

Nijanand App

4. देहाभिमान नष्ट हो जाने पर, आत्मा में अपने दर्शन हो जाने पर पत्थर और स्वर्ण में समान भाव हो जाने पर,

5. उदासीन, रिपु और मित्रों में भेद न रह जाने पर, आत्मानन्द का अनुभव होने पर मनुष्य को कर्म से उसी प्रकार कोई प्रयोजन नहीं रहता, जिस प्रकार सम्राट को भिक्षा से।

6. जैसे अमृत से तृप्त हुए को भोजन से कोई प्रयोजन नहीं, ऐसे ही आत्मानन्द हो जाने पर कर्मों से प्रयोजन नहीं रहता।

7. मलय वायु के उपलब्ध होने पर ताड़ के पंखे से क्या प्रयोजन, उसी प्रकार आत्मानन्द होने पर कर्म से कोई प्रयोजन नहीं।

8. हे भगवन (प्रभु)! यह तो आपने बहुत अच्छा कहा। परन्तु सन्देह से युक्त मन वाली मैं और कुछ जानना चाहती हूं।

9. कलियुग में तो घर-घर, जन-जन में ब्रह्म की वार्ता होगी और वह वार्ता धर्म कर्म के लोप के लिए होगी, इसमें सन्देह नहीं।

10. यह जो आपने कहा है इसमें मुझे वहुत बड़ा सन्देह है। ब्रह्म सम्बन्धी वार्ता से बढ़कर कोई पवित्र वस्तु नहीं है।

11. ब्रह्म ज्ञान की प्राप्ति के पश्चात् तप, दान, क्रिया, योग, स्वाध्याय, नियम, यम सब समाप्त हो जाते हैं।

12. जो महात्मा ब्रह्म ज्ञान में ही निष्ठित हो जाते हैं उनके नित्य, नैमित्तिक सभी कार्य पूर्ण हो जाते हैं।

13. यदि विश्व की हत्या का पाप हो तो भी ब्रह्म ज्ञान से नष्ट हो जाता है। जिस प्रकार से पानी के द्वारा कमल का लोप नहीं होता उसी प्रकार उसके कर्म का लोप नहीं होता।

14. कलि ही महान् पाप है, तामस है, मलिन है। उसके स्पर्श होने पर प्रजा अधर्म में लग जाती है।

15. इसमें धर्मनाश के हेतु पाखण्डों का उदय होता है। अपने-अपने कर्मों को मिटाने वाले वर्णों में संकरता आ जाती है।

16. कन्या बेचने वाले, वेद बेचने वाले ब्राह्मण, म्लेच्छों की भाषा में विशारद, म्लेच्छों के आचारों में तत्पर,

17. म्लेच्छों के अन्नपान से पुष्ट शरीर वाले, धर्म कर्म के निन्दक, स्वाहा-स्वधा से रहित शिश्न उदर परायण,

18. पर स्त्री तथा पर धन के लोभ के लिए हेतुवाद का आश्रय लेने वाले, सर्वधर्म वर्जित कलियुग में सभी हो जाएंगे।

19. हे भगवान! ऐसे कलियुग में घर घर में जन जन में ब्रह्मवाद मुझे असम्भव की तरह लगता है।

Nijanand App

कलावपि महापापे प्रवृत्तं ब्रह्मकीर्तनं।
तत्कथं धर्मलोपाय लोकानां मेऽत्र विस्मयः॥२०॥
विचार्य ब्रूहि मे देव कृपया करुणानिधे।

शिव उवाच

साधु पृष्टं त्वया भद्रे सर्वलोकैकहेतवे॥२१॥
तदहं ते प्रवक्ष्यामि शृणुस्वैकामानसा।
यस्य श्रवणमात्रेण धर्मश्रद्धा प्रजायते॥२२॥
पुरा द्वादशवार्षिक्यामनावृष्ट्यामनम्भसि।
दवाम्न्यर्कविनिर्दग्धवनकन्दादिसम्पदि॥२३॥
क्षुत्तृट्परीता वै काश्चित्प्रजा गिरिगुहाश्रिताः।
परस्परं भक्ष्यमाणा मम्रिरे व्याधिकर्षिताः॥२४॥
गौतमस्याश्रमे रम्ये तपतीतीरसंस्थिते।
क्षुधार्ता ब्राह्मणाः प्राप्ता देहनिर्वाहकाम्यया॥२५॥
अलक्षन् गौतममुनिं शिष्यराशिपरिवृतम्।
ब्रह्मतेजःप्रभावेन ज्वलन्तमिव पावकम्॥२६॥
अन्नान्युत्पाद्य तपसा पुष्णन्तं शिष्यसंहतिम्॥
प्रणेमुर्ब्राह्मणाः सर्वे निबद्धकरसम्पुटाः॥२७॥

ब्राह्मणा ऊचु

त्राहि त्राहि मुने प्राप्तान् शरण्यान् शरणप्रद।
जाठरेणाग्निना तप्ता वयं सर्वे द्विजातयः॥२८॥
अलभ्यं कन्दमूलादि निर्जलेक्षितिमण्डले।
न प्रवर्त्तन्त एवेह क्रियां निगमचोदिताः॥२९॥
अन्नं वै प्राणिनां प्राणाः प्राणदोऽन्नं ददाति यः।
तस्मादन्नप्रदानेन प्राणदो नः पिता भवान्॥३०॥
एकतः सकला धर्मा यज्ञाः सर्वस्वदक्षिणाः।
तपांस्युग्राणि दानानि व्रतानि सुबहून्यपि॥३१॥
न तुलामधिगच्छन्ति ह्यन्नदानस्य वै मुने।
क्षुत्पिपासे प्राणधर्मौ क्षुधया कृष्यते वपुः॥३२॥
वपुःकार्श्ये चेन्द्रियाणि कर्षितानि भवन्ति वै।
म्लानेन्द्रियमनोवृत्तेः विवशित्वं प्रपद्यते॥३३॥
मनोम्लानौ बुद्धिलयस्ततो ध्यानं निवर्तते।
अध्यायतः कुतः स्वात्मानुभूतिर्भवति प्रभो॥३४॥

Nijanand App

20. महापापी कलियुग में भी होने वाला ब्रह्म कीर्तन संसार के धर्मों का लोप कैसे करता है, इसमें मुझे आश्चर्य है।

21. हे करुणानिधि! आप विचार कर मुझे बतावें।

शिव बोले—

हे भद्रे! तुमने सभी लोकों के कल्याण के लिए ठीक ही पूछा है।

22. मैं तुम्हें बताऊंगा, ध्यान देकर सुनो! इसके श्रवण मात्र से धर्म में निष्ठा उत्पन्न होती है।

23. पहले बारह वर्ष की अनावृष्टि होने पर जलाभाव होने पर, जंगल की आग और सूर्य के तेज से जंगल के कन्द मूल, आदि सम्पत्ति के जल जाने पर,

24. भूख और प्यास से पीड़ित पर्वत की कन्दराओं में आश्रय लेने वाली प्रजा एक दूसरे को खाते हुए व्याधि से मरने लगे।

25. तपती नदी के तट पर गौतम के आश्रम में अपने शरीर की रक्षा के लिए भूख से पीड़ित ब्राह्मण आए।

26. शिष्य समूह से घिरे ब्रह्म तेज के प्रभाव से अग्नि के समान दीप्त गौतम मुनि को देखा।

27. वे तपोबल से अन्न उत्पन्न कर शिष्यों का पोषण कर रहे थे। सभी ब्राह्मणों ने हाथ जोड़कर उन्हें प्रणाम किया।

ब्राह्मणों ने कहा

28. हे मुनि! सभी द्विजाति के लोग पेट की आग से संतप्त होकर हम आपकी शरण में आए हैं।

29. निर्जल पृथ्वी मण्डल पर कन्द मूल आदि अलभ्य हो गए हैं। शास्त्र में कथित क्रियाएं नहीं हो पाती हैं।

30. अन्न ही प्राणियों का प्राण है। अन्नदाता प्राणदाता होता है। इसलिए अन्नदान द्वारा आप हमारे प्राणदाता पिता हैं।

31. एक ओर सम्पूर्ण धर्म, पूर्ण दक्षिणा वाले यज्ञ, उग्रतप तथा बहुत से दान एवं व्रत हैं, दूसरी ओर अन्न दान।

32. हे मुनि! वे सब अन्नदान की तुलना नहीं कर सकते। भूख और प्यास प्राण के धर्म हैं। क्षुधा से शरीर दुर्बल होता है।

33. शरीर दुर्बल होने पर इन्द्रियां भी दुर्बल हो जाती हैं। इन्द्रिय और मनोवृत्ति के क्षीण होने पर मनुष्य विवश हो जाता है।

Nijanand App

तस्मादन्नेन सदृशं दानं नास्ति जगत्त्रये।
म्लानेन्द्रियमनोवृत्तेः क्षुधया पीडितस्य च॥३५॥
अन्नाभिकाङ्क्षिणो येन प्राणतृप्तिः कृता मुने।
तेन दत्तं हुतं जप्तं तपस्तप्तं शुभं कृतम्॥३६॥
पृथ्वी रत्नेन सम्पूर्णा तेन दत्ता द्विजातये।
तस्यैव ज्ञानसंसिद्धिर्भवतीति श्रुतं हि नः॥३७॥
किमन्यज् ज्ञाप्यते तुभ्यं सर्वज्ञाय मुनीश्वर।
तथाविधेह्यंग तूर्णं यथा नः प्राणधारणा॥३८॥
शरीरमूलमन्नं हि धर्ममूलमिदं वपुः।
चित्तशुद्धौ विशेषेण धर्म एव हि कारणम्॥३९॥
भक्तिर्ज्ञानं च वैराग्यं शुद्धचित्तस्य जायते।
सर्वार्थसाधनं तस्माच्छरीरमिदमुच्यते॥४०॥
पुनर्गमा पुनर्वित्तं पुनः क्षेत्रं पुनर्गृहम्।
पुनः शुभाशुभं कर्म न शरीरं पुनः पुनः॥४१॥
शरीररक्षणायासः कर्तव्यः सर्वथा बुधैः।
नहीच्छन्ति तनुत्यागमपि कुष्ठादिरोगिणः॥४२॥
तद्रोपितं स्याद्धर्मार्थे धर्मो ज्ञानार्थमेव च।
ज्ञानं तु ध्यानयोगार्थमचिरात्तेन मुच्यते॥४३॥
तपः प्रभावमास्थाय पाह्यस्मान् कृपणानिह।
इत्येवं वचनं तेषां ब्राह्मणानां तपोधनः॥४४॥
दीनानां क्षुधयार्त्तानां निशम्य करुणोभवत्।

गौतम उवाच

साधु साधु महाप्राज्ञा न्याय्यमेतद्वचो हि वः॥४५॥
धर्माथकाममोक्षाणां साधनं देह उच्यते।
रक्षितव्यः प्रयत्नेन तस्माद्देहो मुनीश्वराः॥४६॥
देहत्यागं न चेच्छन्ति ये भक्ता ये च साधकाः।
महापापादिभिर्लिप्तः सर्वकर्मविनिर्गतः॥४७॥
पृथिवीभारभूतो यो देहस्त्याज्यः स एव हि।
पितृदेवातिथीनां च कर्मणि यः सुपुण्यकृत्॥४८॥
ईश्वरध्यानयोग्यश्च स कथं त्यागमर्हति।
कर्मणापि निषिद्धेन देहः पोष्य इहायदि॥४९॥

Nijanand App

34. मन के म्लान होने पर बुद्धि का लय हो जाता है तो ध्यान कैसे हो सकता है और बिना ध्यान किए आत्मानुभूति कहां से हो सकती है।

35. इसलिए अन्न के समान तीनों लोकों में कोई दूसरा दान नहीं है। जिसने म्लान इन्द्रिय मन और वृत्ति वाले, क्षुधा पीड़ित तथा

36. अन्न की आकांक्षा वाले जीव का प्राण तृप्त किया है, उसने सभी दान, जप, तप शुभ कर्म कर डाला।

37. यह समझिए उसने रत्न से परिपूर्ण पृथ्वी ही ब्राह्मणों को दे डाली। हमने सुन रखा है कि ऐसे लोगों को ही ज्ञान सिद्धि होती है।

38. हे मुनीश्वर! आप सर्वज्ञ हैं, आपसे मैं क्या कहूं। आप शीघ्र वह कार्य कीजिए जिससे हमारे प्राण रह सकें।

39. अन्न शरीर का मूल है। शरीर धर्म का मूल है और चित्त शुद्धि में प्रमुख रूप से धर्म ही कारण है।

40. जिसका चित्त शुद्ध है उसी को भक्ति, ज्ञान, वैराग्य होता है। इसलिए यह शरीर सभी अर्थों का साधन कहा गया है।

41. धन, क्षेत्र, गृह और शुभ-अशुभ कर्म पुनः-पुनः होते हैं। मानव शरीर पुनः-पुनः नहीं मिलता।

42. इसलिए विद्वान लोगों को चाहिए कि शरीर रक्षा के लिए हर प्रकार प्रयत्न करें क्योंकि कुष्ठादि रोग से पीड़ित व्यक्ति भी शरीर त्याग करना नहीं चाहते।

43. इसलिए धर्म के लिए शरीर की रक्षा करनी चाहिए और ज्ञान की रक्षा के लिए धर्म की और ध्यान योग के लिए ज्ञान की रक्षा करनी चाहिए। मनुष्य उससे ही शीघ्र मुक्त होता है।

44. इसलिए, हे मुने! अपने तप के प्रभाव का प्रयोग कर हम दुःखियों की रक्षा कीजिए। उन तपोधन ने उन ब्राह्मणों,

45. जो दीन थे, क्षुधा पीड़ित थे, के वचनों को सुनकर करुणामय हो गए।

गौतम बोले—

हे महाप्राज्ञ! आप लोगों के वचन अत्यन्त न्याय युक्त हैं।

46. शरीर धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष का साधन कहा जाता है, इसलिए शरीर की रक्षा करनी चाहिए।

47. जो भक्त हैं, साधक हैं वे देह त्याग नहीं चाहते हैं। जो महापाप करने वाला है, जो सभी कर्मों से बाहर है,

48. जो पृथ्वी का भार है, वही देह त्यागने योग्य है। पितर, देवता, अतिथि के कर्मों में जो पुण्यकारी व्यक्ति लगा रहता है,

49. ईश्वर के ध्यान योग्य है, वह देह त्यागने योग्य नहीं है। यदि निषिद्ध कर्म करके भी यहां देह पोषण किया जाता है,

Nijanand App

दग्ध्वा तानि पुनः सोऽयं नयते हि गतिं पराम्।
यावद्देहस्थितिर्लोके तावत्कुशलमाचरेत्।।५०।।
जलबुद्बुदतुल्योयं यस्मादेषो विनश्वरः।
अस्थिरेण शरीरेण स्थिरधर्मं समाचरेत्।।५१।।
सर्वं ब्रह्ममयं पश्यन् मुच्यते मोहसङ्कटात्।
स चाहं तपसा तस्मात्करिष्ये वः समीहितुम्।।५२।।
विज्वराः सन्तु भो विप्राः स्वस्वकर्मण्यतन्द्रिताः।
धन्यस्य कृतपुण्यस्य द्वार्यायान्त्यर्थिनो जनाः।।५३।।
तेन सम्भावनीयास्ते प्राणैरपि धनैरपि।
पञ्चभूतात्मको देहस्त्वनित्यः क्षणभङ्गुरः।।५४।।
अवश्यं नाशमायाति कीर्तिधर्मौ न सर्वथा।
भूतद्रोहं परित्यज्य दया भूतेषु नो धृता।।५५।।
नोपार्जितोपि सद्धर्मः स्फारितं न यशो भुवि।
नात्मा विमर्शितः शुद्धो वेदविद्भिश्च साधुभिः।।५६।।
भूमिभराय तज्जन्म जीवन्नेव मृतो हि सः।
तस्मात्तपोव्ययेनाहमर्थिनां वो मुनीश्वराः।।५७।।
परिचर्या करिष्येहं यथा स्याद्देहधारणा।
इत्युक्त्वा गौतमस्तान्वै दानमानार्हणादिभिः।।५८।।
सम्भावयामास तदातिथ्यागमनहर्षितः।।५९।।

इति श्रीपञ्चरात्रे श्रीमाहेश्वरतन्त्रे उत्तरखण्डे शिवोमासंवादे सप्तदशं पटलम्।।१७।।

अष्टादशं पटलम्

शिव उवाच

एवं सम्भावितास्तेन मुनिना मुनयस्तदा।
असम्बाधे शिवे तस्मिन्नाश्रमे न्यवसन्सुखम्।।१।।
प्रातरुप्तानि मध्याह्ने परिणामं गतानि च।
अन्यान्यपरभागे तु तैर्मुनिस्तानजीवयत्।।२।।
हव्यैर्देवान् पितृन्कव्यैस्तर्पयन्तो मुनीश्वराः।
ततः शेषामृतभुजो निन्युस्तेऽहर्गणान् बहून्।।३।।
ततो द्वादशवर्षान्ते वृष्टिरासीत्सुशोभना।
साङ्कुरा सजला पृथ्वी पुनरासीद्यथा पुरा।।४।।

Nijanand App

50. तो वह पुनः अपने कर्मों को भस्म कर परम् गति प्राप्त करता है और जब तक शरीर संसार में है तब तक कुशल आचरण करता है।

51. यह शरीर जल के बुदबुद के समान नाशवान है। इस अस्थिर शरीर से स्थिर धर्म का आचरण करना चाहिए।

52. सारे संसार को ब्रह्ममय देखते हुए मनुष्य मोह के संकट से मुक्त हो जाता है। इसलिए मैं तप द्वारा, तुम्हारी इच्छा पूर्ण करूंगा।

53. हे ब्राह्मणो! तुम संताप रहित होकर अपने-अपने काम में तत्पर हो। जिसके दरवाजे पर याचक लोग आते हैं वह धन्य है, पुण्यकर्मा है।

54. उस पुरुष को चाहिए कि प्राण एवं धन से उस याचक की इच्छा पूर्ण करे। यह पंचभूतात्मक शरीर अनित्य, क्षण भंगुर है।

55. यह अवश्य नष्ट हो जाएगा। कीर्ति और धर्म नष्ट नहीं होंगे। यदि प्राणियों पर द्रोह छोड़कर दया नहीं किया

56. और सच्चे धर्म को नहीं अपनाया, यश का पृथ्वी पर विस्तार नहीं किया और वेद जानने वाले साधुओं के साथ बैठकर शुद्ध आत्मा का विचार नहीं किया,

57. तो उसका ज़न्म पृथ्वी पर बोझ के समान है। जीते हुए भी वह मृत के समान हैं। हे मुनीश्वरो! इसलिए याचकों के रूप में उपस्थित आप लोगों का अपने तप के व्यय से

58. सेवा करूंगा, जिससे तुम्हारे शरीर की रक्षा हो जाय। यह कह कर गौतम ने दान, मान सत्कार आदि से

59. उनका सम्मान किया और ऐसे अतिथियों के आने से प्रसन्नता प्रकट की।

पंचरात्र माहेश्वरतन्त्र के उत्तर-खण्ड के शिव-पार्वती संवाद का सत्रहवां अध्याय समाप्त हुआ।

अठारहवां अध्याय

शिव ने कहा—

1. हे शिवे! इस प्रकार से गौतम जी द्वारा सम्मानित वे उस आश्रम में सुख से रहने लगे।

2. प्रातः, मध्याह्न और सायं सभी कालों में वह मुनि उन सबको वस्तुएं प्रदान कर जीवन दान करते थे।

3. देवताओं को हव्य देकर, पितरों को गव्य द्वारा तृप्त करते हुए शेष अमृत तुल्य भोजन करते हुए दिन बिताए।

4. इसके पश्चात् बारह वर्ष बाद सुन्दर वर्षा हुई। अंकुरों वाली जल पूर्ण पृथ्वी पहले जैसे हो गई।

Nijanand App

प्रजाः स्थानानि भेजुस्ताः पूर्वं गिरिगुहाशयाः।
अन्नादिविरहान्नष्टो धर्मः प्रावर्तत प्रिये।।५।।
क्षितिरन्नादिसम्पूर्णा विश्वमासीत्सुमङ्गलम्।
ततः कतिपये काले गन्तुकामाः मुनीश्वराः।।६।।
प्रेमबद्धोऽन्वहं विप्रान्न्येषधद्विरहाक्षमः।
निषिद्धाः कतिचिन्मासान् न्यवसंस्ते मुनीश्वराः।।७।।
पुनः प्रपच्छुरौसुक्यात्स्वस्वाश्रमगतिं प्रति।
नेत्याह गौतमो विप्रान् विरहव्यथितो भृशम्।।८।।
ततस्ते कृतसङ्केताः केचित्तेष्वपि वाडवाः।
ऊचुः परस्परं येन मुनित्यागः कथं भवेत्।।९।।
मुनिः स्नेहवशाद्बद्धः स्वयमस्मान्न सन्त्यजेत्।
अस्माभिस्त्यज्यते सोयं तथा कुर्वध्वमादृताः।।१०।।
विमर्षतस्तथान्योन्यमुपायं मनसागमन्।
अभिशापं मुनौ धृत्वा गमिष्यामो यथारुचि।।
ते दैवनिहताः सर्वे परस्परममन्त्रयन्।
कदाचिदथ मध्याह्ने कर्तुं माध्याह्निकीं क्रियां।।१२।।
ऋषिसङ्घैः परिवृतो जगाम तपतीं प्रति।
निर्मितां मुनिभिर्धेनुं जरठामतिवेपतीं।।१३।।
सीदन्तीं कलिले वीक्ष्य गौतमः करुणोभवत्।
आसाद्य सुरभेः पार्श्वं यावत्तामस्पृशन्मुनिः।।१४।।
तावत्पपात सहसा मायोधेनुर्मृतिं गता।
तद्दृष्ट्वा मुनयः प्रोचुर्धिक्धिक् गौतम ते कृतिं।।१५।।
हिंसिता धेनुरबला किमतो निन्दितं भवेत्।
अद्य प्रभृति ते द्वारि जलमात्रार्थिभिर्नरैः।।१६।।
न स्थातुमर्हाः किं कुर्मो गमिष्यामो वयं ततः।
एवमुक्तो मुनिर्ध्यात्वा तत्कृतानर्थमाप सः।।१७।।
उवाच वचनं क्रुद्धो ज्वलन्निव हुताशनः।
वेदबाह्या भविष्यध्वं कृतघ्नाः स्वेन कर्मणा।।१८।।
वेदब्राह्मणगोमन्त्रनिन्दावादपरायणाः।
कलौ भविष्यथो मूढाः ब्रह्मवादपरायणाः।।१९।।
अन्तर्दुष्टा बहिः स्वच्छा हेतुवादपरायणाः।
ब्रह्मज्ञत्वाभिमानेन धर्मकर्मबहिर्मुखाः।।२०।।

Nijanand App

5. हे प्रिए! सभी लोग जो भागकर पर्वत कन्दराओं में चले गए थे वे अपने-अपने स्थान में आ गए। अन्नादि के न रहने से जो धर्म नष्ट हो गया था वह पुनः प्रारम्भ हो गया।

6. पृथ्वी अन्नादि से पूर्ण हो गई और संसार में मंगल होने लगा। तब कुछ समय बीतने पर मुनीश्वरगण जाने की इच्छा करने लगे।

7. गौतम जी उनके प्रेम में बंधकर उनको रोकते थे और रोकने पर कुछ मुनीश्वर लोग कुछ महीने और रहे।

8. फिर उत्सुक होकर अपने-अपने आश्रम जाने के लिए गौतम जी से पूछा। उनके विरह से व्यथित गौतम ने उनको मना किया।

9. फिर वे लोग संकेत स्थान बनाकर एक जगह मिले और एक-दूसरे से कहा कि मुनि का त्याग कैसे किया जाय।

10. मुनि स्नेह वश हमें छोड़ नहीं रहे हैं। हम लोगों के द्वारा वह कैसे त्यागे जायं, ऐसा उपाय करो।

11. आपस में विचार करते हुए मन में उन्होंने ऐसा सोचा कि मुनि पर कोई अभिशाप रखकर हम लोग चले जाएं।

12. दैव से निहत् होकर परस्पर उन्होंने मन्त्रणा किया। कभी (गौतम) मध्याह्न की क्रिया करने के लिए

13. ऋषियों के साथ तपती नदी को गए। मुनियों द्वारा माया से निर्मित हुई कांपती हुई गाय को

14. कीचड़ में फंसी देखकर गौतम को करुणा उत्पन्न हुई। गौतम ने गाय के पास जाकर उसको जैसे ही स्पर्श किया,

15. तभी वह माया धेनु सहसा गिर पड़ी और मर गई। यह देखकर मुनि लोग गौतम को धिक्कारने लगे।

16. गौतम! तुमने गाय मार डाली। इससे निन्दित कार्य क्या हो सकता है। आज से लेकर केवल जल चाहने वाले मनुष्य भी तुम्हारे दरवाजे पर

17. ठहरने योग्य नहीं होंगे। इसलिए हम लोग क्या करें, चले जाएंगे। ऐसा उनके कहने पर मुनि ने ध्यान लगाया और मालूम किया कि यह सब अनर्थ इन्हीं का किया हुआ है।

18. आग के समान जलते हुए उन्होंने श्राप दिया कि तुम लोग अपने कर्म से कृतघ्न और वेद के बाहर हो जाओगे।

19. तुम वेद, ब्राह्मण, गौ और मन्त्र की निन्दा करने वाले ही रहोगे। कलियुग में मूढ़ एवं ब्रह्मवाद परायण होओगे।

20. अन्दर से दुष्ट और बाहर से साफ केवल तर्क करने वाले, ब्रह्मज्ञ होने के अभिमान से धर्म कर्म से बहिर्मुख,

Nijanand App

ब्रह्म सत्यं जगन्मिथ्येत्यनुवादविचक्षणाः।
मिथ्यात्वाज्जगतः किं स्यात्कर्मभिश्च शुभाशुभैः॥२१॥
इत्येवं नास्तिका मूढा दुर्हृदा वेदनिन्दकाः।
ब्रह्मवादविलासोत्थै र्वचनैर्भावगर्वितैः॥२२॥
साधुवेषेण शिक्षाभिः प्रियवाक्यामृतादिभिः।
एतैर्जवनिकाकारैः पापमावृत्य केवलम्॥२३॥
ज्ञानित्त्वमात्मनो लोके ख्यापयन्तो दुराशया:॥
यूयं वैडालिनो लोके भवन्तु चरमे युगे॥२४॥
न तु वो वास्तवं ज्ञानमुदेष्यति कदाचन।
इति गौतमशप्तानां धर्मच्छेदोद्यमे ततः॥२५॥
वासना समभूत्तेषां गौतमं प्रतिकुर्वतां।
अथ तद्वासनायुक्ताः कलौ पापयुगे शठाः॥२६॥
अवतीर्य क्षितितले ब्रह्मसृष्टिमुपाश्रिताः।
वेदशास्त्रविरुद्धानि ह्याचरन्तीह पामराः॥२७॥
द्विषन्त्याचारमास्तिक्यं यज्ञव्रततपांसि च।
द्रुह्यन्त्यन्योन्यमासाद्य नष्टज्ञाना विचेतसः॥२८॥
परद्रव्यपरद्रोहपरस्त्रीगमनोत्सुकाः।
तत्सम्बन्धात् ब्रह्मसृष्टिर्मालिन्यमुपयास्यति॥२९॥
यथा कालिमसम्बन्धात् स्फटिकोपि मलीमसः।
आभाति तद्वदेवेयं ब्रह्मसृष्टिस्तदाश्रयात्॥३०॥
तस्माद् बुभुत्सुभिः साध्वि त्याज्यो वैडालिकाश्रयः।
समधर्मक्रियाछद्मधारिणस्ते तु कीर्त्तिताः॥३१॥
अन्येपि सन्ति पाषण्डा आसुरं भावमाश्रिताः।
तेऽपि निन्दन्ति पापिष्ठा वेदधर्म पुरातनम्॥३२॥
तांस्ते ब्रवीमि सङ्क्षेपात् शृणुष्वेकाग्रमानसा।
यत् शृण्वतां न पाखण्डो बुद्धिं मोहयति क्वचित्॥३३॥
पुरा देवासुरयुद्धे निर्जितेष्वसुरेष्वथ।
पाखण्डाधिकृताः सर्वे ह्येते सृष्टाः स्वयम्भुवा॥३४॥
तपश्चरत्सु सर्वेषु असुरेषु जयार्थिषु।
विष्णुः सुदुस्तरां मायामास्थाय सुरनोदितः॥३५॥
मोहयामास योगात्मा तपोविघ्नाय तान्प्रभुः।
स मूढान् बुद्धरूपेण तानुवाच महामनाः॥३६॥

Nijanand App

21. "ब्रह्म सत्य है, जगत मिथ्या है", इसी का अनुवाद करने में चतुर रहोगे। जगत के मिथ्या होने के कारण शुभाशुभ कर्मों से तुम्हें क्या लेना देना होगा।

22. इस प्रकार से नास्तिक, मूढ़, दुष्ट-हृदय, वेद-निंदक और ब्रह्मवाद के बड़े-बड़े अभिमान पूर्ण वचनों द्वारा

23. साधुवेश में शिक्षा देने वाले यवनिका (पर्दा) के आकारों से अपने पाप को ढांक कर,

24. अपने ज्ञानत्व की प्रसिद्धि करते हुए, दुःश्चित्त तुम लोग वैडाल वृत्ति (पाषण्डी, दम्भी) वाले कलियुग में होओगे।

25. तुमको वास्तविक ज्ञान कभी न उदय होगा। इस प्रकार से गौतम के श्राप से युक्त धर्म के विनाश के उद्यम में

26. उनमें वैसी वासना उत्पन्न हुई। उस वासना से युक्त पापी कलियुग में

27. पृथ्वी पर जन्म लेकर ब्रह्म सृष्टि का आश्रय लेते हुए वेद शास्त्र विरुद्ध आचरण करते हैं।

28. सदाचार, आस्तिकता, यज्ञ, व्रत, तप से द्वेष करते हैं और एक-दूसरे से द्रोह करते हैं। नष्ट ज्ञान हैं। दुष्ट चित्त वाले हैं।

29. दूसरे का द्रव्य लेने, दूसरे से द्रोह, पर स्त्री गमन करने में उत्सुक रहते हैं। उन्हीं के संसर्ग से ब्रह्मसृष्टि भी वैसी ही हो जायगी।

30. जैसे काली स्याही के संसर्ग से स्फटिक मणि भी काली हो जाती है, ऐसे ही उनके संसर्ग से ब्रह्मसृष्टि भी वैसी ही हो जायगी।

31. हे साध्वि! इसलिए बोध प्राप्त करने की इच्छा वाले पुरुषों द्वारा उन वैडालिकों का आश्रय त्याज्य है। वे धर्म के अनुरूप क्रिया करने का पाखण्ड करने वाले कहे गए हैं।

32. और भी पाखण्डी हैं, जो आसुर भाव वाले हैं। वे पापी भी पुरातन वेद धर्म की निन्दा करते हैं।

33. मैं उनके बारे में भी संक्षेप में बताता हूं, एकाग्र मन से सुनो। इसके सुनने से पाखुण्ड बुद्धि को मोहित नहीं करता।

34. पहले देवासुर संग्राम में देवताओं से पराजित हो जाने पर इन पाखण्डी लोगों की सृष्टि ब्रह्मा ने की थी।

35. जब विजय चाहने वाले सभी असुर तप कर रहे थे, तब देवताओं से प्रेरित हो कर विष्णु ने अति दुस्तर माया प्रकट कर

36. तप में विघ्न डालने के लिए योग से उनको मोहित किया। उन मूर्खों को बुद्ध के रूप में इस प्रकार से समझाया

Nijanand App

शक्या जेतुं सुराः सर्वे युष्माभिरिति दर्शनैः।
बौद्धधर्मं समास्थाय शक्यास्ते तु बभूविरे॥३७॥
तानुवाचार्हतो मम यूयं भवत मद्विधाः।
ज्ञानेन सहितं धर्मं ते चार्हन्त इति स्मृताः॥३८॥
बौद्धश्रावकनिर्ग्रंथाः सिद्धपुत्रास्तथैव च।
ऐते सर्वेपि चार्हन्तो विज्ञेया दुष्टचारिणः॥३९॥
त्रयीक्लेशं समुत्सृज्य जीवतेत्यब्रवीत्तु यान्।
जीवकानाम ते जाताः सर्वधर्मवहिष्कृताः॥४०॥
यान भृत्वादित्यद्व्योम्नि धर्मान्वै प्रतिपादयत्।
कापिलास्तेपिसम्प्रोक्ताः कपिलो हि दिवाकरः॥४१॥
चरध्वं तानुवाचेदं मच्छासनमतिद्युति।
चरकास्तेपि विज्ञेया अधर्माचारणाः शठाः॥४२॥
दीर्घंचरमिति प्रोक्तं सूक्ष्मं वा धर्मरूपकम्।
धर्मंचरध्वमित्युक्ता यस्मात्ते दीर्घचक्षुषः॥४३॥
चीराणि चैव नीलानि विभ्राणाश्चीरकास्ततः।
एषश्चोक्षोतिसंशुद्धो धर्मस्तं श्रयतेति यान्॥४४॥
उवाच मायया विष्णुस्ते हि चौक्षाः प्रकीर्त्तिताः।
विट्भक्षाश्चैव ये केचित् कपालकृतभूषणाः॥४५॥
तथेतरे दुरात्मानः सर्वेप्यासुरदेवताः।
बौद्धश्रावकनिर्ग्रन्थाः सिद्धपुत्रास्तथैव च॥४६॥
नैरात्म्यवादिनः सर्वे अपज्ञानास्तिवादिनः।
वर्तमानास्त्वधर्मेषु जायन्ते तु पुनः पुनः॥४७॥
निरयं प्राप्य तैरेव कर्मभिर्भावितैः पुनः।
वृथा जटी वृथा मुण्डी वृथा नग्नाश्च ये नराः॥४८॥
एतेन्ये च त्रयीबाह्याः पाखण्डाः पापचारिणः।
पाशब्देन त्रयीधर्मः पालनाज्जगतः स्मृतः॥४९॥
सं खण्डयन्ति यस्मात्ते पाखण्डास्तेन हेतुना।
यदि ह्यनादरेणैषां न कथ्येता प्रमाणता॥५०॥
अशक्यैवेति मत्वान्ये भवेयुः समदृष्टयः।
त्रयीमार्गस्य सिद्धस्य ये ह्यत्यन्तविरोधिनः॥५१॥
अनिराकृत्य तान् सर्वान् धर्मशुद्धिर्न लभ्यते।
पाखण्डिनो विकर्मस्थान् वैडालान् हेतुकांस्तथा॥५२॥

Nijanand App

37. कि जो दर्शन में तुम्हें बता रहा हूं उसके द्वारा तुम देवताओं को जीत सकते हो। उस बौद्ध धर्म को जिन्होंने स्वीकार किया वे शाक्य कहलाए।

38. बौद्धों ने (अर्हन्त) उन लोगों से कहा कि तुम लोग हमारे समान सहज ही हो जाओ। उस धर्म के ज्ञान वाले अर्हन्त कहलाए, ऐसा कहा गया है।

39. बौद्ध, श्रावक, निर्ग्रन्थ, सिद्ध-पुत्र—यह सभी अर्ग्रन्त और दुष्टाचारी कहे गए हैं।

40. त्रयी के क्लेश को छोड़कर तुम जीवित रहो, ऐसा जिन लोगों से कहा गया, वे जीवका नाम से सर्वधर्म बहिष्कृत माने गए।

41. जिस प्रकार के आकाश में सूर्य होता है उसी प्रकार जिनको धर्म का उपदेश किया वे कपिल कहे गए और कपिल ही दिवाकर हैं।

42. मेरे शासन के अनुसार आचरण करो। ऐसा सुनकर जो अधर्म आचरण करने लगे वे चटक कहलाए।

43. "दीर्घम् चरम" ऐसा सूक्ष्म धर्म रूपक कहा गया और यह कहा गया कि धर्म आचरण करो इसलिए वे दीर्घ चक्षुष कहलाए।

44. जो नीले कपड़े पहनते हैं वे चीरक कहलाए। यह अग्नि संशुद्ध धर्म है इसका सहारा लो,

45. ऐसा विष्णु ने माया पूर्वक जिन लोगों से कहा वे चौक्ष कहलाए। विट भक्षण करने वाले और कपाल का आभूषण धारण करने वाले

46. तथा और दुरात्मा लोग असुर, देवता, बौद्ध, श्रावक, निर्ग्रन्थ, सिद्धपुत्र,

47. यह सभी नैरात्मवादी (आत्मा का अस्तित्व न मानने वाले) तथा कुछ अपज्ञान अस्तिवादी हैं। अधर्म में जो वर्तमान है, वह पुनः-पुनः जन्म लेते हैं।

48. वे नरक जाते हैं और कर्मों की भावना से पुनः जन्म लेते हैं। कुछ झूठे ही जटाएं बढ़ाते हैं। कुछ मुण्डित हो जाते हैं और कुछ नग्न रहते हैं।

49. यह लोग और अन्य वेद त्रयी से बाहर, पाखण्डी और पापाचारी होते हैं। यहां पाप में 'प' शब्द का अर्थ त्रयी धर्म और दूसरे 'प' का अर्थ जगत् पालन है।

50. उसको खण्डित करने के नाते वह पाखण्डी कहलाते हैं। यदि इनका अनादर करते हुए प्रमाणता न कही जाय

51. और ऐसा करना अशक्य है ऐसा माना जाय, तो अन्य लोग समदृष्टि हो जाएंगे। सिद्ध त्रयी मार्ग के जो अत्यन्त विरोधी हैं,

52. उनका निराकरण बिना किए धर्म शुद्धि नहीं होती। जो पाखण्डी, विकर्मी, वैडाल, हैतुक,

Nijanand App

बकवृत्तांश्च यान् तान्वै बाङ्मात्रेणापि नार्चयेत्।
या वेदबाह्याः स्मृतयो याश्च काश्च कुदृष्टयः।।५३।।
सर्वास्ता निष्फलाः प्रेत्य तमोनिष्ठा हि ते स्मृताः।
पुराणानि तथा सांख्यं योगः पाशुपतं तथा।।५४।।
देशजातिकुलानां च धर्माश्चान्ये महत्तराः।
सर्वे वेदाविरोधेन प्रमाणं नान्यथा भवेत्।।५५।।
या वेदबाह्याः स्मृतयो याश्च काश्चकुदृष्टयः।
सर्वास्ता निष्फलाः किञ्च प्रत्यवायस्य हेतवः।।५६।।
तस्मात्सर्वप्रयत्नेन देवि देवेन्द्रवन्दिते।
त्यक्त्वा वेदविरुद्धानि वेदमेकं समाश्रयेत्।।५७।।
पुराणन्यायमीमांसाधर्मशास्त्रांगमिश्रिताः।
वेदाः स्थानानि विद्यानां धर्मस्येति चतुर्द्दश।।५८।।
यथा वेदास्तथा तन्त्रं धर्मनिर्द्धारहेतवे।
तदुक्तमाचरन् देवि भवपाशाद्विमुच्यते।।५९।।
अन्तोऽन्यथा प्रवर्त्तन्ते ये मूढाः पापबुद्धयः।
असुरास्तान्विजानीहि विष्णुना मोहिताः पुरा।।६०।।
ब्रह्मवादेषु वाचाला धर्मोच्छेदैकतत्पराः।
तेषां मुखावलोकेन कुर्यात्सूर्यावलोकनम्।।६१।।
तस्य संस्पर्शमात्रेण सवासा जलमाविशेत्।
कलौ ते घोषयिष्यन्ति ब्रह्मवादं जने जने।।६२।।
इति मे कथितं देवि यत्वया पृष्टमुत्तमम्।
समासेन महादेवि किं भूयः श्रोतुमिच्छसि।।६३।।
इति श्रीमाहेश्वरतन्त्रे शिवोमासंवादे अष्टादशं पटलम्।।१८।।

एकोनविंशं पटलम्

शिव उवाच

अथेदानीं शृणु शिवे प्रियाणां कामनिर्णयम्।
यस्य श्रवणमात्रेण वैराग्यं देहगेहयोः।।१।।
मनोरथश्च यश्चासीत् प्रियाणां दुःखदर्शने।
रासे प्रदर्शिते प्रायो ह्यसम्पूर्णोविशेषितः।।२।।
तद्भोगार्थं पुनः सर्वाः प्रियास्ता रासविच्युताः।
कालमायामयं देवि ब्रह्माण्डं बिविशुः सह।।३।।

Nijanand App

53. वक वृत्ति हैं, उनका वाणी से भी सत्कार नहीं करना चाहिए। जो स्मृतियां वेद विरुद्ध हैं और जो कुदृष्टि वाली हैं,

54. वे सब निष्फल हैं, तमोनिष्ठ हैं। पुराण, सांख्य, योग, पाशुपत तथा अन्य

55. देश, जाति और कुलों के महान् धर्म हैं, यह सभी यदि वेद विरुद्ध न हों तो प्रमाणभूत है। यदि वेद विरुद्ध हैं तो इनका प्रमाण नहीं होता।

56. जो स्मृतियां वेद विरुद्ध हैं और जो कोई कुदृष्टि वाली हैं, वे सभी निष्फल ही नहीं बल्कि पाप देने वाली हैं।

57. इसलिए, हे देवेन्द्र पूजित देवी! सब प्रयत्न से वेद-विरुद्धों का त्याग कर एकमात्र वेद का आश्रय लेना चाहिए।

58. पुराण, न्याय, मीमांसा, शर्म शास्त्र और छः अंग (वेदांग) और चार वेद, धर्म और विद्या के चौदह स्थान हैं।

59. जैसे वेद हैं वैसे ही धर्म निर्धारण के लिए तन्त्र भी हैं। उनमें कहा हुआ आचरण करते हुए मनुष्य संसार-पाश से मुक्त हो जाता है।

60. इसके विपरीत जो पापी मूढ़ आचरण करते हैं, उन्हें विष्णु द्वारा मोहित असुर ही जानिए।

61. जो लोग ब्रह्म सम्बन्धी वार्ता करने में बहुत वाचाल और धर्म का विनाश में तत्पर हैं, उनके मुख का दर्शन करके सूर्य को देखना चाहिए।

62. उनका स्पर्श होने पर वस्त्र पहने हुए ही जल में प्रवेश कर जाय। ऐसे लोग कलियुग में सभी लोगों से ब्रह्मवाद की घोषणा करेंगे।

63. हे देवि! जो तुमने पूछा था वह संक्षेप में बता दिया और तुम क्या सुनना चाहती हो?

माहेश्वरतन्त्र के शिव-पार्वती संवाद का अठारहवां अध्याय समाप्त हुआ।

उन्नीसवां अध्याय

शिव बोले—

1. हे शिवे! अब इस समय प्रियाओं का काम निर्णय सुनो, जिसके श्रवण मात्र से शरीर और घर से वैराग्य हो जाता है।

2. प्रियाओं के दु:ख दर्शन का जो विशेष मनोरथ था, असम्पूर्ण रास दिखाए जाने के कारण पूरा न होने से

3. उसके भोग के लिए रास से भ्रष्ट सभी प्रियाएं काल मायामय ब्रह्माण्ड में एक साथ प्रवेश कर गईं।

Nijanand App

संभूता भारते वर्षे नैकत्र स्थितयोभवन्।
मोहावेशवशाद्देवि दुस्तरादीशनिर्मितात्॥४॥
विच्युतात्मानुसन्धाना बभूवुर्भगवत्प्रियाः।
यथा स्वप्ने जनः कश्चिन्निद्रात्याजितसंस्मृतिः॥५॥
स्वप्नलब्धगजाकार आत्मानं मनुते गजम्।
मोहलब्धाकृतिस्तद्वल्लब्ध्वा तादात्म्यभावतः॥६॥
उच्चावचासु योनिषु विभ्रमन्ति विचित्रधा।
तत्र देहाभिमानोत्थकर्मसंसर्गदूषिताः॥७॥
कर्मबन्धस्ततो जातो यथा स्यादुत्तरोत्तरम्।
श्वकाकोलूकमार्जार खरगृध्रादियोनिषु॥८॥
भ्रान्त्वा भ्रान्त्वा मनुष्येषु भूत्वा भूत्वा पुनः पुनः।
जायन्ते च म्रियन्ते च तेषामन्तो न विद्यते॥९॥
जन्मदुःखं जरादुःखं बाल्ये यद्दुःखमुल्बणम्।
देहत्यागनिमित्तं च दुःखमाप्ताः पुनः पुनः॥१०॥
क्वचिद्धर्मः क्वचिच्छोको रागद्वेषादिकं क्वचित्।
क्वचिद्बन्धः क्वचिन्मोक्षो राजसन्ताडनं क्वचित्॥११॥
अन्नादिकाङ्क्षया क्वापि दरिद्रेणापि विद्रुताः।
म्लानेन्द्रियमुखाकारा दैन्यभावं समागताः॥१२॥
पुत्रमित्रकलत्रादिनाशोत्थं दुःखमद्भुतम्।
प्राप्य हाहेति हाहेति परितापान् जुषन्ति ताः॥१३॥
बृहत्सेनस्य राजर्षेर्यथा राज्ञी पतिव्रता।
अधौतपादा चोच्छिष्टा सुष्वाप विधिमोहिता॥१४॥
यक्षः कश्चिन्निशाचारी प्रसुप्तामहरच्च ताम्।
समुद्रद्वीपमानीय यक्षमायामयं महत्॥१५॥
ददर्श नगरं दिव्यं दिव्याट्टालकगोपुरम्।
यक्षस्तिरोदधे तस्यां तदावेशविमोहिता॥१६॥
सैका बभ्राम नगरे गृहे गृहे विचेतना।
यत्र यत्र गता सा तु जनैस्तत्र विभीषिता॥१७॥
तमिश्रायां तमोमय्यां भ्रमन्ती भ्रांतमानसा।
हतवस्त्राम्बरा क्वापि प्रसह्य परिपन्थिभिः॥१८॥
मुक्तकेशा वस्त्रहीना धूलिधूसरविग्रहा।
पिशाचिनीव नगरे बभ्रामैका दिवानिशम्॥१९॥

Nijanand App

4. सम्पूर्ण भारतवर्ष में अनेक स्थानों पर स्थित हुई मोह आवेश के कारण उनकी यह स्थिति हुई।

5. भगवान की प्रियाएं अपने आत्मानुसन्धान से भ्रष्ट हो गईं। जिस प्रकार कोई व्यक्ति स्वप्न में संस्मरण रहित हो जाता है।

6. स्वप्न में गज आकार पाकर अपने को गज मानने लगता है। मोह के कारण उस आकार को प्राप्त कर उससे तादात्म्य स्थापित होने पर

7. ऊंची नीची विचित्र योनियों में घूमते रहते हैं। उन योनियों में देहाभिमान होने के कारण किए जाने वाले कर्म के संसर्ग से दूषित हो जाते हैं।

8. तब कर्म बन्धन बन जाता है और उत्तरोत्तर कुत्ता, कौआ, उलूक, विडाल, गीध, गधा आदि योनियों में

9. घूमते-घूमते फिर मनुष्य योनि में जन्म लेते-लेते पैदा होते और मरते रहते हैं। उनका कोई अन्त नहीं दिखाई पड़ता।

10. जन्म का दु:ख, वृद्धावस्था का दु:ख, बाल अवस्था में जो अतिशय दु:ख है, देह त्याग के समय जो भयंकर दु:ख हैं को पुन: प्राप्त करते हैं।

11. कहीं धर्म, कहीं शोक, कहीं राग-द्वेष, आदि कहीं बन्धन, कहीं मोक्ष, कहीं राजा द्वारा ताड़न,

12. कहीं अन्नादि की इच्छा, दरिद्रता से पीड़ित, मुर्झाये हुए इन्द्रिय मुख वाले दीनता को प्राप्त हो जाते हैं।

13. पुत्र, मित्र, स्त्री आदि की मृत्यु से अद्‌भुत दु:ख पाकर हाहाकार करते हुए दु:ख का अनुभव करते हैं।

14. राजा वृहत्सेन की पतिव्रता स्त्री पैरों को बिना धोएं हुए, जूठे मुख दैववशात् सो गई।

15. रात में चलने वाला कोई यक्ष उसको हर ले गया। समुद्र के द्वीप में लाकर यक्षों की माया से बने एक महान्

16. दिव्य अटारियों एवं गोपुर वाले दिव्य नगर की रानी ने देखा और यक्ष अन्तर्ध्यान हो गया। रानी यक्ष के आवेश से मोहित हो गई।

17. वह अकेले ही उस नगर में चैतन्यरहित होकर घर-घर में घूमने लगी। जहां-जहां वह गई वहां लोगों ने उसे डराया।

18. अन्धेरी रात में भ्रमित मन से घूमती हुई लुटेरों ने उसके वस्त्र छीन लिए।

19. खुले हुए केश, वस्त्रहीन, धूलि-धूसरित शरीर वाली वह पिशाचिनी की तरह अकेली नगर में दिन-रात घूमती रही।

Nijanand App

रुदन्ती करुणा दीना ताड्यमाना जनैर्मुहुः।
क्षुत्तृड्व्याकुलचित्ता सा वल्गन्तीव जनाज्जनम्॥२०॥
महाजनैश्च विपिने नगरात्तु विवासिता।
व्याघ्रासिंहध्वनिं श्रुत्वा भीषणं त्रस्तमानसा॥२१॥
दृष्ट्वा तांस्तु पुनः साध्वी वृक्षखण्डेष्वलीयत।
वृक्षकोटरगैः सर्पैर्दंशिता विवशाभवत्॥२२॥
अशेत भूमिशयने विषव्याघूर्णमानसा।
भूविलोत्थैर्वृश्चिकाद्यैः सन्दष्टा सर्वसन्धिषु॥२३॥
एवं नानाविधांस्तायान प्राप्ता नृपतिसुन्दरी।
कर्कराकण्टकैर्विद्धपादाम्भोजा महावने॥२४॥
का त्वं कस्यासि वामोरु पृष्टा सप्तर्षिभिस्तु सा।
नाहं विदामि चात्मानं न तातं मातरं पतिं॥२५॥
दुःखातिदुःखपाथोधौ मग्नास्मीत्यभ्यभाषत।
भृशं नागरिकैर्दुष्टैः पीडिता भर्त्सिता पुनः॥२६॥
तस्करैर्वस्त्रभूषादि दुष्टैरपहृतं हि मे।
क्षुत्तृट्परीता पापिष्ठैर्नगराच्च विवासिता॥२७॥
याता महावनं भ्रान्ता व्याघ्रसिंहभयाकुला।
भुजङ्गवृश्चिकैः क्रूरैर्विषव्यापादितान्तरा॥२८॥
भ्रमाम्यहं दिवारात्रौ न जाने विदिशं दिशम्।
अतः कुरुध्वं साहाय्यमनाथायाः कृपालवः॥२९॥
एवमुक्तं तया साध्व्या कृपया पीडिता भृशम्।
कमण्डलुजलेनौक्षन् यक्षोघ्नेन मुनीश्वराः॥३०॥
लीनायां यक्षमायायां आत्मानं समपद्यत।
सस्मार मातरं तातं बृहत्सेनं पतिं तथा॥३१॥
व्रीडिताधोमुखी बाला मुनीन्द्रान् प्रत्यभाषत।
सूर्यवंशप्रसूतस्य बृहत्सेनस्य धीमतः॥३२॥
प्रियास्म्यहं विप्रदेवा उच्छिष्टा शयनं गता।
केनचिज्जलधेस्तीरमानीता भयविह्वला॥३३॥
तत्रैकं नगरं दिव्यं मया दृष्टं महाद्भुतम्।
तत्रैकला विभ्रमन्ती लोकपीडासहानिशम्॥३४॥
ततो निष्कासिता पौरैः प्राप्तेदं विपिनं महत्।
अस्तंगतात्मविज्ञाना भ्रान्ता दुःखमयेऽध्वनि॥३५॥

Nijanand App

20. बारम्बार लोगों के द्वारा पीटी गई, करुणा से रोती हुई, भूख प्यास से व्याकुल चित्त, एक से दूसरे के पास जाती रही।

21. महाजनों ने उसको नगर से निकाल कर जंगल में भेज दिया। वहां बाघ, सिंह के शब्दों को सुनकर बहुत घबड़ाई।

22. उनको देखकर वह वृक्ष खण्डों में छिप गई। वृक्ष के कोटरों में बैठे सर्पों ने उसे काटा और वह विवश हो गई।

23. विष के फैलने से व्याकुल होकर जमीन पर ही लेट गई। बिलों से निकलने वाले बिच्छू आदि ने काटा।

24. इस प्रकार से नाना प्रकार के तापों से पीड़ित होकर रानी के पैर घोर जंगल में कंकड़ और कांटों से छिद गए।

25. सप्तर्षियों ने उससे पूछा कि तुम किसकी पत्नी हो? उसने कहा कि मैं अपने को, पिता-माता को, पति को, किसी को नहीं जानती।

26. दुःख से भी अधिक दुःख देने वाले सागर में मैं डूब रही हूं। दुष्ट नागरिकों ने मुझे बहुत डांटा और पीटा है।

27. और दुष्ट तस्करों ने मेरे वस्त्राभूषण, आदि छीन लिए हैं। भूख प्यास से पीड़ित मैं पापियों द्वारा नगर से निकाल दी गई हूं।

28. सिंह, बाघ का जहां भय है उस महावन में मैं घूमती रही। विषैले सांप और बिच्छू बार-बार मुझे काटते रहे।

29. मैं दिन रात घूमती हूं। विदिशा, दिशा को मैं नहीं जानती। अतः, हे दयालु! मुझ अनाथ की सहायता कीजिए।

30. इस प्रकार उस साध्वी के कहने पर कृपावश मुनीश्वरों ने कमण्डल का यक्ष नाशक जल छिड़का।

31. जब यक्ष की माया समाप्त हो गई तो उसने अपने को जान लिया। माता, पिता और पति वृहत्सेन का स्मरण हो गया।

32. लज्जित होकर नीचे मुख किए मुनीन्द्रों से कहा—सूर्यवंश में उत्पन्न श्रीमान् वृहत्सेन की

33. मैं प्रिया हूं। हे विप्रदेव! मैं उच्छिष्ट अवस्था में ही सो गई थी। कोई मुझे समुद्र तट पर उठा लाया।

34. वहां पर मैंने एक महान् अद्भुत नगर देखा। वहां अकेली घूमती हुई मैंने अनेक पीड़ाएं सहीं।

35. फिर पुरवासियों ने मुझे वहां से निकाल दिया और मैं इस जंगल में आ गई1 मेरा आत्म विज्ञान नष्ट हो गया। मैं दुःखमय मार्ग में भटक रही हूं।

Nijanand App

भवद्भिर्नष्टमज्ञानं तमः सूर्यांशुभिर्यथा।
नष्टं लब्धमिवात्मानं मेने भवदनुग्रहात्॥३६॥
सवस्त्रभूषणाकल्पं देहं चैव यथा पुरा।
पश्यामि शयनोद्बुद्धा यथा स्वप्ने लयं गते॥३७॥
भवत्प्रसादाद्दुःखाब्धिमुत्तीर्णा भगवत्तमाः।
इत्युक्त्वा मुनिपादाब्जं प्रणताभूत्पुनः पुनः॥३८॥
ततः प्रोचुर्मुनिवराः सांत्वयंतश्च तां सतीं।
भयं मा कुरु कल्याणि पातिव्रत्यपरायणे॥३९॥
अज्ञानप्रभवं विश्वं वस्तुतो नास्ति किञ्चन।
यावदज्ञानमात्मस्थं तावद्दर्शयते भयम्॥४०॥
मिथ्या स्वप्नोपि राजर्षिप्रिये भयकरो यथा।
तथा मिथ्यापि संसारो भयकृत्तदृशा जुषां॥४१॥
अज्ञातैव यथा रज्जुः सर्पभूता भयप्रदा।
अविद्यासबलब्रह्मविवर्त्तोयं प्रपञ्चकः॥४२॥
तदंशभूतजीवानामविज्ञातो भयङ्करः।
स्वात्मत्वेन तु विज्ञातो भयं नोद्वहते पुनः॥४३॥
आत्मा शुद्धोऽव्ययः सूक्ष्मो व्यापी नित्यो निरञ्जनः।
स्वमायावरणच्छन्नः स्वस्मिन् स्वप्नं प्रपश्यति॥४४॥
यथा तदुद्भवैश्छन्नं शैवालैः सलिलं भवेत्।
स्वमायया तथा छन्नं अक्षरं ब्रह्मकेवलम्॥४५॥
मायावृतं परं ब्रह्म स्वप्नसाक्षितया पुनः।
स्वाप्नमण्डं प्रविश्याशु धत्ते नारायणाभिधाम्॥४६॥
तस्य नाभेरभूत्पद्मं तत्र जातश्चतुर्मुखः।
प्रवरो वेदविदुषां बीजं संसारभूरुहः॥४७॥
तत्र जाता वयं सर्वे स्वाप्निका एव भामिनि।
भ्रमायैः कर्मभिर्नुन्नाः स्वप्नमायामये पथि॥४८॥
त्वयानुभूतमेतद्धि यथेदं यक्षमायिकं।
तस्यापसरणे साध्वि स्वात्मालब्धो यथा पुरा॥४९॥
जीवाः सर्वे वयं तद्वद् ब्रह्माभासमया अपि।
मायाकार्यांशविलये भविष्यमोऽक्षरात्मकाः॥५०॥
मायाकार्ये विद्यमाने दुःखशोको भयं शुचः।
धर्माधर्मौ पुण्यपापे सत्यमित्येव गम्यते॥५१॥

Nijanand App

36. जिस प्रकार सूर्य अन्धकार को नष्ट कर देता है वैसे ही आपने मेरा अज्ञान दूर कर दिया है। अब मैं आपकी कृपा से यह मानती हूं कि मेरी खोई हुई वस्तु मुझे मिल गई।

37. वस्त्राभूषण सहित पहले जैसा शरीर ही मैं देख रही हूं। जिस प्रकार स्वप्न समाप्त होने पर मनुष्य जागृत अवस्था का अनुभव करने लगता है उसी प्रकार मैं पूर्व अवस्था का अनुभव करती हूं।

38. हे मुनियो! आपकी कृपा से मैं दुःख सागर से पार हो गई। ऐसा कहकर राज महिषी बार-बार मुनि के चरण कमलों पर नत हुई।

39. मुनिवरों ने उस सती को सान्त्वना देते हुए कहा, हे कल्याणि! पतिव्रत धर्म पालन करने वाली भय मत करो।

40. यह विश्व अज्ञान से उत्पन्न है। वास्तव में यह कुछ नहीं है। जब तक अज्ञान के कारण यह विश्व प्रतीत होता है तब तक भय दिखलाता है।

41. जिस प्रकार स्वप्न यद्यपि मिथ्या है फिर भी जब तक है तब तक भय देता है। इसी प्रकार मिथ्या होता हुआ भी यह संसार दृष्टि वालों को भय देता है।

42. जिस प्रकार रज्जु विषयक अज्ञान ही सर्प होकर भय देता है, इसी प्रकार अविद्या से वेष्टित ब्रह्म का विवर्त रूप यह विश्व

43. उस ब्रह्म के अंशभूत जीवों के द्वारा ज्ञान होने पर भयंकर है और जब आत्मज्ञान से यह जान लिया जाता है, तो भय उत्पन्न नहीं करता।

44. आत्मा शुद्ध, अव्यय, सूक्ष्म, व्यापी, नित्य, निरंजन, अपनी माया के आवरण से ढका हुआ अपने में स्वप्न देखता है।

45. जिस तरह से पानी से उत्पन्न होने वाले सिवार से जल ढक जाता है, इसी प्रकार केवल ब्रह्म अक्षर अपनी माया से आच्छन्न हो जाता है।

46. मायावृत्त श्रेष्ठ ब्रह्म स्वप्न साक्षी के रूप में हो जाता है और स्वप्न में प्रकट होने वाले अण्ड में प्रवेश कर नारायण संज्ञा को धारण करता है।

47. नारायण की नाभि से कमल निकलता है और उसमें ब्रह्मा प्रकट होते हैं। वह ब्रह्मा वेद जानने वालों में सर्वश्रेष्ठ तथा संसार रूपी वृक्ष के बीज हैं।

48. हे भामिनी! हम सभी लोग उस संसार में स्वप्न की तरह उत्पन्न हुए हैं और स्वप्न के मायामय मार्ग में भ्रमवश घूमते रहते हैं।

49. हे साध्वि! तुमने जो अनुभव किया है यक्षों की माया का और उसके हटने पर तुमको अपना ज्ञान पहले की तरह हो गया है।

50. इसी प्रकार हम सभी जीव यद्यपि ब्रह्म के आभामय हैं फिर भी माया के कार्य के विलीन होने पर अक्षर रूप हो जाएंगे।

51. जब तक माया का कार्य विद्यमान है तब तक दुःख, शोक, भय, चिन्ता, धर्म, अधर्म, पुण्य-पाप यह सब सत्य प्रतीत होते हैं।

Nijanand App

तस्मादवास्तवं दुःखं विज्ञाय हृदये दृढम्।
वीतशोका वीतभया भव भामिनि नित्यदा।।५२।।
इत्युक्त्वा तां मुनिश्रेष्ठा योगमायावलेन च।
निमिषेण गृहं निन्युर्घटिकांतरितं प्रिये।।५३।।
प्रिया राज्ञोपि तद्वृत्तं विचार्य च पुनः पुनः।
महाकुतूहलाक्रान्ता राज्ञे सर्वं न्यवेदयत्।।५४।।
एवं ता देवदेवेशि प्रिया भगवतो हि ताः।
भ्रान्तात्मरूपविज्ञाना मायास्वप्ने परात्मनः।।५५।।
नानायोनिषु देवेशि संसरन्ति पुनः पुनः।
भ्रान्तात्मानश्च्युतानन्दाः संसारेप्यसति प्रिये।।५६।।
निजधाम्नि महानन्दे दुःखाभासो न विद्यते।
न दुःखानुभवश्चापि तत्रत्यानां कदाचन।।५७।।
न कार्पण्यं न दुःखं च नोद्वेगो नारतिः क्वचित्।
तत्प्रियाप्रार्थितं मत्वा निर्बन्धेन गिरीन्द्रजे।।५८।।
कूटस्थस्वप्नसम्बन्धमनो भावान् प्रचक्रिरे।
असन्नपि महेशानि स्वप्नोयं दुःखदो महान्।।५९।।
स्ववासनाकामशेषो ह्यधुनापि निषेव्यते।।६०।।
इति श्रीमाहेश्वरतन्त्रे शिवोमासंवादे एकोनविंशं पटलम्।।१९।।

विंशं पटलम्

पार्वत्युवाच

अहो देव महादेव परात्मन् परमेश्वर।
त्वदुक्तमेतदाश्रुत्य मनो मे क्षुभ्यततेराम्।।१।।
निरीहस्यापि देवस्य कूटस्थपरात्मनः।
दिदृक्षा यत्समुत्पन्ना रहःक्रीडावलोकने।।२।।
नित्यानन्दविहाराणां प्रियाणां परात्मनः।
दिदृक्षा यत्समुत्पन्ना केवलं दुःखदर्शने।।३।।
इत्येतन्महदाश्चर्यं प्रतिभाति महेश्वर।
तन्निराकुरु देवेश मनःशल्यंमहार्तिकृत्।।४।।
पूर्णस्यैवाप्तकामस्य किन्तु क्रीडावलोकने।
तदङ्गभूतास्तत्तुल्याः प्रियास्तु परमात्मनः।।५।।

Nijanand App

52. हे भामिनी! इसलिए हृदय में मजबूती से बैठे हुए अवास्तविक दु:ख को समझकर नित्य शोक एवं भय रहित हो जाओ।

53. ऐसा उससे कहकर मुनियों ने अपने योगमाया के बल से उसको एक घड़ी में उसके घर पहुंचा दिया।

54. राजा की प्रिया ने अपनी उस घटना पर बार-बार विचार कर महान् कौतूहल से सारी बात राजा को बताई।

55. इसी प्रकार भगवान की वह सब प्रियाएं अपने रूप विज्ञान से भटकी हुई परात्मा के माया रूपी स्वप्न में पड़कर

56. नाना योनियों में पुन:-पुन: उत्पन्न होती हैं। हे प्रिए! यद्यपि यह संसार असत् है फिर भी वे भटकी हुई आनन्दरहित उन योनियों में होती हैं।

57. महान् आनन्द से परिपूर्ण निज-धाम में दु:ख का आभास ही नहीं है और वहां कभी भी दु:ख का अनुभव नहीं है।

58. न वहां कृपणता है, न दु:ख है, न उद्वेग है, न आरती उतारना है। यह अवस्था जो उनको दिखलाई है, वह प्रियाओं के हठ से प्रार्थना करने के कारण।

59. कूटस्थ ब्रह्म उनके स्वप्न से सम्बन्ध होने के कारण जो अनेक प्रकार के भाव प्रदर्शित होते हैं, यद्यपि वास्तव में वे कुछ भी नहीं, फिर भी यह स्वप्न दु:खदाई प्रतीत होता है,

60. अपनी वासनाओं के देखने की इच्छा शेष होने से आज भी कष्ट का अनुभव हो रहा है।

माहेश्वरतन्त्र के शिव-उमा सम्वाद का उन्नीसवां अध्याय समाप्त हुआ।

बीसवां अध्याय

पार्वती ने कहा—

1. हे परमेश्वर! आपके द्वारा कहे हुए को सुनकर मेरा मन बहुत क्षोभित हो रहा है

2. कि कूटस्थ परात्मा जो निरीह है उसको रास-क्रीड़ा देखने की इच्छा हुई।

3. परात्मा के प्रिय नित्यानन्द विहारों की प्रियाओं को दुख देखने की इच्छा हुई।

4. यह मुझे अत्यन्त आश्चर्य प्रतीत होता है। हे महेश्वर! हमारे मन को शल्य के समान कष्टदायक इस आश्चर्य का निराकरण कीजिए।

5. जो पूर्ण है, आप्तकाम है, उसकी अनेक क्रीड़ाओं के देखने के लिए उन्हीं के अंगभूत, उन्हीं के तुल्य, परमात्मा की जो

Nijanand App

दुःखकामः कथं तासु केवलानन्दमूर्तिषु।
न दुःखदर्शने कश्चिन्मूर्खो वा रमते क्वचित्॥६॥
एतदाचक्ष्व भगवन् कृपां कृत्वा ममोपरि॥

शिव उवाच

शृणु देवि प्रवक्ष्यामि रहस्यं परमाद्भुतम्॥७॥
वेदागमपुराणेषु यत्तु गुप्ततरं प्रिये।
अद्यप्रभृति कस्यापि नोक्तवानहमद्रिजे॥८॥
तव स्नेहवशाद्देवि प्रवक्ष्यामि न चान्यथा।
त्वयापि गोपितव्यं हि स्कंदाच्च गणपादपि॥९॥
प्रकाशितं हरेद्धर्मं यशोलक्ष्मीसुखानि च।
वेदशास्त्रपुराणानि सामान्यगणिका इव॥१०॥
इयं विद्या महाविद्या गोप्या कुलवधूरिव।
सुगुप्तेयं महाविद्या ज्ञानसिद्धिकरी नृणां॥११॥
यथा प्रकाशितं द्रव्यं तस्करेभ्योपगच्छति।
तथा प्रकाशिता विद्या पशुभ्य उपगच्छति॥१२॥
गोपितव्या ततो यत्नाद्विद्येयं ब्रह्मदर्शिनी।
मन्त्रौषधक्रियाधर्माः गुप्ता एव फलन्ति हि॥१३॥
अवाच्यमपि ते वच्मि शृणुष्वैकाग्रमानसा।
गणनाविषयानन्दो वर्त्तते केवलेऽक्षरे॥१४॥
सप्तद्वीपवतीं पृथ्वीं यः शास्ता व्याहतेन्द्रियः।
निरामयो निःसपत्नो युवा राजेन्द्रवन्दितः॥१५॥
तदानन्दो हि देवेशि मनुष्यानन्द ईरितः।
मनुष्यानन्दशतकं गन्धर्वानन्द उच्यते॥१६॥
गन्धर्वानन्दशतकं पित्रानन्द उदीरितः।
पित्रानन्दशतेनैको ह्युपदेवस्य चोच्यते॥१७॥
उपदेवानन्दशतं देवानन्द उदीर्यते।
देवानन्दशतं देवि वैरंच्यानन्द उच्यते॥१८॥
वैरंच्यानन्दशतकमानन्दो वैष्णवः स्मृतः।
वैष्णवानन्दशतकं रुद्रानन्दस्तु उच्यते॥१९॥
मदानन्दशतेनोक्तः ईशानन्दपरो महान्।
ईशानन्दशतेनोक्त शैवानन्दस्तु केवलः॥२०॥

Nijanand App

6. आनन्द मूर्ति प्रियाएं हैं, उन्हें दुःख की कामना किस प्रकार होती है क्योंकि कोई मूर्ख भी दुःखदर्शन में मन नहीं लगाता।

7. हे भगवन! मेरे ऊपर कृपा करके यह बतलाइए।

शिव बोले—

हे देवि! इस परम अद्‌भुत रहस्य को मैं कहता हूं, सुनो।

8. जो वेद, शास्त्र तथा पुराणों में अति गुप्त है और हे गिरिराज पुत्री! आज तक जिसको किसी से कहा नहीं।

9. हे देवि! तुम्हारे स्नेह से वह कहूंगा अन्यथा मैं न कहता। तुम्हें भी स्कन्द तथा गणेश जी से इसको गुप्त रखना चाहिए।

10. इसको अपात्र को बतलाने से यश, लक्ष्मी, सुख नष्ट हो जाता है। वेद, शास्त्र, पुराण सामान्य गणिका की तरह हैं।

11. यह विद्या महाविद्या है, कुलबधू की तरह गोप्य है। यह महाविद्या सुगुप्त होने पर मनुष्यों के ज्ञान की सिद्धि करती है।

12. जिस तरह से सामने रखा धन चोरों के पास चला जाता है, ऐसे ही सबको प्रकाशित विद्या पशुओं के पास चली जाती है।

13. इसलिए ब्रह्म का दर्शन कराने वाली यह विद्या गुप्त रखनी चाहिए। मन्त्र, औषधि, क्रिया तथा धर्म गुप्त ही रहने पर फल देते हैं।

14. अवाच्य भी तुमको मैं बता रहा हूं, ध्यान देकर सुनो। गणना विषय का आनन्द केवल अक्षर में है।

15. स्वस्थ इन्द्रिय वाला, रोगरहित, शत्रुरहित, राजेन्द्रवंदित जो युवक राजा सात द्वीपों वाली पृथ्वी पर शासन करता है,

16. वह आनन्द मनुष्य का आनन्द कहलाता है। मनुष्यानन्द की सौ संख्या के बराबर गन्धर्वानन्द होता है।

17. सौ गन्धर्वानन्दों के बराबर पितरानन्द कहा जाता है। सौ पितरानन्दों का एक उपदेवानन्द होता है।

18. सौ उपदेवानन्दों का एक देवानन्द होता है। सौ देवानन्दों का एक वैरंच्यानन्द होता है।

19. सौ वैरंच्यानन्दों का वैष्णवानन्द होता है। सौ वैष्णवानन्दों का रुद्रानन्द होता है।

20. सौ रुद्रानन्दों का ईशानन्द होता है। सौ ईशानन्दों का शैवानन्द होता है।

Nijanand App

तच्छतेन भवेद्देवि प्रकृत्यानन्द उत्तमः।
प्रकृत्यानन्दशतकं पुरुषानन्द उच्यते॥२१॥
पुरुषानन्दशतकं अक्षरानन्द उच्यते।
अक्षरं परमं ब्रह्म ब्रह्मानन्दस्ततः स्मृतः॥२२॥
ब्रह्मानन्दमयं विश्वं नानाभावो न विद्यते।
मायोपाधिसमायोगान्नानात्वेन प्रतीयते॥२३॥
तत्प्रतीतिनिरासे तु परं ब्रह्मैव शिष्यते।
तन्माया प्रकृतिर्देवि नित्या तत्सहधर्मिणी॥२४॥
शुद्धसत्वप्रधाना हि निर्मला ज्ञानरूपिणी।
तत्र यः प्रतिबिम्बोभूदक्षरस्य परात्मनः॥२५॥
तमाहुः पुरुषं देवि श्रुतिसिद्धान्तवादिनः।
स एव कालरूपेण प्रकृतिक्षोभकारकः॥२६॥
तस्मान्नारायणो जज्ञे स एव प्रणवाभिधः।
हिरण्यगर्भमपि तं प्रवदन्ति मनीषिणः॥२७॥
शब्दब्रह्ममयं प्राहुस्तमेवागमवेदिनः।
तस्माद्वेदाः प्रवर्त्तन्ते शब्दब्रह्मात्मना प्रिये॥२८॥
आदौ शब्दात्मकं विश्वं ततश्चार्थमयं भवेत्।
शब्दः प्रकृतिरूपश्च अर्थः स्यात्पुरुषात्मकः॥२९॥
उभयात्मकः प्रपञ्चोयं तस्मात्स्त्रीपुंस्वरूपधृक्।
त्वमहं च तथा विष्णुर्लक्ष्मीर्ब्रह्मा सरस्वती॥३०॥
सूर्यः सञ्ज्ञानलः स्वाहा पुरूहूतः पुलोमजा।
अम्भोनिधिश्च मर्यादा वृक्षः पल्लविनी लता॥३१॥
महद्वाल्पतरं वापि तत्सर्वमुभयात्मकम्।
अक्षरे शाश्वतावेतौ प्रकृतिः पुरुषस्तथा॥३२॥
जाग्रत्स्वप्नविभेदेन प्रपञ्चपरिणामिनौ।
नित्यत्वमुभयोर्देवि विवदन्तेत्र वादिनः॥३३॥
नित्यः प्रपञ्च एवेति ह्यनित्य इति केचन।
अहङ्कारवशाद्देवि वादिनो मूढबुद्धयः॥३४॥
नित्यानित्यं न जानन्ति स्व पक्षाग्रहदोषतः।
नित्यत्वात्कारणस्यापि प्रवाहे नित्यतास्तु वा॥३५॥
श्रौतत्वाज्जन्यनाशस्य ह्यनित्यत्वेपि का क्षतिः।
द्वैताद्वैते तथा देवि विवदन्ते कुबुद्धयः॥३६॥

Nijanand App

21. सौ शैवानन्दों का उत्तम प्रकृत्यानन्द होता है। सौ प्रकृत्यानन्दों का पुरुषानन्द होता है।

22. सौ पुरुषानन्दों का अक्षरानन्द होता है। अक्षर श्रेष्ठ ब्रह्म है अतः इसे ही ब्रह्मानन्द कहते हैं।

23. यह संसार ब्रह्मानन्दमय है। इसमें नानाभाव नहीं है। माया रूपी उपाधि का संयोग होने से नानात्व की प्रतीति होती है।

24. उस प्रतीति का जब निराकरण हो जाता है तो ब्रह्म ही शेष रहता है। उसी की माया प्रकृति है। यह उसकी सहधर्मिणी है और नित्य है।

25. यह शुद्ध सत्व प्रधान, निर्मल, ज्ञानरूपिणी होती है। उसमें अक्षर परात्मा का प्रतिबिम्ब होता है।

26. हे देवि! वेद के सिद्धान्तों को जानने वाले उसे पुरुष कहते हैं। वह ही काल रूप में परिणत होकर प्रकृति में क्षोभ होता है।

27. इस (क्षोभ) से नारायण की उत्पत्ति होती है और उसी का दूसरा नाम प्रणव (ओंकार) है। विद्वान लोग उसे हिरण्यगर्भ भी कहते हैं।

28. शास्त्रों के ज्ञाता लोग उसी को शब्द ब्रह्म भी कहते हैं। उस शब्द ब्रह्म से वेद प्रकट होते हैं।

29. आदि में शब्दात्मक विश्व प्रकट होता है। बाद में अर्थ रूप विश्व प्रकट होता है। शब्द और प्रकृति रूप अर्थ पुरुषात्मक होता है।

30. यह प्रपंच (विश्व) उभयात्मक (द्वैतमूलक) है, इसलिए पुरुष एवं स्त्री रूप भी इसका है। तुम और मैं, विष्णु और लक्ष्मी, ब्रह्मा और सरस्वती,

31. सूर्य और संज्ञा, अग्नि और स्वाहा, इन्द्र और इन्द्राणी, समुद्र और मर्यादा, वृक्ष और लता,

32. छोटा या बड़ा संसार में जो कुछ है, उभयात्मक है। अक्षर में यह दोनों प्रकृति तथा पुरुष शाश्वत हैं।

33. प्रपंच (विश्व) का परिणाम जाग्रत एवं स्वप्न के भेद से होता है। हे देवि! दोनों में नित्यता है। वादी लोग इसमें विवाद करते हैं।

34. कुछ कहते हैं यह प्रपंच नित्य है और कुछ इसे अनित्य कहते हैं। यह वादी अहंकार के अधीन मूढ़ व्यक्ति हैं।

35. इनमें अपने पक्ष को सिद्ध करने का आग्रह होता है। इस दोष के कारण वह नित्य अनित्य कुछ नहीं जानते हैं। जैसे कारण नित्य है तो उससे निकलने वाला कार्य प्रवाह भी क्या नित्य होगा?

36. जो वस्तु उत्पन्न होती है उसके नाश से अनित्यत्व में कौन सी क्षति है, क्योंकि वह श्रुति सिद्ध है। इसी प्रकार द्वैत अद्वैत के विषय में भी कुबुद्धि लोग विवाद करते हैं।

Nijanand App

ईश्वराज्जीवपार्थक्यमिति तत्वद्विदो विदुः।
ब्रह्मैवाज्ञानवशतो जीवस्तत्प्रतिगीयते॥३७॥
न जीवं परमार्थेन विदुरद्वैतवादिनः।
न विरुद्धमिदं देवि ह्यज्ञानावधिभेदतः॥३८॥
ज्ञानेनाज्ञाननाशे तु लब्धेनेश्वरतुष्टितः।
जाग्रत्स्वप्नस्य विलये स्वप्नसाक्षीव सुन्दरि॥३९॥
एकमेवावशिष्येत नित्यं ब्रह्मैव केवलम्।
अद्वैतवादिनो ह्येवं श्रुतिमात्रावलम्बिनः॥४०॥
एकमेव परं ब्रह्म नाना नास्तीह किञ्चन।
मृदेव सत्यमित्येवं नामरूपे विकारवत्॥४१॥
इत्यद्वैतं श्रुतिशतैरुद्घोषितमनेकधा।
द्वैतवादरताश्चापि द्वासुपर्णाविती‍रणात्॥४२॥
द्वैतमेव प्रशंसन्ति ह्यभेदो भजनात्मकः।
अद्वैतभूमिकाधस्तात्सोपानास्थास्तु ते प्रिये॥४३॥
तेषां नारायणः साक्षात्परब्रह्म श्रुतीरणात्।
ब्रह्माभासमया जीवाः क्षुद्रोपाधिगुणाश्रिताः॥४४॥
अस्वतन्त्राः पराधीना नित्या इत्यपि चक्षते।
अव्याहतं च नित्यत्वं भ्रान्तिमूलमपि प्रिये॥४५॥
निद्रोपलब्धभावानां निद्रा तावत्स्थितिः स्थिरा।
इति यत् शास्त्रहृदयमज्ञात्वा विवदन्ति ये॥४६॥
द्वैताद्वैतविचारेस्मिन्न ते तत्वमवाप्नुयुः।
तस्मात्सर्वप्रयत्नेन सर्वशास्त्रैकनिश्चयम्॥४७॥
ज्ञात्वा भजन्ति देवेशि निःसन्देहः फलात्मकः।
वाक्यभेदाननादृत्य बुद्धिक्लेशादहङ्कृतेः॥४८॥
ये प्रवर्तन्त एवैते सशल्याः फलविच्युताः।
एकमेवाद्वयं ब्रह्म द्विधा लीलाविभेदतः॥४९॥
प्रवृत्तिश्च निवृत्तिश्च लीलाभेदे व्यवस्थिता।
निवृत्तिः सुखसञ्ज्ञा हि सुखमानन्दरूपकम्॥५०॥
प्रसङ्गात्प्रकृतेर्देवि प्रवृत्तिर्बहुरूपिणी।
अजानतां वरारोहे दुःखरूपतया स्थिता॥५१॥
अक्षरस्य तु सा प्रोक्ता लीलान्यातीतधर्मिणी।
प्रवृत्तिलीलालेशोपि नैवातीते परात्मनि॥५२॥

Nijanand App

37. तत्वज्ञ लोग ईश्वर से जीव पृथक् हैं, यह कहते हैं। ब्रह्म ही अज्ञानवश जीव कहा जाता है।

38. अद्वैतवादी वास्तविक अर्थ में जीव को नहीं जानते हैं। हे देवि! अज्ञान की अवधि में भेद होता है, इसलिए यह विरुद्ध नहीं है।

39. हे सुन्दरी! ईश्वर की कथा के ज्ञान द्वारा जब अज्ञान नष्ट हो जाता है, तो जागृत और स्वप्न दोनों विलय हो जाते हैं, ठीक उसी प्रकार जैसे स्वप्न में देखी वस्तुएं।

40. उस समय केवल एक ब्रह्म ही शेष रह जाता है। इस प्रकार से अद्वैतवादी लोग केवल श्रुति को ही आधार मानते हैं।

41. परब्रह्म एक ही है, नाना कुछ भी नहीं। मिट्टी ही सत्य है, उसके नाम और रूप विकार मात्र हैं।

42. इस प्रकार अद्वैत सैकड़ों श्रुतियों द्वारा अनेक प्रकार से घोषित हुआ है। द्वैतवादी भी वेद की यह श्रुति 'द्वासुपर्णो' के आधार पर

43. द्वैत की ही प्रशंसा करते हैं। अभेद भजन (कथन) रूप है। अद्वैत भूमिका के बाद के सोपानों में तुम्हारी आस्था होनी चाहिए।

44. श्रुति के कथनानुसार नारायण ही उनके उनके साक्षात परब्रह्म हैं और जीव ब्रह्माभास रूप हैं, जिनमें क्षुद्र उपाधि गुण होता है।

45. वे स्वतन्त्र नहीं पराधीन होते हैं, उन्हें नित्य भी कहते हैं। उनका नित्यत्व अव्याहत और भ्रान्ति का मूल भी है।

46. स्वप्न के समय में जो पदार्थ उपलब्ध होते हैं उनका अस्तित्व तभी तक है जब तक निद्रा है। इसी प्रकार जो लोग शास्त्र के हृदय को न जानकर विवाद करते हैं,

47. वे इस द्वैत-अद्वैत के विचार में तत्व ज्ञान तक नहीं पहुंचते। इसलिए सब प्रयत्नों से सभी शास्त्रों का एक निश्चय

48. जानकर संशयहीन लोग भजन करते हैं। निःसन्देह होना ही फल देता है। भिन्न-भिन्न प्रकार के वाक्यों का आदर न करके बुद्धि क्लेश से अहंकार से

49. जो प्रवृत्त हो जाते हैं, उनमें एक शल्य चुभा रहता है और वे फल से भ्रष्ट हो जाते हैं। अद्वैत ब्रह्म एक ही है। लीला भेद से उसमें दो रूप हो जाते हैं।

50. प्रवृत्ति और निवृत्ति लीला भेद में स्थित है। निवृत्ति का नाम सुख है और सुख आनन्दस्वरूप है।

51. प्रकृति का संयोग होने से प्रवृत्ति अनेक रूपिणी होती है। जिनको उसका तात्विक ज्ञान नहीं होता है उनके लिए वह प्रवृत्ति दुःख रूप होती है।

52. दूसरों में न होने वाली जो अक्षर की लीला कही गई है उस परात्म में प्रवृत्ति की लीला का लेशमात्र भी नहीं होता।

Nijanand App

आग्रहमात्रो देवेशि नित्यानन्दमहोदधेः।
लेश एव सदा तिष्ठेत्स कामो नित्यरूपधृक्॥५३॥
कामरूपी सदानन्दः कामांशो लेश उच्यते।
तस्मादेवाक्षरे देवि नित्यकामो हि दर्शने॥५४॥
तस्मादेवाक्षरे जाता दिदृक्षा या तु पार्वति।
न चैककर्तृका सा तु परापरमयी हि सा॥५५॥
अक्षरे ज्ञानतन्मात्रे स्वत इच्छा न जायते।
न प्रवर्तयते साक्षात्पूर्णात्मा पुरुषोत्तमः॥५६॥
सामरस्यमयीं प्राहुस्तस्मादागमवेदिनः।
आनन्दगा सामरस्यात् स्वपक्षविषयग्रहा॥५७॥
साङ्गिनं तु परित्यज्य भृशमङ्गेष्वसर्पत।
स्वामिनीषु ततो जाता दिदृक्षा दुःखदर्शने॥५८॥
उभयव्यापिनी सा तु सर्वकारणकारणा।
ततः कार्यप्रवृत्तिस्तु हेतोर्गुणनिबन्धिनी॥५९॥
स्त्रीपुंभावात्मिका जाता ब्रह्मादिस्तम्बभेदतः।
इच्छया ससृजे निद्रा सापि जातोभयात्मिका॥६०॥
ज्ञानात्मिका स्वतः शुद्धा बहिर्वृत्तिविवर्जिता।
निद्रया सृजते मोहश्चेतनाचेतनो हि सः॥६१॥
सचैतन्यस्य कार्यस्य हेतुर्यच्चेतनात्मकः।
स एव जडहेतुश्च यस्मादयमचेतनः॥६२॥
विद्याविद्ये स एवोक्तः शृणु तत्रापि कारणम्।
चिदचिद्ग्रन्थिको ह्येषश्चिदाकारेण केवलम्॥६३॥
यदा परिणमेद्देवि तदा विद्येति तां विदुः।
यदा चैतन्यमावृत्य केवलं मोहरूपधृक्॥६४॥
जीवबुद्धिं समावृण्वन् अविद्येति च गीयते।
तमः कालुष्यमुत्सृज्य शुद्धसत्वप्रधानिका॥६५॥
जीवबुद्धेर्भेदकरी मायेति कथिता प्रिये।
सात्विकांशं परित्यज्य केवलं चित्स्वरूपिणी॥६६॥
अपरोक्षकरी विद्या ब्रह्मविद्येति तां विदुः।
तस्माद्द्विधा त्रिधा प्रोक्ता मया ते वरवर्णिनि॥६७॥
ततो गुणास्त्रयो जातास्तेपि तादृग्विधा शिवे।
सत्वं तु चेतनं विद्धि तमो विद्यादचेतनम्॥६८॥

Nijanand App

53. हे देवि! नित्यानन्द सागर की कृपा अंश रूप में नित्य रूप धारण कर स्थित रहती है।

54. सदानन्द काम रूपी है और काम का अंश लेश कहा जाता है। इसलिए अक्षर में दर्शन का नित्यकाम होता है।

55. हे देवि! इसलिए अक्षर में जो देखने की इच्छा प्रकट हुई वह निर्मात्री नहीं है और वह उससे परे है।

56. ज्ञान ही तन्मात्रा रूप में जिसमें है उस अक्षर में स्वतः इच्छा उत्पन्न नहीं होती, साक्षात पूर्णात्मा पुरुषोत्तम को प्रवृत्ति नहीं होती।

57. इसलिए शास्त्रज्ञ लोग उस प्रवृत्ति को समरसमयी कहते हैं। समरस होने के कारण अपने विषयों को ग्रहण न करने से वह आनन्द तक पहुंचते हैं।

58. साथी को छोड़कर यह अंगों में फैल जाता है, इसलिए स्वामिनियों में दुःखदर्शन की इच्छा हुई।

59. वह दर्शनेच्छा उभय व्यापिनी है और सभी कारणों का वही कारण है। उसी से कार्य में प्रवृत्ति होती है। वह कार्य प्रवृत्ति कारणों के गुणों से सम्बन्धित होती है।

60. ब्रह्मा से लेकर पेड़-पौधे तक स्त्री पुरुष रूप में वह प्रवृत्ति होती है। इच्छा मात्र से निद्रा की उत्पत्ति हुई। वह भी दो रूपों में होती है।

61. यह ज्ञानात्मिका स्वतः शुद्ध होती है और इसकी वहिर्वृत्ति नहीं होती। निद्रा द्वारा मोह उत्पन्न होता है और वह मोह चेतन अचेतन होता है।

62. चेतनता सहित जो कार्य होता है उसका हेतु चेतन होता है और वही जड़ का भी हेतु होता है क्योंकि वह मोह चेतन अचेतन होता है।

63. उसी को विद्या तथा अविद्या कहते हैं। उसका भी कारण सुनो। यह चित् ग्रन्थि वाला और अचित् ग्रन्थि वाला चिद् के आकार में

64. परिणत होता है, तो उसे विद्या कहते हैं। जब चैतन्य को आवरण करके केवल मोह रूप धारण कर लेता है और केवल

65. जीव बुद्धि को आवृत्त कर देता है तो इसे अविद्या कहते हैं। हे प्रिये! तमोगुण की कलुषता को छोड़कर शुद्ध सत्व प्रधान

66. जीव बुद्धि का भेद करने वाली माया कही जाती है। सात्विक अंश को छोड़कर केवल चित् स्वरूप वाली,

67. अपरोक्ष ज्ञान देने वाली विद्या ब्रह्म विद्या कही जाती है। इसलिए हे देवि, मैंने दो-तीन प्रकार तुमसे कहे।

68. हे शिवे! उससे उसी प्रकार के तीन गुण उत्पन्न हुए। सत्व गुण को चेतन समझिए और तमोगुण को अचेतन जानना चाहिए।

Nijanand App

रजस्तदुभयात्मत्वाच्चेतनाचेतनात्मकम्।
भूतानि पञ्च जातानि तानि तादृग्विधान्यपि॥६९॥
अधिष्ठेयान्यधिष्ठातृतया द्वैविध्यवन्ति च।
ब्रह्माण्डमभवत्तेभ्यस्तदेवोभयरूपधृक्॥७०॥
एतत्ते सर्वमाख्यातं यत्पृष्टोहं त्वया शिवे।
समासेन महेशानि किं भूयः श्रोतुमिच्छसि॥७१॥
इति श्रीमाहेश्वरतन्त्रे उत्तरखण्डे शिवपार्वतीसंवादे विंशं पटलम्॥२०॥

एकविंशं पटलम्

शिव उवाच

अतोन्यत् शृणु देवेशि रहस्यं किञ्चिदुत्तमम्।
गोपनीयं प्रयत्नेन यस्मै कस्मै न दर्शयेत्॥१॥
परीक्षिताय वक्तव्यं ताडनैस्तर्जनादिभिः।
ऋते पात्रमिदं ज्ञानं न तिष्ठति कदाचन॥२॥
आविर्भूताक्षरे शक्तिरिच्छा नाम सुमङ्गला।
अङ्गान्यावृत्य सत्प्रेमविरहौत्कण्ठ्यदर्शने॥३॥
रतिमुत्पादयामास ततः सा, पुरुषोत्तमं।
प्रार्थयामासुरौत्सुक्यात्स्वामिन्या सह सङ्गताः॥४॥
निवारिता बहुविधैर्वाक्यैरिच्छाविमोहिताः।
न मेनिरे प्रियाः सर्वा अर्थयामासुरन्वहं॥५॥
प्रार्थना स्वीकृतास्तासामतीतेनाक्षराद्यदा।
तदा सा पुनरासाद्य निद्रा चित्यन्वधात्प्रिये॥६॥
चिदात्मा पुरुषः साक्षान्मोहमय्यैव निद्रया।
घूर्णितोशेत सन्मंचे पञ्चब्रह्ममये शुभे॥७॥
यदैव निद्रया घूर्णो विस्मृतात्माभवत्प्रिये।
हृदयाब्जकर्णिकामध्ये विहरेतापरा हि सा॥८॥
व्यचिनोत्पञ्चधा देवि स्वरूपमपि चात्मना।
उद्गारिणी पालिका च तथा संहारिकापि च॥९॥
विशाला व्यापिका चेति शक्तयः पञ्च कीर्तिताः॥१०॥
रजःप्रधानहारिणी पालिनी सात्विकी मता।
तमःप्रधाना संहर्त्री शुद्धसत्वा विशालिका॥११॥

Nijanand App

69. रजोगुण उभय रूप होने से चेतन और अचेतनात्मक होता है और उनसे उसी समान गुण वाले पंचमहाभूत उत्पन्न होते हैं।

70. यह अधिष्ठाता होने के कारण अधिष्ठेय दो प्रकार के होते हैं और उससे सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड उत्पन्न होता है जिसके दो रूप होते हैं।

71. हे शिवे! जो तुमने पूछा था संक्षेप में बता दिया और क्या सुनना चाहती हो?

माहेश्वरतन्त्र के उत्तर खण्ड में शिव-पार्वती संवाद का बीसवां अध्याय समाप्त हुआ।

इक्कीसवां अध्याय

शिव ने कहा—

1. हे देवेशि! इसके अतिरिक्त दूसरा उत्तम रहस्य भी मैं कह रहा हूं, सुनो यह गोपनीय है, जिस किसी को इसे नहीं बताना चाहिए।

2. ठोंक बजाकर तथा धमकाकर परीक्षा में सफल हुए को ही इसे बताना चाहिए। जो पात्र नहीं हैं उसके पास यह ज्ञान किसी प्रकार रह नहीं सकता।

3. अक्षर में सुमंगला नाम की इच्छाशक्ति उदित होती है। अंगों को आवरण कर सत् प्रेम के विरह की उत्कण्ठा से दर्शन के लिए उसने

4. रति उत्पन्न किया है। स्वामिनी के साथ मिलकर पुरुषोत्तम से प्रार्थना की।

5. अनेक वाक्यों से मना करने पर भी इच्छा से विमोहित होकर वह प्रियाएं नहीं मानीं और प्रति दिन प्रार्थना करती रहीं।

6. जब उनकी प्रार्थना अक्षरातीत द्वारा स्वीकृत हुई तो, हे प्रिय! चित्त में निद्रा प्राप्त हो गई।

7. साक्षात् चित् पुरुष मोहमयी निद्रा के द्वारा पंच ब्रह्ममय शुभ मंच पर चक्कर खाकर सो गए।

8. जब निद्रा से चक्कर खाकर अपने को भूल गए तो हृदय कमल की कर्णिका के मध्य में अपरा ने विहार किया।

9. हे देवि! वह स्वयं अपने पांच रूपों में प्रकट हुई। उद्गारिणी, पालिका, संहारिका,

10. विशाला, व्यापिका—यह पांच शक्तियां कही गई हैं।

11. उद्गारिणी रजोगुण प्रधान होती है। पालिका सत्वगुण प्रधान है। संहारिका तमोगुण प्रधान है। शुद्ध सत्व विशाला तथा

Nijanand App

निर्गुणा व्यापिका शक्तिरिच्छा पञ्च विधोदिता।
एता एवोदिता देवि जाग्रति प्राकृतास्तथा॥१२॥
इच्छामय्यस्तु शयने तस्मान्मञ्चो निरामयः।
उद्गारिणीपालिकयोः स्कन्धयोस्तत्पदद्वयं॥१३॥
विशालाहारिणीकण्ठदेशे पाणिद्वयं स्थितम्।
व्यापिका मञ्चफलकीभूताधारतया स्थिता॥१४॥
पञ्चसु प्रतिबिम्बोभूदक्षरस्य चिदात्मनः।
बिम्बितं यत्तु चैतन्यं तस्मिन्नुद्गारिणी हि सा॥१५॥
दर्शयामास वेदास्याद्युपाधिमतिविस्तृतम्।
बिम्बितं यत्तु चैतन्यं तस्मिन् या पालिनी शिवे॥१६॥
अदर्शयच्चतुर्भुजाद्युपाधिमतिविस्तृतम्।
बिम्बितं यत्तु चैतन्यं तस्मिन् संहारिणी तु या॥१७॥
अदर्शयन्त्रिनेत्राद्युपाधिमतीवसुन्दरि।
बिम्बितं यत्तु चैतन्यं तस्मिन् या तु विशालिका॥१८॥
अष्टबाह्वाद्युपाधिं च दर्शयामास केवलं।
बिम्बितं यत्तु चैतन्यं तस्मिन् या व्यापिका मता॥१९॥
दशबाहुं च पञ्चास्याद्युपाधिमसृजत्प्रिये।
ब्रह्मा विष्णुश्च रुद्रश्च ईश्वरश्च सदाशिवः॥२०॥
पञ्चपादत्वमापन्ना नित्यमुद्वहते परं।
सृष्टिं स्थितिं च संहारं तिरोधानमनुग्रहम्॥२१॥
नित्यमेव प्रकुर्वन्ति भूताधिष्ठातृरूपिणः।
सृष्ट्यादित्रयसिद्ध्यर्थं त्रयाणां बुभुर्जेशतः॥२२॥
तिरोधानानुग्रहौ तु पञ्चपादस्थयोर्विदुः।
पञ्चशक्तिप्रभेदेन परेच्छैव सुगङ्गला॥२३॥
ब्रह्मविष्ण्वादिरूपाणि धत्ते नानास्वरूपिणी।
अक्षरस्य तु रूपे द्वे पुरुषाक्षरभेदतः॥२४॥
नारायणस्तु पुरुषाज्जज्ञे स्वप्नेक्षिता स्वयम्।
नादबिन्दू शिवः शक्तिर्जातौ नारायणात्प्रिये॥२५॥
नादबिन्दुमयत्वेन त्रिधा नारायणः स्थितः।
सङ्कर्षणो वासुदेवः प्रद्युम्नः अनिरुद्धकः॥२६॥
चतुर्धा विष्णुरेवोक्तो ह्यंशभेदा ह्यनेकशः।
एकादश विभेदात्मा रुद्रोहमहमीश्वरि॥२७॥

Nijanand App

12. व्यापिका गुण रहित होती है। इस प्रकार इच्छाशक्ति के पांच भेद कहे गए हैं। हे देवि। यह ही पांच कही गई हैं। जाग्रत अवस्था में यह प्राकृत होती है,

13. स्वप्न में इच्छामयी । इसलिए मंच निरामय होता है। उद्गारिणी और पालिका रूपी स्कन्ध मंच के दो पद होते हैं।

14. विशाला और हारिणी यह कण्ठ देश में दो हाथ हैं। व्यापिका मंच के फलक के रूप में आधार हैं।

15. इन पांचों में अक्षर की चिदात्मा का प्रतिबिम्ब पड़ा और इससे चैतन्य प्रतिबिम्बित हुआ। उसमें उद्गारिणी ने

16. वेद आदि अति विस्तृत उपाधियां दिखलायीं। हे शिवे! जो चैतन्य प्रतिबिम्बित हुआ उसमें पालिनी शक्ति ने

17. चतुर्भुज आदि विस्तृत उपाधि दिखलायी। प्रतिबिम्बित चैतन्य में संहारिणी ने

18. त्रिनेत्र आदि उपाधि दिखलायी और जो प्रतिबिम्बित चैतन्य था उसमें विशाला ने

19. अष्टभुज उपाधि प्रदर्शित की। उसमें व्यापिका ने

20. दशबाहु, पंचमुख आदि उपाधि का सृजन किया। इस प्रकार ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र, ईश्वर और सदाशिव—

21. यह मंच के पैर के रूप में होकर परब्रह्म को नित्य धारण करते हैं। यह सृष्टि, स्थिति, संहार, तिरोधान, अनुग्रह

22. भूतों के अधिष्ठाता के रूप में नित्य करते हैं। तीनों के अंश से सृष्टि आदि तीन की सिद्धि के लिए भोग भी करते हैं।

23. मंच के पाद रूप में स्थितों का कर्म तिरोधान एवं अनुग्रह भी कहा गया है। सुमंगला पर इच्छा शक्ति ही पंच शक्ति के भेद से

24. नाना स्वरूपों वाली होकर ब्रह्मा, विष्णु आदि रूपों को धारण करती है। अक्षर के दो रूप हैं। पुरुष और अक्षर।

25. पुरुष से नारायण उत्पन्न होता है जो स्वयं स्वप्न में द्रष्टा होता है। हे प्रिये! नारायण से शिव नाद रूप में और शक्ति बिन्दु रूप में प्रकट हुए।

26. इस प्रकार नाद बिन्दु रूप नारायण तीन रूपों में स्थित हुए। संकर्षण, वासुदेव प्रद्युम्न, अनिरुद्ध।

27. यह चार रूप विष्णु ही कहे गए हैं। अंशों के भेद तो अनेक हैं। हे ईश्वरि। मैं रुद्र एकादश विभेद वाला हूं।

Nijanand App

मदात्मभेदाः शतशः कोटिशः सन्ति सुन्दरि।
सदाशिवेश्वरावेतौ आत्मभेदविवर्ज्जितौ॥२८॥
वेदप्रणवभेदेन द्विधा नारायणादभूत्।
नाद एव महेशानि बहु स्यामित्यवेक्षणात्॥२९॥
न भेदो विद्यते विन्दौ अखण्डात्मनि सुन्दरि।
महत्तत्वमिदं भद्रे मनो नारायणस्य तत्॥३०॥
मनसस्तु बहु स्यामित्यमन्यत यदा हि सः।
अहङ्कारस्ततो जज्ञे प्रसृतो बिन्दुतां ययौ॥३१॥
बिन्दुः शून्यात्मको ज्ञेयस्तस्माद्विश्वं निरर्थकम्।
व्याप्तोहङ्कार एवायं ब्रह्माभासेषु दृश्यते॥३२॥
ब्रह्माभासो निर्विकारो निष्प्रपञ्चो निरञ्जनः।
न करोति न लिप्येत प्रदीप इव भासकः॥३३॥
अहङ्कारस्य कर्तृत्त्वं भोक्तृत्वमपि सुन्दरि।
धर्माधर्मौ पुण्यपापे बन्धमोक्षादिकं तथा॥३४॥
अहङ्कारेण भिद्येत नानाभेदव्यवस्था।
अहङ्कारेण तादात्म्यादाभासेपीक्षते स्फुटं॥३५॥
अहङ्कारमयो ग्रन्थिर्यावन्नैव विभिद्यते।
अविद्यमानः संसारः तथाप्येनं न मुञ्चति॥३६॥
स्फटिकस्यैव रागित्वं जपाकुसुमयोगजम्।
नापगच्छति तद्देवि कुसुमापहृतिं विना॥३७॥
तथा संसरणं जीवे ह्यहङ्कारच्युतिं बिना।
निवर्तते न देवेशि कल्पकोटियुतायुतैः॥३८॥
सोहङ्कारस्त्रिधा प्रोक्तो गुणभेदेन पार्वति।
अहङ्कारोयमेवाहं तथा जीवगतो द्विधा॥३९॥
महत्तत्वं त्रिधा प्रोक्तं अध्यात्मादिप्रभेदतः।
नारायणमनोरूपमाधिदैविकमुच्यते॥४०॥
जीवानां चित्तरूपं यदध्यात्म्यमिति चक्ष्यते।
ब्रह्मणो देहरूपस्थमाधिभौतिकमुच्यते॥४१॥
नारायणेधिदैवेन रूपेण परिनिष्ठितम्।
आविर्बभूव तद्वर्णभेदैर्वेदस्वरूपतः॥४२॥
जीवगं यत्तुदेवेशि चित्तरूपतया स्थितम्।
सुषुम्णावर्त्तिना प्राणवायुना सह सङ्गतं॥४३॥

Nijanand App

28. हे सुन्दरि! मेरे भी अपने सैकड़ों करोड़ों भेद हैं। सदाशिव और ईश्वर में आत्म भेद नहीं है।

29. जब नारायण ने इच्छा प्रकट की कि मैं अनेक हो जाऊं, तो नाद ही वेद एवं प्रणव (ॐ) भेद से रूप में प्रकट हुए।

30. हे सुन्दरी! बिन्दु अखण्ड आत्मा है उसमें कोई भेद नहीं। वह बिन्दु ही नारायण का महत्तत्व है और वही नारायण का मन है।

31. जब मन ने यह इच्छा की कि मैं अनेक हो जाऊं तो उससे अहंकार उत्पन्न हुआ और वही फैलकर बिन्दु रूप में हो गया।

32. बिन्दु को शून्य जानना चाहिए, उसी से यह निरर्थक विश्व व्याप्त है। यही अहंकार ब्रह्माभासों में दीखता है।

33. ब्रह्माभास निर्विकार, निष्प्रपंच, निरंजन है। यह न तो कुछ रचना करता है, न किसी में लिप्त होता है। यह दीपक के समान प्रकाशक है।

34. हे सुन्दरि! अहंकार ही कर्ता एवं भोक्ता है। धर्म-अधर्म, पुण्य-पाप तथा बन्धन-मोक्ष

35. नाना भेद की व्यवस्था से अहंकार द्वारा भिन्न-भिन्न हो जाते हैं। अहंकार के साथ तादात्म्य हो जाने से आभास में भी यह स्पष्ट दिखाई देते हैं।

36. अहंकार रूपी ग्रन्थि जब तक नहीं छूटती, तब तक मिथ्या होते हुए भी संसार उसके लिए सत्य प्रतीत होता है और उसे छोड़ता नहीं है।

37. स्फटिक पत्थर पर जवा पुष्प रखने से वह स्फटिक लाल दिखाई पड़ता है। उसका रंग तब तक नहीं जाएगा जब तक पुष्प नहीं हटेगा।

38. इसी प्रकार जब तक अहंकार नहीं नष्ट होगा, तब तक जीव का आवागमन नहीं समाप्त होगा चाहे जितने ही कोटि कल्प बीत जाएं।

39. हे पार्वति! गुण भेद से वह अहंकार तीन प्रकार का कहा गया है। अहंकार "यह मैं ही हूं" तथा जीवगत अहंकार दो प्रकार का होता है।

40. महत्तत्व तीन प्रकार का कहा गया है। अध्यात्म, आदि भेदों से नारायण का मन रूप आधिदैविक कहा जाता है।

41. जीवों का चित्त रूप अध्यात्म कहा जाता है। ब्रह्मा के देह रूप में स्थित आधिभौतिक कहा जाता है।

42. नारायण में अधिदैव रूप की पूर्ण निष्पत्ति (चरमसीमा) वर्ण भेदों से युक्त वेद स्वरूप में प्रकट हुआ।

43. जो जीव के चित्त रूप में स्थित अध्यात्म है वह जब सुषुम्णा में स्थित प्राणवायु से मिलता है तो

Nijanand App

वायुस्तेन युतो देवि ब्रह्मरन्ध्राहतः पुनः।
ताल्वोष्ठपुटनासादिभेदेन परमेश्वरि॥४४॥
वर्णात्मनाविर्भवति गद्यपद्यादिभेदतः।
ब्रह्मदेहतया यस्मात् स्थितं त्रैलोक्यकारणम्॥४५॥
अतस्तस्माज्जगज्जातं देवासुरनरोरगं।
इति तेऽभिहितं देवि रहस्यं परमाद्भुतम्॥४६॥
श्रद्धाहीनाय दुष्टाय कृतघ्नाय दुरात्मने।
नास्तिकायाविनीताय वेदशास्त्रोद्गताय च॥४७॥
अविश्वस्ताय देवेशि दर्शयेन्न कथञ्चन।
यदा राजा तु सर्वस्वं बलं कोशो महीगजान्॥४८॥
निवेदयतु जिज्ञासुस्तदा तस्मै प्रकाशयेत्।
अन्यथा सिद्धिहानिः स्यात् सत्यं सत्यं न संशयः॥४९॥
तस्मात्सर्वप्रयत्नेन गोपितव्यं त्वयापि हि॥५०॥
इति श्रीमाहेश्वरतन्त्रे उत्तरखण्डे शिवपार्वतीसंवादे एकविंशं पटलम्॥२१॥

द्वाविंशं पटलम्

पार्वत्युवाच

यदुक्तं देवदेवेश त्वया पशुपते प्रभो।
प्रविश्य कर्णरन्ध्रेण चिदानन्दायते हृदि॥१॥
तीर्थानां परमं तीर्थं ज्ञानानां ज्ञानमुत्तमम्।
योगानां परमो योगो धर्माणां धर्म उत्तमः॥२॥
श्रोतव्यानां च परमं श्रोतव्यमिदमेव हि।
ज्ञातव्यानां च परमं ज्ञातव्यमिदमुच्यते॥३॥
श्रुतं मया विशेषेण सोपपत्तिकमित्यपि।
न तथाप्यन्तरात्मा मे तृप्तिमायाति शाश्वतीं॥४॥
अतस्त्वां परिपृच्छामि विशेषं तत्र धूर्जटि।
तं च ब्रूहि महादेव प्रसादपरमो भव॥५॥
स्वप्नभूतप्रपञ्चेस्मिन्नक्षरस्य परात्मनः।
प्रियाः सख्यो भगवतो वासनावशतो गतः॥६॥
कियांस्तत्र गतः कालस्तासामागमनादनु।
कियत्कालं च ताः सर्वा इह स्थास्यन्ति मोहिताः॥७॥

Nijanand App

44. उससे युक्त वायु ब्रह्मरन्ध्र में जाकर आघात करता है और तालु, ओष्ठ, पुट, नासा, आदि भेद से

45. वर्णों के रूप में प्रकट होता है। उसी के गद्य-पद्य, आदि भेद से ब्रह्म देह रूप में स्थित हो त्रैलोक्य का कारण बनता है।

46. हे देवि! इसी से देवता, असुर, नर, उरग आदि जगत् उत्पन्न होता है। यह परम् अद्भुत रहस्य मैंने तुमसे कहा।

47. श्रद्धाहीन, दुष्ट, कृतघ्न, दुरात्मा, नास्तिक, दुःशील, वेद शास्त्र मर्यादा से रहित,

48. अविश्वसनीय को कभी यह मार्ग नहीं दिखलाना चाहिए। जब कोई राजा अपना सर्वस्व, सेना, बल, कोष, पृथ्वी, गजादि दे दे

49. और जिज्ञासु हो तो उसे यह बतलाना चाहिए। अन्यथा सिद्धि में हानि होती है। यह सत्य है, इसमें संशय नहीं है।

50. इसलिए सभी प्रयत्नों द्वारा तुम्हें इसे गुप्त रखना चाहिए।

माहेश्वरतन्त्र के उत्तरखण्ड के शिव-पार्वती संवाद का इक्कीसवां अध्याय समाप्त हुआ।

बाइसवां अध्याय

पार्वती ने कहा—

1. हे देवदेवेश! पशुपते! जो आपने कहा है वह कर्ण रंध्र के द्वारा हृदय में प्रवेश कर चिदानन्द पैदा कर रहा है।

2. वह तीर्थों में परमतीर्थ है। ज्ञानों में उत्तम ज्ञान है, योगों में श्रेष्ठ योग है। धर्मों में उत्तम धर्म है।

3. श्रोतव्यों में परम श्रोतव्य है। ज्ञातव्यों में परम ज्ञातव्य वही है।

4. मैंने प्रमाण के साथ आपसे सुना है, फिर भी मेरी अन्तरात्मा शाश्वत तृप्ति नहीं प्राप्त कर रही है।

5. हे धूर्जटे! इसलिए मैं आपसे उस विषय में विशेष पूछ रही हूं। आप कृपा करके कह दें।

6. अक्षर परात्मा के इस स्वप्नभूत प्रपंच में भगवान की प्रिय सखियां वासना के वश में हो गईं।

7. उनके आने के पश्चात् कितना काल व्यतीत हुआ और कितने समय तक वे मोहित होकर रहेंगी?

Nijanand App

कथं ता बोधमाप्स्यन्ति कस्तासां प्रतिबोधकृत्।
युगपद्वा गमिष्यन्ति पृथक् वा परमेश्वर॥८॥
एतत्सर्वं महादेव कथयस्व प्रसादतः।
संशयो मे महानद्य तमपानुद शङ्कर॥९॥

शिव उवाच

शृणु पार्वति वक्ष्यामि तव प्रश्नानशेषतः।
त्वं मे प्राणाधिकैवासि तस्माद्वक्ष्ये यथातथं॥१०॥
विरंचेर्ब्रह्मणः पर्वं अष्टवक्त्रोभवद्विधिः।
शब्दब्रह्मेति यं प्राहुर्वेदवेदान्तपारगाः॥११॥
द्विपरार्द्धावसानेस्य ब्राह्मः कल्पो महानभूत्।
प्रलयोयं महेशानि प्रकृत्यवधिरुच्यते॥१२॥
एका शिष्टा च प्रकृतिः पुरुषाधिष्ठिता हि सा।
कियत्कालं ततो देवि शून्यमासीदिति श्रुतिः॥१३॥
आविर्भूता ततो निद्रा अक्षरे परमात्मनि।
महत्तत्वमतस्तस्मादहङ्कृतिरजायत॥१४॥
स एव च त्रिधा जातो गुणभेदेन सुन्दरि।
सात्विकाच्च मनो जज्ञे देवताश्च दशैव ताः॥१५॥
राजसादिन्द्रियाण्यासन् भूतानि तमसोभवन्।
तेभ्योण्डमभवद्देवि तत्र नारायणः स्थितः॥१६॥
तस्य नाभेरभूत्पद्मं यत्र ब्रह्माभवत्स्वयं।
द्विपरार्द्धमितं चास्य परमायुर्निगद्यते॥१७॥
अस्मिन् ब्रह्माण्डगोले हि जम्बूद्वीपे महेश्वरि।
वर्षे भारतसंज्ञे हि प्रियाणां वासनाः स्थिताः॥१८॥
परार्द्धः प्रथमो जातो द्वितीयेस्मिन् महेश्वरि।
निर्बन्धात्स्वामिनीनां च लीलामाविश्चकार ह॥१९॥
श्रीकृष्णः परमानन्दो नन्दगेहेभवत्तदा।
गोपकन्यामिषेणैव ह्याविर्भूतास्ततः प्रियाः॥२०॥
तत्कामपूर्त्तये साक्षात् श्रीकृष्णः पुरुषोत्तमः।
रासलीलां प्रकुर्वाणो रमयामास ताः प्रियाः॥२१॥
योगमायासमावेशान्मायाकार्यं विलुंपतः।
ब्रह्मणोपि लये जाते यथापूर्वमभूदिदम्॥२२॥

Nijanand App

8. वह कैसे जागेंगी? उनको जगाने वाला कौन होगा? वे एक साथ जागेंगी या पृथक्-पृथक्।

9. हे महादेव, प्रसन्न होकर यह सब कहिए। मुझे बहुत संशय है, इसे दूर करिए।

शिव बोले—

10. हे पार्वति! सुनो तुम्हारे सभी प्रश्नों को मैं बता रहा हूं। तुम मेरी प्राणाधिका हो, इसलिए जैसे का तैसा मैं कह रहा हूं।

11. विरंचि ब्रह्मा से पूर्व ब्रह्मा अष्टवक्त्र थे, जिनको वेदान्त पारंगत लोग शब्द ब्रह्म कहते हैं।

12. दो परार्ध के अन्त में ब्राह्म कल्प हुआ। यह प्रलय प्रकृति तक का होता है।

13. एक प्रकृति ही अवशिष्ट रहती है और वह पुरुषाधिष्ठित होती है। कुछ समय तक सब कुछ शून्य ही था, ऐसा वेद कहता है।

14. इसके पश्चात् अक्षर परमात्मा में निद्रा प्रकट हुई। उस निद्रा से महत्तत्व और उससे अहंकार उत्पन्न हुआ।

15. हे सुन्दरि! गुण भेद से अहंकार तीन प्रकार का हुआ। सात्विक अहंकार से मन तथा दस देवता प्रकट हुए।

16. राजस अहंकार के इन्द्रियां, तामस से महाभूत उत्पन्न हुए। उनसे अण्ड प्रकट हुआ। अण्ड में नारायण स्थित थे।

17. नारायण की नाभि से कमल प्रकट हुआ जिसमें ब्रह्मा स्वयं विद्यमान थे। ब्रह्मा के दो परार्ध की परमायु कही जाती है।

18. हे महेश्वरी! इस ब्रह्माण्ड गोलक में जम्बू द्वीप में भारत वर्ष हुआ। भारतवर्ष में प्रियाओं की वासना स्थित हुई।

19. इस द्वितीय परार्ध में प्रथम परार्ध जब व्यतीत हो गया तो स्वामिनियों के हठ से लीला प्रकट हुई।

20. परमानन्द स्वरूप श्रीकृष्ण नन्द के घर में प्रकट हुए। गोपों की कन्याओं के बहाने प्रियाएं प्रकट हुईं।

21. उनकी कामनाओं की पूर्ति के लिए पुरुषोत्तम श्रीकृष्ण ने रास लीला करते हुए उनके साथ रमण किया।

22. योगमाया के समावेश से माया के कार्य का लोप हो गया। ब्रह्मा जी भी लय हो गए। विश्व पहले जैसा ही हो गया।

Nijanand App

पुनर्जातं ततः सर्वं ब्रह्मादिस्थावरान्तकं।
मनोरथस्य चापूर्त्या वासनाः कार्यमध्यगाः।।२३।।
विचरन्ति यथा कालं यथादेशं यथारुचि।
द्विपरार्द्धे त्वतिक्रान्ते नष्टे स्थावरजङ्गमे।।२४।।
विरञ्चौमुक्तिमापन्ने प्रबुद्धे ह्यक्षरे प्रिये।
प्रबुद्धा वासनास्ता हि भविष्यन्ति स्वबिम्बगाः।।२५।।
आविर्भावाच्च लीलाया द्वापरान्ते कलौ युगे।
असहिष्णुः स्वप्रियाणां दुःखलीलानुदर्शनम्।।२६।।
तासामेकां च परमां सुभगां सुन्दरीं प्रियां।
प्रबोधयिष्यतितरां कथयित्वा विनिर्णयम्।।२७।।
ततस्तत्सम्प्रदायेन सर्वास्ता भगवत्प्रियाः।
स्वभर्तृविरहाक्रान्ताः त्यक्त्वा देहान् प्रपञ्चगान्।।२८।।
भगवल्लोकवैकुण्ठे स्थितिमाप्स्यन्ति यूथशः।
पद्मया रममाणास्ताः कालभोगे यथाविधि।।२९।।
दिव्यदेहानपि त्यक्त्वा भविष्यन्ति स्वबिम्बगाः।
अक्षरोप्यनुभूयैतत्स्वप्नवत्परमेश्वरि।।३०।।
परमानन्दसम्मग्नो भविष्यति कृतार्थधीः।
सर्वा लीला नित्यरूपा भविष्यन्ति तदा प्रिये।।३१।।
भगवल्लोकमात्मानं दिव्यभावेपि सुन्दरि।
अविद्यालेशसम्बन्धादक्षरस्य परात्मनः।।३२।।
निद्रांशस्यापि शेषत्वात् कियत्कालमवस्थितिः।
युगपद्देवि सर्वास्ता गमिष्यन्ति निजं गृहम्।।३३।।
न कथञ्चन देवेशि गतिस्तासां पृथक् भवेत्।
स्वप्नस्य विषये साम्यादैकात्म्याच्च तथा प्रिये।।३४।।
वैरस्याच्च विचित्रत्वे भर्तृस्नेहाविशेषतः।
न पृथक् गमनं तासां तस्माद्वैकुण्ठसंस्थितिः।।३५।।
क्रमयोगेन देवेशि सर्वा यास्यन्त्यसंशयम्।
तस्माद्देवि विशेषेण स्वपतिः पुरुषोत्तमः।।३६।।
भजनीयो हि सततं वेदशास्त्रानुरोधतः।
देहेन्द्रियस्वभावानामन्तं कर्माणि पार्वति।।३७।।
आत्मनोन्तं परब्रह्मध्यानश्रवणकीर्तनम्।
स्वभावाज्जायते कर्म सदसच्चेति सर्वथा।।३८।।
Nijanand App

23. फिर ब्रह्मा से लेकर स्थावर तक यह जगत पुनः प्रकट हुआ। मनोरथ के पूर्ण न होने से कार्य के मध्य की वासनाएं

24. कालानुसार, देशानुसार, रुचि के अनुसार विचरण करती हैं। दो परार्ध बीत जाने पर स्थावर एवं जंगम के नष्ट हो जाने पर

25. विरंचि के मुक्ति पा जाने पर अक्षर के प्रबुद्ध होने पर वे वासनाएं भी प्रबुद्ध होकर अपने मण्डल में जाने वाली हो जाएंगी।

26. द्वापर के अन्त होने पर कलियुग में लीला के आविर्भाव होने से अपनी प्रियाओं की दुखपूर्ण लीला को न सहते हुए

27. उनमें से एक परम सौभाग्यशालिनी सुन्दरी नाम की प्रिया को निर्णय बतलाकर प्रबोधित करेंगे।

28. इसके पश्चात् उस परम्परा प्राप्त ज्ञान अथवा शिक्षा से सभी भगवत् प्रियाएं अपने पति के विरह से पीड़ित होकर अपने-अपने सांसारिक देहों को छोड़कर

29. यूथों में भगवान के बैकुण्ठ लोक को चली जाएंगी। वहां लक्ष्मी के साथ विहार करती हुई वे समय बीतने पर

30. दिव्य शरीरों को छोड़कर अपने बिम्ब (मण्डल) में प्रकट होंगी। अक्षर भी इसका अनुभव स्वप्न के समान करके

31. परमानन्द में मग्न होकर कृतार्थ बुद्धि हो जाएंगे। उस समय सभी लीला नित्य रूप हो जाएगी (अखण्ड हो जाएगी)।

32. हे सुन्दरी! दिव्य भाव में भी अविद्या के अंश का सम्बन्ध होने से अक्षर परात्मा के लोक में

33. निद्रा के कुछ अंश के शेष रहने से कुछ समय तक स्थित रहेंगी। हे देवि! वह सब एक साथ अपने घर को जाएंगी।

34. हे देवेशि! उनकी गति पृथक् नहीं हो सकती। स्वप्न के विषय में समानता होने से और एकात्म्य होने से

35. और विचित्रता में विरसता (स्वाद रहित/विरक्ति) होने से और पति का समान स्नेह होने से उनका पृथक् गमन नहीं हो सकता। इसलिए बैकुण्ठ में ही उनकी स्थिति है।

36. हे देवेशि! क्रम योग से वे सभी जाएंगी, इसमें सन्देह नहीं। इसलिए, हे देवि! विशेष रूप से पुरुषोत्तम ही हमारा पति है।

37. वेदशास्त्र की आज्ञानुसार उसका निरन्तर भजन करना चाहिए। देह, इन्द्रिय, स्वभावों का अन्त कर्म है।

38. अपना अन्त, परब्रह्म का ध्यान, श्रवण, कीर्तन यह कर्म स्वभावतः उत्पन्न होते हैं। इस कर्म के सत और असत् दो रूप होते हैं।

Nijanand App

सत्यागादसदासङ्गान्नानायोनिभ्रमो भवेत्।
आधिव्याधिदरिद्रोत्थपीडाविस्मारितात्मनः।।३९।।
उद्रिक्ततमसो देवि न शुभं स्यात्कदाचन।
तस्मात्कर्तव्यमेवेह देहपर्यवसायि यत्।।४०।।
देहान्ते कर्मसम्बन्धो न भविष्यति कर्हिचित्।
प्रत्यवायनिवृत्यर्थमनिष्टाचरणस्य च।।४१।।
नित्यं नैमित्तिकं कार्यं काम्यं कर्म परित्यजेत्।
एवं यो वर्त्तते देवि निष्प्रत्यूहं स सिध्यति।।४२।।
यः शास्त्रविधिमुत्सृज्य वर्तते कामलोलुपः।
स सिद्धिमिह नाप्नोति परत्र न पराङ्गतिम्।।४३।।
एतत्ते सर्वमाख्यातं यत्पृष्टोहं त्वया प्रिये।
समासेन महेशानि किं भूयः श्रोतुमिच्छसि।।४४।।

इति श्रीमाहेश्वरतन्त्रे उत्तरखण्डे शिवोमासंवादे द्वाविंशं पटलम्।।२२।।

त्रयोविंशं पटलम्

पार्वत्युवाच

भूयोहं श्रोतुमिच्छामि तन्मे ब्रूहि सदाशिव।
भूतले भगवद्भार्या नानायोनिषु संस्थिताः।।१।।
तत्र तत्र विचित्राणि कर्माण्यपि कृतानि च।
क्वचित्तीर्थं क्वचिद्दानं क्वचिद्धोमं क्वचिज्जपः।।२।।
क्वचिन्मखादिचरणं स्वाध्यायाचरणानि च।
पितृदेवार्चनं क्वापि ब्राह्मणातिथिपूजनम्।।३।।
क्वचिन्निन्दादिकरणं देवब्राह्मणयोः सतां।
क्वचिद्वृत्तविलोपश्च तथेन्द्रियविलोभनं।।४।।
असत्यभाषणं चैव पैशुन्यं भूतहिंसनम्।
स्वर्णस्त्येयादिकं चैव सुरामांसनिषेवणम्।।५।।
द्रोहमात्सर्यहिंसादिपाकभेदादिकं तथा।
स्वस्ववर्णाश्रमाचारोल्लङ्घनं कामवर्त्तनं।।६।।
स्वगुणाख्यानमीशान पङ्क्तिभेदो वृथा क्रिया।
परेषां मर्मकथनं म्लेच्छान्नात्क्वापिजीवनम्।।७।।
निषिद्धाचरणं देव विहिताचारलङ्घनं।
गोभूगजाश्वकन्यादेस्तथा विक्रयणं प्रभो।।८।।

Nijanand App

39. सत् के त्याग से और असत् के संग से मनुष्य नाना योनियों में घूमता है। आधि, व्याधि, दरिद्रता से होने वाली पीड़ा से अपने को भूल जाता है।

40. तमोगुण के बढ़ जाने से शुभ कभी नहीं होता। इसलिए जब तक देह है तब तक शुभ कर्म करना ही चाहिए।

41. देह के अन्त में किसी प्रकार के कर्म का सम्बन्ध नहीं होगा। पापों की निवृत्ति के लिए और अनिष्ठ आचरण की निवृत्ति के लिए

42. नित्य, नैमित्तिक कर्म करना चाहिए और काम्य का परित्याग करना चाहिए। इस प्रकार जो व्यवहार करता है उसका कार्य बिना विघ्न के सिद्ध हो जाता है।

43. जो काम लोलुप होकर शास्त्र विधि छोड़ देता है, उसे जीवन में सिद्धि नहीं मिलती और मरने के बाद मुक्ति नहीं प्राप्त होती।

44. हे प्रिये, जो तुमने पूछा था संक्षेप में सब कह दिया। और क्या सुनना चाहती हो?

माहेश्वरतन्त्र के उत्तर खण्ड के शिव-पार्वती संवाद का बाइसवां अध्याय समाप्त हुआ।

तेईसवां अध्याय

पार्वती ने कहा।—

1. हे सदाशिव! मैं फिर से सुनना चाहती हूं। मुझे फिर से बताओ कि भूतल पर भगवान की भार्याएं अनेक योनियों में स्थित हैं।

2. उन उन योनियों में विचित्र कर्म किए गए हैं। कहीं तीर्थ, कहीं दान, कहीं होम, कहीं जप,

3. कहीं यज्ञ, कहीं स्वाध्याय, कहीं पितृदेवों का अर्चन, कहीं ब्राह्मणों, अतिथियों का पूजन,

4. कहीं देवता, ब्राह्मणों की निन्दा करना, कहीं सज्जन लोगों को दी हुई वस्तु को ले लेना, कहीं इन्द्रियों को लुभा देना।

5. असत्य भाषण, इधर का उधर लगाना, प्राणियों की हिंसा, सुरा-मांस का सेवन,

6. द्रोह, मत्सर, हिंसा आदि पाक भेद, अपने-अपने वर्णों एवं आश्रमों का उल्लंघन, इच्छानुसार काम करना,

7. अपने गुणों की प्रसिद्धि करना, पंक्ति भेद और वृथा कर्म करना, दूसरों के मर्म कहना, म्लेच्छों का अन्न खाकर जीवित रहना,

8. निषिद्ध आचरण करना, विहित आचरण न करना, गाय, पृथ्वी, हाथी, घोड़ा, कन्या, आदि का बेचना,

Nijanand App

वेदविक्रयणं चैव भूतसन्त्रासनं तथा।
आलस्यात्कर्मणास्त्यागस्तथैवाहङ्कृतेरपि॥९॥
कर्मण्येतानि देवेश सदसन्ति महान्त्यपि।
प्रारब्धसञ्चितान्येव क्रियमाणानि यानि च॥१०॥
तेषामन्तं न पश्यामि कल्पकोटिशतैरपि।
स्वरूपज्ञानमात्रेण सञ्चितक्रियमाणयोः॥११॥
श्रुतिसिद्धो भवेन्नाशः प्रारब्धस्य तु न क्वचित्।
नाभुक्तं क्षीयते कर्म कर्मणां भोगतः क्षयः॥१२॥
इत्येवं शास्त्रसिद्धान्तः सर्वथैव त्वयोदितः।
प्रारब्धविद्यमानत्वात्स्वरूपस्मरणेपि च॥१३॥
कथं वैकुण्ठगमनं गोचरो ग्रस्तकर्मणः।
अभुक्तान्येव कर्माणि विहाय यदि यान्ति ताः॥१४॥
न विना कर्तृ सम्बन्धं क्षणं तिष्ठन्ति तान्यपि।
इत्येनं संशयं देव छेत्तुमर्हसि मामकम्॥१५॥

शिव उवाच

साधु पृष्टं त्वया भद्रे रहस्यं परमाद्‌भुतम्।
यस्य श्रवणमात्रेण कर्मबन्धाद्विमुच्यते॥१६॥
सञ्चितं क्रियमाणं च तस्य नश्यति सर्वथा।
विरहाग्न्याहुतीभूतशरीरा या हि केवलम्॥१७॥
निक्षिप्य भूते भूतोत्थं तैजसं वपुरास्थिताः।
प्रारब्धसहिता एव ब्रह्मलोकं व्रजन्ति ताः॥१८॥
ब्रह्मलोकाद्यदा चोर्ध्वं गच्छन्ति भगवत्प्रियाः।
वैकुण्ठे निकटे प्राप्ते बलीयान् पवनो ह्यवन्॥१९॥
तेनाविष्टास्ततः सख्यः कम्पयन्ति वपुर्लताः।
वपुःकम्पेन देवेशि प्रारब्धानां च पङ्क्तयः॥२०॥
वृक्षेभ्य इव पुष्पाणि क्षरन्ति क्रमशोपि च।
कर्मसम्बन्धरहिता यान्ति वैकुण्ठमुज्वलाः॥२१॥
सदसन्त्यपि कर्माणि क्षरितानि शरीरतः।
यानाश्रयन्ति सततं वक्ष्ये तान् त्वं शृणु प्रिये॥२२॥
यैः सेवाप्रह्वणादीनि स्तोत्राणि रचितान्यपि।
उपकारः कृतो यैर्वा धनधान्याम्बरार्पणैः॥२३॥

Nijanand App

9. वेद बेचना, प्राणियों को डराना, आलस्यवश कर्म त्याग, अहंकार,

10. हे देवेश! सत् और असत् रूप में बहुत से कर्म हैं। प्रारब्ध, संचित और क्रियमाण

11. कर्मों का कोटि शत कल्पों में भी मैं अन्त नहीं देखती हूं। संचित और क्रियमाण कर्म का स्वरूप ज्ञान मात्र से ही

12. नाश हो जाता है, ऐसा वेद में कहा गया है। प्रारब्ध का तो कहीं नाश नहीं होता है।

13. यह शास्त्र का सिद्धान्त आपने ही बतलाया है। प्रारब्ध तो विद्यमान होता है। स्वरूप के स्मरण में भी उसका क्षय न होने से इन्द्रियों द्वारा किए कर्मों से ग्रस्त का

14. बैकुण्ठ गमन भी कैसे हो सकता है। यदि वह प्रियाएं कर्मों का बिना भोग किए ही जाती हैं,

15. तो कर्ता सम्बन्ध के बिना वे क्षण भर भी नहीं ठहरती हैं। हे देव! मेरे इस सन्देह को दूर करिए।

शिव बोले—

16. हे भद्रे! तुमने परम् अद्‌भुत रहस्य ठीक ही पूछा है। इसके श्रवण मात्र से कर्म बन्धन से मनुष्य छूट जाता है।

17. उसका संचित और क्रियमाण सर्वथा नष्ट हो जाता है जिसने विरह की आग में अपने शरीर को भस्म कर दिया है। महाभूत में अपने को रखकर

18. महाभूत से तेजस शरीर प्राप्त कर प्रारब्ध के सहित ही वे ब्रह्म लोक को जाती हैं।

19. जब भगवत प्रियाएं ब्रह्म लोक से ऊपर जाती हैं, तो बैकुण्ठ के समीप पहुंच जाने पर बहुत तेज वायु चलती है।

20. उस वायु से आविष्ट होकर अपने शरीर रूपी लता को कंपाने लगती हैं। शरीर के कांपने से प्रारब्ध कर्मों की पंक्तियों का वैसे ही क्षरण होता है,

21. जिस प्रकार वृक्षों के फूल गिरते हैं। जब कर्म सम्बन्ध नहीं रहता है तो उज्ज्वल होकर बैकुण्ठ जाती हैं।

22. सत् और असत् कर्म जब शरीर से क्षरित होते हैं तो वे जिनके पास जाते हैं उनका कथन मैं करता हूं, सुनो।

23. जिन लोगों ने सेवा की है, स्तोत्र रचे हैं, जिन्होंने धन, धान्य-वस्त्र आदि देकर उपकार किया है,

Nijanand App

तद्गुणश्रवणे हृष्टास्तन्निन्दायां च दुःखिताः।
सहभोज्याः सहवासाः सहयानाः सहासनाः॥२४॥
तानाश्रयन्ते देवेशि सत्कर्माणि न संशयः।
यैस्तु दुःखं कृतं तासां निन्दापारुष्यपैशुनैः॥२५॥
तदर्थहरणं चैव तद्दोषस्यैव कीर्तनम्।
वृथापवादकथनं ताडनं तर्जनं तथा॥२६॥
असत्कर्माणि सर्वाणि ह्याश्रयन्ते खलान् हि तान्।
कर्मणां देहसम्बन्धो नात्मनस्तु कदाचन॥२७॥
स्तुतिर्निन्दापि देवेशि देहगा नात्मगोचरा।
तस्माद्देहस्य संस्तुत्या निन्दया वापि पार्वति॥२८॥
प्राप्यते पुण्यपापानि तदीयानि न संशयः।
पुण्यपापे निहत्यैवं वैकुण्ठे विहरन्ति ताः॥२९॥
वैष्णवं धाम यास्यन्ति सात्त्विक्यो भगवत्प्रियाः।
द्विपरार्द्धावसाने तु यास्यन्ति युगपद्धि ताः॥३०॥
राजस्यश्चापि वैरंच्यं तामस्यो मन्त्रिकेतनम्।
न प्रकारविभेदोस्ति कर्महानौ गिरीन्द्रजे॥३१॥
गुणानुरूपाञ्च गतिं सर्वे यान्ति न संशयः।
प्रकारं शृणु तत्रापि वैकुण्ठगमनं प्रति॥३२॥
वासनालिङ्गमेतासां देहान्ते पृथिवीं विशेत्।
कियत्कालं ततः स्थित्वा पार्थिवेन्द्रियसंयुता॥३३॥
पार्थिवं विषयं देवि सेव्यमाना जलं विशेत्।
कियत्कालं ततः स्थित्वा लब्ध्वा तत्रेन्द्रियं रसं॥३४॥
अतिदिव्यं सेव्यमाना तेजस्तत्वं समाविशेत्।
कियत्कालं ततः स्थित्वा तैजसेन्द्रियसंयुता॥३५॥
विषयं रूपमासाद्य वायुतत्त्वं ततो विशेत्।
कियत्कालं ततः स्थित्वा त्वगिन्द्रियसमन्विता॥३६॥
दिव्यस्पर्शं च विषयं सेव्यमाना खमाविशेत्।
कियत्कालं ततः स्थित्वा लब्ध्वा च श्रोत्रमिन्द्रियम्॥३७॥
विषयं शब्दमासाद्य ततो भूतादिमाविशेत्।
भूतादितामसं हित्वा राजसं याति सुन्दरि॥३८॥
ततः सत्वमयं प्राप्य वैकुण्ठे रमते चिरम्।
अनेन क्रमयोगेन गमिष्यन्ति हरेः प्रियाः॥३९॥

Nijanand App

24. गुण को सुनकर जो प्रसन्न हुए हैं और निन्दा सुनकर जो दु:खी हुए, साथ में भोजन किया, सहवास किए, साथ में बैठे एवं गए,

25. हे देवेशि! सत् कर्म उन्हीं के पास चले जाते हैं, इसमें सन्देह नहीं है। जिन्होंने निन्दा, कठोरता, चुगली (पिशुनता) के द्वारा दु:ख दिया,

26. किसी का धन हरण कर लिया, दोषों की गाथा गाई, झूठी निन्दा की, वृथा मारा डांटा,

27. सब असत् कर्म इन दुष्टों के पास जाते हैं। कर्मों का सम्बन्ध देह से होता है, आत्मा से नहीं।

28. स्तुति और निन्दा देह की होती है आत्मा की नहीं। इसलिए देह की स्तुति या निन्दा से

29. देह के पुण्य-पाप प्राप्त होते हैं, इसमें सन्देह नहीं। जो पुण्य और पापों का क्षय कर लेता है वे बैकुण्ठ में विहार करती हैं।

30. जो भगवत प्रियाएं सात्विकी होती हैं, वे वैष्णव धाम को जाएंगी और दो परार्ध समय के अन्त में एक साथ जाएंगी।

31. राजसी विरंचि के तथा तामसी मेरे घर (धाम) को जाएंगी। हे पार्वती! कर्म क्षय में प्रकार भेद नहीं है।

32. गुण के अनुरूप गति सभी प्राप्त करते हैं। उसमें भी बैकुण्ठ गमन में प्रकार सुनिए।

33. इनका (प्रियाओं का) वासना लिंग पृथ्वी में प्रवेश करता है। कुछ काल वहां रहकर पार्थिव इन्द्रियों वाला हो जाता है।

34. पार्थिव विषय का सेवन करती हुई जल में प्रवेश करती हैं। कुछ काल वहां रहकर इन्द्रिय रस की प्राप्ति कर

35. अत्यन्त दिव्य तेजस् तत्व में प्रवेश करती हैं। कुछ काल वहां रहकर तैजस् इन्द्रिय से युक्त होकर

36. विषय रूप प्राप्त कर वायु तत्व में प्रवेश करती हैं। तब वहां कुछ काल रह त्वचा इन्द्रिय समन्वित होकर

37. दिव्य विषय स्पर्श सेवन करती हुई आकाश तत्व में प्रवेश करती हैं। कुछ काल व्यतीत होने पर श्रोत्रेन्द्रिय का लाभ प्राप्त कर

38. शब्द विषय को पाकर भूतादि में प्रवेश करती हैं। भूतादि तामस को छोड़कर राजस में प्रवेश करती हैं।

39. इसके बाद सात्विक को प्राप्त कर बैकुण्ठ में चिरकाल तक आनन्द करती हैं। इस क्रम योग से हरि की प्रियाएं बैकुण्ठ जाएंगी।

Nijanand App

एतेत्तुभ्यं समाख्यातं वैकुण्ठगमनादिकं।
नाख्येयं यस्य कस्यापि तव स्नेहात्प्रकाशितम्।।४०।।
त्वयापि गोपनीयं हि सत्यं सत्यं न संशयः।
अपात्रायापि पुत्राय दत्त्वा पापमवाप्नुयात्।।४१।।
एतत्ते सर्वमाख्यातं किं भूयः श्रोतुमिच्छसि।।४२।।
इति श्रीमाहेश्वरतन्त्रे उत्तरखण्डे शिवोमासंवादे त्रयोविंशं पटलम्।।२३।।

चतुर्विंशं पटलम्

पार्वत्युवाच

देव देव महेशान धूर्जटे नीललोहित।
भूयोहं श्रोतुमिच्छामि नित्यलीलाविनिर्णयम्।।१।।
निर्गुणे स्यात्कथं लीला लीला चेन्निर्गुणः कथम्।
सगुणे वा कथं लीला नित्या गुणमयी यतः।।२।।
यत्तु कालत्रयाबाध्यं तच्च नित्यं प्रचक्षते।
कदाचिद्वा पुरा जाता लीलेयं वा भविष्यति।।३।।
अथवा नैव जातेयं भविष्यति न वा पुनः।
इदानीं लीला चेज्जाता जन्यकार्यं विनश्यति।।४।।
कथं नित्येति तां वक्तुं शक्यते विदुषा प्रभो।
यद्यक्षरस्य हृदये लीला नित्यत्वमागता।।५।।
पुरा ह्यविद्यामानत्वान्नित्यतायाः कथं स्थितिः।
इति मे संशयं देव छेत्तुमर्हसि साम्प्रतम्।।६।।
त्वदन्यं नैव पश्यामि सन्देहविनिवर्त्तनम्।
न तवाविदितं किञ्चित्सर्वज्ञोसि यतः स्वयम्।।७।।

शिव उवाच

शृणु पार्वति वक्ष्यामि तव स्नेहादशेषतः।
यस्य श्रवणमात्रेण भवेद्विज्ञानमुत्तमं।।८।।
निर्गुणेप्यक्षरातीते लीलायाः किं विरुध्यते।
सगुणस्य तु या लीला सगुणा सा निगद्यते।।९।।
निर्गुणे या भवेल्लीला सा लीला निर्गुणा भवेत्।
निर्णयं तत्र वक्ष्यामि लीलाया ब्रह्मणस्तथा।।१०।।
रसरूपं भवेद्ब्रह्म वेदविद्यासु गीयते।
संयोगविप्रलम्भात्मा रसः स्याद्विदलात्मकः।।११।।

Nijanand App

40. यह बैकुण्ठ गमन आदि मैंने कहा। यह किसी से कहने योग्य नहीं है। तुम्हारे स्नेह से कह दिया है।

41. तुम्हें भी इसे गुप्त रखना चाहिए। यह निःसन्देह सत्य है। जो पुत्र पात्र नहीं है उसको भी यह ज्ञान देने से पाप होता है।

42. यह सब मैंने कह दिया। आगे क्या सुनना चाहती हो?

माहेश्वरतन्त्र के उत्तर खण्ड के शिव-पार्वती संवाद का तेईसवां अध्याय समाप्त हुआ।

चौबीसवां अध्याय

पार्वती ने कहा—

1. हे नील लोहित! मैं पुनः नित्य लीला को पूर्ण रूप से स्पष्ट सुनना चाहती हूं।

2. निर्गुण में लीला कैसे और यदि लीला है तो निर्गुण कैसे अथवा सगुण में लीला कैसे होती है। क्योंकि वह नित्य और गुणमयी होती है।

3. जो तीनों कालों से मुक्त हो, उसे नित्य कहते हैं। लीला पहले कभी हुई थी या अब होगी?

4. अथवा इस प्रकार की लीला हुई ही नहीं थी और न होगी? इस समय यदि लीला हुई जो जन्म कर्म नष्ट हो जाएगा,

5. तो उसको आप विद्वान होकर नित्य कैसे कह सकते हैं। यदि अक्षर के हृदय में लीला नित्यत्व को प्राप्त हो गई,

6. तो पहले न होने के कारण नित्यता की स्थिति कैसे होगी? यह मुझे संशय है, इस समय इसे दूर करने की कृपा करें।

7. आपको छोड़कर कोई दूसरा सन्देह मिटाने वाला नहीं देखती। आपको कुछ भी अविदित नहीं क्योंकि आप सर्वज्ञ हैं।

शिव ने कहा—

8. पार्वती! सुनो। तुम्हारे स्नेह से मैं सब कह रहा हूं जिसके सुनने से ही उत्तम विज्ञान उत्पन्न हो जाता है।

9. अक्षरातीत के निर्गुण होने से भी लीला का क्या विरोध। सगुण की जो लीला है, वह सगुण लीला कही जाती है।

10. निर्गुण में जो लीला है वह निर्गुण लीला कही जाती है। ब्रह्म और लीला के विषय में मैं निश्चय कहूंगा।

11. ब्रह्म रस रूप होता है, यह वेद विद्याओं में कहा गया है। रस संयोग और वियोग रूप दो दलों वाला है।

Nijanand App

संयुक्तयोस्तु संयोगो विप्रलम्भो वियुक्तयोः।
नानाभावात्मिका तत्र लीला भवति शाश्वती॥१२॥
ब्रह्मणो निर्गुणत्वाच्च नित्यत्वाच्चेति सुन्दरि।
नित्या च निर्गुणा चैव लीलेयं न विरुध्यते॥१३॥
केचिदाहुर्निर्गुणस्य नैव लीलोपयुज्यते।
लीलाविशिष्टं सगुणं मायासम्बन्धभावतः॥१४॥
निर्गुणं तु परं सूक्ष्ममवाङ्मानसगोचरं।
वर्णयन्ति विभागेन मायामोहितचेतसः॥१५॥
श्रुतेर्विरोधमाशङ्क्य विनियोगः पृथक् कृतः।
रसश्रुतिविरोधं तु न ते पश्यन्ति मोहिताः॥१६॥
निषेधयन्ति चाकारं श्रुतयः प्राकृतं प्रिये।
आनन्दमात्रमाकारं रसश्रुतिरुपासते॥१७॥
अन्यथा द्विदलः सोऽयं श्रुतिसिद्धः प्रियंवदे।
निराकारस्य देवेशि नोपयुक्तः कदाचन॥१८॥
प्रलापाः शतशः सन्ति श्रुतियुक्तिमजानतां।
न तेषु रमते चित्तं रसज्ञस्य विवेकिनः॥१९॥
रसस्तादृग्विधो देवि लीलाभिर्योनुभूयते।
तस्माल्लीलारसमयी रसो लीलामयः स्मृतः॥२०॥
तादात्म्यादेकरूपत्त्वाल्लीला ब्रह्ममयी भवेत्।
लीलोपयोगिनो भावा विभावा व्यभिचारिणः॥२१॥
आलम्बनानुभावाश्च तेपि तादृग्विधाः प्रिये।
चन्द्रालङ्कारभूषादिमालालेपसमीरणाः॥२२॥
दीर्घिकोपवनारामऋतुवृक्षलतादयः।
वस्त्रपानाशनं भृङ्गशुककोकिलकूजितम्॥२३॥
रसोत्पादनसामग्री रसरूपा हि सा स्मृता।
लीलोपयोगिनस्तस्मात्पदार्था रसरूपिणः॥२४॥
द्रवीभूतो घनीभूतो रसस्य द्विविधा स्थितिः।
द्रवीभूतः प्रियाधारो घनीभूतोक्षिगोचरः॥२५॥
तस्मात्प्रियाभीष्टभावान् स्वतः प्रकटयत्यसौ।
द्रवीभूतः प्रियाधारः प्रियाभावात्मको रसः॥२६॥
प्राधान्यं तत्र चेच्छन्ति घनीभूतादपि प्रिये।
रसो नैव प्रसिध्येत प्रियालम्बनवर्जितः॥२७॥

Nijanand App

12. दो का एकत्र होना संयोग और वियुक्त होना वियोग है। उसमें नाना भाव रूप शाश्वती लीला होती है।

13. हे सुन्दरी! ब्रह्म निर्गुण और नित्य है इसलिए नित्य और निर्गुण लीला से उसका कोई विरोध नहीं।

14. कुछ लोग कहते हैं कि निर्गुण की लीला उपयोगी नहीं क्योंकि लीला विशिष्ट माया से उसका सम्बन्ध होने से सगुण है।

15. निर्गुण तो परम सूक्ष्म, वाणी और मन का अगोचर है, ऐसा माया से मोहित चित्त वाले विभाग रूप में वर्णन करते हैं।

16. श्रुति के विरोध की आशंका करके पृथक् विनियोग किया है। वे मोहित होकर इस श्रुति के विरोध को नहीं देखते हैं।

17. हे प्रिये! श्रुतियां प्राकृत आकार का निषेध करती हैं। श्रुति आनन्द मात्र आकार की उपासना करती हैं।

18. हे प्रियंवदे! अन्यथा श्रुतियों में सिद्ध द्विदल, निराकार के लिए कभी उपयुक्त नहीं हो सकता।

19. श्रुति की उक्तियों को न जानने वालों के सैकड़ों प्रलाप हैं। रसज्ञ, विवेकी पुरुष का चित्त उसमें नहीं रमता।

20. हे देवि! इस प्रकार का रस लीलाओं द्वारा अनुभव किया जाता है। इसलिए लीला रसमयी होती है और रस लीलाकार होता है।

21. तादात्म्य होने से, एक रूप होने से लीला ब्रह्ममयी हो सकती है। लीला के उपयोगी भाव, विभाव व व्यभिचारी

22. और आलम्बन अनुभाव उसी प्रकार के होते हैं। चन्द्रमा, अलंकार, आभूषण, माला, चन्दनादि का लेप, वायु,

23. बावली, बगीचा और ग्राम के समीप के छोटे-छोटे बगीचे, ऋतु, लता, वस्त्र, पान, भोजन, भंवरे, तोता आदि के शब्द,

24. यह सभी रसोत्पादक सामग्री रसमय कही गई है। इसलिए लीला के उपयोगी जितने पदार्थ हैं वह सब रस रूप हैं।

25. द्रवीभूत और घनीभूत इन दो रूपों में इसकी स्थिति होती है। द्रवीभूत रस प्रियाओं का आधार होता है और घनीभूत का नेत्रों से देखे जाने की योग्यता।

26. इसलिए वह प्रियाओं के अभीष्ट भावों को स्वतः प्रकट करता है। द्रवीभूत प्रियाधार रस प्रियाभावात्मक होता है।

27. हे प्रिये! घनीभूत से भी उसमें प्रधानता चाहते हैं। प्रियालम्बन से रहित होने पर रस सिद्ध ही नहीं होता है।

Nijanand App

प्रियादर्शे रसः पश्येत् स्वात्मानं प्रतिबिम्बवत्।
आदर्शापसरे यद्वन्मुखस्यानुपलम्भनम्॥२८॥
अङ्गहीनो रसस्तद्वत्स्वानुभूतिं न विन्दति।
आनन्दो हि रसस्तस्मात्प्रियाप्रियदलद्वयम्॥२९॥
आनन्दरूपा सामग्री सर्वभावात्मको रसः।
न मायागुणसंसर्गः कदाचित्कुत्रचित्प्रिये॥३०॥
रसरूपं निर्गुणं च नित्यलीलाविहारि यत्।
अद्वैतं ब्रह्म परमं पुरुषोत्तमसंज्ञकम्॥३१॥
अतीतानागता चासौ वर्तमानापि सुन्दरि।
नित्या एवेति विज्ञेया लीलेयमनपायिनी॥३२॥
इत्येतत्कथितं देवि प्रश्नमन्यं निशामय।
यस्य श्रवणमात्रेण सन्देहो विनिवर्त्तते॥३३॥

इति श्रीमाहेश्वरतन्त्रे उत्तरखण्डे शिवपार्वतीसंवादे चतुर्विंशं पटलम्॥२४॥

पंचविंशं पटलम्

शिव उवाच

पुरा ह्यविद्यमानत्त्वान्नित्यतायाः कथं स्थितिः।
इति यद्देवि ते प्रोक्तं तत्र मे निर्णयं शृणु॥१॥
अविद्यमानं यत्किञ्चिन्नैव प्रादुर्भविष्यति।
सर्वथा विद्यमानं हि वस्तु प्रादुर्भवेत्प्रिये॥२॥
तस्मात्सदंशतो देवि प्रपञ्च उपवर्ण्यते।
घटो नास्तीत्युच्यमाने घटसत्ता तु लभ्यते॥३॥
असच्छ्रुत्या तथा देवि प्रपञ्चः सन्निरूप्यते।
अपरोक्षपरोक्षत्वं सदसच्छ्रुतिनोदितम्॥४॥
तथा प्रपञ्चलीलेयं रसलीलापि तादृशी।
सर्वास्ता नित्यरूपा हि विज्ञेया वेदवादिभिः॥५॥
यथा मृदि घटस्यैव प्रागभावः प्रकल्प्यते।
मृत्सकाशात्समुत्पत्तिः पश्चावत्तस्योपचर्यते॥६॥
न पुनस्तस्य देवेशि ह्यभावोऽत्यन्तसंज्ञितः।
आम्रबीजस्थितो ह्याम्रस्तस्माद्व्यक्तो यथा भवेत्॥७॥
अभूतमेव देवेशि यदि व्यक्तिं प्रयाति हि।
आम्रबीजात् क्षुद्क्षुदस्य कथं व्यक्तिर्भवेन्नहि॥८॥

Nijanand App

28. प्रिया के दर्पण में रस अपने को प्रतिबिम्ब की तरह देख सकता है और उस दर्पण के हट जाने पर मुख का दर्शन नहीं होता।

29. रस अंगहीन होकर अपनी अनुभूति प्राप्त नहीं करता। इसलिए आनन्द ही रस है। उसके प्रिय और अप्रिय दो दल हैं।

30. आनन्द रूप सामग्री एवं भावात्मक रस है। हे प्रिये! कहीं भी कभी भी इसमें माया के गुणों का संसर्ग नहीं है।

31. जो रसमय, निर्गुण, नित्य लीला बिहारी हैं, वही अद्वैत, परब्रह्म पुरुषोत्तम नाम वाला है।

32. हे सुन्दरी! अतीत, अनागत और वर्तमान में वह लीला हानि या क्षय से रहित नित्य है।

33. हे देवि, यह हमने कहा और दूसरे प्रश्न का उत्तर सुनो जिसके सुनने मात्र से संशय दूर हो जाता है।

माहेश्वरतन्त्र के उत्तर खण्ड के शिव-पार्वती संवाद का चौबीसवां अध्याय समाप्त हुआ।

पच्चीसवां अध्याय

शिव ने कहा—

1. लीला पहले विद्यमान नहीं थी उसे नित्य कैसे कहेंगे, ऐसा तुमने जो कहा, उस बारे में मेरा निर्णय सुनो।

2. जो विद्यमान नहीं है, वह उत्पन्न नहीं होगी। जो विद्यमान है वही सर्वथा प्रकट होगी।

3. इसलिए, हे देवि! इस सत् अंश से ही प्रपंच का वर्णन किया जाता है। 'घटोनास्ति' ऐसा कहने पर घट को सत्ता तो उपलब्ध हो ही जाती है।

4. जो श्रुति घट को असत् बतलाती है वह प्रपंच का ही निरूपण करती है। अपरोक्ष एवं परोक्षत्व, सत् और असत् श्रुति के द्वारा कहा गया है।

5. उसी प्रकार प्रपंच लीला और रस लीला भी है। वे सभी नित्य रूपा हैं, ऐसा वेद वादियों द्वारा जानी गई हैं।

6. जिस प्रकार मिट्टी में घड़े का ही प्रागभाव कल्पित होता है और मिट्टी के द्वारा ही घड़े की उत्पत्ति होती है। पश्चात् घड़े का उपचार होता है।

7. हे देवि! उसका अत्यन्त अभाव नहीं होता। जैसे आम के बीज में आम मौजूद है। उससे वह व्यक्त होता है।

8. हे देवि! यदि यह कहेंगे कि जो नहीं था वह व्यक्त हो गया, तो आम्र के बीज से आम नहीं निकलेगा।

Nijanand App

व्यावहारिकी वास्तवी तथा च प्रातिभासिका।
सत्ता तु त्रिविधा ज्ञेया देवि शास्त्रार्थकोविदैः॥९॥
शुक्तौ रजतमित्येषा सत्ता स्यात्प्रातिभासिकी।
गजाश्वादिमहासम्पत् स्वाप्निकी वापि तद्विधा॥१०॥
व्यवहारार्थमित्येषा जागर्ति व्यावहारिकी।
ब्रह्मसत्ता तु देवेशि वास्तवी परिकीर्त्तिता॥११॥
ब्रह्मसत्तावशाद्देवि लीलासत्यत्वमुच्यते।
सत्यस्याभावमीशानि शक्तः कर्त्तुं न कश्चन॥१२॥
तस्माद्देवि यथाकालं लीलाविर्भावमुच्यते।
द्वादशद्वादशतमे स्वामिन्या वत्सरे प्रिये॥१३॥
आविर्भवति लीलेयं पौनःपुन्येन सर्वदा।
एतावति गते काले ह्यक्षरे परमात्मनि॥१४॥
रहस्यरमणालोके जायते सा सुमङ्गला।
ततः प्रियासु जायेत लीलाविस्तरणं ततः॥१५॥
अक्षरात्मनि सा लीला ततश्चास्थिरतां व्रजेत्।
स्मृतिमात्रा हि सा देवि नतु साक्षात्कदाचन॥१६॥
गते द्वादशमे वर्षे स्वामिन्याः परमेश्वरि।
पुनस्तथावलोकाय कामांशेनात्मयोगतः॥१७॥
इच्छा प्रवर्त्तते देवि कूटस्थस्य परात्मनः।
ततश्च त्रिविधा लीला काले प्रादुर्भवेत्प्रिये॥१८॥
श्वेतद्वीपस्य तु च्छाया मथुरायां प्रतिष्ठिता।
वैकुण्ठप्रतिबिम्बस्तु द्वारिकायां तथा प्रिये॥१९॥
व्रजस्तु साक्षाद्देवेशि गोलोकप्रतिबिम्बजः।
गोलोकातीत लीलाच रसानन्दमयी शिवे॥२०॥
आविर्भवति देवेशि समये समये हि सा।
समयं तं प्रवक्ष्यामि शृणुष्वैकाग्रमानसा॥२१॥
परमाणुद्वयमणुः त्रसरेणुः त्रिभिश्च तैः।
त्रसरेणुत्रयेणैव कालः स्यात् त्रुटितसंज्ञितः॥२२॥
सच्छतेन भवेद्वेधः त्रिभिर्वेधैर्लवः स्मृतः।
निमिषस्त्रिलवैर्देवि क्षणो ज्ञेयस्त्रिभिश्च तैः॥२३॥
क्षणैश्च पञ्चभिः काष्ठा पञ्चभिर्दशभिस्तथा।
काष्ठाभिर्लघु विज्ञेयं लघुभिर्दशपञ्चभिः॥२४॥

Nijanand App

9. हे देवि! व्यावहारिकी, वास्तवी तथा प्रतिभासिका नाम की तीन प्रकार की सत्ता शास्त्रों को जानने वाले व्यक्तियों ने कही है।

10. सीप (शुक्ति) में रजत की सत्ता दिखाई पड़ती है, वह प्रतिभासिकी होती है। हाथी, घोड़े आदि महासम्पत्तियों तथा इस प्रकार की स्वप्न में देखी गई सम्पत्तियां हैं।

11. यह सब व्यवहार के लिए हैं, इसलिए व्यावहारिकी कहीं जाती हैं। ब्रह्म-सत्ता वास्तवी कहलाती है।

12. ब्रह्म-सत्ता के वश लीला भी सत्य कही जाती है। हे ईशानि! सत्य का अभाव कोई कर नहीं सकता।

13. हे देवि! इसलिए यथासमय लीला का आविर्भाव कहा जाता है। बारह-बारह वर्षों में

14. बार-बार यह लीला प्रकट होती है। अक्षर परमात्मा के इतने ही समय व्यतीत होने पर

15. रहस्य रमण के आलोक में वह सुमंगला प्रकट होती है। तब प्रियाओं में लीला का विस्तार होता है।

16. अक्षर आत्मा में वह लीला फिर अस्थिरता को प्राप्त होती है। वह लीला-स्मृति मात्र होती है। वह कभी साक्षात् नहीं होती।

17. बारहवें वर्ष के व्यतीत होने पर स्वामिनी के अवलोकन के लिए कामांश से आत्मा से योग होने पर

18. कूटस्थ परात्मा को इच्छा होती है। फिर समय होने पर त्रिविधा लीला प्रकट होती है।

19. हे प्रिये! श्वेत द्वीप की छाया मथुरा में प्रतिष्ठित है। बैकुण्ठ का प्रतिबिम्ब द्वारिका में है।

20. हे देवेशि! ब्रज साक्षात् गोलोक का प्रतिबिम्ब है। हे शिवे! गोलोक से भी अतीत लीला रसानन्दमयी है।

21. वह समय-समय पर प्रकट होती है। उस समय के विषय में मैं कहूंगा, एकाग्र मन से सुनो।

22. दो परमाणुओं का अणु होता है और तीन अणुओं का एक त्रसरेणु होता है। तीन त्रसरेणु का जो काल होता है उसे त्रुटित कहते हैं।

23. सौ त्रुटियों का एक वेध होता है। तीन वेधों का एक लव होता है। तीन लव का एक निमिष होता है। तीन निमिषों का एक क्षण होता है।

24. पांच क्षणों की एक काष्ठा होती है। पन्द्रह काष्ठाओं का एक लघु होता है।

Nijanand App

घटिकैका तु विज्ञेया मुहूर्तो घटिकाद्वयम्।
प्रहरः सप्तघटिकाश्चतुर्भिस्तैरहः स्मृतः॥२५॥
पुनश्चतुर्भिः प्रहरैरुच्यते तदहर्निशम्॥२६॥
दशभिः पञ्चभिः पक्षः पुनश्च दशपञ्चभिः।
आद्यः शुक्लस्तथा कृष्णः पितृणां तदहर्निशम्॥२७॥
मासः पक्षद्वयेनोक्तः तावेव द्वौ ऋतुः स्मृतः।
ऋतुत्रयेणाप्ययनं दक्षिणं परिकीर्तितम्॥२८॥
त्रयेणैवोत्तरं प्राहुर्देवानां तदहर्निशम्।
संवत्सरस्तु ह्ययनद्वयं देवि निगद्यते।
तच्छतं मानवानां च परमायुर्निरूपितम्॥२९॥
दिव्यैर्द्वादशसाहस्त्रैर्वर्षाणां सुरवन्दिते।
कृतं त्रेता द्वापरश्च कलिश्चेति चतुर्युगाः॥३०॥
चतुर्युगीसहस्त्रेण ब्रह्मणो दिनमुच्यते।
तावत्येव भवेद्रात्रिस्त्रिलोकी यत्र लीयते॥३१॥
ब्रह्मणो दिवसे जाता मनवस्तु चतुर्दश।
प्रतिमन्वन्तरे देवि युगानामेकसप्ततिः॥३२॥
प्रतिमन्वन्तरे देवि विष्णोरवतरणं भुवि।
इन्द्राद्या देवताश्चैव तथा सप्तर्षयश्च ये॥३३॥
मन्वन्तरविभेदेन भिन्ना एव भवन्ति हि।
स्वायम्भुव स्वारोचिषोत्तमतामसरैवताः॥३४॥
चाक्षुषश्चेति मनवो व्यतिक्रान्ताः षडम्बिके।
वैवस्वतो मनुर्नाम सप्तमोऽद्य प्रवर्तते॥३५॥
चतुर्युगी व्यतिक्रान्ता तस्याष्टाविंशति प्रिये।
अष्टाविंशतिके देवि कलौ लीलेयमागता॥३६॥
परार्द्धः प्रथमोऽतीतो द्वितीयस्तु प्रवर्तते।
तत्रापि प्रथमाब्दस्य नवमो मास उच्यते॥३७॥
दिनं तु षोडशं चैव यामस्तस्यद्वितीयकः।
मुहूर्त्तं तृतीयं देवि वर्त्ततेऽद्य प्रियंवदे॥३८॥
एवं विधेरहोरात्रैर्ब्रह्मणो हि दिनं स्मृतम्।
पक्षमासविभेदेन यावत्संवत्सरः प्रिये॥३९॥
एवं संवत्सरशतं तदा स्याद्ब्रह्मणो लयः।
विष्णोर्नेत्रनिमेषेण यात्यायुर्ब्रह्मणोऽखिलम्॥४०॥

Nijanand App

25. पन्द्रह लघुओं की एक घटिका होती है। दो घटिकाओं का मुहूर्त, सात घटिकाओं का प्रहर होता है और चार प्रहरों का दिन होता है।

26. चार और प्रहर मिलाने से दिन-रात होता है।

27. पन्द्रह दिन-रात का पक्ष और दूसरा पक्ष भी पन्द्रह दिन-रात का होता है। प्रथम शुक्ल और द्वितीय कृष्ण-यही पितरों का दिन रात होता है।

28. दो पक्षों का मास होता है। दो मासों की ऋतु होती है। तीन ऋतुओं का एक अयन होता है।

29. और तीन का ही उत्तरायण होता है। यह दो अयन ही देवताओं के दिन-रात होते हैं। दो अयनों का एक संवत्सर वर्ष कहा जाता है। सौ वर्ष मनुष्य की परम आयु कही गई है।

30. दिव्य बारह हजार वर्षों का सतयुग, त्रेता, द्वापर और कलियुग—यह चार युग होते हैं।

31. यह चारों युग हजार बार बीतते हैं तो ब्रह्मा का एक दिन होता है और इतनी ही बड़ी उनकी रात होती है। इस रात्रि में तीनों लोक लीन हो जाते हैं।

32. ब्रह्मा के दिन में चौदह मनु उत्पन्न होते हैं। प्रत्येक मन्वन्तर में इकहत्तर युग होते हैं।

33. प्रति मन्वन्तर में विष्णु का पृथ्वी पर अवतरण होता है। इन्द्रादि देवता और सप्तर्षि

34. मन्वन्तर भेद से भिन्न-भिन्न होते हैं। स्वायम्भुव, स्वारोचिष, उत्तम, तामस, रैवत,

35. चाक्षुष—यह छः मनु व्यतीत हो चुके हैं। आज वैवस्वत मनु नाम का सातवां मन्वन्तर चल रहा है।

36. उसमें चार युग व्यतीत हो चुके हैं और अट्ठाइसवें कलियुग में यह लीला आई हुई है।

37. ब्रह्मा का प्रथम परार्ध बीत गया है। द्वितीय चल रहा है। उसमें भी पहले वर्ष का नौवां मास चल रहा है।

38. सोलहवां दिन, दूसरा प्रहर और तीसरा मुहूर्त आज चल रहा है।

39. इसी तरह के एक दिन-रात का ब्रह्मा का एक दिन होता है। पक्ष और मास भेद में संवत्सर होता है।

40. इस प्रकार के सौ संवत्सर पर ब्रह्म का लय हो जाता है। विष्णु के नेत्र निमेष मात्र में ब्रह्मा की समस्त आयु समाप्त हो जाती है।

Nijanand App

तावन्निमेषमारभ्य लवक्षणविभेदतः।
यावद्वर्षशतं विष्णोर्मदीयः स्यान्निमेषकः॥४१॥
मन्निमेषक्रमेणापि यावद्वर्षशतं भवेत्।
निमेषमात्रमीशस्य तन्निमेषक्रमेण च॥४२॥
शतवर्षं भवेद्यावत्तावच्छिवनिमेषकः।
तन्निमेषक्रमेणैव यावद्वर्षसहस्त्रकम्॥४३॥
अपाङ्गस्फुरणं तावत्स्वामिन्याः कृष्णविभ्रमे।
तन्निमेषक्रमेणैव वर्षं द्वादशकं भवेत्॥४४॥
लीलावलोकनार्थाय भूयः कामो भवेत्तदा।
वर्षद्वादशकेऽतीते स्वामिन्याः सुरपूजिते॥४५॥
पौनःपुन्येन लीलायाः नित्याविर्भाव उच्यते।
अक्षरस्यैव हृदये यः कामांशोप्यधिष्ठितः॥४६॥
तत्संयोगाद्दिदृक्षास्य स्वस्वकाले भवेद्धि सा।
एवं नित्येव सा लीला रसरूपा प्रियंवदे॥४७॥
संयोगविप्रलम्भाख्यदलाभ्यां यानुवर्णिता।
रसो यदाविप्रलम्भदलं समधितिष्ठति॥४८॥
तदेवाविर्भवत्येषा लीलाच सुरपूजिते।
यदातु संयोगदलं समधिव्याप्य तिष्ठति॥४९॥
निजधाम्नि तदा लीला साक्षात्कृष्णकृता भवेत्।
यदा संयोगविश्लेषसन्धिं याति रसः प्रिये॥५०॥
तदा प्रबोधसमयो निकटः कृष्णचेतसाम्।
गुरोः सत्सम्प्रदायेन शास्त्रार्थस्यानुरूपतः॥५१॥
वर्त्तितव्यं ततो भद्रे साधनैरात्मलब्धये।
इत्येवं ते मया ख्यातं यत्पृष्टोहं सुलोचने॥५२॥
समासेन महेशानि किं भूयः श्रोतुमिच्छसि॥५३॥
इति श्रीमाहेश्वरतन्त्रे उत्तरखण्डे शिवपार्वती संवादे पञ्चविंशत्तमं पटलम्॥२५॥

षड्विंशं पटलम्

पार्वत्युवाच

महेश श्रोतुमिच्छामि साधनानां विनिर्णयम्।
यस्य श्रवमात्रेण सर्वं हि सफलं भवेत्॥१॥

Nijanand App

41. इसी निमेष के आधार पर लव, क्षण आदि भेदों की कल्पना के आधार पर विष्णु के जब सौ वर्ष व्यतीत हो जाते हैं, तो मेरा एक निमेष होता है।

42. हमारे निमेष के क्रम से जितना सौ वर्ष होता है वह ईश का निमेष होता है। ईश के निमेष प्रमाण से

43. सौ वर्ष का शिव निमेष होता है। उस निमेष के क्रम से सहस्र वर्ष का

44. स्वामिनी का निमेष होता है और उस निमेष क्रम से बारह वर्ष होने पर

45. लीलावलोकन के लिए काम भाव उत्पन्न होता है। इस प्रकार बारह वर्ष बीतने पर

46. बार-बार स्वामिनी की लीला का नित्य आविर्भाव होता है। अक्षर के हृदय में जो कामांश स्थित है,

47. उसके संयोग से अपने-अपने काल में दर्शन की इच्छा होती है। इस प्रकार यह रस रूप लीला नित्य ही है।

48. संयोग और वियोग इन दो दलों से जो लीला वर्णन की गई है। जब यह विप्रलम्भ दल में प्रवेश करती है,

49. तभी यह लीला प्रकट होती है। जब संयोग दल में व्याप्त होकर स्थित होती है,

50. तो निज धाम में साक्षात् कृष्ण के द्वारा की हुई लीला होती है। हे प्रिये! जब संयोग और वियोग की सन्धि में रस प्रवेश करता है,

51. तब कृष्ण चित्त वालों के जागने का समय निकट होता है। गुरु की सत् शिक्षा द्वारा शास्त्र के अर्थ के अनुरूप

52. साधनों से आत्म ज्ञान के लिए लगना चाहिए। हे सुलोचने! जो तुमने पूछा था, वह हमने संक्षेप में बता दिया।

53. पुनः क्या सुनना चाहती हो?

माहेश्वरतन्त्र के उत्तरखण्ड का शिव-पार्वती के संवाद का पच्चीसवां अध्याय समाप्त हुआ।

छब्बीसवां अध्याय

पार्वती ने कहा—

1. हे महेश! मैं साधनों का निर्णय सुनना चाहती हूं जिसके सुनने मात्र से सभी सफल हो जाते हैं।

Nijanand App

श्रीशिव उवाच

शृणु देवि प्रवक्ष्यामि साधनस्य विनिर्णयम्।
गुह्याद्गुह्यतरं साक्षान्नवाच्यं यस्य कस्यचित्॥२॥
तन्त्रार्थोऽयं रहस्यार्थो यस्तु वेदेषु गोपितः।
ईश्वरात्तु मया लब्धः प्राप्तस्तेन सदाशिवात्॥३॥
मञ्चे फलकमापन्नो लक्षयोजनविस्तृते।
सदाशिवोऽशृणोदेतत्कूटस्थोपरिसंस्थया॥४॥
इच्छाशक्त्या तु देवेशि वर्ण्यमानं मया रहः।
तच्च ते गदितं साध्वि शृण्वतः परमप्युत॥५॥
एकदा मे वितर्कोभूद्विजने स्मरतः प्रिये।
अहमेवेश्वरो लोके मदन्यो वापि कश्चन॥६॥
इति तर्कयता देवि समाधिर्हि मया धृतः।
तस्मिन् युगसहस्राणि व्यतीयुः पञ्च सुन्दरि॥७॥
समाधिस्थेन देवेशि श्रुतमीश्वरभाषितम्।
तच्छ्रुत्वा हृदयं देवि निर्विकल्पमभून्मम॥८॥
तदाप्रभृति देवेशि लीलामेनां रहःस्थितः।
ध्यायामि ध्यानयोगेन निर्विकल्पेन चेतसा॥९॥
समाधावीश्वरेणोक्तमिदं तन्त्रं यतो मम।
तस्मान्माहेश्वरं तन्त्रमित्येवंख्यातिमागतम्॥१०॥
चतुःषष्ठीनि तन्त्राणि मयैवोक्तानि पार्वति।
मोहोच्चाटवशीकारमारणार्थानि तानि तु॥११॥
सद्यःप्रत्ययहेतूनि नानामन्त्रमयानिच।
मोहनानि तु लोकस्य इन्द्रजालकलादिभिः॥१२॥
तानि विस्तरतो देवि तवाग्रे कथितानि च।
न तेषु विद्यते किञ्चित्परमार्थं सुरेश्वरि॥१३॥
मायिकं वर्णितं सर्वं मायाजीवोपयोगिकम्।
इदं माहेश्वरं तन्त्रं समाधौ यच्छ्रुतं मया॥१४॥
प्रबोधसाधनीभूतं प्रियाणामिति मे मतम्।
अन्यथेश्वरविज्ञानान्नान्यदेतत्प्रयोजनम्॥१५॥
वैष्णवान्यपि तन्त्राणि पञ्चरात्राभिधानि तु।
विष्णुप्रोक्तानि देवेशि पञ्चविंशतिसंख्यया॥१६॥

Nijanand App

शिव बोले—

2. हे देवि! मैं साधन का निर्णय कहूंगा, सुनो! यह गुह्य से गुह्य है। साक्षात् किसी से नहीं कहना चाहिए।

3. यह तन्त्र का अर्थ-रहस्य है जो वेदों में छिपाकर रखा गया है। मैंने ईश्वर से प्राप्त किया है। उन्होंने सदाशिव से प्राप्त किया है।

4-5. कूटस्थ परात्मा की इच्छा शक्ति द्वारा एकान्त में वर्णन किए जाते समय एक लाख योजन विस्तृत मंच की शिला का रूप धारण कर सदाशिव ने इसे सुना था। हे साध्वी! मैंने जो और जैसा उनसे सुना, वैसा ही तुमसे कह रहा हूं।

6. हे प्रिये! एक बार एकान्त में स्मरण करते समय मुझे यह तर्क हुआ कि मैं ही संसार में ईश्वर हूं या मुझसे भिन्न कोई और है?

7. ऐसा तर्क करते हुए मैंने समाधि लगाई। समाधि में पांच हजार युग बीत गए।

8. समाधि में मैंने ईश्वर का कहा सुना। उसको सुनकर मेरा हृदय विकल्परहित हो गया।

9. हे देवेशि! तब से एकान्त में स्थित होकर निर्विकल्प चित्त से ध्यानयोग द्वारा इस लीला का ध्यान मैं करता हूं।

10. क्योंकि ईश्वर ने इस तन्त्र का कथन मेरी समाधि अवस्था में किया था, इसलिए यह माहेश्वर तन्त्र के नाम से प्रसिद्ध हुआ।

11. हे पार्वती! मैंने ही चौंसठ तन्त्र कहे हैं। उन सबका प्रयोजन मोहन, उच्चाटन, वशीकरण, मारण आदि हैं।

12. तत्काल विश्वास दिलाने वाले नाना मन्त्र हैं। संसार को मोहने वाले इन्द्रजाल की कलाएं आदि हैं।

13. हे देवि! उनका तुमसे मैंने विस्तार से कथन किया है। हे सुरेश्वरी! उनमें परमार्थ की कोई बात नहीं है।

14. वह वर्णन माया से सम्बन्धित है और माया के जीव के ही उपयोग का है। यह माहेश्वर तन्त्र जिसका समाधि में मैंने श्रवण किया,

15. यह प्रियाओं के ज्ञान का साधन है, ऐसा मेरा मत है। ईश्वर विज्ञान से भिन्न इसका कोई और प्रयोजन नहीं है।

16. हे देवेशि! पंचरात्र नामक वैष्णवतन्त्र भी हैं। विष्णोक्त तन्त्र संख्या में पच्चीस हैं।

Nijanand App

हयशीर्षं तन्त्रमाद्यं तन्त्रं संमोहनं तथा।
वैष्णवं पौष्करं तन्त्रं प्रह्लादं गार्गमाणवम्॥१७॥
नारदीयं च श्रीवत्सं शाण्डिल्यं चेश्वरं तथा।
सत्योक्तं शौनकं तन्त्रं वाशिष्ठं ज्ञानसागरम्॥१८॥
स्वायम्भुवं कापिलं च ताक्ष्यं नारायणीयकम्।
आत्रेयं नारसिंहाख्यं आट्टाक्षं च तथारुणम्॥१९॥
वैहायसं तथा ज्ञानं विश्वोक्तं चेति सुन्दरि।
अत्यन्तस्खलितानाञ्च जनानां वेदमार्गतः॥२०॥
पञ्चरात्रादयो मार्गाः कालेनैवोपकारकाः।
बौद्धतन्त्राणि देवेशि वर्त्तन्ते सुबहून्यपि॥२१॥
तानि प्रोक्तानि सर्वाणि बौद्धरूपेण विष्णुना।
न तत्र धर्मलेशोऽस्ति मोहनानि दुरात्मनाम्॥२२॥
अन्ते तु नरकायैव भविष्यन्ति न संशयः।

पार्वत्युवाच

किमर्थं देवदेवेन विष्णुना सत्वमूर्त्तिना॥२३॥
दयावतापि लोकस्य प्रतारणमहो कृतम्।
निर्दोषे पुरुषे देव नानृतं स्यात्कदाचन॥२४॥
केन प्रयुक्तस्तु हरिर्मोहशास्त्रमरीरचत्।
एतन्मे ब्रूहि सर्वज्ञ सन्देहविनिवृत्तये॥२५॥

शिव उवाच

शृणु देवि प्रवक्ष्यामि कारणं मोहकल्पने।
एकदा विधिविष्णू च स्वाभिमानावृतान्तरौ॥२६॥
नित्यं विवदमानौ तावन्योन्यं प्रतिचक्रतुः।
अहं ब्रह्मेति न भवानित्येवं पूर्णमानिनौ॥२७॥
क्रुद्धचित्तावुभौ देवि शेपतुस्तौ परस्परम्।

ब्रह्मोवाच

यस्मात्त्वमामवज्ञाय स्वात्मानं बहु मन्यसे॥२८॥
अपूज्यस्त्वं तु लोकेषु भविष्यसि न संशयः।
इत्येवं दारुणं शापं निशम्य मधुसूदनः॥२९॥
क्रुद्धः शापं प्रतिददौ त्वमप्येवं भविष्यसि।
अन्योन्यं शापमाश्राव्य भवितव्येन मोहितौ॥३०॥

Nijanand App

17. हयशीर्ष, आद्य, सम्मोहन, वैष्णव, पौष्कर, प्रहलाद, गार्गमाणव,

18. नारदीय, श्रीवत्स, शांडिल्य, ईश्वर, सत्योक्त, शौनक, वाशिष्ठ, ज्ञान सागर,

19. स्वायंभू, कापिल्य, तार्क्ष्य, नारायणीय, आत्रेय, नरसिंह, आड्डाक्ष, आरुण

20. वैहायस, विश्वोक्त ज्ञान आदि 25 वैष्णव तन्त्र हैं जो वेद मार्ग से पतित लोगों के लिए हैं।

21. उनके लिए पंचरात्र आदि मार्ग बहुत उपकारी हैं। हे देवेशि! बहुत से बौद्ध तन्त्र हैं।

22. उन सबको बुद्ध रूप में विष्णु ने कहा है। उसमें धर्म का लेश मात्र भी नहीं है। वे दुरात्माओं को मोह में डालने के लिए लिखे गए हैं।

23. अन्त में वे नरक दिलाने वाले ही होंगे, इसमें संशय नहीं!

पार्वती ने कहा—

देवों के देव विष्णु जो सत्व मूर्ति हैं,

24. दयावान् होते हुए भी उन्होंने किसलिए संसार को धोखा दिया? निर्दोष पुरुष में झूठ तो रहता नहीं है।

25. किसके द्वारा प्रेरणा प्राप्त कर विष्णु ने इन मोह शास्त्रों की रचना की, यह मुझसे कहें जिससे मेरा सन्देह दूर हो।

शिव बोले—

26. देवि! मोह की कल्पना का कारण कह रहा हूं, सुनो! एक बार ब्रह्मा और विष्णु अपने-अपने अभिमान से घिरे हुए

27. नित्य विवाद करते हुए आपस में यह कहने लगे कि मैं ब्रह्म हूं, आप नहीं हैं। इस प्रकार अपने को पूर्ण मानते हुए

28. कुद्ध होकर परस्पर श्राप दिया।

ब्रह्मा बोले—

क्योंकि तुम मेरा अपमान करके अपने को बहुत समझते हो,

29-30. इसलिए तुम संसार में अपूज्य हो जाओगे। इस प्रकार का दारुण श्राप सुनकर मधुसूदन ने कुद्ध होकर प्रत्युत्तर में श्राप दिया कि तुम भी ऐसे ही हो जाओगे। एक-दूसरे के श्राप को सुनकर भावी से मोहित होकर

Nijanand App

मामेव शरणं यातौ परिम्लानमुखावुभौ।
व्यवस्था तु कृता देवि मया शापस्य वै तयोः॥३१॥
ब्रह्मणो यन्मया प्रोक्तं तत्ते वक्ष्यामि संश्रृणु।
ब्रह्मन्नो वैष्णवं वाक्यमन्यथा भवति क्वचित्॥३२॥
तस्मादपूज्यो लोकेषु भविष्यति भवान् किल।
पञ्चायतनपूजायां न शापस्ते भविष्यति॥३३॥
केवलं भवतः पूजाबाधकं शाप एव हि।
त्वमेकं वपुराधत्स्व शापस्य विषयं हरे॥३४॥
तत्रैवास्तु च ते शापः सत्त्वमूर्त्तौ न सर्वथा।
एवमुक्ते मया चोभौ ययतुः स्वस्य केतनम्॥३५॥
एतस्मिन्नन्तरे देवि देवासुरमहारणः।
बभूव तत्र समरे जिता देवैः सुरेतराः॥३६॥
जयोपायं प्रकुर्वाणास्तपस्तेपुर्महत्तरम्।
तपोविघ्नाय तान्देवो बौद्धरूपं स्वयं गतः॥३७॥
बौद्धतन्त्राणि निर्माय दैत्येभ्यः समदर्शयत्।
देहादन्यो न चात्मास्ति न मुक्तिर्मरणात्परा॥३८॥
न देवाः पितरः सन्ति मुधा वेदेन दर्शिताः।
स्ववृत्तये तु निगमः कल्पितो ब्राह्मणैरिह॥३९॥
सर्वथा न प्रमाणत्वे धार्यः स्यादसुरेश्वराः।
एवं तन्त्रेषु नैरात्म्यवादमुख्येषु मोहिताः॥४०॥
असुराः समसज्जन्त बौद्धमायाहृताशयाः।
तदाप्रभृति तद्रूपं अपूज्यत्वं हरेर्ययौ॥४१॥
बौद्धोपदेशस्य ग्रहो जातश्च परमेश्वरि।
तस्मात्तदुक्ततन्त्राणि नास्तिवादपराणि च॥४२॥
न ग्राह्याणि बुधैर्देवि धर्माधर्मविचारणे।
इदं माहेश्वरं तन्त्रं सर्वतन्त्रोत्तमोत्तमम्॥४३॥
सामरस्येच्छया शक्त्या यथाभूतार्थमीरितम्।
अक्षरस्यासनीभूतस्तन्निशम्य सदाशिवः॥४४॥
प्रोक्तवानीश्वरायैतत् यथाश्रुतमनिन्दिते।
समाधावीश्वरः प्राह मह्यं देवि यथाश्रुतम्॥४५॥
मयापि च तव स्नेहादुच्यते नान्यथा प्रिये।
त्वया तु गोपनीयं हि न वाच्यं यस्य कस्यचित्॥४६॥

Nijanand App

31. कुंम्हलाए हुए मुख वाले दोनों मेरी शरण में आए, तो मैंने उन दोनों के शाप की व्यवस्था की।

32. ब्रह्मा से मैंने जो कहा, वह सुनो। हे ब्रह्मन! विष्णु का वाक्य कभी अन्यथा नहीं होता।

33. इसलिए संसार में आप अपूज्य होंगे ही। परन्तु पंचायतन पूजा में आप पर श्राप लागू नहीं होगा।

34. आपकी पूजा में बाधा पहुंचाने वाला केवल श्राप ही है। इसलिए आप एक शरीर धारण कर लीजिए जिस पर श्राप प्रभावी हो।

35. उसी शरीर पर तुम्हारा श्राप प्रभाव करे, सत्य मूर्ति शरीर पर नहीं। ऐसा मेरे कहने पर दोनों अपने घर को चले गए।

36. इसी समय में देवासुर संग्राम हुआ। उसमें देवताओं ने दैत्यों को जीत लिया।

37. विजय के लिए उपाय करते हुए दैत्यों ने बहुत बड़ा तप किया। उनके तप में विघ्न डालने के लिए विष्णु ने बौद्ध रूप धारण किया और स्वयं गए।

38. बौद्ध तन्त्रों का निर्माण कर उन्होंने दैत्यों को दिखला दिया। जिसमें यह कहा गया कि देह से भिन्न कोई आत्मा नहीं, मृत्यु से भिन्न कोई मुक्ति नहीं।

39. कोई पितर देवता नहीं है, वेद ने यह सब व्यर्थ बताया है। ब्राह्मणों ने अपनी जीविका के लिए शास्त्रों की कल्पना की है।

40. इसलिए, हे असुरो! उनको सर्वथा प्रमाण नहीं मानना चाहिए। इस प्रकार से नैरात्म्यवाद ही जिनका मुख्य विषय है, उन तन्त्रों से मोहित होकर

41. बौद्धों की माया से आकृष्ट चित्त होकर असुर उसी में लग गए। तब से हरि का वह रूप अपूज्य हो गया।

42. हे परमेश्वरि! बौद्धोपदेश का आग्रह उत्पन्न हो गया। इसलिए उनके द्वारा कहे हुए तन्त्र नास्तिवादी हैं।

43. हे देवि! बुद्धिमान लोगों द्वारा धर्म-अधर्म विचार में उनको नहीं ग्रहण करना चाहिए। यह माहेश्वर तन्त्र सब तन्त्रों में उत्तम है।

44. सामरस्य की इच्छा शक्ति द्वारा सत्य ही कहा गया है। अक्षर के आसन के रूप में स्थित सदाशिव ने यह सुनकर

45. ईश्वर को जैसा सुना था, बतला दिया। ईश्वर ने जैसा सुना था, समाधि में मुझे सुना दिया।

46. हे प्रिये! मैं भी तुम्हारे स्नेह से कह रहा हूं, अन्यथा न कहता। तुम्हें इसे गुप्त रखना है। जिस किसी को नहीं कहना है।

Nijanand App

एतत्तन्त्रार्थविज्ञाने न सर्वे ह्यधिकारिणः।

पार्वत्युवाच

अधिकारविहीनोपि यदि चात्र प्रवर्त्तते॥४७॥
निःशङ्को निर्भयो भूत्वा प्रेमासक्तिसमन्वितः।
नित्यानन्दं च पुरुषं विभाव्य स्वपतिं हृदि॥४८॥
तदीयविरहज्वालाग्लपितां तनुमुत्सृजेत्।
कां गतिं याति देवेश तन्मे साधु निरूपय॥४९॥

शिव उवाच

ब्रह्माभासमयः कश्चिद्यदि जीवः परिभ्रमन्।
अनेकजन्मसंसिद्धपुण्यराशिभिरूर्ज्जितैः॥५०॥
साधुसङ्गेन देवेशि यदिदं ज्ञानमाप्नुयात्।
जितेन्द्रियो निर्विषयः प्रेमासक्तिसमन्वितः॥५१॥
त्यजन् देहमवाप्नोति कुमार्यः प्रापुरेव यत्।
न जले जलवत्तस्य लयो भवति चाक्षरे॥५२॥
यदयं विरही जातो नित्यलीलाविहारिणि।
न पश्यति तथा चापि नित्यलीलाविहारिणम्॥५३॥
अक्षराभासमात्रत्त्वात् स्वस्यैव परमेश्वरि।
तस्माद्वृन्दावने देवि कूटस्थहृदयङ्गमे॥५४॥
लीलामनुभवन् तिष्ठेत्पुनरागतिवर्ज्जितः।
इति ते निर्णयः प्रोक्तोऽनधिकारिणि सुन्दरि॥५५॥
अतः परं च भजने निर्णयं वच्मि संशृणु॥५६॥
इति माहेश्वरतन्त्रे शिवोमासंवादे षड्विंशं पटलम् ॥२६॥

सप्तविंशं पटलम्

शिव उवाच

नित्यानन्दविहाराणां प्रियाणां परमेशितुः।
स्वभर्त्तुर्भजनं देवि कर्तव्यः सर्वथैव हि॥१॥
भजनाङ्गं सदाचारः कर्तव्यं कर्मशुद्धये।
न सिद्धाः सिद्धिमवाप्स्यन्ति सदाचारविवर्ज्जिताः॥२॥
आचारहीनं न पुनन्ति वेदा आचारहीनं न तपः पुनाति।
आचारहीनं न पुनन्ति तीर्थान्याचारहीनस्य च नैव सिद्धिः॥३॥

Nijanand App

47-48. इस तन्त्र के अर्थ विज्ञान के सभी अधिकारी नहीं हैं।

पार्वती ने कहा—

यदि कोई अधिकारविहीन पुरुष प्रेम की आसक्ति से युक्त होकर, नि:शंक, निर्भय होकर इसमें प्रवृत्त हो जाय, नित्यानन्द पुरुष को पतिरूप में अपने हृदय में मान ले,

49. उनके विरह की ज्वाला से दग्ध शरीर छोड़ दे तो उसकी कौन सी गति होगी? इसका निरूपण कीजिए।

शिव बोले—

50. यदि कोई जीव ब्रह्माभासमय होकर भ्रमण करता हुआ अनेक जन्मों द्वारा उपार्जित महान् पुण्य राशि द्वारा

51. साधु संग प्राप्त कर इस ज्ञान को प्राप्त कर ले, जितेन्द्रिय, विषयरहित प्रेमासक्ति समन्वित

52. देह त्याग दे तो वह वही प्राप्त करता है जो कुमारियों ने प्राप्त किया था। जल में जल की तरह नहीं, अपितु अक्षर में उसका लय होता है।

53. जो नित्य लीला बिहारी में विरही हो जाता है और इतना विरही हो जाता है कि लीला बिहारी को ही नहीं देखता है।

54. हे परमेश्वरि! अक्षराभास मात्र होने के कारण अपने ही कूटस्थ हृदय में वृन्दावन में

55. लीलाओं का अनुभव करते हुए वह पुनरागमनरहित होकर रहता है। हे सुन्दरी! जो अधिकारी नहीं है, उसके विषय में मैंने यह निर्णय कहा है।

56. इससे श्रेष्ठ के भजन (सेवा) का निर्णय कह रहा हूं सुनो।

शिव पार्वती के संवाद के माहेश्वरतन्त्र का छब्बीसवां अध्याय समाप्त हुआ।

सत्ताइसवां अध्याय

शिव बोले—

1. परमेश के प्रिय नित्य आनन्द विहारों की और अपने स्वामी का भजन हर प्रकार करना चाहिए।

2. भजन का अंग सदाचार है। कर्मशुद्धि के लिए उसका पालन करना चाहिए। सदाचार रहित सिद्धों को भी सिद्धि प्राप्त नहीं होती।

3. आचारहीन को वेद, तप, तीर्थ पवित्र नहीं करते और आचारहीन को सिद्धि भी प्राप्त नहीं होती।

Nijanand App

आचारः प्रथमो धर्म आचारो हन्त्यलक्षणम्।
आचाराल्लभते शुद्धिं तस्मात्तं सततं चरेत्।।४।।
अनाचारेण मालिन्यं बुद्धिः समधिगच्छति।
लीलावधारणं नास्ति मलिने बुद्धिदर्पणे।।५।।
आचारः कथितः सद्भिः सर्वधर्मेषु सर्वदा।
आचाररहितो धर्मो ह्यधर्मत्वेन कल्प्यते।।६।।
आचाररक्षणं तस्मात्कर्तव्यं सर्वथा प्रिये।
आचारो द्विविधः प्रोक्तो बाह्याभ्यन्तर एव च।।७।।
भावसंशुद्धिमेवैकामाचारं ह्यान्तरं विदुः।
तत्सिद्धये देहसाध्यो बाह्यः शौचादिरुच्यते।।८।।
साध्यो भावः साधनं तु देहशुध्यादिकं प्रिये।
तमाचारं प्रवक्ष्यामि येन संशुध्यते मनः।।९।।
नाभाषेन्नावलोकेत शृणुयान्न कथञ्चन।
न स्पृशेन्नोपजिघ्रेत नाश्नीयाद्विमतं च यत्।।१०।।
यदेश्वरगुणान्वक्तुमीहते वाक् विजृम्भिता।
तदैनां विध्यते पाप्मा विद्धा विमतभाषिणी।।११।।
यदेश्वरं मूर्तिमंतमालोकयितुमिच्छति।
चक्षुस्तदा पाप्मविद्धं विमतं पश्यति प्रिये।।१२।।
यदेश्वरगुणान् श्रोतुमीहते श्रोत्रमिन्द्रियम्।
तदैव पाप्मना विद्धं जानीयाद्विमते च तत्।।१३।।
यदा निवेदितान्नेन नियमं रसनेहते।
तदैव पाप्मना विद्धा विमतं प्रतिपद्यते।।१४।।
पापरूपं विजानीयाद्विमताचरणं च तत्।
विमताचरणं पापमिन्द्रियमुपगच्छति।।१५।।
निरावरणमेवैतद्ध्यानाभ्यासः प्रपद्यते।
नियम्य चेन्द्रियाण्यादौ अभ्यासेन दृढीयसा।।१६।।
यदा सर्वेन्द्रियाणां च नियमं कर्तुमक्षमः।
रसनेन्द्रियमेवैकं जेयं सर्वजिगीषया।।१७।।
जिते रसे जितः कामः जिते कामे जितेन्द्रियः।
जितजिह्वोपस्थरतेरसाध्यं किं तु विद्यते।।१८।।
सिसृक्षोर्ब्रह्मणः पूर्वं स्तनाद्धर्मो विनिर्गतः।
वृषरूपश्चतुर्वेदचतुःपादः शुभाकृतिः।।१९।।

Nijanand App

4. आचार पहला धर्म है। आचार कुलक्षण को मिटा देता है। आचार से शुद्धि मिलती है। इसलिए आचार का निरन्तर पालन करना चाहिए।

5 अनाचार से बुद्धि मलिन हो जाती है। बुद्धि रूपी दर्पण के मलिन हो जाने पर उस पर लीलाओं का प्रतिबिम्ब नहीं होता है।

6. सज्जन लोगों ने सभी धर्मों में आचार को बताया है। आचाररहित धर्म अधर्म ही कहा जाता है।

7. हे प्रिये! इसलिए आचार की हर प्रकार से रक्षा करनी चाहिए। बाहर और अन्दर भेद से आचार दो प्रकार का कहा गया है।

8. एकमात्र भाव शुद्धि को ही आभ्यन्तर आचार कहते हैं। उसकी सिद्धि के लिए देह द्वारा साध्य पवित्रता आदि आचार को बाह्य आचार कहा जाता है।

9. साध्य भाव है, देह शुद्धि आदि साधन हैं। उस आचार को मैं बतलाऊंगा जिससे मन शुद्ध होता है।

10. जो भिन्न मत रखने वाला हो उसके साथ न बोलना, न देखना, न सुनना, न छूना, न सूंघना और न खाना चाहिए।

11. जब वाणी ईश्वर के गुणों को कहने की चेष्टा करती है तो पाप घेर लेता है। उससे युक्त होकर वाणी भी विरुद्ध बोलने लगती है।

12. जब नेत्र मूर्तिमान ईश्वर को देखने की इच्छा करते हैं, तो उसे पाप घेर लेता है और वह विषय देखने लगता है।

13. जब कान इन्द्रिय ईश्वर को सुनना चाहती है तो पाप घेर लेता है और वह भी असंगत हो जाती है।

14. जब जिह्वा भगवान को निवेदन किए अन्न खाना चाहती है, तो पाप घेर लेता है और असम्मत हो जाती है।

15. असंगत आचरण पाप रूप जानना चाहिए और विमत आचरण रूपी पाप इन्द्रियों को घेर लेता है।

16. पाप के आवरण से मुक्त होकर ही ध्यान का अभ्यास प्रारम्भ होता है। प्रारम्भ में दृढ़ अभ्यास के द्वारा इन्द्रियों को नियमित करना चाहिए।

17. जब सभी इन्द्रियों का नियन्त्रण करने में असमर्थ हो तो सबके जीतने की इच्छा से केवल रसना इन्द्रिय को ही जीत लेना चाहिए।

18. रस के जीतने पर काम जीत लिया जाता है। काम के जीतने पर जितेन्द्रिय हो जाता है। जिसने जिह्वा इन्द्रिय की आसक्ति को जीत लिया है, उसके लिए कुछ भी असाध्य नहीं।

19. पहले ब्रह्मा ने जब सृष्टि निर्माण की इच्छा की तो स्तन से धर्म निकला। वह वृष रूप चतुर्वेद, चतुष्पाद शुभाकृति था।

Nijanand App

ज्ञानं वैराग्यमत्युग्रं यस्य शृङ्गद्वयं प्रिये।
सत्यं तपः कर्णयुगं दमो दानं तु चक्षुषी।।२०।।
लांगूलमस्य चैश्वर्यं रोमावलिः पुण्यसन्ततिः।
तेन स्पृष्टाः प्रजाः सर्वाः शुद्धसत्वा बभूविरे।।२१।।
ज्ञानवैराग्यसम्पन्ना मोक्षमार्गपरायणाः।
तं दृष भगवान् ब्रह्मा पश्चात्पापमथासृजत्।।२२।।
स पाप्मा महिषाकारस्तमोभूतः शरीरिषु।
अज्ञानं चाप्यनैश्वर्यमवैराग्यमधर्मकम्।।२३।।
चत्वारस्तस्य वै पादा छलद्रोहौ शृङ्गद्वयम्।
क्रोधमोहौ कर्णयुगं कामलोभौ हि चक्षुषी।।२४।।
मात्सर्यमुग्रलांगूलं ब्रह्महत्या शिरोऽस्य च।
सुरापानं च हृदयं कटिः स्यादुपपातकम्।।२५।।
तेन स्पृष्टाः प्रजाः सर्वा नष्टसत्त्वा मलीमसा।
ज्ञानवैराग्यरहिताः काम्यकर्मकृतश्रमाः।।२६।।
आसुरेष्वेव भावेषु व्यसज्जन्त विमोहिताः।
तस्मात्तं तु परिज्ञाय देहेन्द्रियचरं प्रिये।।२७।।
स्वाचारमाचरेत्प्राज्ञो यथा स्यादुज्वलात्मधीः।
उज्वलत्वं तदा बुद्धेः समं पश्यति वै यया।।२८।।
सुखेषु विद्यमानेषु दुःखशोकभयादिकम्।
पश्यन् विरमते तेषु शुद्धत्वं च तदा धियः।।२९।।
न व्यथेन्निंदया चित्तं हर्षते न च संस्तुवैः।
उदासीनोरिमित्रेषु साम्यं बुद्धिस्तदोज्वला।।३०।।
अलोलुपत्वमास्तिक्यं मुमुक्षुत्वं गभीरता।
प्रसादः स्वात्मना सौख्यं लोकसङ्गनिवर्त्तनम्।।३१।।
एकान्तसेवाभिरुचिर्दम्भमानविवर्ज्जनम्।
एतानि यत्र जायन्ते तस्य बुद्धिः समुज्वला।।३२।।
आचारसेवनस्येह बुद्धिशुद्धिः परं फलम्।
शुद्धायां च ततो बुद्धौ लीलाध्यानेऽर्हतां व्रजेत्।।३३।।
शास्त्रदुष्टं भावदुष्टं लोकदुष्टमथापि वा।
वर्जयेन्मतिमान्देवि सत्वशुद्धिविधित्सया।।३४।।
गुह्यशौचं पादशौचं हस्तशौचं महेश्वरि।
मुखशौचं चतुर्थं च कुर्यात्सर्वत्र सर्वदा।।३५।।

Nijanand App

20. ज्ञान और वैराग्य की बहुत तेज दो सींग थीं। सत्य और तप दो कान थे। दम और दान नेत्र थे।

21. ऐश्वर्य ही उसकी पूंछ थी। रोमों की पंक्ति पुण्य समूह था। उसके स्पर्श से सभी प्रजा शुद्ध सत्व हो गई।

22. ज्ञान, वैराग्य सम्पन्न, मोक्ष मार्ग में लगी प्रजा हो गई। इसको देखकर ब्रह्मा ने पाप को उत्पन्न किया।

23. वह महिष के आकार का पाप शरीरियों में तम रूप हुआ। अज्ञान, गरीबी, आसक्ति, अधर्म

24. यह चार उसके पाद थे। छल और द्रोह उसके दो सींग थे। क्रोध, मोह उसके दो कान थे। काम, लोभ नेत्र थे।

25. मत्सरता उसकी पूंछ थी। ब्रह्म हत्या उसका सिर था। सुरापान उसका हृदय था। छोटे-छोटे पातक उसकी कमर थे।

26. उसके स्पर्श से प्रजा में सत्व गुण नष्ट हो जाता था और वह मलिन हो जाती थी। ज्ञान वैराग्य रहित काम्य कर्म में परिश्रम करने वाले

27. मोहित होकर आसुर भावों में ही लगे रहते थे। हे प्रिये! देह और इन्द्रियों में रहने वाले इन धर्म-अधर्म को जानकर

28. प्राज्ञ पुरुष को चाहिए कि अपने आचार का पालन करे जिससे उसकी बुद्धि निर्मल रहे। जब बुद्धि उज्ज्वल होती है तब उसके द्वारा सब चीज सम देखी जाती है।

29. सुख के होने पर मनुष्य जब यह देखे कि दुःख शोक, भय, आदि घेर रहे हैं तो जो सुख से विराम कर लेता है, उसमें बुद्धि शुद्ध रहती है।

30. निन्दा श्रवण द्वारा चित्त को व्यथित नहीं करना चाहिए। स्तुति सुनकर प्रसन्न नहीं होना चाहिए। शत्रु और मित्र में उदासीन रहते हुए जब समता की बुद्धि आ जाती है, तो बुद्धि उज्ज्वल होती है।

31. लोभ न करना, आस्तिकता, मोक्ष की इच्छा, गम्भीरता, प्रसन्नता, अपने में सुख अनुभव करना, लोक के संग से दूर होना,

32. एकान्त सेवा में रुचि रखना, दम्भ और मान छोड़ना, यह जिसमें होते हैं उसकी बुद्धि उज्ज्वल होती है।

33. बुद्धि शुद्धि ही आचार पालन का श्रेष्ठ परिणाम है। बुद्धि के शुद्ध होने पर मनुष्य लीला के ध्यान करने के योग्य हो जाता है।

34. शास्त्र दोषयुक्त, भाव दोषयुक्त और लोक दोषयुक्त कर्मों को सत्व शुद्ध करने की इच्छा वाले व्यक्ति को विधिवत् त्याग कर देना चाहिए।

35. गुह्य-शौच, पाद-शौच, हस्त-शौच तथा चौथा मुख-शौच हमेशा करना चाहिए।

Nijanand App

उच्छिष्टो न स्पृशेत् क्वापि सेवाद्रव्याणि शाम्भवि।
प्रणम्य प्रविशेत्स्थानं निर्गच्छेच्च प्रणम्य च॥३६॥
निष्ठीवनं प्रलापं च अधोवायुविसर्जनम्।
औदासीन्यं भयं क्रोधं न कुर्यात्तत्र संस्थितः॥३७॥
यथावर्णं यथा ज्ञानं यथाज्येष्ठ कनिष्ठकम्।
तथैवोपविशेत्तत्र रागद्वेषविवर्जितः॥३८॥
न निन्देन्मनसा वाचा कुमारीं ब्राह्मणं गुरुम्।
दया भूतेषु कर्तव्या न हिंस्यात्कमपि प्रिये॥३९॥
सर्वं सहेत परुषं देहानित्यत्वभावनात्।
देहगेहकलत्राप्तमित्रद्रविणसम्पदः॥४०॥
स्वप्नविद्युन्निभाः पश्येन्नात्मानं तत्र सज्जयेत्।
असदासक्तिवशतः संसारो न निवर्त्तते॥४१॥
दानं दमो दया चेति न त्याज्यं सर्वथा त्रयम्।
असत्यं न वदेद्वाक्यं वाचोपि मरणं हि तत्॥४२॥
मृता वाक् नहि योग्या स्याद्गुणालापे परेशितुः।
न परस्त्रीमुखे क्वापि दृष्टि भोगेच्छया क्षिपेत्॥४३॥
स्वस्मिन् स्त्रीभावनानश्येत्तस्मात्पातकमेव तत्।
निर्विकाराणीन्द्रियाणि जातमात्रशिशोर्यथा॥४४॥
ललनावृन्दमध्यस्थस्यापि चेतोद्विधानहि।
सखीभावः स्थिरस्तस्य विशुद्धश्च प्रियंवदे॥४५॥
विशुद्धस्त्रीस्वभावा ये दृश्यन्ते पुरुषा अपि।
निश्चयादवगन्तव्या प्रिया भगवतो हि ते॥४६॥
स्त्रीदुष्टान् समयभ्रष्टान् भावनाविमुखान् शठान्।
नास्तिकान् दुर्नयान्दुष्टान्पर स्त्रीगमनोत्सुकान्॥४७॥
विरोधिनः क्रूरचित्तान् श्रद्धाप्रेमविवर्जितान्।
असदालापकान्देवि न पंक्त्यामुपवेशयेत्॥४८॥
न पिबेत्तत्र पानीयमेकपात्रेण कर्हिचित्।
पादुकावसनंशय्याशयनासनसंस्थितिम्॥४९॥
न कुयदिव तैः साकं दोषावेशोन्यथा भवेत्।
अदृष्टपुरुषैर्देवि देशान्तरनिवासिभिः॥५०॥
इन्द्रियार्थरतैर्दम्भच्छलेनापि समागतैः।
न स्थितिः सह कर्तव्या परानन्दोत्सवे प्रिये॥५१॥

Nijanand App

36. हे शाम्भवी! सेवा के द्रव्य उच्छिष्ट होकर न स्पर्श करे। पूजन स्थान में प्रणाम करके प्रवेश करे और बाहर निकले।

37. थूकना, प्रलाप, अधोवायु विसर्जन, उदासीनता, भय, क्रोध वहां बैठकर नहीं करना चाहिए।

38. अपने वर्णों, ज्ञान, ज्येष्ठ और कनिष्ठ के अनुसार, राग द्वेष रहित होकर वहां बैठना चाहिए।

39. कुमारी, ब्राह्मण और गुरु की वाणी अथवा मन से निन्दा नहीं करनी चाहिए। प्राणियों पर दया करनी चाहिए। किसी की हिंसा नहीं करनी चाहिए।

40. देह को अनित्य मानते हुए कठोर वाणी को सहना चाहिए। देह, घर और कलत्र (स्त्री), विश्वसनीय मित्र, धन, सम्पत्ति को

41. स्वप्न और बिजली के समान चंचल जानना चाहिए। अपने को उसमें फंसाना नहीं चाहिए। असत् आसक्ति के कारण संसार निवृत्त नहीं होता।

42. दान, दम, दया इन तीन का हर प्रकार से त्याग नहीं करना चाहिए। असत्य वाक्य नहीं बोलना चाहिए क्योंकि वह वाणी की मृत्यु है।

43. जो वाणी मृत हो गई वह परमात्मा के गुणगान योग्य नहीं रहती। पर स्त्री के मुख की ओर भोग की इच्छा से दृष्टि नहीं डालनी चाहिए।

44. अपनी स्त्री में स्त्री भावना नष्ट हो जाए, तो वह पाप है। जिस तरह से पैदा हुए शिशु की इन्द्रियां निर्विकार होती हैं,

45. ऐसे ही स्त्रियों के समूह में बैठे होने पर भी जिसका चित्त द्विविधा में नहीं पड़ता, उसका विशुद्ध सखी भाव स्थिर रहता है।

46. जो पुरुष विशुद्ध स्त्री स्वभाव होते हैं, वे निश्चित ही भगवान को प्राप्त होते हैं।

47. स्त्रियों में दोषयुक्त, समय भ्रष्ट, भावना से शठ, नास्तिक, अनीति करने वाला, दूसरों की स्त्री-गमन को उत्सुक,

48. विरोधी, क्रूर-चित्त, श्रद्धा-प्रेम से रहित, झूठी बात करने वालों को पंक्ति में नहीं बैठाना चाहिए।

49. वहां पर एक ही पात्र से जल नहीं पीना चाहिए। पादुका, वस्त्र, शैय्या, आसन, भोजन और आवास उनके साथ नहीं करना चाहिए,

50. नहीं तो दोष का आवेश हो जाता है। पूर्व में न देखे गए पुरुषों, दूसरे देश के रहने वाले,

51. इन्द्रियों के लिए लगे और किसी छल से आए, हे प्रिये! आनन्द उत्सवों में किसी तरह साथ नहीं करना चाहिए।

Nijanand App

अस्नातोऽधौतपादो वा ह्यनाचारो भयाकुलः।
अधौतवसनो वापि नोत्सवं प्रविशेत्क्वचित्॥५२॥
उत्सवेगुणगानादि कुर्यात्कृष्णकथाः शुभाः।
न लौकिकीं कथां कुर्याद्विवदेन्न परस्परम्॥५३॥
न मर्माणि वदेद्देवि न चोपद्रवमाचरेत्।
परस्परं तु देवेशि स्वात्म्यैक्यं भावयेद्धिया॥५४॥
रसावेशस्तदा भूपान्निर्विकारा यदा स्थितिः।
तस्मात्तत्प्रवणं चेतः प्रकुर्वीत महोत्सवे॥५५॥
ध्यायन्ति केचन निमीलितपक्ष्मभारा
गर्जन्ति हेविपरिलब्धगुरुप्रमाणाः।
नृत्यन्ति तद्रसविलीनमनोरथार्था
भक्त्या द्रवन्त इव दृक्कमलैर्गलद्भिः॥५६॥
तद्ध्यानदृष्टपदहृष्टधियः प्रसन्नाः
स्वानन्दसागरसमुच्छलदच्छभावाः।
रोमाञ्चकञ्चुकविचित्रतनुप्रदेशा
जानन्ति नेदमखिलं च विभिन्नलिङ्गाः॥५७॥
यज्जातमुत्सवे किञ्चित् वृत्तान्तं साध्वसाधु वा।
हृदयाद्विस्मृतमिव बहिर्नैव प्रकाशयेत्॥५८॥
यथावर्णविभेदेन स्वीकुर्याच्च निवेदितम्।
पृथगासनपात्राणि कारयेत् सुरवन्दिते॥५९॥
परस्परं प्रणमेदेवं कुर्यान्महोत्सवोत्सवम्।
स्वपुत्रस्त्रीजन्मदिने गुरोर्जन्मविपर्यये॥६०॥
मङ्गले सम्पदाधिक्ये लाभे भक्तसमागमे।
व्यतीपाते तथाष्टम्यामेकादश्यां च संक्रमे॥६१॥
पुष्यार्के चैव हस्तार्के ग्रहणे चन्द्रसूर्ययोः।
कृष्णजन्माह्नि देवेशि राधाजन्मदिने तथा॥६२॥
अवतारदिनेष्वेवं विष्णोरमिततेजसः।
चैत्रे शुक्लस्य पञ्चम्यां भगवान्मीनरूपधृक्॥६३॥
ज्येष्ठे शुक्ले द्वादश्यां ततः कूर्मस्वरूपधृक्।
चैत्रे कृष्णनवम्यां तु हरिर्वाराहरूपधृक्॥६४॥
वैशाखे शुक्लपक्षे तु चतुर्दश्यां दिनक्षये।
प्रादुर्बभूव नृहरिर्भक्तरक्षार्थमुद्धृतः॥६५॥

Nijanand App

52. बिना नहाए, बिना पैर धोए, आचाररहित, भयभीत, बिना धुले कपड़े पहने उत्सव में प्रवेश न करें।

53. उत्सव में गुणगान आदि कृष्ण सम्बन्धी शुभ कथाएं कहनी चाहिए। लौकिक कथाएं नहीं कहनी चाहिए। आपस में विवाद नहीं करना चाहिए।

54. किसी के मर्म स्थल को पीड़ा देने वाली वाणी नहीं कहनी चाहिए। उपद्रव नहीं करना चाहिए और बैठे बुद्धिमानों को सभी लोगों से भावात्मक एकता करनी चाहिए।

55. जब निर्विकार स्थिति होती है तो रसावेश होता है। इसलिए महोत्सव भक्ति रस युक्त चित्त होकर मनाना चाहिए।

56. आंखों को बन्द करके कुछ लोग ध्यान करते हैं, कुछ लोग गुरु के प्रमाणों पर जोर से गर्जते हैं। कुछ भक्ति रस में विलीन मनोरथ वाले नाचते हैं और कुछ नेत्र रूपी कमलों से जल रूपी आंसू बहाते हैं।

57. भगवान के ध्यान में उनके चरणों के दर्शन से बुद्धि प्रसन्न हो जाती है। अपने आनन्द सागर में स्वच्छ भाव प्रकट होने लगते हैं। रोमांच रूपी कंचुक से विचित्र शरीर दिखाई पड़ने वाले इस पूरे संसार के लिंग भेद को भूल जाते हैं।

58. उत्सव में जो वृतान्त हुआ है, साधु या असाधु सबको हृदय से भूले हुए सा बाहर प्रकाशित नहीं करना चाहिए।

59. वर्ण भेदानुसार निवेदित स्वीकार करना चाहिए। आसन और पात्र पृथक् रखने चाहिए।

60. इस प्रकार से महोत्सव करना चाहिए और एक-दूसरे को प्रणाम करना चाहिए। अपने पुत्र के, स्त्री के जन्म दिन में और गुरु के जन्म दिन में यह महोत्सव करना चाहिए।

61. मंगल के समय, अधिक सम्पत्ति होने पर, भक्त के आ जाने पर, व्यतीपात योग में, अष्टमी में, एकादशी में, ग्रह संक्रमण में,

62. पुष्य तथा हस्ति नक्षत्र में, रविवार, सूर्य और चन्द्र के ग्रहण, जन्माष्टमी और राधा के जन्म दिन,

63. विष्णु अवतार के दिन, चैत्र शुक्ल की पंचमी मीन (मत्स्य) भगवान के अवतरित होने के दिन,

64. ज्येष्ठ शुक्ल द्वादशी कूर्म अवतार के दिन, चैत्र कृष्ण नवमी को वाराह रूप में प्रकट होने के दिन,

65. वैशाख शुक्ल चतुर्दशी को सन्ध्या काल में भक्त प्रहलाद की रक्षा के लिए नरसिंह भगवान के प्रकट होने के दिन,

Nijanand App

वैशाखे शुक्लपक्षे तु तृतीयायां गिरीन्द्रजे।
जमदग्निसुतो रामो रेणुकायामजीजनत्॥६६॥
मासि भाद्रपदे देवि शुक्ले चैकादशी तिथिः।
अदित्यां कश्यपाज्जातो वामनः सुरकार्यकृत्॥६७॥
चैत्रे शुक्लनवम्यां तु रामो दशरथात्मजः।
रावणस्य वधार्थाय कौशल्यायां परः पुमान्॥६८॥
श्रावणे बहुले पक्षे अष्टम्यां च महानिशि।
कृष्णः प्रादुरभूद्देवि सुरकार्यचिकीर्षया॥६९॥
नभसे तु द्वितीयायां बलभद्रोऽभवद्धरिः।
पौषशुक्ले तु सप्तम्यां बौद्धः प्रादुर्भविष्यति॥७०॥
माघशुक्लतृतीयायां कल्की प्रादुर्भविष्यति।
एतेष्वन्येषु पुण्येषु दिवसेषु विशेषतः॥७१॥
प्रकुर्यादुत्सवं देवि वित्तशाठ्यविवर्जितः।
नोत्सवो भक्ष्यभोज्याद्यैर्न पुष्परचनादिभिः॥७२॥
रसावेशो भवेद्यत्र तमाहुः परमोत्सवम्।
निर्विकारं भवेच्चित्तं भगवज्ज्ञानगोचरम्॥७३॥
प्रेमैकरसिकं शुद्धं तत्रावेशो भवेद्ध्रुवम्।
उत्सवे देवदेवेशि त्रिविधैव जनसङ्गमः॥७४॥
प्रियाणां वासनाश्चैको देवसर्गो द्वितीयकः।
तृतीयो गौतमैः शप्ता ये च वैडालिनः स्मृताः॥७५॥
वासनासु रसावेशः शुद्धो नैवात्र संशयः।
देवेषु देवतावेशो भगवत्प्रेमवत्स्वपि॥७६॥
प्रेमहीना दुराचाराः परस्त्रीधनलम्पटाः।
पिशुनाः वञ्चकाः क्रूराः कुटिलाः पापचारिणः॥७७॥
आचाररहिता दुष्टा निर्लज्जाः कलहोत्सुकाः।
आसुरं भावमापन्ना वेदशास्त्रार्थनिन्दकाः॥७८॥
ते वै वैडालिनो देवि ह्यधिकारविवर्ज्जिताः।
असुरावेशिणस्ते तु मयोक्तमवधार्यताम्॥७९॥
जानीयात्तत्तदावेशं तत्तच्चेष्टानुरूपतः।
इत्येतान् त्रिविधान् ज्ञात्वा महोत्सवगतान् शिवे॥८०॥
व्यवहार्यं यथा योग्यं सङ्करो न भवेद्यथा।
यथायोग्यं यथाकालं यथाद्रव्यं यथोचितम्॥८१॥

Nijanand App

66. वैशाख शुक्ल तृतीया को जमदग्नि के पुत्र परशुराम के रेणुका माता से उत्पन्न होने के दिन,

67. भाद्रपद मास की शुक्ला एकादशी को कश्यप और अदिति से देव कार्य की सिद्धि के लिए वामन अवतार के दिन,

68. चैत्र शुक्ल नवमी को दशरथ पुत्र राम रावण वध हेतु कौशल्या से प्रकट होने के दिन,

69. श्रावण कृष्ण अष्टमी अर्धरात्रि में देव कार्य की इच्छा से कृष्ण प्रकट होने के दिन,

70. श्रावण कृष्ण द्वितीया को बलभद्र के अवतरित होने के दिन, पौष शुक्ल सप्तमी को बौद्ध प्रकट होने के दिन,

71. माघ शुक्ल तृतीया में कल्कि प्रकट होने के दिन—इन पुण्य दिनों में और अन्य दिनों में

72. धन की कन्जूसी को छोड़कर उत्सव करना चाहिए। भक्ष्य भोजन, आदि द्वारा या पुष्परचनादि द्वारा ही उत्सव नहीं होता है।

73. जिसमें रसावेश हो उसे परमोत्सव कहते हैं। उस समय चित्त विकाररहित होकर भगवद् ज्ञान को देखने वाला हो जाता है।

74. एकमात्र प्रेम रस का शुद्ध आवेश उस उत्सव में अवश्य होता है। हे देवि! उस उत्सव में तीन प्रकार के लोगों का संगम होता है।

75. कुछ जन प्रियाओं की वासना रूप होते हैं, दूसरे देवसृष्टि होते हैं और तीसरे वे विडाल वृत्ति वाले होते हैं जिनको गौतम ने श्राप दिया था।

76. वासनाओं में शुद्ध रस का ही आवेश होता है, इसमें सन्देह नहीं। देवताओं में देवतावेश होता है। भगवान के प्रेम वाले लोगों में भी देवतावेंश होता है।

77. प्रेमहीन, दुराचारी, परायी स्त्री तथा परायी सम्पत्ति के लालची, चुगलखोर, ठग, क्रूर, कुटिल, पापी,

78. आचाररहित, दुष्ट, निर्लज्ज, कलह के लिए उत्सुक, आसुरी वृत्ति वाले, वेदशास्त्र निन्दक,

79. सभी वैडाली होते हैं। हे देवि! वे अधिकार विवर्जित होते हैं। असुर आवेश वाले होते हैं। मेरे इस कथन को निश्चित समझ लीजिए।

80. हे शिवे! उनकी चेष्टाओं को देखकर उनके आवेश को जान लेना चाहिए। महोत्सव में उपस्थित उन त्रिविध जनों को पहचान कर

81. यथायोग्य, यथाकाल, यथाद्रव्य, यथोचित व्यवहार करना चाहिए और ऐसा प्रयत्न करना चाहिए कि उनका आपस में आमेलन न हो पावे।

Nijanand App

तथा कुर्यान्महेशानि ह्यन्यथा पतितो भवेत्।
इति तेऽभिहितं देवि किं भूयः श्रोतुमिच्छसि॥८२॥
तदहं ते प्रवक्ष्यामि सुगुह्यमपि विस्तरात्॥८३॥
इति माहेश्वरतन्त्रे शिवोमासंवादे सप्तविंशं पटलम्॥२७॥

अष्टाविंशं पटलम्

पार्वत्युवाच

पुनर्ब्रूहि महादेव यथा स्याद्धजनोदयः।
कं वा गुरुमुपासीत कथं ज्ञानोदयो भवेत्॥१॥

शिव उवाच

साधु पृष्टं त्वया भद्रे प्रवक्ष्यामि यथातथम्।
गोपनीयं प्रयत्नेन दर्शयेन्नैव कस्यचित्॥२॥
मायाग्रस्तमिदं विश्वं नानादुःखभयातुरम्।
अनित्यभवसन्तापपरितप्तं समन्ततः॥३॥
कालदण्डभुजङ्गेन ग्रस्तमानमहर्निशम्।
दृष्ट्वा विरक्तः सततं स्वात्मनः शिवहेतवे॥४॥
सद्गुरोः शरणं यायात् शुद्धभावेन भामिनि।
गुरवो बहवः सन्ति दीपवच्च गृहे गृहे॥५॥
दुर्लभा गुरवो देवि सूर्यवत्सर्वदीपकाः।
गुरवो बहवः सन्ति शिष्यवित्तापहारकाः॥६॥
विरला गुरवो देवि शिष्यहृत्तापहारकाः।
शुद्धान्वयः शुद्धचेताः शुद्धवेशः शुभाकृतिः॥७॥
शुभवादी शुभाचारः शुद्धभावः शुचिः स्वयम्।
वेदशास्त्रार्थतत्त्वज्ञो लोकसङ्गविवर्ज्जितः॥८॥
अलोलुपः सुशीलश्च दयादाक्षिण्यसंयुतः।
त्यागी विरागी गुणवान् गुणज्ञः शिष्यवत्सलः॥९॥
येन केनापि सन्तुष्टः शरण्यः क्रोधवर्ज्जितः।
स्वसिद्धान्तार्थतत्त्वज्ञो मितवाक् लोकवल्लभः॥१०॥
पवित्रः संशयच्छेत्ता कृष्णाप्रेमपरिप्लुतः।
एवं विधं गुरुं ज्ञात्वा कृपापीयूषवर्षिणम्॥११॥
फलपुष्पादिहस्तश्च गच्छेदभिमुखं गुरोः।
गुरोर्मन्दिरमासाद्य नत्वा तद्देहलीं प्रिये॥१२॥

Nijanand App

82. वैसा ही करना चाहिए अन्यथा पतित हो जाता है। यह तुमसे मैंने बता दिया, अब क्या सुनना चाहती हो।

83. यदि वह गोपनीय भी होगा, तो तुमसे कहूंगा।

शंकर-पार्वती संवाद के माहेश्वरतन्त्र का सत्ताइसवां अध्याय समाप्त हुआ।

अट्ठाइसवां अध्याय

पार्वती ने कहा—

1. हे महादेव! पुनः बताइए जिससे भजन हो सके। किन गुरु की उपासना की जाए? ज्ञानोदय कैसे हो?

शिव बोले—

2. भद्रे! तुमने ठीक ही पूछा है। सब यथार्थ कहूंगा। यह यत्नपूर्वक गोपनीय है। जिस किसी को भी इसे नहीं बताना चाहिए।

3. यह संसार माया से ग्रस्त नाना दुःखों एवं भयों से पीड़ित है। चारों ओर अनित्य संसार के संतापों से संतप्त है।

4. काल दण्ड रूपी भुजंग से दिन रात घेरा जा रहा है। इसको देखकर अपने कल्याण के लिए मनुष्य को विरक्त होकर

5. शुद्ध भाव से सद्गुरु के शरण में जाना चाहिए। दीप की तरह घर-घर में प्रकाश देने वाले बहुत से गुरु हैं।

6. हे देवि! सूर्य की तरह सबको प्रकाशित करने वाले गुरु दुर्लभ हैं। शिष्य के धन को हरने वाले बहुत से गुरु हैं,

7. परन्तु शिष्य के हृदय का ताप हरने वाले गुरु बिरले हैं। शुद्ध वंश, शुद्ध चित्त, शुद्ध वेश, शुभाकृति,

8. शुभ बोलने वाले, शुभ आचार, शुद्ध भाव, स्वयं पवित्र, वेद शास्त्र के अर्थ और तत्व को जानने वाले, लोक संग से रहित,

9. लोभ रहित, सुशील, दया, दाक्षिण्य (चातुर्य) आदि गुण से युक्त, त्यागी, विरागी, गुणवान, शिष्य वत्सल,

10. जिस किसी वस्तु से सन्तुष्ट होने वाले, शरणागत की रक्षा करने वाले, क्रोध रहित, अपने सिद्धान्त के तत्व का ज्ञाता, थोड़ा बोलने वाले, लोकप्रिय,

11. पवित्र, संशय दूर करने वाले, कृष्ण प्रेम से युक्त ऐसे गुरु जो कृपा के अमृत की वर्षा करने वाले हैं,

12. फलफूलादि हाथ में लेकर ऐसे गुरु के सम्मुख जाना चाहिए। हे प्रिये! गुरु के घर में जाकर उसकी देहली को प्रणाम कर

Nijanand App

आज्ञया सद्गुरोर्देवि दक्षपाद पुरःसरम्।
प्रविश्य तद्गृहं साक्षाद्दण्डवत्प्रणमेच्च तम्॥१३॥
भो नाथकरुणासिन्धो संसारार्णवतारक।
भ्रान्तं संसारगहने नानातापसमाकुले॥१४॥
अत्यन्तदीनहृदयं सर्वसाधनवर्जितम्।
अज्ञानपङ्कनिर्मग्नं मामुद्धर दयानिधे॥१५॥
अहं त्वां शरणं प्राप्तः शरण्यस्त्वं दयानिधिः।
अविलम्बेन संसारविच्छेदं कुरु मे प्रभो॥१६॥
एवं सम्प्रार्थितः सोथ गुरुनाथः कृपानिधिः।
पूर्वं परीक्षितं विप्रं वर्षेणैकेन सुन्दरि॥१७॥
वर्षाभ्यां क्षत्रियं देवि वैश्यं संवत्सरैस्त्रिभिः।
चतुर्भिर्वत्सरैः शूद्रं बोधयेद्विरहातुरं॥१८॥
यदिचेद्वासनाजीवस्तदा बोध्यश्च सर्वथा।
स्वाप्निकश्चत्तदा त्याज्यः अधिकारविपर्ययात्॥१९॥
परीक्षा लक्षणैर्देवि पुराप्रोक्ता मयानघे।
अपरीक्षितजीवाय वितरेद्यदि बोधनम्॥२०॥
न गुरुं तं विजानीयात् वासनापि न सा भवेत्।
शिष्येभ्यो धनमादाय सुखीस्यामिति यस्य धीः॥२१॥
न गुरुं तं विजानीयात् केवलं धूर्त एव सः।
धनाहारार्जने युक्ता दाम्भिका वेषधारिणः॥२२॥
भ्रामयन्ति जनान् सर्वान् ज्ञानिवत्प्रियदर्शनाः।
शिष्येणापि गुरुर्देवि परीक्ष्यः सर्वथैव हि॥२३॥
यद्यज्ञानवशात् शिष्यो गुरुं लक्षणवर्जितम्।
जानीयात्तत्क्षणं त्यक्त्वा गुरुमन्यं समाश्रयेत्॥२४॥
गन्धलुब्धो यथा भृङ्गः पुष्पात्पुष्पान्तरं व्रजेत्।
ज्ञानलुब्धस्तथा शिष्यो गुरोर्गुर्वन्तरं व्रजेत्॥२५॥
त्यजेन्मित्रममर्मज्ञं नारीं च व्यभिचारिणीम्।
अहन्तादुष्टसम्बन्धं ज्ञानहीनं गुरुं त्यजेत्॥२६॥
नदत्सु पञ्चवाद्येषु ब्राह्मणेषु पठत्सु च।
गायन्तीषु तथा स्त्रीषु शिष्यं सम्बोधयेद्गुरुः॥२७॥
आदौ शिष्यस्य देहं तु शोधयेन्निपुणो गुरुः।
असंस्कृतशरीरस्तु न योग्यः स्यात्कथंचन॥२८॥

Nijanand App

13. सद् गुरु की आज्ञा से दाहिने पैर को आगे करके गुरु गृह में प्रवेश कर दण्डवत प्रणाम करे।

14. प्रार्थना करे, हे नाथ! करुणा सागर! संसार सागर को पार कराने वाले! नाना तापों से भरे हुए संसार रूपी जंगल में भटकते हुए

15. अत्यन्त दीन हृदय, सभी साधनों से रहित, अज्ञान के कीचड़ में फंसे मेरा उद्धार कीजिए।

16. मैं आपकी शरण में आया हूं। आप शरणागत रक्षक दयानिधि हैं। शीघ्र ही मुझे संसार से मुक्ति दिलाइए।

17. हे सुन्दरी! इस प्रकार से प्रार्थना किए गए वह गुरु-नाथ, कृपानिधि पहले से परीक्षा किए गए विप्र को एक वर्ष में,

18. क्षत्रिय को दो वर्षों में, वैश्यों को तीन वर्षों में, विरह पीड़ित शूद्र को चार वर्षों में बोध प्रदान करें।

19. यदि वासना जीव है तो हर प्रकार से ज्ञान देने योग्य है। यदि वह स्वप्न सृष्टि है तो विपरीत अधिकार होने के कारण त्याज्य है।

20. हे देवि! मैंने लक्षणों से पहले ही इसकी परीक्षा बता दी है। बिना परीक्षा किए हुए यदि वह ज्ञान वितरित करे तो उसे गुरु नहीं जानना चाहिए। वासना भी वह नहीं होती।

21. शिष्यों से धन लेकर मैं सुखी हो जाऊं ऐसी बुद्धि वाले को गुरु नहीं जानना चाहिए। वह धूर्त ही है।

22. धन और आहार के इकट्ठा करने में लगे, दम्भी, गुरुवेशधारी,

23. ज्ञानी के समान प्रियदर्शन बनकर लोगों को भ्रम में डालते हैं। शिष्य को भी सर्वथा गुरु की परीक्षा कर लेनी चाहिए।

24. यदि अज्ञानवश शिष्य गुरु को लक्षणवर्जित जान जाएं तो तत्क्षण त्याग कर दूसरे गुरु के पास चला जाए।

25. सुगन्धि का लोभी भ्रमर एक पुष्प से दूसरे पुष्प पर चला जाता है। ऐसा ज्ञानलुब्ध शिष्य एक गुरु से दूसरे गुरु के पास जा सकता है।

26. गूढ़ बातों को न समझने वाले मित्र को छोड़ देना चाहिए। व्यभिचारिणी स्त्री को छोड़ देना चाहिए। अहंकारी, दुष्ट, ज्ञान हीन गुरु को त्याग देना चाहिए।

27. जब पांचों प्रकार के बाजे बज रहे हों, ब्राह्मण पढ़ रहे हों, स्त्रियां गा रही हों, उस समय शिष्य को सम्बोधित करना चाहिए।

28. गुरु को चाहिए कि आदि में शिष्य के देह का शोधन करे। बिना संस्कार किए योग्यता नहीं आती।

Nijanand App

कृतस्नानं समाहूय मुखाग्रे स्थापयेच्च तम्।
शुभासनश्वेतवस्त्रवसानं मलवर्जितम्॥२९॥
बोधयेत्तद्धृदाम्भोजे प्रदीपकलिकाकृतिः।
आत्मचैतन्यमीशानि तच्च स्वात्मनि योजयेत्॥३०॥
ततोऽस्य पदयुगले भुवनानि चतुर्दश।
लिङ्गप्रदेशेऽस्य भूतानि चिन्तयेत्परमेश्वरि॥३१॥
अवशिष्टानि तत्वानि चिन्तयेद्धृदयाम्बुजे।
कण्ठदेशे नादविन्दुगुणांश्च परिचिन्तयेत्॥३२॥
ब्रह्मरन्ध्रे परं ब्रह्म पुरुषं प्रकृतीश्वरं।
एवं संचिन्त्य देवेशि जुहुयात्तान्यनुक्रमात्॥३३॥
जुहुयाल्लिङ्गदेशेस्य भुवनानि चतुर्दश।
लिङ्गदेशस्थभूतानि हृदितत्वेषु होमयेत्॥३४॥
हृदयस्थानि तत्वानि बिन्दुनादे च ह्यर्पयेत्।
ब्रह्मरन्ध्रे चिते देवि परब्रह्मणि निष्कले॥३५॥
नादबिन्दुगुणान्हुत्वा प्रपञ्च विलयं स्मरेत्।
निष्प्रपञ्चं तदा शिष्यं बोधयेत्परमेश्वरि॥३६॥
न वर्णेषु तदा कश्चित् ब्राह्मणक्षत्रियादिषु।
न देवोसि न गन्धर्वो नासुरः पन्नगोपि वा॥३७॥
न त्वं देहो न त्वद्देहो नेन्द्रियाणि तथा मनः।
न च प्राणो न बुद्धिस्त्वं नाहङ्कारो भवान्मतः॥३८॥
क्षरः सर्वप्रपञ्चोयमक्षरे प्रतिबिम्बितः।
अक्षरस्य दिदृक्षाभूद्ब्रह्मलीलावलोकने॥३९॥
तत्प्रियायाभवत्कामोऽक्षरलीलानिरीक्षणे।
तत इच्छा समुद्भूता ब्रह्मण्यज्ञानमसृजत्॥४०॥
मोहाण्डं प्रविशन् साक्षी ददर्श स्वप्नगं जगत्।
तत्र वृन्दावने रासलीलायां रमिता प्रिया॥४१॥
अन्तर्हिते प्रिये कृष्णे दुःखाद्दुःखतरं गता।
कालमायान्धकारोस्मिन् भ्रान्तासि बहुधा मुधा॥४२॥
श्रीकृष्णस्य प्रिया चासि पूर्णस्य परमात्मनः।
उद्बुध्य स्वप्नतश्चित्ते प्रियाभावं निजंश्रय॥४३॥
तिरोभूय च शनकैर्मायादेहमनीप्सितम्।
क्षरं चैवाक्षरं हित्वा स्वपतिं पुनरेष्यसि॥४४॥

Nijanand App

29. स्नान किए हुए शिष्यों को बुलाकर अपने सामने शुभासन पर मल रहित श्वेत वस्त्र पहना कर बैठावें।

30. उसके हृदय रूपी कमल में दीपक रूपी कली के आकार का आत्म चैतन्य जगावें और उसको अपनी आत्मा में जोड़ें।

31. इसके बाद उसके दोनों चरणों में चौदह भुवन और लिंग प्रदेश में समस्त भूतों का चिन्तन करे।

32. अवशिष्ट तत्वों को उसके हृदय कमल में चिन्तन करे। कण्ठ देश में नाद-बिन्दु का चिन्तन करे।

33. ब्रह्म रंध्र में प्रकृति के ईश्वर ब्रह्म पुरुष का चिन्तन कर उनके लिए हवन करे।

34. उसके लिंग प्रदेश में चतुर्दश भुवनों का हवन करे। लिंग देश में स्थित भूतों के हृदय तत्व में हवन करे।

35-36. हृदय स्थित तत्वों को बिन्दु और नाद में अर्पित करे। ब्रह्म रंध्र के चित् में नाद बिन्दु का हवन कर समस्त प्रपंच रूपी संसार का विलय कर निष्कल परब्रह्म का बोध कराना चाहिए।

37. उस समय कोई ब्राह्मण, क्षत्रिय आदि वर्णों में नहीं रहता। देव, गन्धर्व, असुर, पन्नग भी नहीं है, यह कल्पना करे।

38. तुम देह नहीं हो, तुम्हारी देह नहीं है, तुम इन्द्रिय नहीं हो, मन नहीं, प्राण नहीं, बुद्धि नहीं अहंकार नहीं हो।

39. यह क्षर प्रपंच है जो अक्षर में प्रतिविम्बित है। अक्षर की ब्रह्म लीला देखने की इच्छा हुई।

40. और उसकी प्रियाओं को अक्षर की लीला के देखने की कामना हुई। तब इच्छा ने प्रकट होकर ब्रह्म में अज्ञान उत्पन्न किया।

41. साक्षी जब मोह के अण्ड में प्रवेश करता है तो स्वप्न में आए जगत को देखता है। तब वृन्दावन में रास लीला में प्रियाओं के साथ रास लीला करता है।

42. प्रिय कृष्ण के छिप जाने पर बहुत दु:खी हो जाती हैं। यह काल माया का अन्धकार है। इसमें व्यर्थ ही बहुत प्रकार से घूमी हो।

43. पूर्ण परमात्मा श्रीकृष्ण की प्रिया हो, स्वप्न से जागकर चित्त में निज प्रिया भाव फिर धारण करो।

44. अनिच्छित माया देह को धीरे से छिपाकर क्षर और अक्षर को त्याग कर अपने पति को पुन: प्राप्त करोगे।

Nijanand App

प्रबोध्यैवं गुरुस्तस्मिन् चैतन्यं परमेश्वरि।
दिव्यदृष्ट्यावलोकेन स्थापयेत्पुनरेव तत्॥४५॥
ब्रह्मरन्ध्रपथा तस्मिन् चावतीर्णं इति स्मरन्।
कण्ठदेशे नादबिन्दू स्थापयेच्च ततः परम्॥४६॥
तत्वानि हृदयाम्भोजे लिङ्गे भूतानि पञ्च च।
ततः पादप्रदेशे तु स्थापयेद्भुवनावलिम्॥४७॥
एवं विराजं संस्कृत्य ततो मन्त्रं समादिशेत्।
मन्त्रोपदेशतः पूर्वं गुरुं सम्पूजयेत्प्रिये॥४८॥
सर्वस्वदक्षिणां दत्वा कृतकृत्यो भवेद्धि सः।
तदर्द्धं वा तदर्धं वा तदर्द्धार्द्धमथापि वा॥४९॥
सन्तोषयेद्गुरुं भक्त्या धनधान्याम्बरादिभिः।
अन्येभ्योऽपि यथाशक्ति भूषावस्त्रादिकं ददेत्॥५०॥
साष्टाङ्गं च ततो देवि दण्डवत्पतितो भुवि।
प्रणमेद्गुरुमात्मीयं गुरुरुत्थापयेच्च तम्॥५१॥

क्वचित्पुस्तके ४४-४५ श्लोकयोर्मध्ये एते श्लोका अप्युपलभ्यन्ते—
'ब्रह्मानन्दरसज्ञानां ब्रह्मज्ञानवतां सताम्।
पद्धतिं ब्रह्मसृष्टीनां वदयामि शृणु सुन्दरि॥४५॥
गोत्रमुक्तं चिदानन्दं ब्रह्मानन्दो हि सद्गुरुः।
शिखा ज्ञानमयी प्रोक्ता सूत्रमक्षररूपकम्॥४६॥
किशोरी परमेष्टा च सेवनं पौरुषोत्तमम्।
पातिव्रत्यमनन्यत्वं साधनं समुदाहृतम्॥४७॥
वृन्दावनं नित्यमुक्तं विलाससुखसञ्ज्ञकम्।
जाप्यं च युगलं नाम तारतम्यो (मो) मनुः स्मृतः ॥४८॥
ब्रह्मविद्या परा देवी देवो ब्रह्म सनातनम्।
शाला गोलोक इत्युक्तो द्वारमूर्ध्वमुदाहृतम्॥४९॥
स्वसंवेद समादिष्टः फलं नित्यविहारकम्।
दिव्यब्रह्मपुरं धाम परात्परमुदाहृतम॥५०॥
सद्गुरोश्चरणं क्षेत्रं सर्वशुद्धिकरं परम्।
यमुनासंज्ञकं तीरं मननं प्रेमलक्षणम्॥५१॥
श्रीमद्भागवतं प्रोक्तं श्रवणं सारमद्भुतम्।
ऋषिः प्रोक्तो महाविष्णुर्ज्ञानं जाग्रत्स्वरूपकम्॥५२॥
आनन्दाख्यं कुलं प्राप्तं नित्ये धाम्नि प्रकीर्तितम्।
सम्प्रदायश्चिदानन्दो निजानन्दैः प्रकाशितः॥५३॥
एवं पद्धतिराख्याता पुरुषोत्तमसञ्ज्ञिका।
वर्तितव्यं ततो भद्रे साधनेरात्मलब्धये''॥५४॥

Nijanand App

45. इस प्रकार से गुरु उसे प्रबोध देकर उसमें दिव्य दृष्टि से देखकर चैतन्य की स्थापना करे।

46. यह स्मरण करे कि ब्रह्म रंध्र के मार्ग से चैतन्य उसमें प्रविष्ट हुआ है। इसके पश्चात् कण्ठ में नाद बिन्दु की स्थापना करे।

47. हृदय कमल में तत्व, लिंग में पंचभूत और पाद प्रदेश में चौदह भुवन स्थापित करे।

48. इस प्रकार शरीर को संस्कृत करके मन्त्र का उपदेश करे। हे प्रिये! मन्त्रोपदेश के पहले शिष्य गुरु का पूजन करे।

49. दक्षिणा में सर्वस्व देकर शिष्य कृत-कृत्य हो जाते हैं। उसका आधा या आधे का आधा या उसका भी आधा अथवा उसका भी आधा दक्षिणा रूप में दिया जाय।

50. धन-धान्य वस्त्रादि देकर भक्ति से गुरु को सन्तुष्ट करे और लोगों को भी आभूषण वस्त्रादि दान करे।

51. तत्पश्चात् शिष्य साष्टांग दण्डवत भूमि पर गिरकर अपने गुरु को प्रणाम करे और गुरु उसे उठावे।

Nijanand App

उपवेश्य पुन पार्श्वे लीलाभेदान् समादिशेत्।
लीलाभेदा गुरुमुखाद्बोद्धव्या एव सुन्दरि॥५२॥
ततो रहो रहश्चैव संस्थितो भावयेच्च तान्।
प्रियाभावो यदा बुद्धेः कृतकृत्यो भवेत्तदा॥५३॥
इति तेऽभिहितं देवि गोप्याद्गोप्यतरं च यत्।
समासेन महादेवि भूयः किं श्रोतुमिच्छसि॥५४॥

इति श्रीमाहेश्वरतन्त्रे शिवोमासंवादे अष्टाविंशतितमं पटलम् ॥२८॥

एकोनत्रिंशं पटलम्

पार्वत्युवाच

ब्रूहि तं च महेशान मन्त्रराजं महेश्वर।
यस्य श्रवणमात्रेण सर्वमन्त्रफलं भवेत्॥१॥

श्रीमहादेव उवाच

देवेशि मन्त्रराजोयं भाति गोप्यतरो महान्।
पातकानि प्रलीयन्ते सकृद्यस्य जपादपि॥२॥
सप्तकोटिमहामन्त्रास्तवाग्रे कथिता मया।
तेषु श्रीकृष्णमन्त्राश्च बहवः कीर्तितास्तव॥३॥
रासलीलाप्रविष्टस्य पुरा गोपालरूपिणः।
प्रोक्ता मन्त्रा महेशानि तत्रायं गोपितो मया॥४॥
रहस्यत्त्वान्मया नोक्तः पुनस्त्वं परिपृच्छसि।
त्वयापि गोपितव्योयं न देयः स्यात्कथञ्चन॥५॥
लेखयित्वा ददेन्मन्त्रं न वाचोपदिशेत्प्रिये।
ब्रह्महत्यासहस्राणां दत्त्वा पापमवाप्नुयात्॥६॥
निर्धारत्वे वासनाया यदि प्रेमोद्गमो भवेत्।
तदैवोपदिशेद्देवि ह्यन्यथा कृष्णघातकः॥७॥
विधिः सर्वोपि कर्तव्यो मन्त्रदानं विना प्रिये।
ततः परीक्षिते काले योग्यत्वे मन्त्रमादिशेत्॥८॥
शृणु मन्त्रं प्रवक्ष्यामि सावधानेन चेतसा।
स्वर आद्यश्चतुर्थश्च आकाशस्तदनन्तरम्॥९॥
वायुबीजं ततः पश्चात् अग्निबीजमतः परम्।
ततो वरुणबीजञ्च भूबीजं स्यात्ततः परम्॥१०॥

Nijanand App

52. उठाकर अपने बगल में बैठाकर लीला भेदों का उपदेश करे। गुरु मुख से लीला भेद अवश्य जान लेना चाहिए।

53. फिर एकान्त में स्थित होकर शिष्य अपने मन में भावित करे। जब बुद्धि में प्रियाभाव उदित हो जाय ते वह कृत कृत्य हो जाता है।

54. हे देवि! गोप्य से भी जो गोप्य था, संक्षेप में बता दिया। तुम और क्या सुनना चाहती हो।

माहेश्वरतन्त्र के शिव-पार्वती संवाद का अट्ठाइसवां अध्याय समाप्त हुआ।

उन्तीसवां अध्याय

पार्वती ने पूछा—

1. हे महेश्वर! उस मन्त्र को बताइए जिसके श्रवण से सभी मन्त्रों का फल मिल जाता है।

शिव बोले—

2. हे देवि! यह मन्त्र राज बहुत ही महान् एवं गोप्य है। इसके थोड़े जप से पाप नष्ट हो जाते हैं।

3. मैंने सात करोड़ मन्त्र तुम्हें बतलाये हैं। उसमें बहुत से श्रीकृष्ण के मन्त्र कहे हैं।

4. रास लीला में संलग्न गोपाल रूपी कृष्ण के मैंने पहले बहुत से मन्त्र कहे। उनमें इस मन्त्र को छिपा लिया था।

5. रहस्य होने के कारण मैंने नहीं कहा था। तुमने दुबारा पूछा है। तुम्हें भी इसे गुप्त रखना है। किसी से नहीं कहना है।

6. लिखवा कर मन्त्र को देना चाहिए, वाणी से नहीं कहना चाहिए। मन्त्र बता देने से हजार ब्रह्म हत्या के बराबर पाप लगता है।

7. वासना के निर्धारित हो जाने पर यदि प्रेम उत्पन्न हो जाय तभी इसका उपदेश करना चाहिए, वरना कृष्ण की हत्या का पाप लगता है।

8. हे प्रिये! मन्त्रदान न करने की सभी विधि करनी चाहिए। इसके बाद परीक्षित (समय आने पर योगत्व होने पर) समय में मन्त्र का उपदेश करना चाहिए।

9. मैं मन्त्र कह रहा हूं, सावधानी से सुनो। प्रथम स्वर है चतुर्थ दीर्घ ईकार, इसके बाद आकाश,

10. इसके पश्चात् वायु बीज, फिर इससे परे अग्नि बीज, वरुण बीज, फिर भू बीज।

Nijanand App

श्रीकृष्ण परमानन्द ते प्रियास्मीति वै वदेत्।
मामङ्गीकुर्विति चोक्त्वा दर्शयेति द्वयं वदेत्॥११॥
प्रबोधयेति द्वितीयं मोहेति च ततो वदेत्।
मपाकुरुद्वयं चोक्त्वा नमोतोऽयं महामनुः॥१२॥
एकोनैकोनपञ्चाशद्वर्णैः सङ्घटितः प्रिये।
आद्यबीजं महेशानि परमात्माक्षरः प्रभुः॥१३॥
तस्मात्सृष्टिर्वर्णमयी हकारान्ताविजृम्भिता।
प्रतिलोमलयं तस्याः स एव परिशिष्यते॥१४॥
अनन्तत्वादात्मतत्वाद्व्यापकत्वान्महेश्वरि।
न तस्यास्ति लयः क्वापि वर्णानामात्मनः प्रिये॥१५॥
स्वरश्चतुर्थस्तन्माया ह्युपर्यङ्कुरतां गता।
ततो ज्ञानहरा देवि जाता सा विश्वमोहिनी॥१६॥
मध्यबिन्दुसमायोगाच्छून्यरूपा हि साभवत्।
शून्यत्त्वेधस्तना रेखा जगदङ्कुररूपिणी॥१७॥
अर्द्धबिन्दुसमायोगाद्योगमायात्मिका हि सा।
एवं त्रितययोगेन ज्ञेयं तस्या गुणत्रयम्॥१८॥
प्रतिबिम्बवदाभासं निर्मले परमात्मनि।
यदा समरसाकारा विश्वयोनिस्तदा हि सा॥१९॥
कोणत्रयसमायोगा ब्रह्मादित्रितयात्मिका।
लोकत्रयात्मिका चैव तथा वेदत्रयात्मिका॥२०॥
इच्छाज्ञानक्रियात्मा च कालत्रितयरूपिणी।
अग्निसोमार्करूपा च सर्वत्रितयरूपिणी॥२१॥
अधोमुखा हि सा ज्ञेयावतरती परात्मनः।
यदा चोर्ध्वमुखी भूयाद्वह्निज्वालेव सा लये॥२२॥
शून्यत्वेऽधस्तना रेखा जगदङ्कुररूपिणी।
तदेव च महत्तत्त्वमित्याहुस्तन्त्रवादिनः॥२३॥
अहङ्कारस्तु रेखान्तस्तद्गुणोपाधिसङ्गतः।
त्रिविधः स तु विज्ञेयस्तस्माद्भूतानि जज्ञिरे॥२४॥
तद्वाचकान्यक्षराणि हकारादीनि पञ्च च
पुरतस्तानि दृश्यन्ते मन्त्रराजे महेश्वरि॥२५॥
आकाशस्तु हकारस्थो देवता तु सदाशिवः।
गुणः शब्दस्तथा श्रोत्रं श्रोतव्या दिक् च सुन्दरि॥२६॥

Nijanand App

11. इसके पश्चात् श्रीकृष्ण परमानन्द से 'प्रिया अस्मि' यह मिलाएं। 'मामंगीकुरु' जोड़कर दो बार 'दर्शय' कहे।

12. 'मोहम्' 'अपाकुरु अपाकुरु' कह करके नमः कहने पर यह महा मन्त्र बनता है।

13. हे प्रिये! अड़तालिस अक्षरों का यह संघटित मन्त्र है। आद्य बीज परमात्मा अक्षर ही है।

14. उससे हकार तक वर्णमयी सृष्टि प्रकट हुई है। उसका प्रतिलोम लय होता है और वही अवशेष रहता है।

15. अनन्त होने के कारण, आत्मतत्व होने के कारण, व्यापक होने के कारण उसका लय नहीं होता है। वह वर्णों की आत्मा है।

16. चतुर्थ स्वर उसी की माया है। उसके ऊपर अंकुर भी विराजमान है। उससे विश्व मोहिनी ज्ञानहरी उत्पन्न हुई है।

17. मध्य बिन्दु के योग से वह शून्य रूपा हो गई। शून्य अवस्था में नीचे की रेखा जगत् अंकुर रूपिणी है।

18. अर्ध बिन्दु के योग से वह योगमायात्मिका है। इस प्रकार तीन के योग से उसके तीन-तीन गुणों को जानना चाहिए।

19. निर्मल परमात्मा में प्रतिबिम्ब की तरह उसकी प्रतीति होती है तब वह सम-रस आकार की विश्वयोनि होती है।

20. तीन कोणों के समावेश से ब्रह्मादि त्रिदेव रूप होती है तथा लोकत्रयी, वेदत्रयी रूप वाली होती है।

21. इच्छा, ज्ञान, क्रियात्मिका, भूत, भविष्य, वर्तमान रूप होती है और अग्नि सोम, सूर्य रूप वह सर्वत्र तीन रूप होती है।

22. परात्मा से अलग होती हुई उसे अधोमुख जानना चाहिए और लय काल में अग्नि ज्वाला की तरह ऊर्ध्वमुखी जानना चाहिए।

23. शून्य में जो नीचे की रेखा होती है वह जगत् के अंकुर रूप होती है। तन्त्रवादी लोग उसे महत्तत्व कहते हैं।

24. रेखा के मध्य उसके गुण और उपाधि के संग होने के कारण अहंकार तीन प्रकार का होता है। उससे महाभूत उत्पन्न होते हैं।

25. उसके वाचक हकारादि पांच अक्षर मन्त्रराज में आगे की ओर दिखाई पड़ते हैं।

26. हकार में जो आकाश है उसके देवता सदाशिव हैं। इसका गुण शब्द है। इन्द्रिय श्रोत है और श्रोतव्य दिशा है।

Nijanand App

यकारे देवदेवेशि वायुरीश्वर एव च।
स्पर्शस्त्वगिन्द्रियं देवि स्पृष्टव्यं च महीरुहम्॥२७॥
रकारेऽग्निरहं देवि रूपं चक्षू रविस्तथा।
दृष्टव्यं चेति विज्ञेयं मञ्जूषामणिवत्तथा॥२८॥
वकारे सलिलं विष्णू रसश्च रसनेन्द्रियम्।
रसितव्यं च वरुणो देवता चेति संस्थिता॥२९॥
लकारे पृथिवीतत्वं ब्रह्मा गन्धश्च नासिका।
घ्रातव्यमश्विनौ देवि देवता चेति संस्थिता॥३०॥
इत्येवं पञ्चभूतानां बीजकार्यं तदीश्वरि।
सदृशं कथितं ते च यदाहुः क्षरसञ्ज्ञया॥३१॥
अकारः परमं ब्रह्म कूटस्थं व्यापकं ध्रुवम्।
अनुत्तरं निर्विशेषं चिदंशस्तेन कथ्यते॥३२॥
अक्षरातीतरूपोऽसौ शेषवर्णैर्मनुः स्मृतः।
तस्मादहो सच्चिदानन्दरूपोयं मन्त्रनायकः॥३३॥
मननं विश्वविज्ञानं त्राणं संसारसङ्कटात्।
यतः करोति संसिद्धो मन्त्र इत्युच्यते प्रिये॥३४॥
मन्त्रचूडामणिं ज्ञात्वा मुच्यते सर्वसंशयात्।
विज्ञाते मन्त्रराजन्ये ज्ञातव्यं नावशिष्यते॥३५॥
शाब्दं वपुः परानन्दवपुषः परमेश्वरि।
मन्त्रचूडामणिरयं मया ते परिकीर्तितः॥३६॥
अकथ्यः पारमार्थ्येन तथापि कथितस्तव।
गोपनीयः प्रयत्नेन जननी जारगर्भवत्॥३७॥
पश्यन्ति ये शठधियो वर्णबुध्या महामनुम्।
ते यान्ति नरकान् सर्वे यावदाभूतसंप्लवम्॥३८॥
पुरुषं मन्त्रजप्तारं ये पश्यन्ति नराधमाः।
तेषां पापानि नश्यन्ति ब्रह्महत्यादिकान्यपि॥३९॥
कोटिकल्पेषु पापिष्ठा नित्यं पापपरायणाः॥
तेपि शुध्यन्ति सम्पर्कान्मन्त्रजप्तुर्न संशयः॥४०॥
लब्धे चिन्तामणौ देवि किमन्यैर्धनसञ्चयैः।
तथा लब्धे मन्त्रराजे किमन्यैः साधनैर्भवेत्॥४१॥
एतन्मन्त्रार्थविज्ञानं मन्त्रसिद्धान्तसूचकं।
यो नित्यं भावयेच्चित्ते वासना तस्य शुध्यति॥४२॥

Nijanand App

27. हे देवदेवेशि! यकार में वायु और ईश्वर है। स्पर्श गुण है, त्वक् इन्द्रिय हैं और स्पर्श करने योग्य वृक्ष उसी से सम्बन्धित है।

28. हे देवि! रकार में अग्नि और मैं हूं, रूप गुण है, चक्षु इन्द्रिय है, सूर्य देवता हैं और द्रष्टव्य जो कुछ है यथा मंजूषा, मणि उसी से सम्बन्धित है।

29. वकार में जल, विष्णु, रस, रसना इन्द्रिय, रसितव्य वस्तु वरुण देवता स्थित है।

30. लकार में पृथ्वी तत्व, ब्रह्मा, गन्ध, नासिका, घ्रातव्य अश्विनी कुमार देवता स्थित हैं।

31. इस प्रकार से पांच भूतों के बीज, कार्य और उनके समान जो कहा गया है, वह सव क्षर है।

32. अकार ही कूटस्थ, व्यापक, ध्रुव, अनुत्तर, निर्विशेष श्रेष्ठ ब्रह्म है। इसी से उसे चिदंश भी कहते हैं।

33. यह अक्षरातीत का रूप है, ऐसा शेष वर्णों में कहा गया है। इसलिए यह सच्चिदानन्द रूप मन्त्र राज है।

34. हे प्रिये! मनन, विश्वविज्ञान द्वारा यह सिद्ध होने पर संसार के संकटों से रक्षा करता है, इसीलिए इसे मन्त्र कहते हैं।

35. मनुष्य इस मन्त्र चूड़ामणि को जानकर सारे संशयों से मुक्त हो जाता है। इसे जान लेने पर उसे और कोई वस्तु ज्ञातव्य नहीं रह जाती है।

36. परानन्द शरीर वाले परमात्मा का यह शब्द शरीर मन्त्र चूड़ामणि है। तुमको मैंने इसे बता दिया।

37. वास्तव में यह अकथनीय है, फिर भी मैंने तुमसे कह दिया। इसको उसी प्रकार छिपाना चाहिए जैसे जननी द्वारा प्रेमी के गर्भ को छिपाया जाता है।

38. जो शठ-बुद्धि इस महामन्त्र को अक्षरों की बुद्धि से देखते हैं, वे सभी संसार की स्थिति तक नरक गामी होते हैं।

39. मन्त्र जप करने वाले पुरुष को यदि नराधम देख लें तो उनके ब्रह्म हत्या आदि पाप नष्ट हो जाते हैं।

40. कोटि कल्पों के पापी, नित्य पाप करने वाले भी मन्त्र जाप के सम्पर्क से नि:सन्देह शुद्ध हो जाते हैं।

41. चिन्तामणि के पा जाने पर धन संचय से क्या लाभ? वैसे ही मन्त्रराज के पा जाने पर अन्य साधनों से क्या लाभ।

42. जो मन्त्र सिद्धान्त की सूचना देने वाले इस मन्त्रार्थ विज्ञान को चित्त में विचारते रहते हैं, उनकी वासना शुद्ध हो जाती है।

Nijanand App

विहाय मायामालिन्यं देहेन्द्रियनिबन्धनम्।
वासना सम्मुखीभूयाद्विवेकं प्रतिबिम्बवत्।।४३।।
मन्त्रमाहात्म्यमेतत्तु मया ते परिकीर्तितम्।
किमन्यत् श्रोतुमिच्छासि तदिदानीं वद प्रिये।।४४।।
इति श्रीमाहेश्वरतन्त्रे उत्तरखण्डे शिवपार्वती संवादे एकोनत्रिंशं पटलम्।।२९।।

त्रिंशं पटलम्

पार्वत्युवाच

भगवन्देवदेवेश श्रोतुमिच्छाम्यहं पुनः।
मन्त्रस्य साधनं साक्षात् यत्कृत्वा साङ्गता भवेत्।।१।।

शिव उवाच

श्रृणु त्वं देवदेवेशि मन्त्रराजस्य साधनम्।
ऋषिरस्य स्मृतो देवि परात्मा पुरुषोत्तमः।।२।।
छन्दोनुष्टुप्समाख्यातं श्रीकृष्णो देवतास्य च।
अहं बीजं नमः शक्तिर्विनियोगः प्रसादने।।३।।
ऋषिः शिरसि विन्यस्य छन्दस्तु मुखमण्डले।
देवता हृदये न्यस्य बीजं पादयुगे न्यसेत्।।४।।
कटिदेशे न्यसेच्छक्तिंनियोगः करसम्पुटे।
एवं ऋष्यादिकं न्यस्य वर्णन्यासं ततश्चरेत्।।५।।
अथ बीजं न्यसेन्मूर्ध्नि न्यसेन्माया ललाटके।
व्योमबीजं न्यसेत्कर्णयुगलेऽथ समीरणम्।।६।।
न्यसेत्वचि ततो नेत्रे बह्निबीजं न्यसेत्प्रिये।
जिह्वायां वारुणं बीजं पृथ्वीबीजं च नासयोः।।७।।
श्रीकारं कण्ठदेशे तु कृकारं हृदये न्यसेत्।
ष्णां पं न्यसेत्कुचद्वन्द्वे वामादि परमेश्वरि।।८।।
रकारं चैव माकारं कुक्षियुग्मे च वामतः।
नकारं च दकारं च न्यसेत्कट्र्योस्तथैव हि।।९।।
तेकारं विन्यसेल्लिंगे प्रिया वर्णावुरुद्वये।
स्मिमावर्णद्वयं देवि जानुयुग्मे तथा न्यसेत्।।१०।।
मं गी वर्णौ च देवेशि जङ्घायुग्मे प्रविन्यस्येत्।
कुर्वित्यक्षरयोर्द्वन्द्वं पार्ष्णिाद्वन्द्वे नियोजयेत्।।११।।

Nijanand App

43. देह इन्द्रियों से सम्बद्ध माया मालिन्य को छोड़कर वासना प्रतिबिम्ब के समान विवेक के सम्मुख हो जाती है।

44. मन्त्र का महत्व मैंने तुम्हें बता दिया। और क्या सुनना चाहती हो?

माहेश्वरतन्त्र के उत्तर खण्ड के शिव-पार्वती संवाद का उन्तीसवां अध्याय समाप्त हुआ।

तीसवां अध्याय

पार्वती ने कहा—

1. हे भगवन्! देवदेवेश! मैं मन्त्र के साधन का साक्षात् श्रवण करना चाहती हूं, जिसके करने से मन्त्र के अंग पूर्ण होते हैं।

शिव बोले—

2. हे देवि! मन्त्रराज का साधन सुनो। इस मन्त्र के ऋषि परात्मा पुरुषोत्तम हैं।

3. अनुष्टुप छन्द, देवता श्रीकृष्ण, अहम् बीज, नमः शक्ति तथा सेवा-पूजन विनियोग है।

4. सिर में ऋषि, मुखमण्डल में छन्द, हृदय में देवता, दोनों पैरों में बीज का न्यास करना चाहिए।

5. कटि में शक्ति, कर सम्पुट में नियोग, इस प्रकार ऋष्यादि का न्यास करके वर्ण न्यास करना चाहिए।

6. बीज का मस्तक में, माया का ललाट में, आकाश बीज का दोनों कानों में, वायु बीज का

7. त्वचा में, अग्नि बीज का नेत्र में, वरुण बीज का जिह्वा में, पृथ्वी बीज का नासिका में,

8. हे परमेश्वरि! 'श्री' का कण्ठ देश में, 'कृ' का हृदय में, 'ष्ण' एवं 'प' का दोनों कुचों में न्यास करे।

9. 'र' और 'मा' का वाम एवं दक्षिण कुक्षि में, 'न' और 'द' का दोनों कटियों में,

10. 'ते' का लिंग में, 'प्रिया' का दोनों उरुओं में, 'स्मि' और 'मा' का घुटनों में न्यास करे।

11. 'मं' और 'गी' को दोनों जंघाओं में,

दकारं च शकारं च प्रपदन्द्वके न्यसेत्।
प्रकारं चैव बोकारं न्यसेत्पादतलद्वये॥१२॥
धंन्यसेदङ्गुलीष्वेव अङ्गुल्यन्तेषु यं न्यसेत्।
तलादिजानुपर्यन्तं प्रबोवर्णद्वयं पुनः॥१३॥
जान्वादिनाभिपर्यन्तं धय वर्णद्वयं न्यसेत्।
मोकारं विन्यसेन्नाभौ हकारमुदरे न्यसेत्॥१४॥
म पा वर्णौ स्कन्धयुग्मे कुरु कक्षायुगे न्यसेत्।
कुरु वर्णद्वयं दोष्णोर्गल्लयोश्च प्रविन्यसेत्॥१५॥
नमः शिखायां विन्यस्य समग्रं व्यापकं न्यसेत्।
एवं न्यासाच्छरीरेऽसौ जायते मन्त्ररूपधृक्॥१६॥
अलौकिकं वपुः कृत्वा गच्छेद्ध्यानेन तत्पदम्।
तत्प्रकारं प्रवक्ष्यामि सुगुप्तमपि सुन्दरि॥१७॥
वर्णरूपं वपुर्ध्यायेत् पञ्चभूतमयान्हि तान्।
तत्तत्कारणभूतेषु तत्तत्कार्य विलोपयेत्॥१८॥
पादादिजानुपर्यन्तं पृथ्वीतत्वं विचिन्तयेत्।
पृथ्वीतत्त्वमयान् वर्णान् प्रवक्ष्यामि समासतः॥१९॥
पञ्चमश्चैव षष्ठश्च त्रयोदश एव च।
स्वराणां त्रितयं चैतत् आकाशादग्रिमाक्षरम्॥२०॥
स्पर्शेषु चाष्टमश्चैव तथा चैव त्रयोदश।
दवलाश्चेति वै वर्णाः पार्थिवाः परिकीर्त्तिताः॥२१॥
ऋ ॠ औ घ झ ढ ध भ वर्णास्ते वारुणाः स्मृताः।
जान्वादिकटिपर्यन्तं जलतत्वगतान् स्मरेत्॥२२॥
इ ई ए ख छ ठ थ फ र क्षास्ते वह्निरूपिणः।
कट्यादिकंठपर्यन्तं तेजस्तत्वगतान् स्मरेत्॥२३॥
अ ऐ कचटतपसषाः मारुताः कथिताः प्रिये।
कण्ठादिभ्रूप्रदेशान्तं वायुतत्वमयान्स्मरेत्॥२४॥
ऌॡ अंङञणनमशबहानाभसाः स्मृताः।
भ्रूमध्यादिब्रह्मरन्ध्रस्थिताकाशमयान् स्मरेत्॥२५॥
तत्तद्वर्णविलोपन्तु कारयेत्कारणाक्षरे।
हित्वा स्थौल्यं भूतमयं सूक्ष्मं शब्दमयं ततः॥२६॥
शब्दब्रह्मशरीरोसौ सर्वकारणकारणं।
सहस्त्रदलपद्मस्य कर्णिकायां व्यवस्थितं॥२७॥

Nijanand App

12. 'कु' और 'रु' को पार्श्व में न्यास करे।

13. 'द' और 'श' को दोनों पैरों के आगे वाले भाग में न्यास करे, 'प्र' और 'वो' को दोनों पाद तलों में न्यास करे।

14. 'ध' का उंगलियों में, 'य' का अंगुलि के अन्तिम भाग में न्यास करे। तल से लेकर जानु तक 'प्र' और 'बो' का न्यास करे।

15. जानु से लेकर नाभि तक 'धय' का न्यास करे। 'मो' का नाभि में, 'ह' का उदर में।

16. 'म पा' वर्णों का दोनों कन्धों में 'कुरु' का दोनों कक्ष में, 'कुरु' का भुजाओं' में और गले में न्यास करे।

''नमः'' का शिखा में न्यास करके समग्र व्यापक न्यास करे। इस प्रकार शरीर में न्यास करने से वह मन्त्र रूप धारण करने वाला हो जाता है।

17. अलौकिक शरीर करके ध्यान के द्वारा उस पद को पहुंचे। हे सुन्दरी! यह बहुत ही गुप्त है फिर भी तुमसे कह रहा हूं।

18. वर्ण रूप शरीर का ध्यान करे। पंचभूतमय उन वर्णों को अपने-अपने कारण भूतों में कार्य का विलय करे।

19. पैर से लेकर जानु तक पृथ्वी तत्व का चिन्तन करे। पृथ्वी तत्व के वर्णों को संक्षेप में कहूंगा।

20. स्वरों में पंचम, षष्ठ और तेरहवां यह तीन और आकाश से आगे वाला अक्षर,

21. स्पर्शों में अष्टम और तेरहवां (द व ला) यह वर्ण पृथ्वी तत्व सम्बन्धित कहे गए हैं।

22. ऋ, ॠ, औ, घ, झ, ढ, ध, भ वर्णों का जानु से लेकर कटि पर्यन्त शरीर में जल तत्वों का स्मरण करे।

23. इ, ई, ए, ख, छ, ठ, थ, फ, र, क्ष यह वह्नि रूपी हैं। कटि से लेकर कण्ठ पर्यन्त तैजस तत्वों में इनका स्मरण करे।

24. अ, ऐ, क, च, ट, त, प, स, ष, यह वायु वर्ण हैं। कण्ठ से भ्रू प्रदेश तक वायु तत्वमय तत्वों का स्मरण करे।

25. ऌ, ॡ, अं, ङ, ञ, ण, न, म, श, ब, ह यह आकाश तत्व के वर्ण हैं। भ्रू मध्य से ब्रह्म रंध्र तक इनका स्मरण करे।

26. उन उन वर्णों का विलयन अक्षर के कारण में करे। स्थूल भूतमय, सूक्ष्म शब्दमय को छोड़कर

Nijanand App

अकारं केवलं ध्यायेदुदरे निष्कलं प्रिये।
अकारं चोदराकाशे दहरास्ते महेश्वरि॥२८॥
पूर्वानुभूता रासलीला व्रजलीलाश्च संस्मरेत्।
अहं प्रिया भगवतः कामस्य कामरूपिणी॥२९॥
कृष्णास्येति दृढाभ्यासवशगेनैव चेतसा।
संस्मरेत्परमेशानि नान्यत् किञ्चन चिन्तयेत्॥३०॥
अथ तेनैव मार्गेण शाब्दं चापि वपुस्त्यजेत्।
शब्दातीतं परं धाम रसानन्दमहार्णवम्॥३१॥
नानाकेलिकलापूर्णं नानापक्षिनिनादितम्।
भ्रमद्भ्रमरझङ्कारमुखरीकृतदिङ्मुखम्॥३२॥
स्वप्रकाशं समभ्येत्य स्वरूपं चिन्तयेत्तदा।
नवयौवनसम्पन्नमनोहररतिप्रियम्॥३३॥
क्वणन्नूपुरसंशोभिपादाम्भोजविराजितम्।
लाक्षारसाक्तचरणं क्वणत्किङ्किणिमेखलम्॥३४॥
नवीनयौवनोत्तुङ्गकुचभारमहालसम्।
कराङ्गुलीयनिवहोल्लसदङ्गुलिपल्लवम्॥३५॥
नानालङ्कारशुभगं कौसम्भाम्बरशोभितम्।
मुक्ताहारोल्लसद्वक्षः स्फुरमाणमणिप्रभम्॥३६॥
कामकोदण्डकुटिलभृकुटीविशिखेक्षणं।
मुक्तादामलसद्भालं काश्मीरतिलकोज्ज्वलम्॥३७॥
दिव्यचन्दनलिप्ताङ्गं दिव्यपुष्पस्त्रगाकुलम्।
भालप्रदेशविलसत्सुरत्नतिलकोज्ज्वलम्॥३८॥
ध्यात्वैवं स्ववपुर्दिव्यं सखीयूथगतं स्मरेत्।
यूथमध्यगतं कृष्णं ध्यात्वानन्येन चेतसा॥३९॥
प्रार्थयेत्तं पतिं तत्र सस्मिताननसुन्दरम्।
प्राणनाथ त्वदीयाहं त्राहि दुःखेष्वनेकधा॥४०॥
त्वामहं विस्मृता नाथ परमानन्दपेशल।
अनुभूता स्वप्नलीला नानादुःखौघसङ्कुला॥४१॥
कालो महान् व्यतीतोयं त्वां विना पुरुषोत्तम।
स्वप्ने मया बहुभ्रान्तं देहगेहातिसक्तया॥४२॥
क्वचिन्मनुष्यरूपेण देवरूपेण वा क्वचित्।
गन्धर्वोरगरूपेण पशुरूपेण वा क्वचित्॥४३॥

Nijanand App

27. इसके पश्चात् शब्द ब्रह्म शरीर होकर सभी कारणों के कारण कमल की कर्णिकाओं में स्थित होकर

28. केवल निष्कल आकार का ध्यान करे। हे महेश्वरि! उदर में निष्कल और आकार को उदराकाश में ध्यान करे। हे महेश्वरि! उन्हें दहर भी कहते हैं।

29. पूर्व में अनुभव की हुई रास लीलाओं एवं ब्रज लीला का स्मरण करे। मैं भगवान की प्रिया हूं, काम की काम रूपिणी

30. कृष्ण प्रिया हूं, ऐसा दृढ़ अभ्यास से परमात्मा का मन में स्मरण करे और कुछ चिन्तन न करे।

31. इसके पश्चात् उसी मार्ग से शाब्द शरीर का त्याग करे। शब्दातीत, परमधाम, रसानन्द का महासमुद्र,

32. नाना केलि कलाओं से पूर्ण, नाना पक्षियों से शब्दायमान, भंवरों के झंकार से सभी झंकृत दिशाओं,

33. स्वप्रकाश को पहुंचकर स्वरूप का ध्यान करे। नवीन युवावस्था से युक्त मनोहर रतिप्रिय

34. बजते नूपुरों से शोभित चरण कमल वाले, लाक्षा रस से गीले चरण, करधनी के घुंघरू बज रहे हैं।

35. युवावस्था के कारण उत्तुंग कुच के भार से शोभित हाथ की उंगलियों के समूह रूपी पल्लव से शोभायमान,

36. नाना अलंकार से युक्त, कुसुम्भ रंग के वस्त्र धारण किए, मोती का हार वक्ष पर शोभित है। मणियों की कान्ति से चमकते हुए मोतियों के हार वाले वक्ष स्थल,

37. कामदेव के धनुष के समान टेढ़े भृकुटि से युक्त नेत्र, मोती की माला से सुशोभित मस्तक, केशर का तिलक धारण किए,

38. दिव्य चन्दन लेप किए, दिव्य पुष्प की माला धारण किए, मस्तक में सुशोभित रत्नों का तिलक लगाए,

39. इस प्रकार सखियों के समूह में स्थित अपने शरीर का ध्यान करे। सखियों के समूह में कृष्ण का अनन्य चित्त से ध्यान करे।

40. मुस्कराते हुए मुख से सुन्दर उन पति से प्रार्थना करे कि हे प्राणनाथ! मैं आपकी हूं। अनेक प्रकार के दु:खों से मेरी रक्षा कीजिए।

41. हे परमानन्दपूर्ण स्वामी! मैं आपको भूल गई थी। नाना दु:खों से परिपूर्ण स्वप्न लीला का मैंने इसीलिए अनुभव किया।

42. हे पुरुषोत्तम! आपके बिना पर्याप्त समय बीत गया। शरीर और घर के बन्धन में पड़कर मैं स्वप्न में बहुत भटकती रही।

Nijanand App

चेष्टापितो मया ह्यात्मा स्वप्ने मायाविनिर्मिते।
इदानीं कृतकृत्यास्मि नष्टस्वप्नमयाकृतिः॥४४॥
विलोकय कृपादृष्ट्या दृष्टं देव विना त्वया।
इति सम्प्रार्थ्य भर्त्तारं प्रणमेत्पादपङ्कजम्॥४५॥
प्रोत्थापिता पुनस्तेनालिङ्गिता च मुहुर्मुहुः।
दत्ताधरसुधाचापि सखीयूथस्य पश्यतः॥४६॥
परस्परं वीक्ष्यमाणा सखिभिः कृतकौतुकम्।
नित्यानन्दविहारेषु भूमिकासु दशस्वपि॥४७॥
पुष्परागमयभ्राजत्पर्वतापत्यकासु च।
नीलमाणिक्यशैलोरुशिखरेषु विशेषतः॥४८॥
यमुनासप्तसतीर्थेषु नानावृक्षोदयेषु च।
मणिमण्डपविभ्राजत्कुट्टिमैर्मण्डितेषु च॥४९॥
नानाविहारसङ्केते नीयमाना प्रियेण हि।
तत्र तत्र महालीलारसानन्दपरिप्लुता॥५०॥
षोडशस्थंभविभ्राजन्मणिकुट्टिममागता।
सखीसमाजमध्यस्थं कृष्णं दृष्ट्वा पुरः स्थिताः॥५१॥
लालिता प्राणनाथेन वचनामृतवर्षिणा।
एवं धारणया देवि मनो यावत्स्थिरं भवेत्॥५२॥
तावदेवाभ्यसेल्लीलामेवमात्मा विशुध्यति।
एतत्ते कथितं देवि मन्त्रध्यानादिकं मया॥५३॥
समासेन महेशानि किं भूयः श्रोतुमिच्छसि।
तदहं ते प्रवक्ष्यामि शपथस्तव सुव्रते॥५४॥
इति श्रीमाहेश्वरतन्त्रे उत्तरखण्डे शिवपार्वतीसंवादे त्रिंशं पटलम्॥३०॥

एकत्रिंशं पटलम्

पार्वत्युवाच

ब्रूहि सेवाप्रकारं मे येन तुष्येत्स्वयं प्रभुः।
कथं पूजा प्रकर्त्तव्या व्यवहारश्च कीदृशः॥१॥

शिव उवाच

शृणु देवि प्रवक्ष्यामि व्यवहारार्चनादिकम्।
तुर्ये यामे समुत्थाय शय्यायामेव सुव्रते॥२॥

Nijanand App

43. कहीं मनुष्य रूप में, कहीं देव रूप में, कहीं गन्धर्व अथवा सर्प रूप में या कहीं पशु रूप में

44. मैंने आत्मा को माया निर्मित स्वप्न में घुमाया। अब स्वप्नमय आकृति नष्ट हो जाने पर मैं कृतकृत्य हो गई हूं।

45. अब आप कृपादृष्टि से देखें। ऐसी प्रार्थना करके स्वामी के चरण कमलों में प्रणाम करे।

46. उनके द्वारा उठाए और बार-बार आलिंगन कर चुकने पर अधर सुधा को सखियों के सामने प्रदान करके

47. सखियों द्वारा किए जा रहे खेल को देखती हुई दसों भूमिकाओं वाले नित्य आनन्द बिहारों में,

48. पुष्पराग मणि के पर्वतों की तलहटी में, नील माणिक्य पर्वतों के शिखरों पर, विशेष रूप से

49. यमुना आदि सप्त तीर्थों में, नाना वृक्षों के उदय में, नाना मण्डपों से शोभित कुट्टियों से अलंकृत,

50. प्रिय के द्वारा नाना विहार संकेत गृहों में ले जाई जाती हुई, वहां-वहां महालीला रस के आनन्द से सराबोर,

51. सोलह खम्भों से शोभित मणि वाले घरों में आकर सखी समाज के मध्य में स्थित कृष्ण को दखेकर

52. प्राणनाथ द्वारा वचनामृत बरसाकर लालन-पालन की गई हूं। इस प्रकार धारण करने से जब तक मन स्थिर हो जाय,

53. तब तक लीला अभ्यास करता रहे। ऐसा करने से आत्मा शुद्ध होती है।

54. हे देवि! यह मन्त्र, ध्यान, आदि मैंने कहा। आगे क्या सुनना चाहती हो, तुम मुझसे बताओ मैं कहूंगा।

शिव-पार्वती के संवाद का माहेश्वरतन्त्र के उत्तर खण्ड का तीसवां अध्याय समाप्त हुआ।

इकतीसवां अध्याय

पार्वती ने कहा—

1. मुझे सेवा प्रकार बताइए जिससे प्रभु सन्तुष्ट हों। पूजा कैसे करनी चाहिए और कैसा व्यवहार करना चाहिए।

शिव ने कहा—

2. देवि! सुनो व्यवहार पूजा, आदि मैं कहूंगा। चौथे पहर में उठकर शय्या पर ही

Nijanand App

ब्रह्मरन्ध्रे गुरुं ध्यायेत्कर्पूरधवलप्रभम्।
द्विनेत्रं द्विभुजं चैव श्वेतवस्त्रानुलेपनम्॥३॥
पञ्चभूतात्मकैरेव पञ्चभिरुपचारकैः।
पूजयेद्देवदेवेशि आत्मानं तद्गतं स्मरेत्॥४॥
तच्चरणोदकधारानिपतितं स्वमूर्द्धनि।
क्षालितं निर्मलं शुद्धमात्मानं परिचिन्तयेत्॥५॥
नमोऽस्तु गुरवे तस्मै इष्टदेवस्वरूपिणे।
यस्य वागमृतं हन्ति विषं संसारसञ्ज्ञकम्॥६॥
गुरुर्ब्रह्मा गुरुर्विष्णुर्गुरुर्देवः सदाशिवः।
गुरुरेव परं तत्त्वं तस्मै श्रीगुरवेनमः॥७॥
प्रणम्य मन्त्रयुग्मेन हृदि लीनं विभावयेत्।
ततो लीलाविहारस्थं ध्यायेत्कृष्णं हृदाम्बुजे॥८॥
पूजयेत्पूर्ववद्देवि ह्युपचारैश्च पञ्चभिः।
ततस्तं प्रार्थयेदीशं बद्धहस्ता प्रियंवदे॥९॥
अहं नाथ त्वदीयास्मि पतिस्त्वं मेऽसि भो प्रभो।
भ्रामितास्मि त्वया नाथ मायागहनवर्त्मनि॥१०॥
त्वत्पार्श्वं नय मां नाथ विरहो मां प्रबाधते।
अनन्यगतिका चाहं तस्मात्कुरु यथोचितं॥११॥
एवं सम्प्रार्थ्य भर्त्तारं तत्प्रभापटलारुणम्।
स्वदेहं भावयेद्देवि नमस्कुर्यात्ततः प्रिये॥१२॥
ततो भूमिं च सम्प्रार्थ्य दक्षपादं निधापयेत्।
समुद्रमेखले देवि पर्वतस्तनमण्डले॥१३॥
विष्णुपत्नि नमस्तुभ्यं पादस्पर्शं क्षमस्व मे।
ततो ग्रामोद्बहिर्गच्छेन्मलोत्सर्गाय सुन्दरि॥१४॥
अतिक्रम्य शरक्षेपमात्रां भुवमतन्द्रितः।
आच्छाद्य च तृणैर्भूमिं शिरः प्रावृत्य वाससा॥१५॥
मृत्तिकां जलपात्रं च हस्तमात्रे नियोजयेत्।
सूर्यं चैव दिशः प्रान्तान् गावं नैवावलोकयेत्॥१६॥
लिङ्गशौचं च तिसृभिः मृत्तिकाभिः समाचरेत्।
पञ्चापाने प्रदेयाश्च मृत्तिकाः सुरसुन्दरि॥१७॥
गन्धलेपक्षयकरमेवं शौचं समाचरेत्।
तत्रैव वामहस्ते तु प्रदेया सप्त मृत्तिका॥१८॥

Nijanand App

3. ब्रह्म रंध्र में कपूर के समान श्वेत प्रभा वाले दो नेत्र, दो भुजा वाले, श्वेत वस्त्र धारण किए गुरु का ध्यान करना चाहिए।

4. पंच भूतात्मक पंच उपचारों से मानसिक पूजा करे और अपने को उन्हीं में गया हुआ अनुभव करे।

5. ऐसा सोचे कि गुरु के चरणोदक की छाया मेरे मस्तक पर पड़ रही है। मैं निर्मल शुद्ध हो गया हूं।

6. इष्ट देव स्वरूपी गुरु को नमस्कार है जिनकी वाणी का अमृत संसार के विष का नाश करता है।

7. गुरु ही ब्रह्मा है, गुरु विष्णु है, गुरु शिव है, गुरु ही परम तत्व है। उन श्रीगुरु को नमस्कार है।

8. दो मन्त्रों से प्रणाम करके हृदय में लीन हुए उनका ध्यान करे। फिर लीला बिहारी कृष्ण को हृदय कमल में ध्यान करे।

9. पहले की तरह पांचों उपचारों से पूजन करे तथा हाथ जोड़कर प्रार्थना करे।

10. हे नाथ! मैं तुम्हारी हूं, तुम मेरे पति हो। हे नाथ! माया के घने रास्ते में मैं आपके द्वारा घुमाई गई हूं।

11. आपका विरह मुझे बहुत कष्ट दे रहा है। अपने पास मुझे बुलाओ। मैं अन्यन्यगति हूं, अतः जैसा उचित है, वैसा कीजिए।

12. इस प्रकार भर्तार से प्रार्थना करके उनके शरीर की प्रभा से मिलते हुए वर्ण वाले अपने शरीर में भावना करे, उसके पश्चात् नमस्कार करे।

13. भूमि की प्रार्थना करे दक्षिण पाद भूमि पर रखे। समुद्र की मेखला और पर्वत स्तन मण्डल वाली, हे देवि!

14. विष्णु पत्नी तुम्हें नमस्कार है। हमें अपने चरण से स्पर्श करने की क्षमा करें। मल त्याग हेतु गांव से बाहर जायं।

15. जितनी दूर वाण जा सकता है उतनी भूमि लांघ कर भूमि पर तिनके बिछाकर और सिर को कपड़े से ढककर

16. मिट्टी और जल पात्र को एक हाथ दूरी पर रखकर सूर्य और गौ की तरफ न देखना चाहिए।

17. तीन मिट्टियों से लिंग शौच, अपान् प्रदेश में पांच मृत्तिकाएं लगाकर सफाई करे।

18. इस प्रकार जितने में गन्ध दूर हो जाए उतना शौच करे। वामहस्त में सात बार मिट्टी लगानी चाहिए।

Nijanand App

मौनी स्वगृहमागत्य हस्तपादादि शोधयेत्।
वामहस्ते मृदः सप्त प्रदेयाः सुरवन्दिते॥१९॥
उभयोश्च तथा सप्त हस्तशौचमिदं स्मृतम्।
पञ्च पञ्च तथा पादे प्रदेया मृत्तिकाः शुभाः॥२०॥
ततो द्वादशगण्डूषैर्मुखं प्रक्षालयेत्प्रिये।
तत आचमनं कृत्वा दन्तकाष्ठं समाचरेत्॥२१॥
जम्बूदुम्बरजं काष्ठं तथा च बदरीभवं।
अपामार्गोद्भवं वापि दन्तांस्तेन विशोधयेत्॥२२॥
अज्ञातैः कीटविद्धैश्च वनेषु दाहितैरपि।
निषिद्धैश्च तथा काष्ठैर्दन्तान्नैव स्पृशेत्प्रिये॥२३॥
आयुर्देहि प्रजां देहि धनं विद्यां सुखानि च।
वाक्सिद्धिं देहि मे नित्यं प्रार्थितोऽसि वनस्पते॥२४॥
द्वादशावृत्तिसञ्जप्तं मूलमन्त्रेण मन्त्रवित्।
प्रक्षाल्य भक्षयेत्काष्ठं यावन्नो सूर्यदर्शनम्॥२५॥
दन्तानां शोधनं कुर्यादुदीची दिशमाश्रितः।
न सूर्याभिमुखीभूय निष्ठीवादि क्षिपेत्प्रिये॥२६॥
जिह्वामलमपाकृत्य काष्ठं प्रक्षाल्य मन्त्रवित्।
एकान्ते शुचिदेशे तु क्षिपेत्काष्ठं ततः प्रिये॥२७॥
मन्त्रजन्यजलैर्देवि मुखं प्रक्षालयेत्ततः।
त्यजेद्द्वादश गण्डूषान्मूलमन्त्रमविस्मरन्॥२८॥
तत आचमनं कृत्वा नमस्कृत्य रविं प्रिये।
ध्यायन्गच्छेत्ततस्तीर्थमसक्तस्तु गृहे चरेत्॥२९॥
गालितं शोधितं तोयं शुचिपात्रगतं च यत्।
सूर्यमण्डलतस्तस्मिन् तीर्थान्यावाह्य भक्तितः॥३०॥
तस्मिन्नष्टदले ध्यात्वा कर्णिकायां सुरेश्वरि।
प्रियायूथगतं कृष्णमावाह्य दृढमानसः॥३१॥
उपचारैर्जलमयैर्मानसैर्वापि पूजयेत्।
तदीयचरणद्वन्द्वगलत्पीयूषमिश्रितम्॥३२॥
ज्ञात्वा तत्तु जलं देवि साक्षाच्चैतन्यरूपकं।
ज्ञानानन्दस्वरूपं तत् त्रिधा मूर्ध्नि क्षिपेत्ततः॥३३॥
अन्येनैवांभसा कुर्यान्मौशलं स्नानमूर्द्धनि।
ततः स्नायाद्वरारोहे पूर्वसंस्कृतचारिणा॥३४॥

Nijanand App

19. मौन होकर अपने घर आकर हाथ पैर का शोधन करे। हे सुरवन्दिते! बायां हाथ सात-सात बार मिट्टी से शुद्ध करे।

20. फिर दोनों में सात मृत्तिका का हस्त शौच कहा गया है। पांच-पांच मृत्तिका दोनों पैरों में लगानी चाहिए।

21. बारह कुल्लाओं से मुख साफ करना चाहिए। आचमन कर दातौन करे।

22. जामुन, गूलर, बेर, अपामार्ग की दातौन से दन्त शोधन करे।

23. अज्ञात, कीड़ा लगे, जंगल में जले हुए तथा निषिद्ध लकड़ी से दातौन न करे।

24. दातौन से प्रार्थना करे कि आप मुझे आयु, प्रजा, धन, विद्या, सुख एवं वाणी की सिद्धि प्रदान कीजिए। ऐसी नित्य प्रार्थना करे।

25. बारह बार मूल मन्त्र जप करके दातौन धोकर जब तक सूर्य दर्शन न हो तब तक दातौन करे।

26. उत्तर मुख बैठकर दांत साफ करे। सूर्य के सामने थूके नहीं।

27. जिह्वा मल साफ करके और लकड़ी को मन्त्र पढ़कर धोकर एकान्त में पवित्र स्थान पर डाल दें।

28. मन्त्र से युक्त जल से मुख प्रक्षालन करे तथा मन्त्र पढ़ते हुए बारह कुल्ला करे।

29. आचमन करके सूर्य नमस्कार करके ध्यान करता हुआ तीर्थ को जाए और असमर्थ होने पर घर में ही आचरण करे।

30. शुद्ध पात्र में शुद्ध जल लेकर सूर्य मण्डल से तीर्थों का आह्वान करे।

31. हे सुरेश्वरि! उसी में अष्ट दल कमल में कर्णिका का ध्यान करके प्रियाओं के झुण्ड में स्थित कृष्ण का दृढ़ मन से आह्वान करे।

32. जलमय या मानसिक उपचार से पूजन करे। उनके चरणों से निकलते हुए अमृत तुल्य

33. जल को साक्षात् चैतन्य ज्ञानानन्द स्वरूप समझकर तीन बार मस्तक पर डाले।

34. दूसरे जल से मस्तक पर मूसल स्नान करे। इसके बाद पहले से शुद्ध किये जल से स्नान करे।

Nijanand App

श्रीकृष्णं हृदये लीनमिति ध्यात्वाचमेत्ततः।
गात्रं सम्मार्ज्य देवेशि मन्त्रवारिविशोधिते॥३५॥
वासांसि परिधायैव ततो मन्दिरमाविशेत्।
पूजागृहेबहिः स्थित्वा तिलकं गोपिकामृदा॥३६॥
चक्रादिधारणं कुर्यात् बिभृयात्तुलसीसृजम्।
विना च तुलसीमालां बिना चक्रादिधारणं॥३७॥
न जपध्यानपूजासु योग्यो भवति कर्हिचित्।
देवान् पितृंश्च सन्तर्प्य दिक्पालान् प्रणमेत्ततः॥३८॥
सर्वं कृष्णमयं ध्यायेद्भेदभावं विवर्जयेत्।
भेदभावात्मको देवि संसारः कथितो यतः॥३९॥
देहलीं च नमस्कृत्य दक्षपादपुरःसरम्।
प्रविशेत्पूजनागारं निर्माल्याद्यपसारयेत्॥४०॥
प्रोत्थापयेत्प्रभुं सुप्तं सुगीतैर्मङ्गलस्वनैः।
श्रेष्ठा मनोमयीमूर्तिरथाश्मा गल्लकीभवः॥४१॥
सौवर्णीं राजतीं शैलीं काष्ठीं वा मृण्मयीमपि।
चैत्रीं वा पूजयेन्मूर्त्तिमुपचारैः शुभैः प्रिये॥४२॥
अर्घं च पाद्याचमने मधुपर्कमपःस्पृशः।
स्नानं वस्त्रमथाप्रोह्य वासांस्याभरणानि च॥४३॥
दर्पणालोकनं चैव गन्धपुष्पे ततः परम्।
धूपोगरुसमुद्भूतो दीपो नैवेद्यमेव च॥४४॥
पानीयं तोयमाचामं हस्तवासस्ततः परम्।
ताम्बूलमनुलेपं च ततो नीराजनादिकं॥४५॥
गीतं वाद्यं तथा नृत्यं स्तुतिः चैव प्रदक्षिणं।
पुष्पांजलिर्नमस्कारः साष्टाङ्गप्रणतिस्तथा॥४६॥
इत्येतैरुपचारैश्च पूजयेत्प्राणवल्लभम्।
अनिर्माल्यं सनिर्माल्यं पूजनं द्विविधं मतम्॥४७॥
दिव्यैर्मनोभवैः पुष्पैर्गन्धद्रव्यैर्मनोहरैः।
भक्तैर्यत्क्रियते सम्यगनिर्माल्यं तदर्चनम्॥४८॥
जातमात्राणि पुष्पाणि घ्रातान्येव निसर्गतः।
पञ्चभिश्च महाभूतैर्भानुना शशिनापि च॥४९॥
प्राणिभिश्च द्विरेफाद्यैः पौष्पैरेव न संशयः।
यदर्चनं सनिर्माल्यं दिव्यभोगापवर्गदम्॥५०॥

Nijanand App

35. श्रीकृष्ण को हृदय में लीन हूं ऐसा ध्यान कर शरीर को मल कर मन्त्र से युक्त जल से स्नान करे।

36. शुद्ध वस्त्र पहनकर मन्दिर में प्रवेश करे। पूजा घर के बाहर खड़े होकर गोपी चन्दन का तिलक करे।

37. गोल तुलसी की माला धारण करे। चक्र तुलसी की माला आदि धारण किए बिना

38. जप, ध्यान, पूजा आदि के योग्य नहीं होता। देवता, पितरों को तर्पण कर दिग्पालों को प्रणाम करे।

39. सभी को कृष्णमय समझकर भेदभाव न करे क्योंकि संसार को भेदभावपूर्ण बतलाया गया है।

40. देहली का प्रणाम करके दाहिने पैर को आगे करके पूजागृह में प्रवेश कर मुरझाए फूल आदि को हटाए।

41. सोए हुए प्रभु को मंगल गीतों से जगाए। मनोमयी मूर्ति श्रेष्ठ है। पत्थर, पुखराज,

42. सोना, चांदी, स्फटिक, लकड़ी या मिट्टी की मूर्ति का उपचारों द्वारा पूजन करे।

43. अर्घ्य, पाद्य, आचमन, मधुपर्क, जल स्पर्श, स्नान, वस्त्र-आभूषण पहनाना,

44. दर्पण दिखलाना, गन्ध, पुष्प, धूप, दीप, नैवेद्य,

45. जल से आचमन, हस्त प्रक्षालन, ताम्बूल, अनुलेप, आरती आदि करे।

46. गीत, वाद्य, नृत्य, स्तुति, प्रदक्षिणा, पुष्पांजलि, नमस्कार, साष्टांग प्रणाम, आदि

47. उपचारों से प्राण बल्लभ की पूजा करे। अनिर्माल्य और सनिर्माल्य पूजन दो प्रकार का माना गया है।

48. सुन्दर मानसिक पुष्प, मनोहर सुगन्धित द्रव्य द्वारा भक्त लोग जो पूजन करते हैं, उसे अनिर्माल्य पूजन कहते हैं।

49. प्रकृति से पैदा हुए पुष्प, पांच महाभूतों, सूर्य, चन्द्रमा, भ्रमर आदि प्राणियों द्वारा निःसन्देह सूंघा जाता है।

50. अतः पुष्पों से किया गया अर्चन सनिर्माल्य कहा जाता है। यह दिव्य भोग और मोक्ष को देने वाला होता है।

51. ग्राम, अरणी आदि से उत्पन्न पूजा द्रव्यों से सूंघे हुए फूल से पूजा सिद्ध नहीं होती।

Nijanand App

ग्रामारण्यादिसंभूतैः पूजाद्रव्यैर्मनोहरैः।
घ्रातपुष्पात्फलं सिध्येदल्पं नो मानसात्तथा।।५१।।
तस्मादपरिहार्यत्वादन्यथा चाप्युपायतः।
बुद्धिशुध्यै ततो देवि बाह्यद्रव्यैः प्रपूजयेत्।।५२।।
पुनस्त्रैधा कृष्णापूजा चोत्तमाधममध्यमा।
यथोपकरणैः कृत्स्नैः क्रियमाणोत्तमोत्तमा।।५३।।
यथालब्धैर्विनिष्पाद्या द्रव्यैः पूजा तु मध्यमा।
पत्रपुष्पाम्बुनिष्पाद्या पूजा चाधमसंज्ञिका।।५४।।
आदौ तु मानसीं कृत्वा ततो बाह्यां प्रवर्तयेत्।
नीराजनान्तमासाद्य जपं कुर्याज्जितेन्द्रियः।।५५।।
तुलसीकाष्ठसम्भूतैर्मणिभिः कृतमालया।
जपेच्छतं सहस्त्रं वा त्रिसन्ध्यास्वपि तं जपेत्।।५६।।
जपपूजासनं कुर्याच्चित्रकम्बलनिर्मितम्।
कौशेयं वाथ चैलं वा चर्म तूलमथापि वा।।५७।।
वेत्रजं तालपत्रं वा दार्भमासनमेव च।
वंशाश्मदारुधरणीतृणपल्लवनिर्मितम्।।५८।।
वर्जयेदासनं मन्त्री दारिद्र्यव्याधिदुःखदम्।
एवं सम्पूजयेत्कृष्णं प्रत्यहं परमेश्वरि।।५९।।
न गृही ज्ञानमात्रेण परत्रेह च मङ्गलं।
प्राप्नोति चन्द्रवदने जपपूजादिभिर्विना।।६०।।
अहिंसा सत्यमस्त्येयं ब्रह्मचर्यजपार्जवम्।
क्षमा धैर्यं मिताहारं आस्तिक्यं दानमेव च।।६१।।
वैराग्यं च विवेकश्च शमःश्रद्धा दमस्तथा।
मुमुक्षुता विवेकश्च समाधानं तथात्मनः।।६२।।
एतत्साधनसम्पत्तिं कुर्वतां परमेश्वरि।
ज्ञानं दारिद्र्यशमनं भविष्यति न संशयः।।६३।।
सर्वेषामेव जन्तूनामक्लेशजननं प्रिये।
वाङ्मनःकर्मभिर्नूनमहिंसेत्यभिधीयते।।६४।।
यथादृष्टश्रुतार्थानां स्वरूपकथनं पुनः।
सत्यमित्युच्यते सद्भिस्तद्ब्रह्मप्राप्तिसाधनं।।६५।।
तृणादेरप्यनादानं परस्य च प्रियंवदे।
अस्तेयमेतदप्यङ्गं ब्रह्माप्तेः सनातनम्।।६६।।

Nijanand App

52. इसलिए अपरिहार्य होने से अथवा उपाय से बुद्धि शुद्धि के लिए बाह्य द्रव्यों से पूजन करे।

53. पुनः कृष्ण पूजा उत्तम, मध्यम, अधम भेद से तीन प्रकार की होती है। सम्पूर्ण साधनों से की गई पूजा उत्तमोत्तम होती है।

54. यथालब्ध द्रव्यों से की गई पूजा मध्यम होती है और पत्ते, फूल और जल से होने वाली पूजा अधम है।

55. पहले मानसिक पूजा करके तब बाह्य पूजा करनी चाहिए। अन्त में मुरझाए पुष्पों आदि को हटाकर जितेन्द्रिय होकर जप करना चाहिए।

56. तुलसी की माला या मणियों की माला से तीनों सन्ध्याओं में भी सौ या हजार मन्त्र जप करे।

57. जप और पूजा करने के लिए कम्बल का, रेशम का, कपड़े का, चमड़े का, रुई का,

58. बेंत, ताड़पत्र अथवा कुश का आसन बनाना चाहिए। बांस, पत्थर, लकड़ी, जमीन और तृण पत्तों से बने

59. आसन पर पूजन नहीं करना चाहिए। यह दु:ख दारिद्र्य और व्याधि उत्पन्न करता है। हे परमेश्वरि! इस प्रकार प्रतिदिन कृष्ण का पूजन करना चाहिए।

60. गृहस्थ केवल ज्ञान से जप, पूजन आदि के बिना इस लोक तथा परलोक में मंगल नहीं प्राप्त करता है।

61. अहिंसा, सत्य, चोरी न करना, ब्रह्मचर्य, दया, आर्जव (सरलता), क्षमा, धैर्य, मिताहार, आस्तिकता, दान,

62. वैराग्य, विवेक, शम, श्रद्धा तथा दम, मुमुक्षता, विवेक, आत्म समाधान आदि

63. साधन सम्पत्तियों को करने वाले पुरुषों को ज्ञान होता है तथा दरिद्रता दूर होती है, इसमें सन्देह नहीं।

64. हे प्रिये! सभी प्राणियों को वाणी, मन एवं कर्म से कष्ट न देना ही अहिंसा कहा जाता है।

65. जैसा देखा है, सुना है, उसी के अनुसार स्वरूप कहना सत्य कहा जाता है। वह ब्रह्म प्राप्ति का साधन है।

66. हे प्रियंबदे! दूसरे के तृण, आदि का भी न लेना अस्तेय कहा गया है। यह भी सनातन ब्रह्म प्राप्ति का अंग है।

Nijanand App

अवस्थास्वपि सर्वासु कर्मणा मनसा गिरा।
स्त्रीसङ्गतिपरित्यागो ब्रह्मचर्यं प्रचक्षते॥६७॥
परेषां दुःखमालोक्य स्वस्येवालोच्य तस्य तु।
उत्सादनानुसन्धानं दयेति प्रोच्यते शिवे॥६८॥
व्यवहारेषु सर्वेषु मनोवाक्कायकर्मभिः।
सर्वेषामपि कौटिल्यराहित्यं चार्जवं स्मृतं॥६९॥
सर्वात्मना सर्वदापि सर्वेषामुपकारिता।
बन्धुष्विव समाचारः क्षमा स्यात्परमेश्वरि॥७०॥
इच्छाप्रलापराहित्यं जातेषु विषयेषु च।
दुःखेषु च धृतिर्धैर्यं प्रवदन्ति वराङ्गने॥७१॥
भोज्यस्यैव चतुर्थांशो भोजनं स्वस्थचेतसः।
अत्युग्रकटुतिक्ताम्ललवणादिविवर्जितम्॥७२॥
हितं मेध्यं सुखं चेति मिताहारः स उच्यते।
श्रुत्याद्युक्तेषु विश्वास आस्तिक्यं सम्प्रचक्षते॥७३॥
ध्यात्वान्तर्यामिणं चित्ते तदर्पणधियाऽन्वहम्।
सत्पात्रे दीयते दानं तद्दानमभिधीयते॥७४॥
ब्रह्मादिस्थावरान्तेषु विषयेषु बहुष्वपि।
वान्ताशनजुगुप्सा च वैराग्यं प्राप्तिसाधनम्॥७५॥
नित्यं वै वासनात्यागः परदारगृहादिषु।
परानन्दपरा भक्तिः शम इत्युच्यते हि सः॥७६॥
निगमागमवाक्येषु भक्तिः श्रद्धेति कीर्त्तिता।
विषयानन्दचरतामिन्द्रियाणां विनिग्रहः॥७७॥
इत्यमुच्यते देवि ब्रह्मप्राप्तेर्हि कारणम्।
संसारं भयदं मत्वा विरहः स्यादशेषकः॥७८॥
मुक्तिकामस्य देवेशि कथिता सा मुमुक्षुता।
कोऽहं कथमिदं जातं को वै कर्त्तास्य विद्यते।
उपादानं किमस्तीह विचारः सोयमीदृशः॥७९॥
उपादानं प्रपञ्चस्य ब्रह्मणोऽन्यत्र किञ्चन।
तस्मात्सर्व प्रपञ्चोऽयं ब्रह्मैवाविद्यया ततम्॥८०॥
ब्रह्मैव सर्वनामानि रूपाणि विविधानि च।
कर्माण्यपि समग्राणि बिभर्तीति श्रुतिर्जगौ॥८१॥

Nijanand App

67. सभी अवस्थाओं में मन, वाणी, कर्म से स्त्री परित्याग ही ब्रह्मचर्य है।

68. दूसरों के दु:ख को देखकर उसे अपना ही दु:ख समझकर उसको मिटाने की खोज करना दया कहा जाता है।

69. सभी व्यवहारों में मन, वाणी, शरीर और कर्म द्वारा सभी के प्रति कुटिलतारहित होना आर्जव कहा गया है।

70. सर्वदा हर प्रकार से सबका उपकार करना और बन्धु जैसा व्यवहार करना क्षमा कहा जाता है।

71. इच्छानुसार प्रलाप न करना और उत्पन्न विषयों में दु:खों में धृति रखना धैर्य कहा जाता है।

72. स्वस्थ चित्त वाले पुरुष का भोजन अत्यन्त तीखा, अति अम्ल, अति लवण आदि से वर्जित भोज्य पदार्थ का चतुर्थांश

73. जो हितकारी, बुद्धिवर्धक, सुखदायक है, मिताहार कहा जाता है। श्रुति आदि में कही गई बात पर विश्वास करना आस्तिकता कहा जाता है।

74. अपने मन में अन्तर्यामी का ध्यान करके उसको अर्पण करने की बुद्धि से प्रतिदिन सत्पात्र को जो दिया जाता है उसे दान कहते हैं।

75. ब्रह्मा से लेकर स्थावर तक बहुत विषयों में सम्बन्ध न रखकर जुगुप्सा ही वैराग्य है जो ईश्वर प्राप्ति का साधन है।

76. परदारा, परगृह आदि में नित्य वासना का त्याग और भगवत भक्ति शम कहा जाता है।

77. निगम और आगम के वाक्यों में भक्ति श्रद्धा कही जाती है। विषयानन्द में घूमने वाली इन्द्रियों का

78. रोकना दम कहा जाता है, जो ब्रह्म प्राप्ति का कारण है। संसार को भय देने वाला मानकर मुक्ति की कामना करने वाले मनुष्य का सम्पूर्ण वस्तुओं से विरह ही मुमुक्षता कहा जाता है।

79. मैं कौन हूं? यहां कैसे पैदा हुआ? इसका कर्ता कौन है? इसका कारण क्या है? इसे ही विचार कहते हैं।

80. इस संसार का उपादान कारण ब्रह्म से भिन्न कोई नहीं है इसलिए यह सब प्रपंच अविद्या द्वारा फैलाया गया ब्रह्म ही है।

81. सभी नाम, विविध रूप, समग्र कर्म, ब्रह्म ही धारण करता है, ऐसा श्रुति ने कहा है।

Nijanand App

यथैव व्योम्नि नीलं च यथा नीरं मरुस्थले।
पुरुषत्वं यथा स्थाणौ तद्वद्विश्वं चिदात्मनि॥८२॥
यथा तरङ्गकल्लोलैर्जलमेव स्फुरत्यलम्।
पात्ररूपेण वै ताम्रं ब्रह्माण्डो वै तथाक्षरः॥८३॥
तस्मात्प्रपञ्चविभ्रान्तां नियम्य मतिमात्मनि।
उक्तसाधनसम्पन्नः सखीभावं निजं गतः॥८४॥
नित्यं लीलारसानन्दं स्वपतिं पुरुषोत्तमम्।
भजत्यनन्यया बुध्या पुनः संयोगमाप्नुयात्॥८५॥
इति ते कथितं देवि तदाराधनलक्षणम्।
समासेन महेशानि किं भूयः श्रोतुमिच्छसि॥८६॥

इति श्रीमाहेश्वरतन्त्रे उत्तरखण्डे श्रीशिवपार्वतीसंवादे एकत्रिंशं पटलम्॥३१॥

द्वात्रिंशं पटलम्

पार्वत्युवाच

देवेश भगवन् शम्भो भक्तवत्सल धूर्जटे।
श्रुतोऽयं मे महामन्त्रश्चूडामणिरनुत्तमः॥१॥
यस्य विज्ञानमात्रेण स्वयं शुध्यति वासना।
अन्येऽपि शुद्धिमायान्ति स्वयं तत्सङ्गिसङ्गतः॥२॥
मन्त्रराजमिमं देव प्राप्नुयात्कः पुमान्यदि।
भिन्नभिन्नफलैः कर्मपाशजालैर्नियन्त्रितः॥३॥
न स्त्री न पुरुषः कश्चिद्विद्यते नामरूपतः।
स्त्रीप्राप्यमेव तद्ब्रह्म कृष्ण आनन्दविग्रहः॥४॥
भोक्तृभोग्यस्वरूपेण रसश्चेति श्रुतेर्मतम्।
नात्यन्तं च तयोर्भेदो भेदः स्वाभाविकः प्रभो॥५॥
आलम्बनादि विधुरो रस एव न सिद्ध्यति।
यद्विना यन्न संसिद्ध्येत्तत्तदेव न चान्यथा॥६॥
तथापि भोक्तृभोग्याभ्यां भागाभ्यां क्रीडतेऽनिशम्।
भोग्यभागस्तु तापात्मा भोक्तृभागोऽमृतात्मकः॥७॥
अविनाभावसम्बन्धस्तापस्य च सुखस्य च।
भोक्तृभोग्यांशयोर्विप्रलंभस्तापस्य सिद्धये॥८॥
कृष्णस्त्रीणां विप्रयोगे यदि तापोदयो भवेत्।
कृतार्थता तदा जाता न निषेधविधिस्थितौ॥९॥

Nijanand App

82. जैसे आकाश में नीलिमा है, मरुस्थल में जल है, स्थाणु (खम्भे) में जैसे पुरुषत्व है वैसे ही चिदात्मा में विश्व है।

83. जिस प्रकार तरंग की कल्लोलों से जल ही पात्र रूप में फैलता है इसी प्रकार अक्षर ब्रह्म का ताम्र पात्र ही ब्रह्माण्ड है।

84. इसलिए जो प्रपंचों में भटकती हुई मति को अपने में नियन्त्रित करके उक्त साधन सम्पन्न निज सखिभाव में पहुंचकर

85. नित्य लीला रसानन्द पुरुषोत्तम स्वपति को अनन्य बुद्धि से भजन करती है, उसे पुनः संयोग प्राप्त होता है।

86. हे देवि! उनकी आराधना के यह लक्षण मैंने तुमसे कह दिये। और क्या सुनना चाहती हो?

माहेश्वरतन्त्र के उत्तर खण्ड में शिव-पार्वती संवाद का इकतीसवां अध्याय समाप्त हुआ।

बत्तीसवां अध्याय

पार्वती ने कहा—

हे भक्त वत्सल भगवान शम्भु!

1. हमने चूड़ामणि महामन्त्र सुना जिससे उत्तम कोई मन्त्र नहीं है।

2. जिसके विज्ञान मात्र से वासना स्वयं शान्त हो जाती है और उसका संग करने वाले लोगों से जो संग करता है, वह भी शुद्ध हो जाता है।

3. भिन्न-भिन्न फल वाले कर्मों के पाशजाल से नियन्त्रित कोई पुरुष इस मन्त्रराज को प्राप्त कर ले।

4. कोई न स्त्री न पुरुष नाम व रूप से विद्यमान रहता है। वह आनन्द विग्रह ब्रह्म कृष्ण स्त्री प्राप्य है।

5. श्रुति का मत है कि भोक्ता और भोग्य स्वरूप में रस ही है। उन दोनों में स्वाभाविक अत्यन्त भेद नहीं है।

6. आलम्बन आदि से रहित होने पर रस ही सिद्ध नहीं होता। जिसके बिना जो सिद्ध नहीं होता वह ही है, अन्यथा नहीं।

7. यद्यपि भोक्ता और भोग्य इन दो भागों से वह रस ही निरन्तर क्रीड़ा करता है। भोग्य भाग ताप रूप है और भोक्तृ भाग अमृत रूप है।

8. ताप और सुख का अविनाभाव सम्बन्ध है। भोक्ता और भोग्यांशों का विप्रलम्भ ताप की सिद्धि के लिए होता है।

9. कृष्ण की स्त्रियों के वियोग में यदि ताप का उदय हो सके तो कृतार्थता होती है, निषेध विधि की स्थिति में नहीं।

Nijanand App

विप्रयोगे तु विज्ञाते हृदि तापोदयो न चेत्।
तदा चूडामणिजपात् शीघ्रं सिद्ध्यति नान्यथा॥१०॥
तस्माच्चूडामणेर्मन्त्रराजस्य च पुरस्क्रियाम्।
वद शम्भो विशेषेण यथायं जीवितो भवेत्॥११॥
त्वद्वागमृतपानेन न तृप्तिर्जायते मम।
धन्यं मत्कर्णयुगलं ब्रह्मलीलामृतप्लुतम्॥१२॥
अद्य मे पितरौ धन्यौ ययोरासमहं सुता।
प्रसादपात्रं भवतो वदतो ब्रह्मणो रहः॥१३॥
धिक्कुलं धिग्धनं तस्य धिग्विद्यां धिग्यशोऽमलम्।
न यस्य ब्रह्मचिन्तासु लीनवृत्ति मनो भवेत्॥१४॥
आयुर्वर्षशतं लोके तदर्द्धं निद्रया हतम्।
बाल्यवार्द्धकभावाभ्यां तथा रोगादिपीडनैः॥१५॥
व्यर्थयन्ति महामूढा विमुखा ब्रह्मकीर्त्तने।
तस्मात्कथय देवेश कथां पापप्रणाशिनीम्॥१६॥
पुरस्क्रियां विधोपेतां मन्त्रराजस्य शङ्कर।
यस्य श्रवणमात्रेण मन्त्रसिद्धिः प्रजायते॥१७॥

शिव उवाच

धन्यासि देवि गिरीन्द्रजे साधु पृष्टमिदं रहः।
यस्य कस्यापि नो वाच्यं वाच्यं सर्वस्वदायिने॥१८॥
लब्ध्वा मन्त्रं गुरोः सम्यक् सेवया च प्रसादतः।
जपतर्पणहोमाद्यैर्बोधयेन्मन्त्रमुत्तमम्॥१९॥
शून्यागारे गिरौ रम्ये तीर्थे चोपाधिवर्जिते।
उद्याने सिद्धपीठे वा प्रयागे पुष्करेऽथवा॥२०॥
नर्मदायास्तटे वापि विन्ध्याद्रौ वा शुभस्थले।
जपतो मन्त्रराजानं सिद्धिः शीघ्रं प्रजायते॥२१॥
जितेन्द्रियो जितक्रोधो जितचित्तो दृढव्रतः।
दृढवैराग्यसम्पन्नो देहाहङ्कारवर्जितः॥२२॥
दयालुः सर्वभूतेषु भूतबाधापराङ्मुखः।
शङ्कातङ्कादिरहितो रागद्वेषविवर्जितः॥२३॥
देहगेहादिकां चिन्तां परित्यज्य प्रशान्तधीः।
मन्त्रध्यानपरो नित्यं लीलाध्यानरतः सदा॥२४॥

Nijanand App

10. विप्रयोग के हृदय में जान लेने पर यदि तापोदय न हो तो मन्त्र चूडामणि के जप से शीघ्र सिद्धि होती है, अन्यथा नहीं।

11. इसलिए चूड़ामणि मन्त्र राज की पुरस्क्रिया बताइए, जिस प्रकार यह जीवित हो सके।

12. आपके वाणी रूपी अमृत के पान से मुझे तृप्ति नहीं हो रही। ब्रह्म की लीला रूपी अमृत से भरे मेरे दोनों कान धन्य हों।

13. आज मेरे माता पिता धन्य हैं, जिनकी मैं पुत्री हूं क्योंकि ब्रह्म का रहस्य बताते हुए आपकी कृपा पात्र हूं।

14. उसके कुल, धन, विद्या और निर्मल यश सभी को धिक्कार है जिसका मन ब्रह्म चिन्ताओं में लीन वृत्ति वाला नहीं होता।

15. इस संसार में आयु सौ वर्ष की होती है। उसका आधा तो निद्रा में चला जाता है। बाल्य तथा वृद्धावस्था, रोगादि पीड़ा से हर ली जाती है।

16. महामूढ़ लोग ब्रह्म कीर्तन से विमुख इसे व्यर्थ गंवा देते हैं। हे देवेश! इसलिए पापनाशिनी कथा कहिए।

17. हे शंकर! मन्त्रराज की विद्या से उक्त पुरस्क्रिया कहिए जिसके श्रवण मात्र से मन्त्र सिद्धि होती है।

शिव बोले—

18. हे देवि! तुम धन्य हो। तुमने ठीक ही पूछा है। जिस किसी को यह नहीं बताना चाहिए। सर्वस्व देने वाले को बताना चाहिए।

19. सेवा के द्वारा और प्रसन्नता से गुरु से मन्त्र प्राप्त करके जप, तर्पण, होम आदि करके मन्त्र को जगाना चाहिए।

20. शून्य गृह में, पर्वत में, सुन्दर तीर्थ में, जहां कोई उपाधि न हो, उस उद्यान में, सिद्धपीठ में, पुष्कर अथवा

21. नर्मदा तट पर विन्ध्याचल में शुभ स्थान पर मन्त्रादि का जप करने से शीघ्र सिद्धि हो जाती है।

22. इन्द्रिय, क्रोध तथा चित्त को जीतकर दृढ़वत, दृढ़ वैराग्ययुक्त, देह के अहंकार से रहित

23. सभी प्राणियों पर दयालु, भूतबाधाओं से रहित, शंका, आतंक आदि से रहित, राग-द्वेष से रहित,

24. देह गेह, आदि की चिन्ता को छोड़कर, शान्ति को धारण करने वाला, नित्य मन्त्र का ध्यान करने वाला और हमेशा लीला के ध्यान में रत रहने वाला,

Nijanand App

त्रिधास्त्रीसंङ्गतित्यागात् ध्यानमुद्राधरोऽनिशम्।
मौनी त्रिषवणास्नायी शुचिदेहः सिताम्बरः॥२५॥
वर्णाश्रमक्रियायुक्तो विश्वासी ह्यनसूयकः।
देवब्राह्मणगोनिन्दारहितो लोभवर्जितः॥२६॥
एवं विधगुणैर्युक्तः कुर्यान्मन्त्रपुरस्क्रियाम्।
मनसा कल्पयेत्क्षेत्रं गमनागमनाय च॥२७॥
विकिरेत्सर्पपान् दिक्षु शतधा मन्त्रशोधितान्।
ज्वलदग्निनिभात् दृष्ट्वा पलायन्ते विनायकाः॥२८॥
ततः खदिरकीलांश्च दशदिक्षु खनेत्प्रिये।
नायान्ति कीलिता विघ्ना दृष्ट्वा क्षेत्रं च कीलितम्॥२९॥
न बहिर्गमनं कुर्यात् क्षेत्रमुल्लंघ्य मोहतः।
तमोमात्रात्मकाः केचित् श्रेयसां परिपन्थिनः॥३०॥
औदासिन्यं भयं क्रोधं निन्द्रातन्द्राविवर्जयेत्।
दुग्धपानं फलाहारं भिक्षान्नं चापि सेवयेत्॥३१॥
कन्दमूलफलैः पत्रैस्तथैवायाचितेन च।
कल्पयेद्दैहिकीं वृत्तिं यथा नेन्द्रियविक्रिया॥३२॥
इन्द्रियाणां विकारे तु मंत्री शीघ्रं विनश्यति।
सर्वेषु धर्ममार्गेषु चरतां सिद्धिकाम्यया॥३३॥
परिपन्थी न चान्योऽस्ति यथेन्द्रियविकारिता।
तस्मादिन्द्रियरक्षार्थं सावधानतया चरेत्॥३४॥
इन्द्रियाणि मनो देवि नोपेक्षाणीति मे मतिः।
उपेक्षया हता लोका विभ्रमन्ते विचित्रधा॥३५॥
विषयेभ्यो निवृत्तोऽपि जितकाममदोऽपि सन्।
न करोमीन्द्रियोपेक्षां मायासृष्टिर्विमोहिनी॥३६॥
के के न हता देवि बलिष्ठैरिन्द्रियारिभिः।
अहल्यायां कृतो जार इन्द्रस्त्रैलोक्यरक्षकः॥३७॥
चन्द्रमा गुरुभार्यायां तारायां विनियोजितः।
बन्धुक्षेत्रे गुरुश्चापि वेदवेदान्तवित्कविः॥३८॥
सीतायां रामभार्यायां मद्भक्तोपि दशाननः।
एतेऽन्येपीन्द्रियहतास्तस्मात्तानि न विश्वसेत्॥३९॥
तस्मादाहारमाकुंच्य जेतव्यानीति मे मतिः।
धारयेन्नखकेशांश्च वासः प्रक्षालितं वसेत्॥४०॥

Nijanand App

25. तीन प्रकार की स्त्री संगति त्यागकर ध्यान मुद्रा धारण कर, मौन होकर, तीनों समय स्नान करने वाला पवित्र देह श्वेत वस्त्र धारण कर

26. वर्ण और आश्रम की क्रिया करने वाला, विश्वासी, किसी से डाह न करने वाला, देव, ब्राह्मण, गो की निन्दा न करने वाला, लोभरहित

27. इन गुणों से युक्त होकर मन्त्र पूरा किया करे। जाने-आने के लिए मन में क्षेत्र की कल्पना करे।

28. सौ बार पढ़कर मन्त्र से सिद्ध सरसों को सब दिशाओं में फेंकना चाहिए। उसको जलती हुई आग के समान देखकर विनायक आदि ग्रह भाग जाते हैं।

29. इसके बाद खैर की कीलों को दसों दिशाओं में गाड़े क्योंकि कीलित क्षेत्र को देखकर विघ्न नहीं आते हैं।

30. इस क्षेत्र को लांघकर मोह से भी बाहर नहीं जाना चाहिए क्योंकि कुछ तामस प्रकृति के ग्रहादि कल्याण में बाधक होते हैं।

31. उदासीनता, भय, क्रोध, निन्द्रा, तन्द्रा आदि छोड़ देना चाहिए। दूध, फल, भिक्षा में प्राप्त अन्न आदि का सेवन करना चाहिए।

32. कन्दमूल, फल, पत्ते तथा बिना मांगी वस्तु से भोजनादि करना चाहिए जिससे इन्द्रियों में विकार न उत्पन्न हो।

33. इन्द्रियों में विकार हो जाने से मन्त्रजापक शीघ्र नष्ट हो जाता है। सिद्धि की कामना से धर्म मार्ग में विचरण करने वालों के लिए

34. ऐसा कोई दूसरा विघ्न नहीं है जैसा इन्द्रिय विकार। इसलिए इन्द्रिय रक्षा के लिए सावधान होना चाहिए।

35. हे देवि! इन्द्रिय और मन उपेक्षा योग्य नहीं होते हैं, ऐसा मेरा मत है। उपेक्षा करने से नष्ट हुए लोग विभिन्न प्रकार से भटकते हैं।

36. विषयों से निवृत्त और काम मद को जीत लेने वाले को भी इन्द्रियों की उपेक्षा नहीं करनी चाहिए क्योंकि माया सृष्टि मोह पैदा करने वाली होती है।

37. बलवान इन्द्रिय रूपी शत्रुओं द्वारा कौन लोग नहीं मारे गए? देखो, तीनों लोकों के रक्षक इन्द्र भी इन्द्रियों के कारण ही अहिल्या में जार बना दिया गया।

38. और चन्द्रमा इन्द्रियों के कारण ही गुरु बृहस्पति की भार्या तारा में आसक्त हो गया और वेद वेदान्त के ज्ञाता कवि बृहस्पति भी अपने भाई की पत्नी से मोहित हुए।

39. रावण मेरा भक्त होता हुआ भी राम की भार्या सीता पर मोहित हुआ। यह तथा अन्य भी इन्द्रियों द्वारा विनष्ट किए गए। इसलिए इन्द्रियों का विश्वास नहीं करना चाहिए।

40. इसलिए आहार को घटाकर इन्हें जीतना चाहिए। नाखून, केश धारण करना चाहिए। धोए हुए कपड़े पहनना चाहिए।

Nijanand App

शयीत भूमौ शय्यायां कुशमय्यां निशासु च।
वासः प्रक्षालयेद्देवि कटिमुक्तं यदा भवेत्॥४१॥
पतितैः कर्मचाण्डालैः जातिचाण्डालकैरपि।
म्लेच्छांत्यजसङ्करैश्च न भाषेत जपे स्थितः॥४२॥
सन्ध्याकाले व्यतिक्रान्ते देहवृत्तिं तु कल्पयेत्।
न्यूनाधिकं न कुर्वीतं जपं देवि दिने दिने॥४३॥
नीचसम्भाषणे देवि म्लेच्छसम्भाषणे तथा।
प्रायश्चित्तं प्रकुर्वीत सहस्रजपसंख्यया॥४४॥
यामार्द्धेनावशिष्टायां निशि शय्यां परित्यजेत्।
उदिते च सहस्रांशौ यः शेते निद्रितोऽलसः॥४५॥
जपः छिद्रमवाप्नोति सिद्धिर्भवति दूरगा।
सावधानतया भाव्यं तस्माद्देवि दिने दिने॥४६॥
ध्यायेल्लीलां जपश्रान्तो ध्यानश्रान्तः पुनर्जपेत्।
जपध्यानसमायुक्तः शीघ्रं सिध्यति मन्त्रवित्॥४७॥
नैकवासा जपेन्मन्त्रं बहुवस्त्राकुलोपि वा।
तैलताम्बूलपूगादिसर्वभोगान्विवर्जयेत्॥४८॥
वाङ्मनःकायकौटिल्यं सर्वथैव परित्यजेत्।
न वाचोद्वेजयेत्किञ्चिन्नाशुभं कस्य वा स्मरेत्॥४९॥
न चक्षुषा निरीक्षेत पशुक्रीडां कदाचन।
न चेक्षेत स्त्रियं नग्नां न स्पृशेद्यदमङ्गलम्॥५०॥
मध्यन्दिनावधि जपेन्मन्त्रराजमनन्यधीः।
ततः परं तु मनसा ध्यायेल्लीलां समाहितः॥५१॥
जपस्यैवं दशांशेन होमं कुर्याद्दिने दिने।
अथवा लक्षपर्यन्तं जप्त्वा होमं समाचरेत्॥५२॥
समाप्तौवापि जुहुयात् यथासम्भवमम्बिके।
प्रत्यक्षरं जपेल्लक्षं श्रद्धावान्नातिचञ्चलः॥५३॥
आरब्धे तु जपेद्देवि मन उद्विजतेतराम्।
चिन्ताशोकभयोद्वेगदुःस्वप्नादि प्रजायते॥५४॥
तदा धैर्यं समालम्ब्य स्थिरीकुर्यान्मनो धिया।
एवं लक्षत्रये जप्ते लीलाध्यानैकचेतसः॥५५॥

Nijanand App

41. जमीन में कुश की शैया पर रात्रि में सोना चाहिए। जब वस्त्र कटि से अलग हो तब धोना चाहिए।

42. जप में बैठा व्यक्ति पतित, कर्म चाण्डाल या जाति चाण्डाल, म्लेच्छ, अन्त्यज और वर्ण संकर से बात न करे।

43. सन्ध्या काल बीत जाने पर भोजन करना चाहिए। हे देवि! प्रतिदिन कम-ज्यादा जप नहीं करना चाहिए।

44. हे देवि! नीच या म्लेच्छ से भाषण करने पर एक सहस्र जप प्रायश्चित रूप में करे।

45. जब रात्रि का आधा पहर रह जाय तो शैया छोड़ दे। जो आलसी सूर्य के उदय होने पर सोता रहता है,

46. उसके जप में छिद्र हो जाता है और सिद्धि बहुत दूर चली जाती है। हे देवि! इसलिए दिन-प्रतिदिन सावधान रहना चाहिए।

47. जप करते-करते थक जाने पर लीला का ध्यान करना चाहिए। ध्यान से थक जाने पर पुनः जप करे। इस प्रकार जप और ध्यान में लगा मन्त्रवित् शीघ्र मन्त्र सिद्ध कर लेता है।

48. एक वस्त्र पहनकर या बहुत वस्त्र पहनकर तप नहीं करना चाहिए। तेल और ताम्बूल तथा सुपाड़ी आदि सर्व भोगों का त्याग करना चाहिए।

49. वाणी, मन और शरीर की कुटिलता हर प्रकार से त्याग देनी चाहिए। वाणी से किसी को भय नहीं देना चाहिए। किसी का अशुभ नहीं सोचना चाहिए।

50. पशु-क्रीड़ा को आंख से भी नहीं देखना चाहिए। नग्न स्त्री को नहीं देखना चाहिए।

51. अनन्य बुद्धि से मध्याह्न तक मन्त्र आदि का जप करना चाहिए। इसके बाद मन में लीला का ध्यान करना चाहिए।

52. प्रतिदिन जप का दशांश हवन करना चाहिए अथवा एक लाख पूरा होने पर हवन करना चाहिए।

53. हे अम्बिके! समाप्ति में भी यथा-सम्भव हवन करना चाहिए। श्रद्धा वाला, चंचलतारहित पुरुष प्रति अक्षर के अनुसार उतने लाख जप करे।

54. जब जप प्रारम्भ किया जाता है तो मन उद्विग्न हो जाता है और चिन्ता, शोक, भय, दुःस्वप्न आदि होते हैं।

55. तब धैर्य धारण कर मन को बुद्धि द्वारा स्थिर करना चाहिए। लीला ध्यान में मन लगाकर इस प्रकार तीन लाख जप करने पर,

Nijanand App

विघ्नाः सर्वे पलायन्ते पातकानि ज्वलन्ति च।
निर्विघ्नस्य विपापस्य मनः सम्यक् प्रसीदति।
मनःप्रसन्ने देवेशि स्वप्ने देवादिदर्शनं॥५६॥
वरार्थं प्रार्थ्यमानोपि नैव लुभ्यान्मनः प्रिये।
पञ्चलक्षजपेद्देवि देवदानवरक्षसां॥५७॥
अवधृष्यो भवेत्साक्षाज्ज्वलन्निव हुताशनः।
दशलक्षजपे सिध्ये प्रार्थयन्त्यमराङ्गनाः॥५८॥
त्वं स्वामी च वयं दास्योनुग्रहाण दयापरः।
यावद्यास्यसि धाम स्वं भित्वा ब्रह्माण्डमण्डलम्॥५९॥
तावत्त्वं स्वर्गमातिष्ठ ह्यस्माभिः कृतसेवनः।
तत्रास्ति नन्दनवनं सर्वर्तुगुणमण्डितम्॥६०॥
स्वर्धुनी स्वर्णसोपाना रत्नमण्डपमण्डिता।
हंसकारण्डवाकीर्णा स्वर्णपद्मालिसङ्कुला॥६१॥
आहारो यत्र पीयूषं रक्षिता यत्र देवराट्।
प्रार्थयन्ति देवलोकं क्रतुभिः कर्मकोविदाः॥६२॥
तस्मादलङ्कुरु स्वयं स्वर्गं त्रिदशमण्डितम्।
एवं विलोभ्यमानोपि मन्त्री निश्चलमानसः॥६३॥
श्रावयेदुत्तरं तासामक्षुब्धो निःकुतूहलः।
न स्वर्गो नापि नरको न मोक्षो बन्धनं नहि॥६४॥
स्वप्ने यथा तथा भाति रोचते न मनाङ्मम।
तस्माद्यूयं मया प्रोक्ताः प्रयान्तु त्रिदशालयम्॥६५॥
श्रुत्वैवं वचनं तस्य निराशाः यान्ति ताः स्त्रियः।
दशपञ्च च लक्षाणि यदा जप्तो महामनुः॥६६॥
तदा सिद्धाः समायान्ति सिद्धिभिः सह सुन्दरि।
पातालेषु प्रवेशं च दूरश्रवणदर्शनम्॥६७॥
परकायाप्रवेशं च मनःपवनवद्गतिं।
पादुकाञ्जनसिद्धिं च रसधातुक्रियां तथा।
इत्यादिविविधां सिद्धिं दर्शयन्ति न संशयः॥६८॥
पूर्वोक्तवचने चोक्ते यान्ति ते नातिपूर्वकम्।
यदा विंशति लक्षाणि जप्ते चिन्तामणिमनौ॥६९॥
स्फुरन्ति सकला विद्याः शास्त्राणि विविधानि च।
पञ्चविंशति लक्षाणि जप्ते चिन्तामणौ प्रिये॥७०॥

Nijanand App

56. सभी विघ्न भाग जाते हैं, पातक नष्ट हो जाते हैं। निर्विघ्न पापरहित का मन प्रसन्न हो जाता है। मन के प्रसन्न होने पर स्वप्न में देवता आदि के दर्शन होते हैं।

57. देवता, आदि यदि वर मांगने को कहें तो लोभित नहीं होना चाहिए। पांच लाख जप हो जाने पर देवता, दानव-राक्षस

58. के लिएं अग्राह्य हो जाता है और साक्षात् जलती अग्नि के समान तेजस्वी हो जाता है। दस लाख जप पूर्ण होने पर देवांगनाएं प्रार्थना करती हैं।

59. वह (देवांगनाएं) कहती हैं, तुम हमारे स्वामी हो, हम तुम्हारी दासियां हैं, मेरे ऊपर कृपा करो। जब तक ब्रह्माण्ड मण्डल को लांघकर स्वर्ग जाओगे,

60. तब तक हमारे द्वारा सेवा किए जाते हुए तुम स्वर्ग में रहो। स्वर्ग में सभी ऋतुओं में पुष्पित होने वाला नन्दन वन है।

61. सोने की सीढ़ियों वाली रत्नों के मण्डप से मण्डित आकाशगंगा है। उस गंगा के तट पर हंस, कारंडव आदि पक्षी तथा सुनहले कमलों पर बैठे भ्रमर शब्दायमान हैं।

62. जहां आहार अमृत है, राजा इन्द्र हैं, कर्म जानने वाले व्यक्ति यज्ञ करके उसी देवलोक जाने की प्रार्थना करते हैं।

63. देवताओं से सुशोभित स्वर्ग को आप स्वयं अलंकृत करें। इस प्रकार लोभ दिलाने पर भी जापक निश्चल मन होकर

64. क्षोभरहित, कौतुकरहित उन्हें उत्तर सुनाए, स्वर्ग, नरक, मोक्ष व बन्धन यह कुछ भी नहीं हैं।

65. यह स्वप्न की भांति हैं। मुझे बिल्कुल रुचिकर नहीं हैं। इसलिए तुम मेरा उत्तर पाकर देवलोक को चली जाओ।

66. इस प्रकार के उसके वचनों को सुनकर निराश होकर वे स्त्रियां चली जाती हैं। जब मन्त्र का पन्द्रह लाख जप हो जाता है,

67. तो, हे सुन्दरी! सिद्धियों को लेकर सिद्ध लोग आते हैं। पाताल में प्रवेश दूरश्रवण और दूरदर्शन,

68. परकाया प्रवेश, मन की वायु के समान गति पादुकांजन सिद्धि और रस धातु क्रिया इत्यादि विविध सिद्धियां सिद्ध लोग दिखलाते हैं।

69. उनको भी पहले जैसा उत्तर मिलने पर चले जाते हैं। जब चिन्तामणि मन्त्र के बीस लाख जप हो जाते हैं, तो

70. सब विद्याएं और विधि शास्त्र खुल जाते हैं। पच्चीस लाख जप होने पर

Nijanand App

साक्षात्पश्यति देवेशि ब्रह्माण्डमक्षरात्मकम्।
ब्रह्माण्डान्तः प्रविष्टं च विराजं पश्यति प्रिये।।७१।।
त्रिंशल्लक्षजपे सिद्धे नारायणसनामयं।
ध्याने पश्यति देवेशि व्यापकं सर्वतो मुखम्।।७२।।
सर्वतः पाणिपादान्तं सर्वतः श्रवणाक्षिमत्।
अनेकमूर्द्धमुकुटमनेकाभरणाकुलं।।७३।।
पञ्चत्रिंशत्तु लक्षाणि मन्त्रावर्त्तनगौरवात्।
ध्यानं विनापि चक्षुर्भ्यां पश्येन्नारायणं विभुम्।।७४।।
चत्वारिंशत्तु लक्षाणि मन्त्रमावर्त्तयेद्यदा।
पश्येन्मञ्चे ब्रह्ममये शयानं पुरुषं तदा।।७५।।
चत्त्वारिंशत्तथा चाष्टौ लक्षाणि जपगौरवात्।
मोहनिद्रावशेषोऽपि पश्येत् ब्रह्मपुरश्रियम्।।७६।।
कोटियोजनविस्तीर्णे सुधासिन्धौ सुरेश्वरि।
रत्नद्वीपे ब्रह्मपुरे नित्यवृन्दावनस्थितिम्।।७७।।
मणिमन्दिरमध्यस्थरत्नसिंहासनस्थितं।
स्वामिन्याश्लिष्टवामाङ्गं सखीमण्डलवेष्टितम्।।७८।।
उत्तमं पुरुषं पश्येत् ध्याने साक्षादिव स्वयं।
ततस्तापो भवेत्तीव्रविरहेण फलात्मकः।।७९।।
तदा च नियमाः सर्वे कृता वाप्यकृता अपि।
समाप्यन्ते महेशानि स्वास्थ्याभावस्वभावतः।।८०।।
इत्येवं कथितं देवि यथा तापोदयो भवेत्।
समासेन महेशानि किं भूयः श्रोतुमिच्छसि।।८१।।
इति श्रीमाहेश्वरतन्त्रे उत्तरखण्डे शिवोमासंवादे द्वात्रिंशत्तमं पटलम्।।३२।।

त्रयस्त्रिंशं पटलम्

देव्युवाच

साधूक्तं मन्त्रराजस्य पुरश्चरणमद्भुतम्।
अतः परं वदेशान तापावस्था सुदुर्लभा।।१।।
ययानुभूतया सम्यक् रसः पूर्णोनुभूयते।
तस्मादहं श्रोतुकामा भवामि भक्तवत्सल।।२।।

Nijanand App

71. अक्षर रूप ब्रह्माण्ड साक्षात् दिखाई पड़ने लगता है और ब्रह्माण्ड में प्रविष्ट विराट को देखता है।

72. तीस लाख जप होने पर ध्यान में व्यापक, सर्वतोमुख, अनामय नारायण को देखता है।

73. उनके सभी ओर हाथ पैर हैं और सभी ओर नेत्र और कर्ण हैं, अनेक मस्तकों पर मुकुट एवं आभूषण हैं।

74. पैंतीस लाख जप करने के गौरव रूप में बिना ध्यान के ही आंखों से नारायण को देखने लगता है।

75. चालीस लाख जप हो जाने पर मंच पर लेटे हुए ब्रह्ममय पुरुष को देखता है।

76. अड़तालिस लाख जप के फलस्वरूप मोह निद्रा शेष रहने पर भी ब्रह्मपुर की शोभा देखता है।

77. कोटि योजन विस्तीर्ण सुधा सागर में, रत्न द्वीप में, ब्रह्मपुर में नित्य वृन्दावन स्थित है।

78. मणि निर्मित मन्दिर के मध्य में स्थित रत्न के सिंहासन पर बैठे हुए स्वामिनी जिसके बामांग में आलिंगन कर रही है, सखि मण्डलों से वेष्टित

79. उत्तम पुरुष को साक्षात् की तरह ध्यान में देखता है। फिर तीव्र विरह के द्वारा फलात्मक ताप होता है।

80. उस समय किए गए या न किए गए सभी नियम समाप्त हो जाते हैं।

81. हे देवि! जिस प्रकार से तापोदय हो सकता है वह मैंने बता दिया। आगे क्या सुनना चाहती हो?

माहेश्वरतन्त्र के उत्तर खण्ड में शिव-उमा संवाद का बत्तीसवां अध्याय समाप्त हुआ।

तैंतीसवां अध्याय

देवी ने कहा—

1. आपने मन्त्रराज का अद्‌भुत पुरश्चरण बताया। अब इसके बाद दुर्लभ तापावस्था का कथन कीजिए।

2. जिसके सम्यक् अनुभव से पूर्ण रस का अनुभव होता है। हे भक्तवत्सल! इसलिए मैं उसके सुनने की इच्छा करती हूं।

Nijanand App

शिव उवाच

श्रृणु देवि परं गुह्यं त्वया पृष्टं वदामि ते।
रसात्मकं रसभोक्तृ ब्रह्मेति श्रुतयो जगुः॥३॥
रसः श्रृङ्गार एवादौ प्रोक्तस्ते गिरिनन्दिनि।
संयोगविप्रलम्भात्मा द्विविधः स च कीर्त्तितः॥४॥
अधुनाविप्रलम्भात्मा वर्त्तते केवलं रसः।
कर्तव्योनुभवस्तस्य स एव परमं फलम्॥५॥
यावत्तापोदयो न स्याद्विप्रलम्भो न सिध्यति।
अनुभूतिः कथं तस्य जायते वद सुब्रते॥६॥
संयोगरसमध्यस्था विप्रयुक्ता तु या प्रिये।
तस्या एव भवेत्तापो नान्यस्य तु कदाचन॥७॥
दशावस्था भवन्त्येताः तापे विरहसम्भवे।
तास्ते वक्ष्यामि देवेशि श्रृणुष्वैकाग्रमानसा॥८॥
अभिलाषस्तथा चिन्ता स्मरणं च ततः प्रिये।
उद्वेगाधिप्रलापश्च जडतोन्माद एव च॥९॥
गुणानां कीर्तनं चैव मरणं दशमं स्मृतम्।
अत्युग्रविरहे देवि अवस्था दशमी भवेत्॥१०॥
राजपुत्रो यथा दैवाद्वनं वनचरैर्वसन्।
आत्मानं वेत्ति विवशं परं वनचरं प्रिये॥११॥
प्रभुत्वशौर्यधैर्याद्याः धर्माः सर्वे तिरोहिताः।
दीनः कृपणधीर्मन्दः पशुमांसोपजीवनः॥१२॥
आत्मापह्नवमापन्नं दृष्ट्वा कश्चित्प्रबोधयेत्।
न वनेचरपुत्रोसि राजपुत्रोसि सर्वथा॥१३॥
किमर्थं हिंसि भो जीवान् दीनः कृपणधीः स्वयम्।
क्व गुणाः शौर्यधैर्याद्याः प्रभुता क्व गता तव॥१४॥
त्यज प्रकृतिदौर्बल्यं श्रय भावं निजं पुनः।
इत्याप्तवचनं श्रुत्वा जालपाशादिकं त्यजन्॥१५॥
राज्यप्राप्तिं च मनसा सङ्कल्प्याकुलचेतनः।
उच्छून हृदयो भूयादभिलाषाकुलान्तरः॥१६॥
तथा कृष्णप्रिया देवि प्रपञ्चे मोहकल्पिते।
वासनादेहमासाद्य तद्देहममताकुला॥१७॥

Nijanand App

शिव ने कहा—

3. देवि! तुमने बहुत ही रहस्य पूछा है, सुनो। श्रुतियों ने कहा है रसात्मक रसभोक्ता ब्रह्म है।

4. हे पार्वति! तुमसे मैंने बताया है कि रस आदि में शृंगार ही है। उसके दो भेद हैं—संयोग और वियोग।

5. इस समय केवल विप्रलम्भ में ही रस विद्यमान है। उसका अनुभव करना चाहिए, वही श्रेष्ठ फल है।

6. जब तक ताप उदय नहीं होता, तब तक वियोग सिद्ध नहीं होता। हे सुब्रते! तुम्हीं बताओ उसकी अनुभूति कैसे होती है?

7. संयोग के रस के मध्य में स्थित और उसके वियोग होने पर उसे ताप होता है, दूसरे को नहीं।

8. विरह के ताप के होने पर यह दस अवस्थाएं होती हैं। यह मैं कहूंगा, ध्यान से सुनो।

9. अभिलाषा, चिन्ता; स्मरण, उद्वेग, आधि (मानसिक वेदना), प्रलाप, जड़ता, उन्माद,

10. गुणों की कीर्तन और विरह के उग्र होने पर दसवीं दशा मरण होती है।

11. जिस प्रकार से एक राजपुत्र वनचरों के साथ दुर्दैव से वन में रहता हुआ अपने को विवश एवं वनचर जानने लगता है।

12. उसके प्रभुत्व, शौर्य, धैर्य आदि धर्म छिप जाते हैं। दीन, कृपण, मन्दबुद्धि, पशुमांस भक्षी हो जाता है।

13. अपने को छिपाए हुए उसको देखकर कोई उसका प्रबोध कर दे कि तुम वनचर पुत्र नहीं हो, राजपुत्र हो,

14. स्वयं दीन कृपण होते हुए भी जीवों को किसलिए मारते हो, तुम्हारे वीरता, धैर्य, आदि गुण कहां चले गए, प्रभुता कहाँ चली गई?

15. स्वाभाविक दुर्बलता छोड़ पुनः अपना भाव धारण करो। इस प्रकार के किसी आप्त पुरुष के वचन सुनकर जाल पाश आदि फेंककर

16. राज्य प्राप्ति का मन में संकल्प करके, व्याकुल चित्त होकर, फटे हुए हृदय सा अभिलाषाओं से उसका मन व्याकुल हो जाता है।

17. इसी प्रकार, हे देवि! मोह द्वारा रचे गए इस प्रपंच में कृष्ण प्रिया वासना देह को पाकर उस देह की ममता से व्याकुल

Nijanand App

तिरोहितानन्दधर्मा दीना कृपणमन्दधीः।
जीववत् वर्त्तमाना सा भूतद्रोहेण जीवति॥१८॥
पुरुषोत्तमानुग्रहतः सद्गुरुस्तां प्रबोधयेत्।
न त्वं स्त्री लौकिकी चासि न पुमानसि सर्वथा॥१९॥
न च विप्रादिको वर्णः स्वात्मानं चेष्टसे मुधा।
देहगेहममताहङ्कारमायां परित्यज॥२०॥
प्रपञ्चबीजभूतायाः प्रकृतेः परतः प्रभोः।
अक्षरादप्यतीतस्य पूर्णस्य परमात्मनः॥२१॥
प्रियासि त्वं परानन्दा परानन्दपदस्थिता।
देहानुसन्धानपरां मायां जहि वराङ्गने॥२२॥
सुधासिन्धौ मणिद्वीपमध्यखण्डे सुशोभने।
कोटिसूर्यप्रतीकाशं कोटिचन्द्रसुशीतलं॥२३॥
वेष्टितं मणिमुक्तादि प्राकारैः परमाद्भुतम्।
सखीमन्दिरसाहस्त्रैः परिवीतं समन्ततः॥२४॥
मणिमन्दिरमत्युच्चैः पञ्चयोजनमानतः।
आस्ते ब्रह्माण्डतोबाह्ये तत्र ते रमणं शुभम्॥२५॥
यमुनासप्ततीर्थेषु भर्त्राक्रीडां निजां स्मर।
प्रफुल्लशतपत्रालि झङ्कारमुखरान्तरे॥२६॥
मणिमुक्तान्वितानावमारुह्य सखिभिर्वृता।
महासरसि विद्योतन्मणिसोपानमण्डिते॥२७॥
यथा क्रीडन्तमात्मानं कथं विस्मरसे भ्रमात्।
सहस्त्राश्वयुजं रम्यं शतचक्रस्फुरत्प्रभम्॥२८॥
सर्वतः किंकिणीजालैर्मणिमुक्ताञ्चितान्तरैः।
कुर्वद्भिः मुखरान् सर्वदिगन्तान् कूजितैर्निजैः॥२९॥
दाडिमीपुष्पसङ्काशं वरूथोपरि कल्प्यते।
सुवर्णकलशै रम्यैर्दीप्यमानमनेकशः॥३०॥
नृत्यद्भिः स्त्रीगणैः सम्यक् गायद्भिः स्वकुतूहलैः।
हासयद्भिर्हसद्भिश्च समन्तात्परिशोभितम्॥३१॥
मुक्तावितानकौमुद्या समुद्भासितदिङ्मुखम्।
प्रियेण रथमारुह्य वनक्रीडां स्मर स्वकां॥३२॥
कदाचित्पुष्परागाद्रावुद्याने सुमनोहरे।
नानापक्षिगणाकीर्णे स्थलपङ्कजमालिनि॥३३॥

Nijanand App

18. आनन्द धर्म छिपाकर दीन, कृपण, मन्दबुद्धि जीव की तरह जीवन-यापन करते हुए वह प्राणियों से द्रोह करके जीती है।

19. पुरुषोत्तम का जब अनुग्रह होता है तो सद्गुरु उसे ज्ञान देता है। तुम न लौकिक स्त्री हो और न लौकिक पुरुष।

20. तुम ब्राह्मण आदि वर्ण नहीं हो। तुम व्यर्थ ही चेष्टा कर रही हो। देह, घर, ममता, अहंकार, माया सबको छोड़ दो।

21. इस प्रपंच के बीजभूत और प्रकृति से भी ऊपर अक्षर से भी ऊंचे प्रभु पूर्ण परमात्मा को

22. तुम परानन्दा और परानन्द पद में प्रिया हो। देह का सम्बन्ध कराने वाली माया को छोड़ दो।

23. सुधा सागर में मणि द्वीप के मध्य भाग में कोटि सूर्य के समान प्रकाशवान, कोटि चन्द्र के समान शीतल,

24. मणिमुक्ता, आदि के चार दिवालों से घिरा हुआ परम् अद्भुत हजारों सखि मन्दिरों से चारों तरफ से घिरे हुए

25. अति उच्च पांच योजन प्रमाण का मणि मन्दिर ब्रह्माण्ड से बाहर है, वहां तुम्हारा शुभ रमण (घर) है।

26. यमुना के सात तीर्थों में पति के साथ अपनी क्रीड़ा का स्मरण करो। खिले हुए कमल के पुष्प पर भंवरों के झंकार से मुखरित

27. महासरोवर जो चमकती हुई मणियों के सोपानों से मण्डित है, उसमें मणिमुक्ता,. आदि को धारण किए सखियों से घिरी तुम नाव में बैठकर

28. क्रीड़ा करते हुए अपने को भ्रमवश क्यों भूल रही हो। हजार अश्वों वाले सौ पहिए जिसके हैं, ऐसा रमण शोभित है।

29. चारों ओर से घुंघरुओं के समूहों और मणिमुक्ता से जटित अपने शब्द से जो सभी दिशाओं को मुखरित कर रहे हैं।

30. दाडिम (अनार) पुष्प के समान कवचयुक्त रथ के ऊपर सुन्दर स्वर्ण कलशों से दीप्त

31. गाती, नाचती हुई, हंसती हंसाती हुई स्त्रियों से सुशोभित मोतियों के शामियाने की चांदनी में जहां की दिशाएं प्रकाशित हो रही हैं।

32. ऐसे रथ पर प्रिय के साथ बैठकर अपनी वन क्रीड़ा का स्मरण करो।

33. कभी पुष्पराग पहाड़ के सुन्दर उद्यान में नाना पक्षियों से युक्त स्थल कमल की मालाओं से युक्त

Nijanand App

अनेककुट्टिमोत्तुङ्गमण्डपैः परितो वृते।
दिव्यपुष्पभरामोदसुवासितदिगन्तरे॥३४॥
चन्द्रप्रभह्रदे रम्ये रम्यराजीवसङ्कुले।
मुक्ताजटितसौवर्णायुतसोपानपंक्तिभिः॥३५॥
क्वचित् क्वचिच्छोभिताभिर्मंडपैः कुट्टिमोपरि।
चतुस्तम्भैर्महारत्नैर्मंडितास्तोरणोज्वलैः॥३६॥
पतत्पतत्रिपक्षोत्थवायुप्रचलपादपे।
पतन्नेत्राञ्जनैर्दिव्यैः सखीयूथस्य दिव्यतः॥३७॥
चन्दनैरङ्गगलितैः कुङ्कुमैः कुचविच्युतैः।
परागैः पद्मगलितैः कुसुमैर्वायुनाहतैः॥३८॥
विचित्रदिव्यसलिले मणिमौक्तिकवालुके।
जलक्रीडारसानन्दः कथं विस्मारितोऽधुना॥३९॥
महापद्मवने दिव्ये समन्ताल्लक्षयोजने।
गन्धमाधुर्यनिपतत्षडङ्घ्रिपटलाकुले॥४०॥
[illegible]नोत्सेधविस्ताररत्नमण्डपमध्यगे।
वायुहृतप[illegible]र्वितानित नभोन्तरे।
अनेकपक्षिसङ्घातकोलाहल[illegible]सुखास्पदे॥४१॥
स्वप्रियेण कृता या याः क्रीडाः सर्वारसाश्रयाः।
कथं विस्मृत्य सहसा जीववत्परितप्यसे।
कथं मायासुखे लग्ना मिथ्याभूते भ्रमात्मके॥४२॥
पङ्के कस्तूरिकाबुद्धिर्लवणे शशिविभ्रमम्।
काचखण्डे मणिभ्रान्तिर्जलबुद्धिर्यथा मरौ॥४३॥
तथैव शर्कराबुद्धिः कर्कराश्मादिषु भ्रमात्।
कुर्वते मन्दमतयस्तथैव हि तवेदृशी॥४४॥
शुक्तिकारजतेनैव न कश्चिद्विभवं गतः।
न स्वप्नलब्धराज्येन राजा कश्चित्सुविश्रुतः॥४५॥
मरीचिकाजलं पीत्वा न कश्चित्तृप्तिमागतः।
यदीच्छसि सुखं नित्यं जहि सर्वमिमं भ्रमम्॥४६॥
विना भ्रमनिरासेन बिना च स्वात्मधारणाम्।
विना विषयवैतृष्ण्यं विना सन्तोषमार्जवम्॥४७॥
विना वैराग्यमत्युग्रं विना सद्गुरुसेवनम्।
विना विनयमास्तिक्यं शास्त्रशिक्षां विनापि च॥४८॥

Nijanand App

34. अनेक फर्शों से ऊंचे मण्डपों से घिरा हुआ दिव्य पुष्प की सुगन्ध से जहां की दिशाएं सुगन्धित हो रही हैं,

35. चन्द्रमा के समान सुन्दर कमलों से सुशोभित सरोवर में मुक्ता से जटित सुवर्ण की सीढ़ियों से

36. कहीं-कहीं फर्श के ऊपर मण्डपों से सुशोभित चार खम्भे वाले महारत्नों से मण्डित फाटकों से उज्ज्वल

37. उड़ते हुए पक्षियों के पांव से उठी वायु द्वारा जहां के वृक्ष कम्पित हो रहे हैं, सखी यूथों के नेत्रों का अंजन जहां गिर रहा है,

38. अंग से चन्दन, कुच से कुंकुम, कमलों से पराग जहां पर झर रहा है, वायु से जहां पुष्प हिलाए जा रहे हैं,

39. विचित्र दिव्य जल वाले, मणि और मुक्ता की बालू वाले सरोवरों में जल क्रीड़ा रस का आनन्द तुमने भुला दिया।

40. चारों तरफ लक्ष योजन के दिव्य महापद्मवन में जहां की सुगन्धि की मधुरता से भ्रमर गिर रहे हैं,

41. एक योजन के लम्बे चौड़े रत्न मण्डप के मध्य में स्थित, वायु द्वारा उड़ाए गए पराग से जहां का आकाश व्याप्त हो रहा है, अनेक पक्षियों का सुखद कोलाहल हो रहा है। ऐसे स्थान में

42. अपने प्रिय के साथ की गई सब रसों के आश्रयभूत क्रीड़ाओं को सहसा भुलाकर जीव की तरह कैसे तुम संताप कर रही हो और भ्रमात्मक मिथ्या भूत इस माया सुख में कैसे लग गई हो।

43. जिस प्रकार कीचड़ में कस्तूरी, नमकीन पानी के समुद्र में चन्द्रमा, कांच के टुकड़े में मणि और मरु में जल का भ्रम हो जाता है

44. और जिस प्रकार कंकड़, पत्थर, बालू, आदि में भ्रमवश मन्दबुद्धि वाले शर्करा बुद्धि कर लेते हैं, तुम्हारी बुद्धि वैसे ही हो गई है।

45. शुक्ति रूपी चांदी पाकर कोई वैभव नहीं प्राप्त कर सकता, स्वप्न में पाए राज्य से कोई राजा नहीं हो सकता,

46. मृग मरीचिका के जल को पीकर कोई तृप्त नहीं हुआ, इसलिए यदि तुम सुख चाहती हो तो यह सब भ्रम छोड़ो।

47. भ्रम दूर हुए बिना आत्मधारणा, विषय विराग, सन्तोष और आर्जव के बिना

48. उग्र वैराग्य, गुरु सेवन, विनय, आस्तिकता और शास्त्र शिक्षा के बिना

Nijanand App

देहाध्यासो मोहकृतो न निवर्त्तेत सर्वथा।
देहाध्यासो निवर्त्तेत निवृत्ते मोहविभ्रमे॥४९॥
बिम्बभूतस्वरूपस्य विस्मृतिर्मोह उच्यते।
मोहस्था वासना तस्य जीववच्च प्रतीयते॥५०॥
न जीवो वास्तवः कश्चित् वर्त्तते जलचन्द्रवत्।
जलचन्द्रस्वरूपं च गगनेन्दुर्यथा भवेत्॥५१॥
तथैव वासनारूपं निजे धाम्नि स्थिताः प्रियाः।
गुणः कम्पादिको यद्वत् प्रतिबिम्बे प्रतीयते॥५२॥
सुखदुःखादिमोहोत्थं वासनायां निरूपितम्।
न ते सुखं च दुःखं च मोहमात्रं विजृम्भिते॥५३॥
तस्मात्स्वरूपं विज्ञाय सम्यक् शास्त्राद्गुरोरपि।
भ्रमं त्यक्त्वा निजानन्दमाप्नुहि प्रेममीलिता॥५४॥
एवं सद्गुरुणा वाक्यामृतैरासेचिता यदा।
निर्वाप्य मोहभुजगविषज्वालां व्यथाकरीम्॥५५॥
अभिलाषवती भूयात्परानन्दपतिं प्रति।
अभिलाषो मया प्रोक्तः शृणववस्था नवापराः॥५६॥

इति श्रीमाहेश्वरतन्त्रे उत्तरखण्डे शिवपार्वतीसंवादे त्रयस्त्रिंशं पटलम्॥३३॥

चतुस्त्रिंशं पटलम्

शिव उवाच

अभिलाषे समुत्पन्ने ततश्चिन्ता प्रवर्त्तते।
प्रियो मे परमानन्दः परात्मा पुरुषोत्तमः॥१॥
अहं तु तत्प्रिया साक्षाद्वासना मोहवेष्टिता।
बाललीलावलोकार्थं सम्प्रार्थ्य पुरुषोत्तमम्॥२॥
विमग्ना मोहजलधौ दुस्तरे तमसावृते।
निरस्तं सकलं ज्ञानं जाता मे स्वात्मविस्मृतिः॥३॥
बिभ्रमामि भ्रमाविष्टा देहाध्यासादितस्ततः।
इयं मे जननी चायं पिता भ्राता सहोदरः॥४॥
पुत्राः पौत्राश्च सुहृदो ज्ञातयो गोत्रिणस्तथा।
ममत्वान्मे वृथा मौढ्यात्परिगृह्य विमोहितम्॥५॥
स्वप्नदृष्टेषु लोकेषु न च द्वेष्यः प्रियोपि वा।
परकीयः स्वकीयो वा मोह एव हि कारणं॥६॥

Nijanand App

49. मोह के द्वारा होने वाला देहाध्यास सब प्रकार से निवृत्त नहीं होता। मोह विभ्रम के मिटने पर देहाध्यास भी नष्ट हो जाता है।

50. बिम्ब भूत स्वरूप का विस्मरण होना ही मोह है। जिसकी वासना मोह में स्थित है, वह जीव की तरह प्रतीत होता है।

51. कोई जीव वास्तव नहीं है। वह जल में चन्द्रमा के समान है। जिस प्रकार आकाश में स्थित चन्द्रमा, जल में चन्द्रमा का रूप धारण करता है,

52. उसी प्रकार वासना रूपी निज धाम में प्रियाएं स्थित हैं। जिस प्रकार प्रतिबिम्ब में कम्पन आदि गुण प्रतीत होता है,

53. उसी प्रकार वासना में मोह के कारण सुख-दुःख आदि निरूपित होते हैं। वस्तुतः न तुम्हारे में सुख है न दुःख है। केवल मोह ही फैला है।

54. इसलिए शास्त्र से और गुरु से अपने स्वरूप को ठीक प्रकार से समझकर प्रेम में मग्न होकर भ्रम त्यागकर निजानन्द को प्राप्त करो।

55. इस प्रकार जब सद्‌गुरु अपने वाक्यामृत से सिंचित कर देता है, तो मोह रूपी सर्प के विष की ज्वाला जो बहुत व्यथा देती है, उसे शान्त कर

56. परानन्द रूपी पति के प्रति अभिलाषवती होना चाहिए। मैंने अभिलाषा का कथन कर दिया है, आगे दूसरी नौ अवस्थाओं को सुनो।

माहेश्वरतन्त्र के उत्तर खण्ड का शिव-पार्वती संवाद का तैंतीसवां अध्याय समाप्त हुआ।

चौंतीसवां अध्याय

शिव बोले—

1. अभिलाषा उत्पन्न होने के पश्चात् चिन्ता उत्पन्न होती है कि मेरे प्रिय परात्म परमानन्द पुरुषोत्तम हैं।

2. मैं उनकी वासना और मोह से घिरी हुई प्रिया हूं। बाल लीला दर्शन के लिए पुरुषोत्तम से प्रार्थना करके

3. दुस्तर, तमसावृत मोहसागर में मैं निमग्न हूं। मेरा सम्पूर्ण ज्ञान निरस्त तथा आत्म ज्ञान विस्मृत हो गया है।

4. देहाध्यास के कारण भ्रम से आविष्ट होकर इधर-उधर घूमती हूं। यह मेरे माता, पिता, भ्राता, सहोदर हैं।

5. यह मेरे पुत्र, पौत्र, मित्र, जाति गोत्र वाले हैं। मैं मूढ़ हो गई हूं। अपनी मूढ़ता, ममता से मैं व्यर्थ ही विमोहित हो रही हूं।

6. स्वप्न में देखे हुए संसार में न कोई शत्रु न कोई प्रिय, न पराया या न अपना है, परन्तु उनके आभास में मोह ही कारण है।

Nijanand App

अतः परं न मे कार्यं प्रियैर्वा चाप्रियैरपि।
एक एव प्रियः स्वामी स तु विस्मारितो मया॥७॥
तदा किमपरैः कार्यं स्वाप्निके दुःखहेतुभिः।
तस्मात्किं साधनं कुर्यां येनाहं प्रीतिमाप्नुयाम्॥८॥
तन्न पश्यामि लोकेस्मिन् वेदवेदान्तयोरपि।
यत्कृत्वा सुलभो भूयात्पतिः प्रियतमो मम॥९॥
न वेदैरुपदिष्टेन कर्मणा प्राप्यते पतिः।
कर्मणां फलमुद्दिष्टं स्वर्गमात्रं विनश्वरम्॥१०॥
न दानैर्वा तपस्तीर्थैः कायक्लेशैः महत्तरैः।
उपवासैर्व्रतैर्जाप्यैश्चित्तशुद्धिविधायिभिः॥११॥
कथं तैः केवलानन्दः पतिर्मे वशतामियात्।
न ज्ञानेन भवेद्वश्यः केवलं मुक्तिकृद्धि तत्॥१२॥
धर्मं तु पुरुषस्येह वैराग्यं ज्ञानगुप्तये।
यदि ज्ञानोदयो न स्याद्वैराग्यं यदि केवलं॥१३॥
तथापि प्रकृतौ साक्षाल्लीयते च तथापि किम्।
योगस्यापि पराकाष्ठा स्वात्मनो दर्शनावधि॥१४॥
पुराणेष्वितिहासेषु भक्तिरुद्घोषिता भृशम्।
सापि ज्ञानाङ्गमुद्दिष्टा तया प्राप्यः कथं पतिः॥१५॥
प्रियप्राप्तेरुपायस्य कोपि वक्ता न विद्यते।
किं करोमि क्व गच्छामि कस्याग्रे प्रवदाम्यहम्॥१६॥
वनभ्रान्तो यथा कश्चित् पिशाचपरिमोहितः।
क्षुत्तृड्भ्यां मर्दितो नक्तं दिवमस्तमिताशयः॥१७॥
दंदशूकैर्मृगैर्व्याघ्रैर्वाराहैर्भीषितो भृशम्।
तथा दंशैश्च मशकैः व्यथितः श्वापदादिभिः॥१८॥
काङ्क्षत्यप्याश्रमं गन्तुं मार्गभ्रष्टः करोमि किम्।
को मे प्रापयति स्थानं भ्रान्तस्यारण्यवीथिषु॥१९॥
किं करोमि क्व गच्छामि कस्याग्रे च वदाम्यहम्।
बहुद्रुमलताकीर्णं काननं जनवर्जितम्॥२०॥
इत्यादिविविधां चेष्टां कुर्वाणो व्याकुलान्तरः।
अवतिष्ठते तथा चिन्ता जायते वासनास्वपि॥२१॥
चिन्तामग्नो यथा सर्वं पश्यन्नपि न पश्यति।
प्रियचिन्तारसे मग्ना सखीनां वासना तथा॥२२॥

Nijanand App

7. इससे बढ़कर प्रिय और अप्रिय से मेरा कोई काम नहीं है। मेरा एक ही प्रिय स्वामी है। उसको मैंने भुला दिया है।

8. स्वप्न में देखे गए दुःख के कारण दूसरे स्वामियों से मेरा क्या कार्य है। इसलिए मैं कौन सा साधन करूं कि प्रिय से प्रीति प्राप्त हो सके।

9. इस लोक में वेद तथा वेदान्त के भी वह साधन में नहीं देखती हूं जिसको कर के मेरा प्रियतम पति सुलभ हो।

10. वेद में बताए गए कर्म द्वारा पति नहीं प्राप्त किया जाता है। कर्मों का चाहा फल केवल स्वर्ग हैं, जो नाशवान है।

11. दान, तप, तीर्थ, महान् काय क्लेशों, उपवासों, व्रतों और चित्त शुद्ध करने वाले जपों से भी

12. मेरा केवलानन्द पति मेरे वश में कैसे हो? वह ज्ञान से वश में नहीं हो सकता। ज्ञान तो केवल मुक्ति देने वाला है।

13. ज्ञान की रक्षा के लिए इस संसार में वैराग्य पुरुष का कवच है। केवल वैराग्य होने से ज्ञान का उदय नहीं हो सकता।

14. तथापि योग द्वारा प्रकृति में साक्षात् लीन हो जाय तो भी क्या? योग की अन्तिम स्थिति आत्मदर्शन तक ही सीमित है।

15. पौराणिक इतिहासों में भक्ति का बहुत उद्घोष किया गया है। वह भक्ति भी ज्ञान का ही अंग बताई गई है। उससे पति कैसे प्राप्त हो सकता है।

16. प्रिय की प्राप्ति का उपाय बताने वाला भी कोई नहीं दिखाई पड़ता है। क्या करूं, कहां जाऊं, किसके आगे कहूं?

17. जिस प्रकार कोई पिशाच द्वारा मोहित होकर वन में भटकता हुआ भूख प्यास से व्याकुल दिन रात दुःखी चित्त वाला होता है।

18. सर्प, मृग, व्याघ्र, वाराह आदि से अति भयभीत डांस, मच्छर, जंगली जानवरों आदि द्वारा व्यथित होता है।

19. घर जाना चाहता है और मार्ग भ्रष्ट होकर सोचता है क्या करूं, जंगल की गलियों में भटकते हुए मुझे कौन अपने घर तक पहुंचाए?

20. क्या करूं, कहां जाऊं, किसके आगे कहूं? बहुत से वृक्ष लताओं से युक्त जनरहित जंगल है।

21. ऐसी अनेक चेष्टाएं करता हुआ व्याकुल मन हो जाता है। ऐसी ही चिन्ता व ासनाओं में उत्पन्न होती है।

22. जिस प्रकार चिन्ता में डूबा हुआ व्यक्ति सब देखता हुआ भी नहीं देखता है, प्रिय के चिन्ता के रस में मग्न सखियों की वासना उसी प्रकार की होती है।

Nijanand App

चिन्तैवोद्वेगभावेन ततः परिणता भवेत्।
उद्विग्नमनसः किञ्चित् नैव हर्षाय जायते॥२३॥
प्राणादप्यधिवल्लभस्य विरहे किंनाम रम्यं भवेत्,
येनात्मा क्षणमप्युपैति विरतिं स्वास्थ्यं समालम्बते।
स्फुरन्मीनान्वारिष्विव करणवृत्तीः समुदिताः,
समादाय क्षिप्य प्रियविरहचिन्ता विजयते॥२४॥
उद्विग्नभावाकुलितान्तराया न रोचते भूषणमम्बरं वा।
शय्यासनं वाप्यशनं श्रुतं वा स्नानादिकं वा भुवनं वनं वा॥२५॥
इतः क्षणं वा च ततः क्षणं वा गृहे क्षणं वा शयने क्षणं वा।
बहिस्तथान्तः क्षणमात्रमेत्य ह्युद्विग्नभावा न लभेत शर्म॥२६॥
यथा विरक्तो न विधिष्वधिकृतः कृताकृते कर्मणि नैव दोषभाक्।
उद्विग्नताया अपि विप्रलम्भे न नित्यनैमित्तिककर्मयोगः॥२७॥
यदुद्वेगो देवि प्रियविरहजन्मा समुदित-
स्तदाकृष्णास्त्रीणां किमपि नहि कार्यं निगमतः।
तपस्तीर्थं योगो व्रतनियमकर्माणि सकलं,
समाप्तं यत्तासां न हि मतिरभूद्देहविषया॥२८॥
श्रीकृष्णविरहे देवि य उद्वेगः प्रियासु च।
अस्माकमीश्वराणाञ्च दुर्लभः किं पुनर्नृणाम्॥२९॥
इति श्रीमाहेश्वरतन्त्रे शिवोमासंवादे चतुस्त्रिंशं पटलम्॥३४॥

अथ पञ्चत्रिंशं पटलम्

देव्युवाच

वैराग्यस्योदये देव ज्ञाने स्यात्साधनावधिः।
साधनावधिस्तत्रापि य उद्वेगस्त्वयोदितः॥१॥
यथा विरक्तो देवेश न कर्मस्वधिकारवान्।
उद्विग्नोपि तथा देव न कर्माधिकृतो भवेत्॥२॥
मतिर्न देहविषया तत्र हेतुस्त्वयोदितः।
अत्र मे खिद्यते चेतो न सम्यगवधारणम्॥३॥
भौतिको विषमो देहो वासना ब्रह्मकेवलम्।
कस्य युज्येत संसारः कोत्र कर्माधिकारवान्॥४॥
कर्माणि क्रियमाणे हि कोत्र भोक्ता फलस्य तु।
अनित्यस्य जडस्यापि कथं देहस्य तद्भवेत्॥५॥

Nijanand App

23. चिन्ता ही उद्वेग रूप में परिणत हो जाती है। उद्विग्न मन वाले व्यक्ति को कोई वस्तु प्रसन्न नहीं कर सकती।

24. प्राणों से भी अधिक प्रिय के विरह में कौन सी वस्तु रम्य हो सकती है जिससे आत्मा को क्षण भर शान्ति प्राप्त हो सके और स्वास्थ्य लाभ हो। पानी में फुदकती हुई मछलियों की तरह अन्तःकरण की वृत्तियां चंचल हो जाती हैं और प्रिय विरह की चिन्ता ही सबसे बढ़कर हो जाती है।

25. उद्विग्न भाव से व्याकुल होने के कारण वस्त्र आभूषण आदि अच्छे नहीं लगते। शैय्या, आसन, भोजन, पढ़ना, स्नानादि, भुवन, वन आदि कुछ भी अच्छे नहीं लगते।

26. एक क्षण इस ओर, एक क्षण उस ओर, क्षण भर शयन में, बाहर तथा अन्दर क्षण भर रहने के कारण उद्विग्न को सुख प्राप्त नहीं होता।

27. जिस प्रकार विरक्त को विधियों में अधिकार नहीं रहता तथा कर्म के करने या न करने में भी दोष नहीं होता, उसी प्रकार विप्रलम्भ में उद्विग्नता के होने के कारण नित्य नैमित्तिक कर्मों में दोष नहीं होता।

28. हे देवि! यदि प्रिय विरह से होने वाला उद्वेग उत्पन्न हो जाए तो कृष्ण की स्त्रियों को वेद से कोई काम नहीं। तप, तीर्थ, योग, व्रत, नियम, कर्म सब कुछ समाप्त हो जाते हैं और देह विषयक बुद्धि नहीं रहती।

29. हे देवि! श्रीकृष्ण के विरह में प्रियाओं में जो उद्वेग होता है वह हमारी ईश्वरी सृष्टियों में भी दुर्लभ है, मनुष्यों को क्या कहा जाय।

माहेश्वरतन्त्र के शिव-उमा संवाद का चौंतीसवां अध्याय समाप्त हुआ।

पैंतीसवां अध्याय

देवी ने कहा—

1. हे देव! वैराग्य के उदय होने पर ज्ञान में साधन की अवधि हो जाती है और आपने कहा है कि उद्वेग भी साधन की अवधि है।

2. जिस प्रकार से विरक्त कर्म में अधिकार वाला नहीं रहता, उसी प्रकार उद्विग्न भी कर्म का अधिकारी नहीं होता।

3. आपने कहा है कि उसका कारण देह विषयक बुद्धि नहीं है। इस विषय में मेरा मन खिन्न हो रहा है। मैं ठीक समझ नहीं पा रही हूं।

4. देह भौतिक और विषम है, वासना केवल ब्रह्म है। किसके लिए संसार उचित है और यहां कर्म का अधिकारी कौन है?

5. कर्मों के करने पर इसके फल का भोक्ता कौन है? अनित्य, जड़, देह कर्मफल की भोक्ता कैसे हो सकती है।

Nijanand App

कर्मणामिह भोक्त्री चेद्वासना यदि शङ्कर।
कृतनाशः प्रसज्येत ह्यकृताभ्यागमस्तथा॥६॥
अन्येन क्रियमाणे हि कथमन्येन भुज्यते।
वासनायाश्च देहादेस्तारतम्यं वद प्रभो॥७॥

शिव उवाच

शृणु वक्ष्यामि देवेशि तव प्रश्नमनुत्तमम्।
देहात्मधीर्विनश्येत यस्य श्रवणमात्रतः॥८॥
ज्ञानमार्गे तु देवेशि वैराग्यं साधनावधिः।
नानाजन्मान्तराभ्यासरागरञ्जितचेतसां॥९॥
जीवानां विषयेष्वेव बहिर्धावति वै मनः॥
सुखं स्यादिष्टविषये ह्यनिष्टे दुःखवद्भवेत्॥१०॥
सुखदुःखादिकं सर्वमहङ्कारोभिमन्यते।
अहङ्कारगतं सर्वं चिदाभ्यासे प्रतीयते॥११॥
जलचन्द्रे यथा तस्य कम्पादिर्दृश्यते गुणः।
प्रतीतिमात्रमेवैतत् तथापि न निवर्त्तते॥१२॥
तत्प्रतीतिं निराकर्त्तुं प्रकारं वच्मि ते शिवे।
अनेकजन्मसंसिद्धसाधनानां बलेन च॥१३॥
शुद्धचित्तस्य देवेशि वैराग्यमुपसर्पति।
रागाद्यभावाद्विषयेष्वहङ्कारो निवर्त्तते॥१४॥
न मनो धावनं कुर्याद्विषयेषु यतस्ततः।
न गृह्णाति सुखं दुःखं रागद्वेषाद्यभावतः॥१५॥
कर्त्तृत्वं चैव भोक्तृत्वमहङ्कारे हि दृश्यते।
स्थूलं वपुरधिष्ठानमहं लिङ्गस्य सुन्दरि॥१६॥
अहङ्कारगृहीतेन स्थूलदेहेन पार्वति।
योऽन्यकर्माणि कुरुते निबध्येतापि तैरयं॥१७॥
भोगायतनमात्रं हि स्थूलो देहः प्रकीर्त्तितः।
अहङ्कारे सचाध्यस्ते ह्यहङ्कारश्चिदात्मनि॥१८॥
स्फाटिके हि यथा ध्यस्तो जपारागः प्रकाशते।
चिदाभासे तथा शुद्धेध्यस्ताहन्ता तथा प्रिये॥१९॥
सचावृत्य चिदाभासं स्वयमेव प्रकाशते।
घटाकाशमिवावृत्य जलाकाशः प्रकाशते॥२०॥

Nijanand App

6. हे शंकर! यदि वासना कर्मों की भोक्ता है, तो किए हुए का नाश तथा अकृत का आगमन भी होने लगेगा।

7. एक काम करे और दूसरा भोग करे, यह कैसे? वासना और देह आदि का तारतम्य बताइए?

शिव बोले—

8. हे देवि! तुम्हारे इस श्रेष्ठ प्रश्न को मैं कहूंगा। इसके श्रवण मात्र से देहात्म बुद्धि नष्ट हो जाती है।

9. हे देवि! ज्ञान मार्ग के वैराग्य ही साधनों की अन्तिम सीमा है। नाना जन्मों के अभ्यास के राग से रँगे हुए चित्त वाले

10. जीवों का विषयों में मन बाहर दौड़ता है। इष्ट विषय में सुख और अनिष्ट में दुःख मिलता है।

11. सुख-दुःख का अभिमान अहंकार ही को होता है। चित् के अभ्यास करने पर वह सब अहंकार सही प्रतीत होता है।

12. जल में प्रतिबिम्बित चन्द्र में जिस प्रकार कंचन आदि गुण दिखाई पड़ते हैं और वे केवल प्रतीति मात्र ही होते हैं तथापि वे निवृत्त नहीं होते।

13. उस प्रतीति को दूर करने के लिए मैं प्रकार कहता हूं। अनेक जन्मों में सिद्ध साधनों के बल से

14. शुद्ध चित्त पुरुष को वैराग्य उत्पन्न होता है। विषयों में राग आदि के अभाव से अहंकार भी निवृत्त हो जाता है।

15. मन विषयों में इधर-उधर नहीं भटकता। राग द्वेष के न होने से सुख-दुःख भी नहीं होता।

16. कर्तव्य और भोक्तृत्व अहंकार में ही दिखाई पड़ता है। यह स्थूल शरीर लिंग शरीर का अधिष्ठान है।

17. हे पार्वती! जब स्थूल देह अहंकार से ग्रसित हो जाता है तो अन्य किए कर्म से वह बंधता भी है।

18. यह स्थूल देह भोगों के भोगने का घर है। उसका अध्यास अहंकार में ही होता है। चित्त में अहंकार लीन होता है।

19. स्फटिक मणि पर रखा हुआ जपा पुष्प जिस प्रकार अपना रंग उस पर डाल देता है, उसी प्रकार शुद्ध चिदाभास में अहंकार का अध्यास होता है।

20. वह चिदाभास को घेरकर स्वयं प्रकाशित होने लगता है। जिस प्रकार घटाकाश को घेरकर जलाकाश प्रकाशित होता है।

Nijanand App

सुखं दुःखं भयं क्रोधो मोहो मात्सर्यमेव च।
धर्माधर्मौ पुण्यपापे ज्ञानमज्ञानमेव च''२१॥
अहङ्कारगतं सर्वं चिदाभासस्य न क्वचित्।
तथाप्यैक्याध्यासवशादात्मन्येव प्रतीयते॥२२॥
विशुद्धे निर्मले देवि शोणिमेव मणौ यथा।
तस्मादनात्मधर्माश्च जडा नित्यमशेषतः॥२३॥
विज्ञायाप्नोति वैराग्यमाविरञ्चिपदादपि।
रागाद्यभावान्न मनो विषयानुपधावति॥२४॥
विषयानुरागरहिते निर्मले मनसि प्रिये।
स्वात्मा प्रकाशते ध्यानाद्दर्पणे स्वमुखं यथा॥२५॥
मनस्यपि लयं याते विकारशतवेश्मनि।
समाधिस्थो भवेद्योगी यत्र शोको न विद्यते॥२६॥

इति श्रीमाहेश्वरतन्त्रे शिवोमासंवादे उत्तरखण्डे पञ्चत्रिंशं पटलम्॥३५॥

षट्त्रिंशं पटलम्

शिव उवाच

स्वस्वमोहेन सख्यस्ता नीताः स्वप्नं परात्मनः।
तस्मात् स्थूलशरीराणि भौत्तिकानि महेश्वरि॥१॥
सामान्यतो विदुस्तासां सूक्ष्मदेहस्तथाविधाः।
कारणात्मा भवेन्मोहो वासनासु पृथक् पृथक्॥२॥
वासना तदवच्छन्ना जीवभावमिवागता।
इच्छाशक्तिप्रयुक्तत्त्वात्स मोहोपि रसात्मकः॥३॥
न वासनायाः संसारो न मोहस्य तथात्मनः।
अहं लिङ्गस्य देवेशि संसारं उपयुज्यते॥४॥
यतो नारायणोद्भूतो मायिकः परिकीर्त्तितः।
इच्छानन्दांशसम्भूतः सखीमोहस्तु केवलम्॥५॥
तस्मादहङ्कृतेरेषः संसारोन्यस्य न क्वचित्।
कर्तृत्वं चैव भोक्तृत्वमहङ्कारस्य विद्यते॥६॥
प्रतीयते वासनायां मोहस्तत्र प्रयोजकः।
स्थूलदेहाभिमानेन अहङ्कारो विजृम्भते॥७॥
सर्वेन्द्रियचरो भूत्वा सर्वकर्मप्रसाधकः।
बध्यते तत्फलैश्चैवं प्रति जन्म विचित्रधा॥८॥

Nijanand App

21. सुख, दुःख, भय, क्रोध, मोह, मात्सर्य, धर्म-अधर्म, पाप-पुण्य, ज्ञान-अज्ञान आदि

22. सब अहंकार के अन्तर्गत हैं, चिदाभास के नहीं। फिर भी उनके साथ एकरूपता का अध्यास होने पर आत्मा में भी प्रतीत होने लगते हैं जैसे

23. साफ निर्मल मणि में पुष्पादि का रक्त वर्ण प्रकट होता है। आत्मा के जो धर्म नहीं हैं, वे सम्पूर्ण रूप से अनित्य जड़ हैं, ऐसा

24. समझकर मनुष्य विरंचि के पद से भी वैराग्य धारण कर लेता है? राग, आदि के अभाव हो जाने से मन विषयों की ओर नहीं दौड़ता।

25. विषय के अनुराग से रहित निर्मल मन में ध्यान करने से अपनी आत्मा प्रकाशित होती है जिस प्रकार दर्पण में मुख।

26. सैकड़ों विकारों का घर जो मन है उसके लय हो जाने पर योगी समाधिस्थ हो जाता है। वहां शोक नहीं है।

माहेश्वरतन्त्र के उत्तर खण्ड में शिव-उमा संवाद का पैंतीसवां अध्याय समाप्त हुआ।

छत्तीसवां अध्याय

शिव ने कहा—

1. अपने-अपने मोह के कारण वे सखियां परात्मा के स्वप्न को प्राप्त हुईं। उनके स्थूल शरीर भौतिक हैं।

2. समान्यतः उनकी सूक्ष्म देह भी वैसी ही है। कारण रूप मोह होता है। वासनाएं पृथक्-पृथक् होती हैं।

3. इस मोह से युक्त वासना ही मानो जीव भाव को प्राप्त हो गई हो। इच्छा शक्ति के द्वारा प्रयुक्त होने से मोह भी रसात्मक है।

4. न तो वासना का संसार है, न तो मोह का और न आत्मा का। अहम् लिंग का संसार उपयुक्त होता है।

5. जिस प्रकार नारायण से उत्पन्न संसार मायिक कहा जाता है, उसी प्रकार इच्छानन्द के अंश से उत्पन्न केवल सखी मोह होता है।

6. इसलिए यह संसार अहंकार का ही है, अन्य का कहीं नहीं। कर्तृत्व एवं भोक्तृत्व भी अहंकार का ही है।

7. जो संसार वासना में प्रतीत होती है उसका कारण मोह है। स्थूल देह के अभिमान से अहंकार प्रकट होता है।

8. यह सभी इन्द्रियों में प्रवेश कर सभी कर्मों को सिद्ध करने वाला बनता है और प्रति जन्म विभिन्न प्रकार के कर्मों के फलों से बंधता है।

Nijanand App

स अध्यस्तो वासनासु वासना तद्गता भवेत्।
तादात्म्यभावमापन्ने वासनाहङ्कृतिस्तथा॥९॥
शृङ्गाररसरूपाणां सखीनां वासनास्तु याः।
तासामानन्दरूपं च अहङ्कारेण मिश्रितम्॥१०॥
प्राप्य नारायणं द्वारमक्षरे प्रतिबिम्बिते।
अन्तरङ्गा बहिरङ्गा स्वप्ने वृत्तिद्वयं भवेत्॥११॥
प्रत्यक्वृत्तिरन्तरङ्गा बहिरङ्गा बहिर्गता।
प्रत्यग्वृत्या तु देवेशि अहङ्काराश्रितं सुखं॥१२॥
नारायणमुखेनैव कूटस्थे व्यक्तिमागतं।
यथा सहस्रकुल्याभिः पूर्यमाणं महासरः॥१३॥
प्रोत्फुल्लकमलामोदं रोचते रुचिराकृति।
वासनानां सहस्रैश्च ह्यहङ्कारविमिश्रितैः।
पूर्णानन्दो भवेद्देवि गणितानन्द इत्यपि॥१४॥
बहिरङ्गा तु या वृत्तिरहङ्कारस्य सुन्दरि।
बहिर्वत्पश्यति विश्वं तयेदन्तात्मकं शिवे॥१५॥
अहङ्कारो विश्वबीजं वासनासु च बिम्बितः।
दर्शयत्यखिलं विश्वं सखीभ्यो मुकुरो यथा॥१६॥
एवं रहस्यं कूटस्थो बाललीलाः सखीगणः।
अनुभूतवन्तावन्योन्यं सुदुर्घटमिदं प्रिये॥१७॥
यथा कल्लोलजालेषु चन्द्रज्योत्स्ना प्रसर्पति।
अहङ्कारविभेदेषु प्रियाणां वासना तथा॥१८॥
यथा कल्लोलजालेषु प्रशान्तेषु महेश्वरि।
लक्ष्यते कौमुदी तस्मिन् प्रशान्ते वासना तथा॥१९॥
सद्गुरोः शरणं यायात्तदर्थमिहसुन्दरि।
त्वं प्रियासीति कृष्णस्य पूर्णस्य परमात्मनः॥२०॥
बाललीलाविलोकार्थमिह प्राप्ता न संशयः।
प्रपञ्चसागरे मग्ना कथं तिष्ठसि निर्भया॥२१॥
पुत्राः पौत्रा धनं धान्यं देहगेहाम्बरादिकम्।
स्वप्नलब्धमिदं सर्वं हित्वा बिम्बं निजं श्रय॥२२॥
कथं खेदयसे बिम्बं मोहमग्ना निरन्तरं।
प्रियाणां वासनासित्वं न प्रियाभ्यः पृथङ्मता॥२३॥

Nijanand App

9. वह अहंकार वासनाओं में अध्यस्त होता है। वासना अहंकारगत होती है। उनके तादात्म्य भाव हो जाने पर वासना ही अहंकार बन जाता है।

10. श्रृंगार रस रूप सखियों की जो वासनाएं हैं उनका आनन्द रूप भी अहंकार से मिश्रित होता है।

11. अक्षर के प्रतिबिम्बित होने पर नारायण द्वार को प्राप्त कर स्वप्न में अन्तरंग और बहिरंग दो वृत्तियां होती हैं।

12. हे देवेशि! अन्तरंग वृत्ति भीतर की ओर जाने वाली और बहिरंग वृत्ति बहिर्गत होती है। अन्तरंगावृत्ति से सुख अहंकार आश्रित होता है।

13. नारायण के मुख द्वारा यह कूटस्थ में प्रकट होता है। जिस प्रकार छोटी-छोटी नालियों से बड़ा तालाब भरता है

14. और उसमें सुन्दर कमल खिलते हैं। रुचिर आकार अच्छा लगता है। अहंकार से मिश्रित सहस्रों वासनाओं का पूर्णानन्द होता है जिसे गणितानन्द कहते हैं।

15. अहंकार की जो बहिरंगावृत्ति होती है, शिवे! उसके द्वारा इस विश्व को बाहर की तरह देखता है।

16. अहंकार ही विश्व का बीज है। यह वासनाओं में बिम्बित होता है, तो सखियों को सम्पूर्ण विश्व दिखा देता है जैसे दर्पण।

17. इस प्रकार कूटस्थ रहस्य को और सखीगण बाल लीलाओं का परस्पर अनुभव करती हैं जो असम्भव सा दिखाई पड़ता है।

18. जिस प्रकार नदी की तरंगों के समूह में चन्द्रमा की चांदनी फैलती है, उसी प्रकार अहंकार भेदों में प्रियाओं की वासना फैलती है।

19. जिस प्रकार तरंगों के शान्त होने पर चांदनी दिखाई पड़ती है वैसे ही अहंकार के शान्त होने पर वासना दिखाई पड़ती है।

20. हे सुन्दरी! इस संसार में इस कार्य के लिए सद्‌गुरु की शरण में जाना चाहिए। तुम पूर्ण परमात्मा कृष्ण की प्रिया हो।

21. बाल लीला देखने तुम यहां पर आई हो। प्रपंच सागर में डूबी हुई तुम यहां निर्भय कैसे खड़ी हो?

22. पुत्र, पौत्र, धन, धान्य, शरीर, घर, वस्त्र आदि मानो स्वप्न में मिले हैं। इन सब को छोड़ अपने बिम्ब का आश्रय लो।

23. मोह से मग्न होकर तुम निरन्तर बिम्ब को खिन्न क्यों कर रही हो। तुम प्रियाओं की वासना हो उनसे पृथक् नहीं।

Nijanand App

अहङ्काराश्रितायास्ते खेदो बिम्बाश्रितो भवेत्।
तस्मात्प्रबुध्य झटिति निजं बिम्बं प्रबोधय।।२४।।
अहमध्यस्त एवायं देहा ते पाञ्चभौतिकः।
अहं स्त्री पुरुषः कृष्णो गौरस्तेनाभिमन्यसे।।२५।।
इदन्ताहेविशादाय अहन्तास्त्रचिष्टिकल्पितम्।
स्वस्वरूपमये वह्नौ हुत्वानन्दमवाप्नुहि।।२६।।
इदन्तावैरिमत्युग्रं मूलाहन्तारणाङ्गणे।
स्मृतिखड्गेन तीव्रेण घातयित्वा सुखीभव।।२७।।
एवं प्रबोधिता सम्यक् वासना गुरुणा यदा।
क्रमेणोद्वेगमासाद्य वैराग्यमिव योगतः।।२८।।
त्यजत्यहङ्कृतिं सद्यो गेहे देहेन्द्रियेष्वपि।
देहाभिमाने गलिते विज्ञाते स्वात्मनि ध्रुवम्।।२९।।
आसाद्य विरहावस्थामुद्वेगाख्यां रसात्मिकां।
विप्रलम्भरसानन्दानुभवो जायते ततः।।३०।।
इति श्रीमाहेश्वरतन्त्रे शिवोमासंवादे षट्त्रिंशं पटलम्।।३६।।

सप्तत्रिंशं पटलम्

शिव उवाच

योगिनो हि विरक्तस्य मनो ध्यानरतं भवेत्।
सम्यक् प्रजातया स्मृत्या मनो लीलारतं तथा।।१।।
तदैवमानसी सेवा प्रसिध्यति न चान्यथा।
तस्मादन्तर्बहिः कार्या सेवा यावत्स्मृतिर्भवेत्।।२।।
स्मृतिं विना तु देवेशि बहिः सेवां परित्यजेत्।
प्रत्यवायमवाप्नोति मार्गभ्रष्टो भवेदपि।।३।।
स्मृत्यवस्थैव देवेशि मानसीमूलमुच्यते।
मानस्यां जायमानायां बाह्यसेवा निवर्त्तते।।४।।
प्रियसेवा प्रियाधर्मो यावत्सर्वेन्द्रियक्रिया।
सर्वेन्द्रियक्रियाभावान्मानसी सा प्रवर्त्तते।।५।।
प्रेमपीयूषपाथोधौ यदा लग्नं मनो भवेत्।
बाह्येन्द्रियाणां वृत्यभावाद्बाह्यसेवा न जायते।।६।।
प्रवर्तते मानसी सा स्मृत्यवस्थोदये सति।
तस्मात्स्मृतिं प्रवक्ष्यामि शृणुष्वेकाग्रमानसा।।७।।

Nijanand App

24. जब तुम अहंकाराश्रित होती हो तो तुम्हारा खेद बिम्ब के आश्रित हो जाता है। इसलिए शीघ्र जागकर अपने बिम्ब को जगाओ।

25. अहम् के अध्यास वाला तुम्हारा यह शरीर पांचभौतिक है। मैं स्त्री हूं, कृष्ण पुरुष हैं, इसी से अभिमान करती हो।

26. अहंकार की हानि के लिए अहंकार के सृष्टि की कल्पना की गई है। अपने स्वरूप से जुड़कर उसको भस्म करके आनन्द प्राप्त करो।

27. मूल अहंकार के युद्धांगन में इस संसार रूपी भयंकर बैरी को तीव्र स्मृति के खड्ग से काट कर सुखी हो जाओ।

28. जब गुरु इस प्रकार से वासना को प्रबोधित करता है तो क्रमशः उद्वेग को प्राप्त कर जिस प्रकार योग से वैराग्य की प्राप्ति हो जाती है, वैसे ही

29. गेह, देह तथा इन्द्रियों को भी अहंकार शीघ्र ही छोड़ देता है। देहाभिमान के गल जाने पर, अपनी आत्मा का ज्ञान हो जाने पर, विरह की उद्वेग नामक रसात्मक अवस्था प्राप्त कर विप्रलंभ रस के आनन्द का अनुभव पाया जाता है।

माहेश्वरतन्त्र के शिव-उमा संवाद का छत्तीसवां अध्याय समाप्त हुआ।

सैतीसवां अध्याय

शिव बोले—

1. विरक्त योगी का मन ध्यान में लग जाता है और स्मृति के सम्यक् होने से मन भी लीला में रत हो जाता है।

2. तभी मानसी सेवा पैदा होती है, अन्यथा नहीं। इसलिए अन्तः सेवा तथा बहिर्सेवा स्मृति उदय तक करनी चाहिए।

3. हे देवि! स्मृति के बिना बहिःसेवा का त्याग करना चाहिए। अन्यथा स्थिति में विघ्न हो जाता है और मार्गभ्रष्ट हो जाता है।

4. स्मृति की अवस्था ही मानसी सेवा का मूल कही गई है। मानसी सेवा के उदय हो जाने पर बाह्य सेवा निवृत्त हो जाती है।

5. प्रिय की सेवा प्रिया का धर्म है। वह तभी तक है जब तक सारी इन्द्रियों की क्रिया होती रहती है। जब सम्पूर्ण इन्द्रियों की क्रिया का अभाव हो जाता है तो मानसी सेवा ही रह जाती है।

6. प्रेम रूपी अमृत सागर में जब मन लग जाता है तो बाह्येन्द्रियां नहीं पहुंच पातीं। बाह्येन्द्रियों की वृत्ति के अभाव से बाह्य सेवा नहीं हो पाती।

7. स्मृति अवस्था के उदय होने पर मानसी सेवा उदित होती है। इसलिए मैं स्मृति के विषय में कहूंगा, ध्यान देकर सुनो।

Nijanand App

स्मृत्यां वै जायमानायामनुसन्धानवर्जितम्।
मनो लीलावगाहेत धर्मतप्तो यथा गजः॥८॥
अवगाहे च मनसि ब्रह्मलीलामहानदीम्।
लीयन्ते वृत्तयः सर्वा गेहात्मविषया अपि॥९॥
विगाढमाने मनसि प्रविष्टे लीलामहानन्दसुधासमुद्रम्।
नेदं न चादो न सुखं न दुःखं जानाति तत्रैव विलग्नचित्ता॥१०॥
स्मरेत्तदानन्दसुधासमुद्रमनर्गलाप्रोच्छ्वलदूर्मिमालम्।
समन्ततोन्तः स्फुरमाणरत्नप्रभाङ्कुरोद्भासितवीचिरम्यम्॥११॥
हिरण्मयोद्भिन्नपतत्पतत्रिनक्रादिचक्रोत्पतनाभिरामम्।
इतस्ततो धावदनेकपोतकुलाकुलं योजनकोटिमानम्॥१२॥
जलेशयानेकसुवर्णरत्नगिरिप्रभालङ्कृतकुक्षिभागम्।
वैदूर्यतालीवनशोभिकूलं कूजद्विहङ्गस्वनितै रसालम्॥१३॥
उद्भिन्नतालीवनजान्धकारमुन्मूलयन्तं मणिभिस्तटस्थैः।
स्फुरद्भिरुद्योतितदिग्विभागैर्दिवाकरेन्दुद्युतितस्करैरिव॥१४॥
अलङ्कलङ्कोज्झितपूर्णचन्द्रविडम्बिनीभिस्तटगाभिरुच्चैः।
अनेकचन्द्राकुलितस्य शोभां विलज्जयन्तं नभसोपि शुक्तिभिः॥१५॥
द्वीपं मणीनां च तदन्तरुद्यन्मयूखकिञ्जल्कितमादधानम्।
अनेककोटीन्दुदिवाकरस्प्रधं स्मरेच्चिदानन्दघनं महेश्वरि॥१६॥
उपेतं नवखण्डैश्च नवरत्नमयैः शुभैः।
नवभूम्यात्मकैश्चित्रैरुद्यानपरिमण्डितम्॥१७॥
कोट्यर्धयोजनायामविस्तारं सुमनोहरं।
तिर्यगूर्ध्वायिता रेखाश्चतस्रो नवकोष्ठवत्॥१८॥
मध्यः खण्डः पद्मरागमयश्चानन्दभूमिकः।
पुष्परागमयस्तस्य पूर्वभागे प्रतिष्ठितः॥१९॥
चिदानन्दमयीं भूमिं तत्र सञ्चिन्तयेद्धिया।
आग्नेयां वज्रघटितास्तत्र वैराग्यभूमिका॥२०॥
महामारकतं दक्षे चिन्तयेत्खण्डमुत्तमम्।
राजते यत्र देवेशि महासन्तोषभूमिका॥२१॥
नैर्ऋते चिन्तयेत्खण्डं यत्रास्ते प्रेमभूमिका।
प्रवालमणिसन्नद्धं प्रकाशपरमोज्ज्वलम्॥२२॥
प्रतीच्यां नीलमणिभिर्मण्डितं भूक्तिभूमिकं।
इन्द्रनीलमयं देवि प्रभालिप्तनभोन्तरम्॥२३॥

Nijanand App

8. स्मृति के उदय होने पर अनुसन्धानरहित मन धूप से पीड़ित हाथी के समान लीला में प्रवेश करता है।

9. मन के ब्रह्म लीला रूपी महानदी में प्रवेश करने पर गृहादि के अपने विषय तथा सभी वृत्तियां नष्ट हो जाती हैं।

10. मन के लीला महानन्द रूपी अमृत के सागर में प्रवेश करने पर उसी में मन लग जाने पर यह वह, सुख यह कुछ भी नहीं जान पड़ता है।

11. लगातार जिसमें तरंग-मालाएं उठ रहीं है, चारों ओर अन्दर चमकते रत्नों की प्रभावों के अंकुर के प्रकट होने से दिखाई पड़ने वाली तरंगों से रम्य आनन्द सुधा समुद्र का स्मरण करे।

12. सुनहले पंख वाले पक्षियों तथा नक्र आदि के उछलने से सुन्दर दौड़ते हुए अनेक जहाजों से भरे करोड़ योजन के उस आनन्द सुधा समुद्र का स्मरण करे।

13. जल में पैदा होने वाले अनेक स्वर्ण रत्नों के पर्वतों की प्रभा से अलंकृत हो रही है कुक्षि भाग वाले शब्द करते हुए पक्षियों, वैदूर्य और ताड़ के वनों से सुशोभित आनन्द सुधा समुद्र का स्मरण करे।

14. तट की मणियों की प्रभा से ताड़ के वन के अन्धकार को जहां मिटाया जा रहा है और वह मणियां इतनी चमक रही हैं कि सूर्य चन्द्रमा के प्रकाश को मानो चुरा लिया हो, ऐसी मणियों से जहां की सभी दिशाएं प्रकाशित हो रही हैं।

15. कलंकरहित पूर्ण चन्द्र का अनुकरण करने वाली, ऊंचे तट की शुक्तियों द्वारा अनेक चन्द्रों से भरे आकाश की शोभा को भी जो लज्जित कर रहा है, उस आनन्द सुधा समुद्र का स्मरण करे।

16. मणियों के द्वीप और उसके अन्दर से निकलती हुई किरणों से पराग का रूप जो धारण कर रहा है, जो अनेक कोटि सूर्य चन्द्र से भी स्पर्धा कर रहा है, उस आनन्द चिदानन्द घन का स्मरण करें।

17. नवरत्नमय, नवभूमात्मक, विभिन्न उद्यानों से मण्डित ऐसे नौ खण्डों से युक्त

18. अर्धकोटि योजन लम्बे चौड़े सुमनोहर जिसमें तिरछी और खड़ी चार रेखाएं और नौ कोष्ठ हैं।

19. मध्य खण्ड पद्मराग मणि का है, उसकी भूमि आनन्दमय है। उसके पूर्व भाग में पुष्परागमय खण्ड स्थित है।

20. उस चिदानन्द भूमि का बुद्धि से चिन्तन करे। अग्नि दिशा में वज्रघटित खण्ड है। यह वैराग्य भूमिका है।

21. दक्षिण की ओर महामरकत के उत्तम खण्ड का चिन्तन करे। जिसमें महासन्तोष की भूमि विराज रही है।

22. नैऋत्य में प्रेम भूमि खण्ड का चिन्तन करे। इसमें प्रबाल और मणियों का उज्ज्वल प्रकाश है।

23. पश्चिम की ओर नीलमणि से मण्डित भोगों की भूमि है जहां इन्द्रनीलमय प्रभा से आकाश भी लिप्त हो रहा है।

Nijanand App

वायव्ये संस्मरेत्खण्डं ज्ञानभूमिसमाश्रयम्।
उत्तरे चिन्तयेत्खण्डं गोमेदरचितान्तरम्॥२४॥
प्रकाशभूमिका यत्र राजते सुमनोहरा।
महामौक्तिकखण्डश्च य ईशान्येगतः प्रिये।
तं स्मरेत्सततं यत्र राजते रतिभूमिका॥२५॥
भूमयः सप्तदेवेशि योजनानां चतुर्दश।
लक्षाणि ते मया प्रोक्ता निबोध गिरिनन्दिनि॥२६॥
चिदानन्दमयी भूमिस्तावत्येव प्रकीर्तिता।
द्वाविंशतिर्योजनानां लक्ष्याण्यानन्दभूमिका॥२७॥
नित्यं वृन्दावनं यत्र राजते कर्णिकाकृति।
स्मरेद्ब्रह्मपुरं तत्र प्रकाशपरमोज्वलम्॥२८॥
तन्मध्ये देव देवेशि मणिनैकेन निर्मितम्।
समकालोदितानेककोटिचन्द्रार्कभास्वता॥२९॥
क्वचिन्नीलं क्वचिद्रक्तं क्वचित्कृष्णं क्वचित्सितम्।
दशभूम्यात्मकं श्रीमत्संस्मरेन्निजमन्दिररम्॥३०॥
मन्दिर परितः पंक्तिः सौधानां कृष्णायोषिताम्।
एकैकं मन्दिरं देवि योजनार्द्धप्रमाणतः॥३१॥
सार्द्धद्वियोजनोत्सेधं निजमन्दिरमद्भुतम्।
प्राकारैर्दशभिर्गुप्तं महोद्यानविराजितैः॥३२॥
परिवृत्तीः स्मरेत्तस्य षट्सहस्राणि योजनाः।
द्विसहस्रमिदं सूत्रं दक्षिणोत्तरगं भवेत्॥३३॥
पूर्वपश्चिमगं सूत्रं तथैव परिमाणतः।
महापद्मवनं ध्यायेत् परितो निजमन्दिरम्॥३४॥
प्रकाशानन्दभूम्योस्तु सन्धौ नीलाद्रिरुत्तमः।
योजनायुतमानेन तस्योच्छ्रायं स्मरेत्प्रिये॥३५॥
शृङ्गाणि तस्य देवेशि त्रीणि सन्त्यद्भुतानि च।
चन्द्रगौरं चन्द्रचूडं महाचन्द्रं ततः परम्॥३६॥
चन्द्रगौरे महाशृङ्गे चन्द्रनाम्ना महासरः।
शतयोजनविस्तारं चन्द्रसोपानमण्डितं॥३७॥
गुञ्जद्भ्रमरझङ्कारमुखरीकृतदिङ्मुखं।
प्रफुल्लपङ्कजवनामोदमोहितषट्पदम्॥३८॥

Nijanand App

24. वायव्य में ज्ञान भूमि वाले खण्ड का स्मरण करे। उत्तर में गोमेद की भूमि जिसमें सुन्दर प्रकाश की भूमि शोभित है, का चिन्तन करे।

25. हे प्रिये! ईशान दिशा में महामौरिकि खण्ड है जिसमें रति की भूमिका शोभित हो रही है। उसका निरन्तर स्मरण करें।

26. हे गिरिनन्दिनी! चौदह लाख योजनों की सात भूमियां मैंने तुमसे कहा है, उसको सुनो।

27. उतनी ही चिदानन्दमयी भूमि है। बाइस लाख योजन आनन्द भूमि है।

28. वहां कर्णिका के आकार का नित्य वृन्दावन शोभित हो रहा है। प्रकाश से अति उज्ज्वल ब्रह्मपुर का स्मरण करे।

29. हे देवि! उसके मध्य में एक साथ उदय होने वाले अनेक कोटि चन्द्र सूर्य के समान प्रकाशित एक मणि से बना हुआ,

30. कहीं नीला, कहीं लाल, कहीं काला, कहीं सफेद दस भूमि वाले निज मन्दिर का स्मरण करे।

31. मन्दिर के चारों ओर कृष्ण की स्त्रियों के महलों की पंक्ति है। एक-एक महल आधे-आधे योजन प्रमाण का है।

32. ढाई योजन ऊंचे दस परकोटों से गुप्त बड़े उद्यानों से शोभित अद्‌भुत निज मन्दिर का स्मरण करे।

33. छः हजार योजन घेरे का स्मरण करे। दो हजार योजन दक्षिण उत्तर विस्तार वाला वह है।

34. पूर्व-पश्चिम दो हजार योजन निज मन्दिर के चारों ओर महापद्म वन का ध्यान करे।

35. प्रकाश और आनन्द भूमि के सन्धि में उत्तम नीलगिरि है, जिसकी ऊंचाई अयुत योजन है, का स्मरण करे।

36. हे देवि! उसके तीन शिखर अत्यन्त अद्‌भुत हैं, चन्द्रगौर, चन्द्रचूड़, महाचन्द्र।

37. चन्द्रगौर महाशृंग में चन्द्र नाम का एक महान् सरोवर है जो सौ योजन विस्तृत चन्द्रकान्त मणि के सोपानों से मण्डित है।

38. भ्रमरों के झंकार से दिशाएं व्याप्त हो रही हैं। खिले हुए कमलों के वन की सुगन्धि से भ्रमर मोहित हो रहे हैं।

Nijanand App

मरालीयूथमध्यस्थमरालगणमण्डितम्।
कूजितैश्चित्रपक्षाणां पक्षिणां सुमनोहरम्॥३९॥
तटस्थोद्यानशोभाभिर्नयनानन्दमन्दिरम्।
आनन्दसुधयापूर्णं संस्मरेत्स्मृतिधारया॥४०॥
कदाचित् क्रीडनं तत्र भगवान् पुरुषोत्तमः।
सखीसहस्रसेव्याभिः स्वामिन्या सह केवलम्॥४१॥
चन्द्रचूडे पञ्च ह्रदाः परमानन्दसुधाभृताः।
रत्नसोपानसाहस्रैः काञ्चनैः कृतकौतुकाः॥४२॥
सुवर्णपङ्कजवनैर्वायुनान्दोलितैर्मुहुः।
सुवासयद्भिः सततं दिगन्तात्परिशोभिताः॥४३॥
क्रीडते तत्र भगवान् कदाचिद्योषितां गणैः।
उद्यानराजं देवेशि महाचन्द्रेपि संस्मरेत्॥४४॥
पादपाः पत्रविस्तीर्णाः स्वर्णशाखासुपेशलाः।
नीलवैदूर्यपत्राढ्यामुक्तास्तबकमालिनः॥४५॥
कदम्बाशोकपुन्नागमालतीबकुलार्ज्जुनैः।
बिल्वतालैस्तमालैश्च हितालैः पारिजातकैः॥४६॥
केतकैश्चम्पकैश्चूतैः कल्पवृक्षैः सुशोभितम्।
तन्मध्ये संस्मरेद्देवि मणिमण्डपमायतम्।
शतंस्तंम्भैः स्वर्णमयैः मुक्तारत्नचितान्तरैः॥४७॥
शोभमानं चतुर्द्वारं सप्तभौमं निरामयम्।
प्रतिद्वारं कुट्टिमाभ्यां प्रतिकुट्टिमदीर्घिकम्॥४८॥
दीर्घिकासु लसत्स्वर्णपद्मव्यग्रषडाङ्घ्रिकम्।
कुट्टिमोपरि विस्फूर्जद्रत्नस्तम्भमनोहरम्॥४९॥
प्रवालनीलमाणिक्यमुक्तावैदूर्यगारुडैः।
कृतस्वस्तिकविस्फूर्यन्मध्यदेशश्रियोज्वलम्॥५०॥
शुकैः पारावतैर्हंसैः कूजद्भिः परिशोभितम्।
स्वर्णवैदूर्यमुक्ताभिर्विलसत्तोरणोज्वलम्॥५१॥
चतुर्दिक्षु महासौधराजिराजितमद्भुतम्।
कदाचिदत्र भगवान् रथमास्थाय सुप्रभम्॥५२॥
सखीसहस्रैरायाति क्रीडनार्थं महेश्वरि।
कृत्वा नानाविधां क्रीडामुद्याने सुमनोहरे॥५३॥

Nijanand App

39. हंसिनियों के यूथ के मध्य में स्थित हंसगणों से मण्डित विचित्र पंखों वाले पक्षियों के शब्द से मनोहर

40. तट में स्थित उद्यान की शोभा से नेत्रों को आनन्द देने वाला मन्दिर जो आनन्द सुधा से परिपूर्ण है उसका स्मृति की धारा में स्मरण करे।

41. कभी वहां सहस्रों सखियों से सेवित स्वामिनी के साथ भगवान पुरुषोत्तम की क्रीड़ा का स्मरण करे।

42. चन्द्रचूड़ में परमानन्द सुधा से भरे हुए सहस्रों रत्न सोपानों एवं स्वर्ण सोपानों से युक्त आश्चर्यजनक पांच तालाब हैं।

43. वायु से बार-बार कम्पित निरन्तर सुगन्ध के फैलाने वाले स्वर्णिम कमल के वनों से जहां के दिगन्त शोभित हो रहे हैं।

44. वहां पर भगवान स्त्रीगणों के साथ कभी क्रीड़ा करते हैं। महाचन्द्र में भी उद्यानराज का स्मरण करें।

45. सुवर्ण की शाखाओं वाले, नील और वैदूर्य के पत्तों से विस्तृत तथा मुक्ता के गुच्छों वाले वृक्ष हैं।

46. कदम्ब, अशोक, केशर, मालती, बकुल, अर्जुन, बिल्व, ताड़, तमाल, हिताल, पारिजात,

47. केतकी, चम्पा, आम्र, कल्पवृक्षों से सुशोभित है। उसके मध्य में एक विस्तृत मणि मण्डप का स्मरण करे जिसें मुक्ता आदि रत्न जड़े हुए हैं ऐसे सौ खम्भों से

48. शोभायमान, चार द्वार, सात भूमियां, प्रति द्वार दो-दो कुट्टिम और प्रति कुट्टिम में बावली,

49. बावलियों में स्वर्ण कमल में व्यग्र छ पादों वाला कुट्टिम के ऊपर चमकते हुए रत्नों के स्तम्भ से मनोहर

50. प्रवाल, नील, माणिक्य, मुक्ता, वैदूर्य तथा गारूड़ि मणियों से बनाए गए स्वास्तिक के मध्य देश से सुशोभित

51. शुक, पारावत (कबूतर), हंस के शब्दों से गुंजायमान स्वर्ण वैदूर्य, मुक्ता के द्वारों से उज्ज्वल,

52. चारों दिशाओं में महान् महलों की पंक्ति शोभित है। यहां कभी भगवान सुन्दर प्रभा वाले रथ पर बैठकर

53. सहस्रों सखियों के साथ क्रीड़ा के लिए आते हैं। सुन्दर उद्यान में नाना प्रकार की क्रीड़ाएं करके

Nijanand App

मण्डपं प्रविशेत्सद्य: सखीभि: सह संवृत:।
आराधन्ते तत: सर्वास्तासां या: परिचारिका:।।५४।।
दिव्यसौधानि मणिभिर्दीप्यमानानि सर्वत:।
वीणामृदङ्गतन्त्रीभिर्गायन्ति यश उत्सुका:।।५५।।
तद्गीतानन्दसन्दोहनिमग्नेन्द्रियवृत्तय:।
उद्यानराजहरिणा: हरिण्य: शुकसारसा:।।५६।।
पिका: पारावताश्चैव मयूरा मधुभाषिण:।
स्ववाचं मुद्रयन्त्येव यथा चित्रगता: शिवे।।५७।।
सुधारसादप्यधिकैर्वाक्यैर्हास्यरसान्वितै:।
हासयन्ति हसन्त्यश्च प्रियं च स्वामिनीमपि।।५८।।
कदाचित्प्रार्थयामासु: स्वामिनीपक्षमाश्रिता:।
नेत्रबन्धमयीं लीलां रन्तुं कृष्णं सहस्रश:।।५९।।
पणबन्धं ततश्चक्रुर्नेत्रबन्धे कृते सति।
यदि नाम न जानासि तदा प्रिय पराजित:।।६०।।
स्ववस्त्राभरणान्यस्यै देहि चित्तमखेदयन्।
सा प्रिया प्रिय ते रूपं करिष्यति मनोहरम्।।६१।।
त्वत्सिंहासनमारूढा कृष्णोहमिति वादिनी।
भवन्तमाज्ञापयतु नृत्यतां सखि मत्पुर:।।६२।।
त्वया नृत्यं तदा कार्यमवश्यमिव चाङ्गना।
त्वयि नृत्यति नि:शङ्के गास्यामो वयमेव हि।।६३।।
यदि वा नाम जानासि प्रियापि कुरुतां तथा।
इति ता: पणमाश्राव्य परिवव्रु: प्रियं प्रिया:।।६४।।
तदेन्दिरा सखी काचित् पश्चादागत्य सत्वरम्।
बबन्ध नेत्रयुगलं करपद्मयुगेन च।।६५।।
नेत्रे गृहीत: कृष्ण: प्राह त्वमसि सुन्दरी।
तदोन्मुच्याक्षियुगलं स्मिता प्राहेन्दिरा सखी।।६६।।
किं जल्पसि मुधा नाम प्राणनाथ पराजित:।
न चाहं सुन्दरी नाम्ना प्रिया तेस्मीन्दिराभिधा।।६७।।
तस्माल्लज्जां परित्यज्य पणबन्धं विचारय।

श्रीकृष्ण उवाच

नाहं पराजित: साक्षादज्ञातेति न मुह्यतां।।६८।।

Nijanand App

54. सखियों के साथ मण्डप में प्रवेश करते हैं। वे सभी और उनकी जो परिचारिकाएं हैं, आराधना करती हैं।

55. मणियों से जगमगाते चारों ओर दिव्य महल हैं जिनमें वीणा, मृदंग, तन्त्री आदि के द्वारा यशगान करती हैं।

56. उस गीत के आनन्द समी में निमग्न इन्द्रिय वृत्ति वाले उद्यान की हरिण, हरिणियां, शुक, सारस,

57. पिक (कोयल), कबूतर, मधुर भाषी मयूर मानो चित्रलिखित अपनी वाणी मुखरित कर रहे हैं।

58. अमृत रस से भी अधिक मधुर हास्य रस से युक्त वाक्यों द्वारा हंसती हुई और प्रिय और स्वामिनी को भी हंसाती हैं।

59. कभी तो स्वामिनी की ओर से सहस्रों परिचारिकाएं कृष्ण से नेत्र बांधकर लीला करने की प्रार्थना करती हैं।

60. और जब आंखें बन्द होती हैं तो दांव लगाती हैं कि यदि नाम न बता सके तो प्रिय पराजित हो गया।

61. अपने मन को बिना खिन्न किए इसको अपने सभी वस्त्राभूषण दे दो। वह प्रिया तुम्हारे लिए मनोहर रूप धारण करेगी।

62. 'मैं ही कृष्ण हूं', यह कहती हुई तुम्हारे सिंहासन पर बैठी हुई आपको आदेश दे कि हमारे सामने नाचो।

63. स्त्री की तरह तुम्हें अवश्य नृत्य करना चाहिए। आपके निशंक नाचते हुए हम लोग गाएंगी।

64. यदि नाम जान जाएं तो प्रिया भी वैसा ही करे। इस प्रकार का दांव लगाकर प्रियाओं ने प्रिय से कहा।

65. तब कोई इन्दिरा नाम की सखी ने पीछे से आकर दोनों हाथों से दोनों नेत्रों को बन्द कर दिया।

66. नेत्र बन्द कृष्ण ने कहा, सुन्दरी! तुम हो। आंखें खोलकर मुस्कराते हुए इन्दिरा (इन्द्रावती) सखी ने कहा

67. कि झूठ क्यों बोलते हो, प्राणनाथ! तुम हार गए। मेरा नाम सुन्दरी नहीं है। मैं तुम्हारी प्रिया इन्दिरा हूं।

68. इसलिए लज्जा छोड़ दांव में क्या कहा था, यह सोचो।

श्रीकृष्ण बोले—

मैं पराजित नहीं हूं। मैं तुम्हें साक्षात् नहीं जान पाया, इस भ्रम में न रहो।

Nijanand App

त्वयीन्दिरे सुन्दरीति भ्रमः सार्वदिको मम।
सुन्दर्यां मत्प्रियायां च स्फुरत्येवेन्दिराभ्रमः॥६९॥
नाण्वप्यन्तरं वापि नामतो रूपतोपि च।
ज्ञात्वापि त्वामिन्दिरेति क्षणादेव भ्रमद्धिया।
जल्पितं सुन्दरीत्येतन्मयोक्तमवधार्यतां॥७०॥
प्रियस्य वचनं श्रुत्वा पुनः प्राहेन्दिरा वचः।

इन्दिरोवाच

अहो नाथ महत्येषा वञ्चना चातुरी तव॥७१॥
ज्ञात्वापि मामिन्दिरेति सुन्दरीति मुखोद्गतम्।
कथं श्रद्दधां हे नाथ वेदार्थमिव नास्तिकाः॥७२॥
स्त्रीषु हास्येषु धूर्त्तेषु प्राणबाधाभयेषु च।
संबदत्यनृता वाणीत्येतज्जानाति भो भवान्॥७३॥
मुखोद्गते हि विश्वासो नास्माकं हृदयस्थिते।
नास्तिकस्येव प्रत्यक्षे प्रमाणे न तु शाब्दिके॥७४॥
तस्मात्त्वं स्वीयवचनं यदि सत्येन युञ्जसि।
देहि लज्जां विहायाशु वासांस्याभरणानि च॥७५॥
नो चेत्स्वतन्त्रः किं कुर्मः प्रभुस्त्वमस्वतन्त्रकाः।
पणलोपभयाद्भूयः का प्रतीतिस्तवेति हि॥७६॥
तस्मादर्थमनर्थं च स्वकीयहृदये पुनः।
विनिश्चित्य यथा न्यायं यदिच्छसि तथा कुरु॥७७॥

श्रुत्वेन्दिरावाक्यमतिप्रगल्भं चातुर्ययुक्तं च सखीसमाजे।
स्मित्वा स्वभूषावसनानि सद्यः स्वयं समुत्तार्य ददावथास्यै॥७८॥

महानीलं ददौ वासः कटिवस्त्रं सुवर्णभम्।
उष्णीषं चैव कौसुम्भं मुक्ताभूषितकुण्डले॥७९॥
स्फुरत्कोटीन्दुविलसदुष्णीषमणिमुत्तम्।
दिव्यमुक्ताफलानद्धग्रीवाभरणमुज्वलम्॥८०॥
नवरत्नमयीमालां विचित्रकिरणोज्वलाम्।
किर्मीरितमिवात्युच्चैः प्रकुर्वन्तीं हृदाम्बुजम्॥८१॥
माणिक्यमुक्तामणिभिर्जटितं वलयद्वयं।
नखसुक्तिं महारम्यां स्वर्णपद्मविभूषिताम्॥८२॥
केयूरयुगलं चारु चिन्तारत्नचितान्तरम्।
मध्योल्लसत्पद्मरागं चतुष्कं चातिसुन्दरम्॥८३॥

Nijanand App

69. हे इन्दिरे! तुम्हारे में सुन्दरी का सभी प्रकार का भ्रम है। अपनी प्रिया सुन्दरी में तो इन्दिरा भ्रम प्रकट ही है।

70. नाम से, रूप से अणु मात्र भी अन्तर नहीं है। तुमको इन्दिरा जैसा जानकर भी क्षण भर में बुद्धि के भ्रम से मैंने सुन्दरी कहा। तुम मेरे इस कथन पर भी विचार करो।

71. प्रिय के वचनों को सुनकर पुनः इन्दिरा ने कहा कि हे नाथ! आपकी धोखा देने की चतुरता बहुत बड़ी है।

72. मुझको इन्दिरा जैसा जानकर भी मुख से सुन्दरी ऐसा कहा। जिस प्रकार एक नास्तिक वेद के अर्थ में श्रद्धा नहीं करता वैसे ही मैं आपके वाक्यों में श्रद्धा कैसे करूं?

73. यह भी आप जानते हैं कि स्त्रियों में, हास्य में, धूर्तों में, प्राणबाधा के भय में झूठ बोलना चाहिए।

74. हमारा विश्वास मुख से कही बात पर स्थित है, हृदय में स्थित बात पर नहीं। जैसे नास्तिक का विश्वास शब्द प्रमाण में न होकर प्रत्यक्ष प्रमाण में ही होता है।

75. इसलिए आप यदि यह समझते हैं कि हमारा कहा हुआ सत्य है तो लज्जा छोड़ वस्त्राभूषण मुझे दे दो।

76. नहीं तो आप तो स्वतन्त्र हैं। हम लोग क्या कर सकती हैं। आप प्रभु हैं, हम पराधीन हैं और अपने दांव के लोप के भय से तुम्हारा क्या विश्वास?

77. इसलिए अर्थ और अनर्थ का एक बार विचारकर न्याय के अनुसार जो इच्छा हो वह करो।

78. चतुरता से युक्त अति प्रगल्भ इन्दिरा के वाक्यों को सुनकर सखियों के मध्य में मुस्कराते हुए अपने वस्त्राभूषण उतार कर इन्दिरा को दे दिए।

79. महानील वस्त्र, सुनहरा कटि वस्त्र और कुसुम रंग की पगड़ी, मोती जड़े कुण्डल,

80. करोड़ों चन्द्रमा के समान शोभित पगड़ी में लगी मणि, उज्ज्वल मुक्ता जटित कण्ठहार,

81. विभिन्न रत्नों से उज्ज्वल नवरत्नमयी माला, जो हृदय कमल को रंगबिरंगी बना रही थी,

82. माणिक्य मुक्ता मणि जटित वलय द्वय, स्पर्श कमल से शोभित नखसुक्ति,

83. चिन्तामणि जटित दोनों बाजूबन्ध जिसके मध्य में चार पद्मराग जड़े थें,

Nijanand App

उन्मत्तानङ्गमातङ्गगलघण्टाविडम्बिनीम्।
नीलहीरादिमणिभिः स्फुरद्भिः परितो वृताम्।
क्षुद्रघण्टाक्वणत्कारैः स्वर्णकाञ्चीमनूपमाम्॥८४॥
ऊर्मिकाः प्रस्फुरद्रत्नप्रभापटलमध्यगाः।
अङ्गुलीछद्मलावण्यधाराशङ्कां वितन्वतीः॥८५॥
पादयोः कटके दिव्ये सुवृत्ते मणिभूषिते।
ददौ महामनाः कृष्णो यदन्यद्भूषणादिकम्॥८६॥
ततश्च रचयामास वेषं तस्या मनोहरम्।
उष्णीषं मूर्ध्नि रचितं कर्णयोः कुण्डलद्वयम्॥८७॥
कण्ठे मालां दधौ रम्यां नवरत्नविराजिताम्।
वलये कल्पयामास मणिबन्धद्वये तथा॥८८॥
केयूरयुगलं बाह्वोश्चतुष्कं हृदयाम्बुजे।
कट्यां प्रकल्पयामास स्वर्णकाञ्चीं मनोहराम्॥८९॥
अङ्गुलीयान्यङ्गुलिषु तदङ्गे कल्पयद्धरिः।
ददौ वेत्रं महादिव्यं खचितं मणिमौक्तिकैः॥९०॥
रत्नसिंहासने स्थाप्य तां सखीमिन्दिराभिधाम्।
ननर्त कृष्णो रुचिरान् भावानाविश्चकार ह॥९१॥
वनितारूपमास्थाय मोहयन्निव मायया।
प्रिये नृत्यति सोत्साहं जगुः काश्चन योषितः॥९२॥
मृदङ्गमहनत् माध्वी यौवनोद्वेलगर्विता।
वीणामासावती विद्युल्लता तन्त्रीमवादयत्॥९३॥
लावण्यलहरी साक्षाद्वंशीवादनतत्परा।
सुप्रभा निस्तुला चोभे अभूतां तालधारिके॥९४॥
काश्चिन्मुखध्वनिं चक्रुस्तालीवादनतत्पराः।
काश्चिज्जयजयेत्युच्चैरूचुर्हास्यरसाकुलाः॥९५॥
सुमुखीललिताद्यास्तु साधु साध्विति चाब्रुवन्।
अन्याः कुतूहलामग्नाः कृष्णस्य मुखपङ्कजम्॥९६॥
पपुर्लावण्यमधुरं भ्रमन्नयनषट्पदम्।
ततो लीलावसाने तु कृष्णरूपधरा सखी।
सिंहासनात्समुत्थाय रचिताञ्जलिराययौ॥९७॥
पपात पादयोर्भर्त्तुः प्रिय उत्थाप्य तां सखीम्।
आलिलिङ्ग चिरं प्रेम्णा चुचुम्बाननपङ्कजम्॥९८॥

Nijanand App

84. मतवाले कामदेव के हाथी के गले के घण्टे का अनुसरण करने वाली नीलम, हीरा, आदि मणियों से जटित छोटी-छोटी घण्टियों से युक्त सोने की करधनी,

85. फैलती हुई रत्नों की प्रभा के मध्य में अंगुलियों के बहाने सुन्दरता के धारा की शंका का विस्तार करती हुई उर्मियों को

86. पैरों के मणिभूषित सुन्दर कटकों को महामना कृष्ण ने और आभूषणों सहित दे दिया।

87. उसका सुन्दर वेश बनाया। मस्तक में पगड़ी, कानों में दोनों कुण्डल

88. कण्ठ में नवरत्नों की माला, हाथ में कंगन मणिबंध,

89. बाहुओं में दोनों बाजूबंध हृदय कमल में चतुष्क, कटि में सुन्दर स्वर्ण कांची पहनाई।

90. हरि ने उसके शरीर में तथा उंगलियों में अंगूठी आदि पहना दी। मणिमुक्ता जटित दिव्य बेंत दे दिया।

91. उस इन्दिरा सखी को सिंहासन पर बैठाकर कृष्ण भगवान खूब नाचे और रुचिर भाव प्रकट किए।

92. अपनी माया से मोहित करते हुए की तरह स्त्री रूप धारण कर प्रिय के नृत्य करते समय कुछ स्त्रियों ने गान किया।

93. माध्वी ने मृदंग बजाया, आशावती ने वीणा, विद्युल्लता ने तन्त्री बजाई।

94. लावण्यलहरी ने वंशी, सुप्रभा निस्तुला ने करताल बजाया।

95. कुछ ने मुखध्वनि की और करताल बजाया, कुछ ने हास्यरस से युक्त होकर जय हो, जय हो, कहा।

96. सुमुखी, ललिता आदि ने बहुत अच्छा, बहुत अच्छा कहा। अन्य कौतूहल में मग्न होकर कृष्ण के मुख कमल को

97. जिसमें चंचल नेत्र रूपी भंवरे हैं, को देखा। उसके बाद लीला के अन्त में कृष्ण रूप धारण करने वाली सखी हाथ जोड़कर आई।

98. पति के चरणों में गिर पड़ी। प्रिय ने सखी को उठाकर आलिंगन किया, मुख कमल का चुम्बन किया।

99. पुनः उन्हीं वस्त्राभूषणों से कृष्ण को सुशोभित किया। प्रिय के साथ रथ पर बैठकर सभी निज मन्दिर गईं।

Nijanand App

कृष्णं विभूषयामास पुनस्तैर्भूषणाम्बरैः।
रथारूढा ययुः सर्वाः प्रियेण निजमन्दिरम्।।९९।।
चतुःषष्टिमहास्तम्भराजिराजितभूमिकां।
प्राप्य सिंहासनगतं परिवव्रुः प्रियं प्रियाः।।१००।।
इति श्रीमाहेश्वरतन्त्रे शिवोमासंवादे सप्तत्रिंशं पटलम्।।३७।।

अष्टत्रिंशं पटलम्

पार्वत्युवाच

देवेश परमेशान सुरासुरनमस्कृत।
कथेयं सुमहत्पुण्या सुधास्वादीयसंस्तुता।।१।।
तथापि देवदेवेश त्वद्वाक्पीयूषपानजा।
तृप्तिर्न जायते सम्यक् शुश्रूषाकुलचेतसः।।२।।
कथाश्रवणजानन्दो न मुक्तावपि दृश्यते।
कस्तं विहाय मोहेन निजायुः प्रविलापयेत्।।३।।
ते मन्दभाग्याः कुधियो दुराचारपरा हि ते।
यैर्न लब्धा क्षणमपि कथा कर्णसुधा सती।।४।।
सार्द्धत्रिकोटितीर्थानि ऋषयो मन्त्रदेवताः।
यत्र कृष्णकथावादस्तत्रैवायान्तिनिश्चितम्।।५।।
तस्मादनुग्रहीतास्मि भवता करुणात्मना।
कथां कथयता रम्यां कृष्णस्यानन्दरूपिणः।।६।।
पुनः कथय देवेश कथामानन्दकारिणीम्।
चतुःषष्टिमहास्तंभराजिराजितभूमिकाम्।।७।।
अधिष्ठाय प्रियेणैताः संगताश्च किमाचरन्।
तद्वदस्वमहेशान यदि तेनुग्रहो मयि।।८।।

शिव उवाच

शृणु पार्वति वक्ष्यामि यत्पृष्टोहं सुलोचने।
यस्य श्रवणमात्रेण जायते रतिरुत्तमा।।९।।
नीलाद्रिशिखरादेत्य निजं धाम परात्परः।
रत्नसिंहासने तस्थौ नवरत्नविभूषिते।।१०।।
सिंहासनस्य परितो मण्डलाकारसंस्थिताः।
प्रफुल्लनयनाम्भोजाः पश्यन्ति स्म प्रियं मुदा।।११।।

Nijanand App

100. चौंसठ महास्तम्भों की पंक्ति से शोभित भूमि वाले सिंहासन पर स्थित पति को पाकर प्रियाओं ने प्रिय से कहा।

माहेश्वरतन्त्र के शिव-उमा संवाद का सैतीसवां अध्याय समाप्त हुआ।

अड़तीसवां अध्याय

पार्वती ने कहा—

1. हे देवेश! परमेश्वर! यह कथा तो अत्यन्त पुण्य एवं अमृत के समान स्वादिष्ट है।

2. उसमें भी आपकी वाणी रूपी अमृत के पान से तृप्ति नहीं हो रही है क्योंकि मेरा मन सुश्रूषा से व्याकुल है।

3. कथा सुनने का आनन्द मुक्ति में भी नहीं दिखाई पड़ता। उस आनन्द को छोड़कर अपनी आयु मोहवश कौन समाप्त कर दे।

4. वह अभागे, कुबुद्धि, दुराचारी हैं जिन्होंने क्षण भर भी कानों के लिए अमृत रूपी कथा को प्राप्त नहीं किया है।

5. साढ़े तीन करोड़ तीर्थ, ऋषि, मन्त्र, देवता जहां कृष्ण-कथा होती है वहां निश्चित रूप से आते हैं।

6. आनन्द रूपी कृष्ण की कथा को कहते हुए आपके द्वारा मैं अनुगृहीत कर दी गई।

7. हे देवेश! आनन्दकारिणी कथा को फिर कहिए। चौंसठ महास्तम्भों से शोभित भूमि में

8. स्थित होकर प्रिय के साथ इन सखियों ने क्या किया? यह यदि मुझ पर कृपा हो तो बताने का कष्ट करें।

शिव ने कहा—

9. हे सुलोचन पार्वती! जो तुमने पूछा मैं कहूंगा, सुनो। जिसे श्रवण मात्र से परमात्मा में उत्तम रति उत्पन्न होती है।

10. नीलगिरि के शिखर से परात्पर ब्रह्म निज धाम आकर नव रत्न विभूषित सिंहासन पर बैठ गए।

11. सिंहासन के चारों ओर मण्डल आकार में खिले हुए नेत्र रूप कमलों वाली प्रियाएं प्रिय को प्रसन्न होकर देखने लगीं।

Nijanand App

पूर्णानन्दं पूर्णकामं तत्र काश्चन योषितः।
राजोपचारविधिना ह्युपतस्थुर्मुदान्विताः॥१२॥
शरच्चन्द्रप्रभागौरं मुक्तामणिविभूषितम्।
रत्नदण्डमनोहारि मिहिला छत्रमादधौ॥१३॥
माणिक्यखचितस्वर्णदण्डचामरचालनैः।
उपतस्थौ महाभागा चन्द्रलेखा मनस्विनी॥१४॥
सुवर्णसूत्रविद्योतच्चन्द्रकार्पितमौक्तिकम्।
मयूरव्यंजनं धृत्वा करे चित्रा परामृशत्॥१५॥
हिमांशुमण्डलप्रख्यं दर्पणं स्वर्णभूषितम्।
रत्नचित्रं करे धृत्वा तस्थावानन्दमञ्जरी॥१६॥
सुगन्धद्रव्यसम्भिन्नास्ताम्बूलीदलवीटिकाः।
रत्नपात्रे समादाय तस्थौ मदनमेखला॥१७॥
शतयोजनसंसर्पि दिव्यचन्दनपूरितम्।
रत्नपात्रं करे धृत्वा तस्थौ भुवनमालिनी॥१८॥
मुक्ताजटितसौवर्णभृङ्गारजलपूरितम्।
माणिक्यनालमादाय रत्नरेखा पुरःस्थिता॥१९॥
शरच्चन्द्रांशुधवलं दशावलितमौक्तिकम्।
हस्तवासः करे धृत्वा पुरस्तस्थौ विहारिणी॥२०॥
स्वर्णपात्रे स्थितं दिव्यं नानास्वादुरसान्वितम्।
आनन्दभोगमादाय माधुरी दक्षिणे स्थिता॥२१॥
लीलावचांसि यानीह प्रवक्ति पुरुषोत्तमः।
तानि श्लाघयितुं तस्थौ सुन्दरीशानकोणगा॥२२॥
माध्वी मृदङ्गघोषेण वीणायाशावती सती।
विद्युल्लता तथा तन्त्रीरवेणातिरसच्युता॥२३॥
वंशीवाद्येन लावण्यलहरी ललिताकृतिः।
रागरङ्गा विनोदार्थं प्रयुक्तपरिभाषया॥२४॥
रागविद्यासु कुशला रागिणी रागविद्यया।
उपतस्थुर्महाभागाः कृष्णं परमपूरुषम्॥२५॥
ततो नानाविधां चक्रुर्लीलां हास्यरसाधिकाम्।
तदन्ते प्रियमाभाष्य पप्रच्छुस्ताः समुत्सुकाः॥२६॥

Nijanand App

12. यहां कुछ स्त्रियां पूर्णानन्द पूर्णकाम की प्रसन्न होकर राजोपचार विधि से पूजा करने लगीं।

13. कोई महिला शरत्कालीन चन्द्रमा की चांदनी के समान श्वेत मुक्तामणियों से शोभित मनोहर रत्नदण्ड वाले छत्र को लेकर खड़ी हो गई।

14. महामाया-मनस्विनी चन्द्रलेखा माणिक्य रचित रत्ण दण्ड वाले चँबर को डुलाने लगीं।

15. चित्रा सुवर्ण सूत्र के समान चमकते हुए चन्द्रकों में मोती लगे मोर का पंख हाथ में लेकर डुलाने लगीं।

16. आनन्द मंजरी चन्द्र मण्डल के समान स्वर्णभूषित दर्पण हाथ में लेकर खड़ी हो गई।

17. मदन मेखला सुगन्धित द्रव्य से युक्त पान की पिटारी रत्न पात्र में रखकर खड़ी हो गई।

18. भुवनमालिनी सौ योजन तक फैलने वाले दिव्य चन्दन पूर्ण रत्न पात्र हाथ में लेकर खड़ी हो गई।

19. रत्नरेखा मोती से जड़े स्वर्ण की जल से भरी सुराही जिसकी नाल माणिक का है, को लेकर सामने खड़ी हो गई।

20. विहारिणी शरत् चन्द्रमा के समान श्वेत तथा किनारे पर जिसके मोती जड़े हैं, रुमाल लेकर खड़ी हुई।

21. माधुरी स्वर्ण पात्र में नाना स्वाद रस वाले दिव्य आनन्द भोग को लेकर दक्षिण की ओर खड़ी हो गई।

22. सुन्दरी ईशान कोण में पुरुषोत्तम ने जो-जो लीला वचन कहे, उनकी प्रशंसा करने खड़ी हो गई।

23. माध्वी मृदंग बजाती हुई, आशावती वीणा और विद्युल्लता तन्त्री बजाती हुई खड़ी हो गई।

24. सुन्दर आकार वाली लावण्यलहरी वंशी वाद्य विनोद के लिए बजाने लगी।

25. राग विद्याओं में कुशल रागिणी राग विद्या द्वारा परमपुरुष कृष्ण की सेवा करने लगी।

26. इसके बाद हास्य रस प्रधान अनेक प्रकार की लीलाएं कीं। उन लीलाओं के अन्त में उत्सुक होकर सखियों ने पूछा।

Nijanand App

सख्य ऊचुः

भो नाथ पुरुषश्रेष्ठ प्रियस्त्वं च वयं प्रियाः।
प्रियत्वभाजां या प्रीतिर्न चोपाधिकृता भवेत्॥२७॥
यद्युपाधिकृता प्रीतिस्तदा रूपं न सिद्ध्यति।
तस्मात्प्रेमवतीनां नो यथावद्वक्तुमर्हसि॥२८॥
अवाग्विषयमत्युग्रमहैतुकमनामयम्।
त्वय्येवास्माकमतुलं प्रेम विद्योतते प्रिय॥२९॥
शब्दोपाधौ कथं तच्च धर्तुं शक्ता वयं स्त्रियः।
तस्मात्तत्प्रकटीकर्तुं न समर्थाः कदाचन॥३०॥
स्वयंवेद्यमिदं भाति कथं वाचा प्रचक्ष्महे।
अस्मासु यद्भवेत्प्रेम त्वदीयं पुरुषोत्तम॥३१॥
अधिकं वा समं न्यूनं कथं विद्मः प्रिया वयम्।
त्वमेव वाचा तद्ब्रूहि तारतम्यविदो वयं॥३२॥
सखीनामपि सर्वासां स्वस्वप्रेमनिरूपणे।
विवादः शान्तिमाप्नोति त्वत्प्रेमश्रवणेन च॥३३॥
इति श्रुत्वा वचस्तासां परात्मा पुरुषोत्तमः।
न वाग्वृत्तिव्यक्तियोग्यं ज्ञात्वा प्रेमाब्रवीद्वचः॥३४॥

श्रीकृष्ण उवाच

भवतीभिर्यदुक्तं भो तत्तथैव न संशयः।
स्वयंवेद्यमिदं प्रेम न वाचा वक्तुमर्हति॥३५॥
रम्यैर्मनोहरैर्भावैर्लक्षणीयं भवेदपि।
प्रेम रत्यात्मकं सख्यो रतिरेव रसोस्म्यहम्॥३६॥
तस्मान्मदात्मकं प्रेम ज्ञातव्यमिह सर्वथा।
मत्स्वरूपं तु को वेत्ति को वा वक्तुं समीहते॥३७॥
निषेधमुखतो वेदा वर्णयन्ति विशारदाः।
कथमन्ये वराकास्तु कालावच्छेदमूर्त्तयः॥३८॥
मत्स्वरूपमिदं प्रेम न शब्दविषयं भवेत्।
तस्मान्मयापि नो वक्तुं शक्यतेऽन्यस्य का कथा॥३९॥
एवं ताः प्रत्युदीर्याथ दर्पणं स्वपुरःस्थितं।
आदाय ताभ्यः प्रायच्छत्सन्मुखं पुरुषोत्तमः॥४०॥
प्रेमदत्ते प्रियेणास्मिन् दर्पणे योषितां तदा।
पश्यन्तीनां मुखाब्जानि वितर्कः सुमहानभूत्॥४१॥

Nijanand App

27. हे नाथ! पुरुष श्रेष्ठ! सखियां बोलीं, आप प्रिय हैं, हम प्रिया हैं। प्रियत्व धारण करने वालों की प्रीति उपाधिकृत नहीं होती है।

28. यदि उपाधिकृत प्रीति है तो प्रेम सिद्ध नहीं होता। इसलिए हम प्रेमवतियों से यथावत कहने की कृपा करें।

29. हे प्रिय! जो वाणी का विषय नहीं है, अति उग्र है, किसी कारण से नहीं है और स्वस्थ है, ऐसा हमारा अतुल प्रेम आप में ही है।

30. शब्द रूपी उपाधि में उस प्रेम को धारण करने में हम स्त्रियां कैसे समर्थ हैं? अतएव प्रकट करने में भी हम समर्थ नहीं हैं।

31. हे पुरुषोत्तम! यह प्रेम स्वयंवेद्य है। हमारे में आपका जो प्रेम है, वह हम वाणी से कैसे कहें?

32. अधिक, सम या न्यून हम कैसे जानें? आप ही वाणी से कह दीजिए। हम तो उसके तारतम्य को जानने वाली हैं।

33. सभी सखियों का पारस्परिक विवाद अपने-अपने प्रेम के कहने और तुम्हारे प्रेम के कहने से शान्त हो जाएगा।

34. उनके इन वचनों को सुनकर पुरुषोत्तम ने इस प्रेम को वाणी की शक्ति से प्रकट करने के अयोग्य जानकर यह वचन कहा।

श्रीकृष्ण ने कहा—

35. आप लोगों ने जैसा कहा, वह वैसा ही है, इसमें सन्देह नहीं। प्रेम स्वसंवेद्य ही है, वाणी से नहीं कहा जा सकता।

36. सुन्दर, मनोहर भावों से यह लक्षणीय होता है। प्रेम रतिरूप होता है। सखियां रति हैं, मैं रस हूं।

37. इसलिए प्रेम मदात्मक है, यही जानना चाहिए। मेरे स्वरूप को कौन जानता है और कौन कहने का प्रयास करता है?

38. विशारद वेद नेति-नेति कहकर वर्णन करते हैं। काल द्वारा कवलित हो जाने वाले बेचारे कैसे वर्णन कर सकते हैं।

39. हमारा स्वरूप ही यह प्रेम है। वह शब्दों का विषय नहीं हो सकता। इसलिए मैं भी नहीं कह सकता, दूसरे क्या करेंगे?

40. इस प्रकार से उन सखियों से कहकर आपके सम्मुख स्थित दर्पण को पुरुषोत्तम ने उनको दिया।

41. प्रेमपूर्वक प्रिय द्वारा इस दर्पण के दिए जाने पर उस दर्पण में मुख कमल देखती हुई स्त्रियों को महान् वितर्क हुआ।

Nijanand App

प्रेमप्रश्नोत्तरं वक्तुमात्मदर्शः प्रदर्शितः।
किं सूचितमनेनेति कथं विज्ञायते हि तत्॥४२॥
स्वच्छं दर्पणवत् प्रेम स्वकीयं वक्ति किं प्रभुः।
प्रतिबिम्बवदस्माकं बिम्बवत्स्वीयमित्युत:॥४३॥
अथवा दर्पणे यद्वत् यथारूपं च दृश्यते।
तथा भवेत्प्रेमनिभं मदीयमिति सूचितम्॥४४॥
प्रेमभेदनिरासार्थमैक्यसंसूचनाय किम्।
रूपस्य प्रतिरूपस्य यथा तद्वद्भवेन्न किम्॥४५॥
इति संशयमग्नं स्वं सखीवर्गं परात्परः।
भवतीनामयं तर्को महाशयनिरूपकः॥४६॥
न मया विद्यते भेदो युष्माकं च मनागपि।
अहं यूयं यूयमहमित्येषा मे मतिः प्रियाः॥४७॥
अभेदसूचनार्थाय दर्पणो वः पुरोधृतः।
इति प्रहर्षजनकैर्वचोभिः समनन्दयत्॥४८॥

शिव उवाच

एवमानन्दिताः सर्वाः श्रुत्वा वाचः सुशोभनाः।
प्रहर्षवेगविवशाः कृष्णस्य मुखपङ्कजम्॥४९॥
अङ्गुष्ठतर्जनीभ्यां च गृहीत्वा चिबुकस्थलम्।
चुचुम्बुः परया प्रीत्या ससीत्कारं गतत्रपाः॥५०॥
आलिलिङ्गुस्तथा चान्याः प्रशशंसुस्तथापराः।
त्वय्येतदुचितं नाथ यत्प्रियाणां प्रियङ्करः॥५१॥
इत्याहुरपराः सख्यः प्रेमनिर्भिन्नमानसाः।
एतस्मिन्नन्तरे नाम्ना सुन्दरीति वराङ्गना॥५२॥
स्मितपूर्वमुवाचेदं वचनं प्रेमगर्विता।

सुन्दर्युवाच

भवतीनामयं तर्को यद्यपि प्रियसम्मतः॥५३॥
तर्कशेषस्तथाप्यस्ति न प्रियेण प्रकाशितः।
भवतीभिः स्वमत्यापि स च नावगतः परम्॥५४॥
स्वीयोपरि प्रेम कीदृगिति पृष्टे प्रियेण हि।
आत्मदर्शो दर्शितो वस्तत्र वक्ष्ये प्रियाशयम्॥५५॥

Nijanand App

42. प्रेम विषयक प्रश्न का उत्तर देने के लिए अपना दर्पण उन्होंने दिखाया। इससे उन्होंने क्या सूचित किया, यह कैसे जाना जाय?

43. क्या प्रभु यह कहते हैं कि दर्पण की तरह अपना प्रेम स्वच्छ है और उसमें पड़ने वाले प्रतिबिम्ब की तरह हमारा प्रेम है।

44. अथवा दर्पण में जिस तरह जैसा रूप दिखाई पड़ता है, वह मेरे प्रेम के समान है, यह सूचित करते हैं।

45. या प्रेम के भेद का खण्डन करने के लिए और रूप और प्रतिरूप की एकता को सूचित करने का उनके दर्पण देने का उद्देश्य है?

46. इस प्रकार से संशय में पड़ी सखियों से परात्पर ने कहा कि तुम्हारा यह तर्क हमारे मन को निरूपित करने वाला है।

47. तुम्हारा हमारे साथ तनिक भी भेद नहीं है। जो मैं हूं, वह तुम हो। जो तुम हो, वही मैं हूं। ऐसा मेरा विचार है।

48. अभेद सूचना देने के लिए ही हमने यह दर्पण सामने रखा था। ऐसे वचनों द्वारा उनको आनन्दित किया।

शिव बोले—

49. इस प्रकार सुन्दर वाणी सुनकर आनन्दित एवं हर्ष वेग से विवश सभी सखियों ने कृष्ण के

50. चिबुक को अंगूठे और तर्जनी से पकड़ कर सीत्कार करती हुई लज्जारहित होकर चुम्बन किया।

51. दूसरी सखियों ने आलिंगन किया। अन्य ने, हे नाथ! आपके लिए यही उचित था क्योंकि आप प्रियाओं का प्रिय करने वाले हैं, ऐसा कहकर प्रशंसा की।

52. प्रेम मगन मन से सखियों ने इस प्रकार की वाणियां कहीं। इसी समय सुन्दरी नामक वरांगना ने

53. प्रेम गर्वित होकर मुस्कराती हुई यह वचन कहा

सुन्दरी बोली—

54. आप लोगों का यह तर्क यद्यपि प्रिय द्वारा सम्मत है, फिर भी इसमें तर्क बाकी है, जिसको प्रिय ने नहीं कहा है। आप लोगों ने अपनी बुद्धि से समझा भी नहीं।

55. अपने ऊपर उनका प्रेम कैसा है यह पूछने पर प्रिय ने तुम लोगों को दर्पण दिखा दिया। इस विषय में मैं प्रिय का अभिप्राय कहूंगी।

Nijanand App

आत्मादर्शे यथा सम्यक् स्वस्वरूपं निरीक्षते।
तदभावे स्वस्वरूपानुभवो नैव जायते॥५६॥
श्रुतिगीतमिदं तद्वत्स्वरूपं मे रसात्मकम्।
मयानुभूयते सम्यक् प्रियापात्रसमाश्रयम्॥५७॥
अन्यथा मत्स्वरूपस्य न ममानुभवः क्वचित्।
यथा धरागतं सूर्यो रसं पीत्वाभिवर्षति॥५८॥
तथा प्रियारसं मां च पीत्वा तद्भावपूरिताः।
आनन्दयन्ति मामेव घनीभूतरसात्मकम्॥५९॥
दर्पणछद्मना सख्यः अयमर्थोपि सूचितः।
इत्येतत्सुन्दरीवाक्यं श्रुत्वा सख्योतिविस्मिताः॥६०॥
भगवानपि पूर्णात्मा तदुक्तार्थममन्यत।

श्रीकृष्ण उवाच

अन्वर्थं साधु ते नाम सुन्दरीति मम प्रियम्॥६१॥
त्वं मे प्राणाधिका चासि सर्वस्वं मे त्वमेव हि।
त्वदधीनोस्म्यहं साध्वि प्रेमपाशनियन्त्रितः॥६२॥
त्वदुक्तं यन्मयोक्तं तत् त्वद्दृष्टं तन्मयेक्षितम्।
यत्त्वयाङ्गीकृतं साध्वि मयाप्यङ्गीकृतं हि तत्॥६३॥
आवयोरन्तरं नास्ति यः करोति स पातकी।
इत्येवं वचनं श्रुत्वा प्रियास्ताः प्रियभाषितम्॥६४॥
प्रहर्षं परमं जग्मुर्विषण्णां स्वामिनीं विना॥६५॥

इति श्रीमाहेश्वरतन्त्रे उत्तरखण्डे शिवपार्वती संवादे अष्टत्रिंशं पटलम्॥३८॥

अथैकोनचत्वारिंशं पटलम्

पार्वत्युवाच

भगवन् देवदेवेश दिव्यज्ञानविशारद।
अत्याश्चर्यकरी प्रोक्ता कथा ते जीवदुर्लभा॥१॥
प्रादुर्भवन्ति देवेश सर्वेस्मिन् देवदानवाः।
मनुष्यलोकेपि च ते सम्भवन्ति यदृच्छया॥२॥
देवाः क्षमार्जवोपेताः दयादाक्षिण्यसंयुताः।
जितेन्द्रिया जितक्रोधा दम्भमात्सर्यवर्ज्जिताः॥३॥
अलोलुपाः सुशीलाश्च श्रद्धाभक्तिसमन्विताः।
जिज्ञासवो दृढाभ्यासा वेदशास्त्रार्थचिन्तकाः॥४॥

Nijanand App

56. सम्मुख रखे दर्पण में जिस प्रकार अपना स्वरूप ठीक प्रकार से दिखाई पड़ता है, दर्पण के न होने पर हमारा रूप कैसा है, इसका अनुभव नहीं होता।

57. उसी प्रकार से श्रुति में कहा गया कि हमारा स्वरूप रसात्मक है। प्रिया रूपी पात्र में स्थित प्रेम का सम्यक् अनुभव मैं करती हूं।

58. अन्यथा मेरे स्वरूप का मुझे अनुभव कभी नहीं होता। जिस प्रकार से पृथ्वी के रस को पीकर सूर्य वर्षा कर देता है।

59. इसी प्रकार मेरे प्रिया रस को पीकर हमारे भावों से पूर्ण होकर घनीभूत रस रूप मुझको आनन्दित करते हैं।

60. हे सखियो! दर्पण के बहाने से यह अर्थ भी उन्होंने सूचित कर दिया है। सुन्दरी के इन वचनों को सुनकर सखियां अत्यन्त विस्मित हुईं।

61. पूर्णात्मा भगवान ने भी उसके वचनों को सुना।

श्रीकृष्ण बोले—

तुम्हारा सुन्दरी नाम सार्थक है और मुझे प्रिय है।

62. तुम मेरी प्राणाधिका हो और तुम्हीं मेरी सर्वस्व हो। तुम्हारे प्रेमपाश में बंधा मैं तुम्हारे अधीन रहता हूं।

63. जो तुमने कहा वह मैंने कह दिया और जो तुमने देखा वह मैंने देख लिया। तुमने जो अंगीकार किया उसे मैंने भी अंगीकार कर लिया।

64. हमारे तुम्हारे में अन्तर नहीं। जो ऐसा करता है वह पातकी है। प्रिय के द्वारा कहे इन वचनों को सुनकर प्रियाएं अत्यन्त प्रसन्न हुईं, किन्तु स्वामिनी दुखी हुई।

माहेश्वरतन्त्र के उत्तर खण्ड का शिव-पार्वती संवाद का अड़तीसवां अध्याय समाप्त हुआ।

उनतालीसवां अध्याय

पार्वती ने कहा—

1. हे भगवन्! देवदेवेश! आपने अति आश्चर्यजनक कथा सुनाई जो जीवों के लिए दुर्लभ है।

2. हे देवेश, इस सृष्टि में देवता और दानव पैदा होते हैं और अपनी इच्छा से मनुष्य लोक में प्रकट होते हैं।

3. देवता क्षमा, आर्जव, दया, दाक्षिण्य से युक्त जितेन्द्रिय, जितक्रोध, दम्भ मत्सर से रहित,

4. लोभरहित, सुशील, श्रद्धाभक्तियुक्त, जिज्ञासु, दृढ़अभ्यासी, वेदशास्त्र अर्थ चिन्तक होते हैं।

Nijānand App

तेषामपि महादेव तत्त्वमेतत्सुदुर्लभम्।
किं पुनर्दानवांशानां परद्रोहरतात्मनां।।५।।
नास्तिकानां च धूर्तानां कृतघ्नानां दुरात्मनाम्।
वेदार्थदूषकानां च देहादिष्वर्थमानिनाम्।।६।।
बैडालिकानामक्षपादशापविभ्रष्टचेतसां।
सौगतानाञ्च बौद्धानां दिगम्बरमतस्पृशां।।७।।
जैन्यमाध्यामिकानां च चार्वाकाणां दुरात्मनां।
वेदशास्त्रोज्झितानां च न मुक्तिः क्वापि विश्रुता।।८।।
यस्त्वया वासनासर्गस्तृतीयः परिकीर्त्तितः।
यदर्थमुपदेशोऽयं तत्वज्ञानस्य धूर्जटे।।९।।
अहं तु श्रवणादेव कृतार्थास्मीति मे मतिः।
प्राप्तिः सम्बन्धविषया नान्यथा तु कदाचन।।१०।।
तस्मान्मे श्रवणानन्दो रोचतेतितरां प्रभो।
अप्राप्यः श्रवणानन्दः पापग्रस्तैर्दुरात्मभिः।।११।।
तस्मात्संश्रोतुमिच्छामि प्रवक्तुं यदिमन्यसे।
न त्वया सदृशः कश्चित्करुणामृतवारिधिः।।१२।।
यत्त्वयोक्तं महादेव सर्वास्ताः कृष्णयोषितः।
प्रहर्षं परमं जग्मुर्विषण्णां स्वामिनीं विना।।१३।।
तत्र मे संशयो जातो देवदेव जगत्पते।
स्वामिनीखेदमूलं मे कथयस्व यथातथम्।।१४।।

शिव उवाच

शृणु देवि प्रवक्ष्यामि स्वामिनीखेदकारणं।
नेत्रबन्धात्मिका लीला नीलाद्रिशिखरे कृता।।१५।।
तत्रेन्दिरानाम हित्वा सुन्दरीत्यवदत्प्रियः।
तदेन्दिरावदद्वाक्यं सुन्दरी न भवाम्यहम्।।१६।।
नाम्नाहमिन्दिरा साक्षात्प्रियास्मि प्राणनायक।
तदा कृष्णोवदद्वाक्यं शृण्वतीनां च योषिताम्।।१७।।
त्वयीन्दिरे सुन्दरीति भ्रमः सार्वदिको मम।
ज्ञात्वापि त्वामिन्दिरेति क्षणादेव भ्रमद्धिया।
जल्पितं सुन्दरीत्येतन्मयोक्तमवधार्यताम्।।१८।।
इत्येतद्वचनं श्रुत्वा सुन्दरीगौरवात्मकम्।
किञ्चित्कलुषचित्ताभूत्सखीमण्डलमध्यतः।।१९।।

Nijanand App

5. हे महादेव! यह तत्व उनको भी अति दुर्लभ है। पुनः दानवांशों के लिए क्या कहा जाय। वे तो परद्रोह में तत्पर रहते हैं।

6. नास्तिक, धूर्त, कृतघ्न, दुरात्मा, वेदार्थदूषक, देह को ही सत्य मानने वाले,

7. शाप से भ्रष्ट चित्त वैडालिक और अक्षयाद (कणाद), सौगत मतानुयायी, बौद्ध, दिगम्बर मत वाले,

8. जैन, माध्यमिक, दुरात्मा, चार्वाक, वेदशास्त्र से रहित आदि की मुक्ति कहीं सुनी ही नहीं गई।

9. हे धूर्जटे! आपने जो तृतीय वासना सर्ग कहा है जिसके लिए तत्वज्ञान का यह उद्देश्य बताया है,

10. मैं तो उसको सुनकर ही कृतार्थ हो गइ हूं, ऐसा मेरा मत है। इस सम्बन्ध में मेरा जो मत है, वह अन्यथा कभी नहीं हो सकता।

11. इसलिए, प्रभो! मुझे श्रवणानन्द बहुत अच्छा लगता है। पापग्रस्त दुरात्माओं को तो श्रवणानन्द मिलता ही नहीं।

12. इसलिए यदि आप कहना उचित समझें तो मैं सुनना चाहती हूं। आपके समान करुणामृत सागर दूसरा नहीं है।

13. हे महादेव! आपने जो कहा कि कृष्ण की सभी योषिताएं परम प्रसन्न हुईं, दुःखित स्वामिनी को छोड़कर।

14. हे जगत्पते! इसमें मुझे सन्देह हो गया। स्वामिनी के खेद का कारण सही-सही बताइए।

शिव बोले—

15. हे देवि! स्वामिनी के खेद का कारण मैं कहूंगा, सुनो। नील पर्वत के शिखर पर आंख मूंदने की जो लीला की थी

16. उसमें इन्दिरा का नाम छोड़कर सुन्दरी कहा था। तब इन्दिरा ने कहा मैं सुन्दरी नहीं हो सकती।

17. मैं इन्दिरा हूं, साक्षात् प्रिया हूं। तब सुनती हुई स्त्रियों से कृष्ण ने यह वाक्य कहा।

18. तुम इन्दिरा में सुन्दरी का भ्रम मुझे सबसे ज्यादा हो गया। तुमको इन्दिरा जानते हुए भी क्षण भर बुद्धि-भ्रम से सुन्दरी कह दिया। जो मैंने कहा उसको समझो।

19. सुन्दरी के गौरव सूचक वचन सुनकर सखी मण्डल के मध्य इन्दिरा कुछ कलुषित चित्त हो गई।

Nijanand App

सर्वास्वेतासु घटते समः स्नेहः प्रियस्य हि।
सुन्दर्यामधिकं प्रेम हेतुना केन युज्यते॥२०॥
सखीनां चापि सर्वासामहमेका वराङ्गना।
मत्तः किमधिका जाता सौन्दर्यादिगुणादिभिः॥२१॥
स्वमिनीत्थं विमृष्य स्वे हृदये प्रेमपूरिते।
तस्थौ समाहितमतिर्गूहयामास हृद्गतम्॥२२॥
ततो नीलाद्रिशिखरादागत्य मणिसद्मनि।
प्रियाभिर्वेष्टितस्तत्र संस्थितः पुरुषोत्तमः॥२३॥
तत्र प्रियाभिः सम्प्रश्ने कृते दर्पणमादिशत्।
आदाय दर्पणं सख्यस्तर्कयन्त्यो मुदं ययुः॥२४॥
स्वबुध्या सुन्दरी चापि सखीचित्तं समादधे।
तत्समाहितमाकर्ण्य प्रसन्नः पुरुषोत्तमः॥२५॥
व्यक्तीकुर्वन्निजं प्रेम प्रोवाच वचनं तदा।
अन्वर्थं साध्वि ते नाम सुन्दरीति मम प्रियम्॥२६॥
त्वं मे प्राणाधिका चासि सर्वस्वं मे त्वमेव हि।
त्वदधीनोस्म्यहं साध्वि प्रेमपाशनियन्त्रितः॥२७॥
त्वयोक्तं यन्मयोक्तं तत्त्वदृष्टं तन्मयेक्षितम्।
यत्त्वयाङ्गीकृतं साध्वि मयाप्यङ्गीकृतं हि तत्॥२८॥
आवयोरन्तरं नास्ति यः करोति स पातकी।
इत्यादिवचनं श्रुत्वा सुन्दरीप्रेमसूचकम्॥२९॥
उत्तम्भयन्ती भ्रूवल्लीमीषत्कलुषितेक्षणा।
वक्रितग्रीवमवदत्स्वामिनी स्फुरिताधरा॥३०॥
एषा सखीसहस्राणां सुन्दरी सुन्दरप्रिया।
किं कार्यं विद्यतेऽस्माभिर्गुणरूपविपर्ययात्॥३१॥
सुन्दर्येव प्रियैका चेदसुन्दर्यः कथं प्रियाः।
भवन्ति सुन्दरस्यास्य मादृश्यो वामलोचनाः॥३२॥
एवं वक्रोक्तिमाश्राव्य सखीनां पुरतः प्रियम्।
अगमत्सहसोत्थाय निजकेलिगृहान्तरं॥३३॥
सम्प्रेषयामास तदा कृष्णः कमललोचनः।
प्रियामाननिरासार्थं दूतीं नाम्ना कलावतीं॥३४॥
सन्धिकार्यैककुशलां स्मितपूर्वाभिभाषिणीं।
सदुक्तिचतुरां धीरां युक्तिवादविचक्षणां॥३५॥

Nijanand App

20. सब प्रियाओं में प्रिय का समान स्नेह घटित होता है। सुन्दरी मे अधिक प्रेम किसलिए युक्त है?

21. सभी सखियों में मैं ही एक वरांगना हूं! सौन्दर्यादि गुणों से मुझसे यह बढ़कर कैसे हो गई?

22. स्वामिनी ने इस प्रकार से अपने प्रेम को हृदय में विचार कर समाहित मति होकर अपने मन की बात छिपा ली और खड़ी रही।

23. इसके बाद नील पर्वत पर से आकर मणिगृह में प्रियाओं से वेष्टित पुरुषोत्तम ने

24. प्रियाओं के प्रश्न करने पर दर्पण दिखा दिया। दर्पण के लेकर सखियां तर्क करती हुई अत्यन्त प्रसन्न हुईं।

25. सुन्दरी ने भी अपनी बुद्धि से सखियों के चित्त का समाधान किया। समाधान सुनकर पुरुषोत्तम प्रसन्न हुए।

26. अपना प्रेम प्रकट करते हुए उन्होंने कहा कि तुम्हारा नाम सुन्दरी सार्थक है और मुझे प्रिय है।

27. तुम मेरी प्राणाधिका हो और सर्वस्व हो। मैं तुम्हारे अधीन हूं और तुम्हारे प्रेमपाश में बंधा हूं।

28. जो मैंने कहा वह तुम्हारा कहा, जो तुमने देखा वह मेरा देखा हुआ, जो तुमने अंगीकार किया वह मेरा अंगीकार किया हुआ है।

29. हमारे तुम्हारे में कोई अन्तर नहीं है। जो अन्तर करता है वह पातकी है। सुन्दरी के प्रेमसूचक उन वचनों को सुनकर

30. आंखें कुछ लाल करके अपने भौहों को ऊपर उठाती हुई और ओष्ठ फड़काते हुए गर्दन घुमाकर स्वामिनी ने कहा—

31. यह हजारों सखियों में सुन्दरी सुन्दर को प्रिय है। हम लोगों से क्या काम? क्योंकि इसके जैसा रूप गुण हममें नहीं है।

32. यह सुन्दरी ही इनको प्रिय है। हम तो कुरूपा हैं। हमारी जैसी स्त्रियां इस सुन्दर को कैसे प्रिय लगेंगी?

33. सखियों के आगे इस प्रकार की वक्रोक्ति सुनाकर सहसा उठकर केलिगृह में चली गईं।

34. तब कमल लोचन श्रीकृष्ण ने प्रिया के मान को दूर करने के लिए कलावती को दूती रूप में भेजा

35. कलावती सन्धि कराने में बहुत कुशल, मुस्कराकर ही बोलने वाली, अच्छी-अच्छी उक्तियों में चतुर, धैर्यशील, युक्तियां कहने में निपुण थी।

Nijanand App

कलावती ततो गत्वा दृष्ट्वा मानवतीं च तां।
निजकेलिगृहे रम्ये स्थितामेकाकिनीं रहः।।३६।।
नानामन्त्रप्रयोगैश्च विषवेगं यथा भिषक्।
वाक्प्रयोगैरभिनवैर्मानवेगं न्यवारयत्।।३७।।
प्राणादप्यधिके साध्वि किमेतदुचितं प्रिये।
त्वं पत्युः प्राणसदृशी पतिः प्राणसमस्तव।।३८।।
सखीवर्गसमस्तोपि इन्द्रियाणीव देहिनः।
त्वमात्मेव प्रियस्यासि क्व मानावसरस्तव।।३९।।
पूर्णानन्दे पूर्णकामे गिरः प्रियतमे सति।
न वक्तुं परुषो योग्यो यथा धूर्ते शठे खले।।४०।।
बिम्बाधरस्फुरणतो भ्रुवोरुत्तम्भनादपि।
लौहित्याद्गल्लभित्तेश्च मानस्ते लक्ष्यते गुरुः।।४१।।
अन्तस्तापोष्णनिश्वासो दहत्यधरपल्लवम्।
मिथ्या ग्लापयसे चाङ्गलतिकां मानवह्निना।।४२।।
दुःसहः क्षणविश्लेषः प्रियस्याननपङ्कजम्।
अदृष्ट्वा यत्तु जीवेत तस्माच्च मरणं वरं।।४३।।
सखीनां च सहस्राणि सन्ति यद्यप्यनेकशः।
त्वय्येव रमते चित्तं कौमुद्यामिव शीतगोः।।४४।।
मान्यो मानिनि नायकः प्रमदया वाक्यैः सुधासन्निभै-
र्वाच्यः कोमलपाणिपङ्कजपुटं बध्वाभिवन्द्यः सदा।
तद्वाक्यं प्रियमप्रियं न हृदये धार्यं सतीनामयं,
स्वाचारः कथितो मया तमनु किं त्यक्त्वा वृथा तप्यसे।।४५।।
किं मानिनि बहूक्तेन कुरु मद्वचनं यथा।
गाढमानपरिक्लिष्टं औदासिन्यं व्रजेत्प्रियः।।४६।।
तस्मान्मद्वचने श्रद्धां कृत्वा तन्निकटं व्रज।
विलम्बेन तु मानोयं परां कोटिं गमिष्यति।।४७।।
प्रियस्त्वयि प्रयातायामकस्माज्जातकश्मलः।
हास्यक्रीडारसावेशरहितो वर्त्ततेधुना।।४८।।
त्वामाह्वायितुमेवाहं प्रेषितास्मि प्रियेण हि।
आज्ञापयसि चेत्कान्ते तमेवेहानयाम्यहम्।।४९।।

Nijanand App

36. कलावती ने वहां से जाकर उस मानवती के लिए केलि गृह में एकान्त में बैठी देखकर कहा।

37. जिस प्रकार एक चिकित्सक नाना मन्त्र प्रयोगों से विष के वेग को शान्त करता है इसी प्रकार नए-नए वाणी प्रयोगों से मान के वेग को रोका।

38. हे प्रिये! साध्वी! प्राण से भी अधिक प्रिय के लिए क्या तुम्हें ऐसा करना उचित है? तुम पति के प्राणसदृश हो और पति तुम्हारे प्राण रूप हैं।

39. समस्त सखी वर्ग जैसे शरीर की इन्द्रियां होती हैं वैसे ही हैं। प्रिय की तुम आत्मा हो! तुम्हारे मान का अवसर कहां है?

40. हे सती! पूर्णानन्द पूर्ण काम प्रियतम के विषय में धूर्त, शठ, खल के प्रति कही जाने वाली कठोर वाणी के समान वाणी कहना योग्य नहीं।

41. तुम्हारे होंठ फड़कने से, भौहों के ऊपर उठ जाने से, गालों के लाल होने से महान् मान दिखाई पड़ता है।

42. अन्तःताप के कारण उष्ण श्वास तुम्हारे अधरोष्ठ को जला रहा है। अपनी अंग लता को मान की आग से क्यों मिथ्या ही जला रही हो?

43. प्रिय का क्षण भर वियोग दुःसह है। मुख पंकज बिना देखे हुए जो जिया जाता है उससे मरना अच्छा।

44. यद्यपि अनेक प्रकार की सहस्त्रों सखियां हैं फिर भी चांदनी में चन्द्रमा के समान तुम्हारे में ही उनका मन रमता है।

45. हे मानिनी! प्रमदा के द्वारा नायक का मान किया जाना चाहिए। अमृत समान वाक्य कहे जाने चाहिए। कोमल पाणि कमल का पुट बनाकर वधू द्वारा अभिनन्दन किया जाना चाहिए। उनके वचन प्रिय हों या अप्रिय, उनको हृदय में बुरा नहीं मानना चाहिए। यह सखियों का आचार है, जो मैंने कहा है। उसको त्यागकर तुम वृथा क्यों ताप कर रही हो?

46. हे मानिनी! अधिक कहने से क्या लाभ? मेरा कहा हुआ करो जिससे गाढ़ मान से दुःखी हो उदासीनता धारण करने वाले प्रिय इसे छोड़ें।

47. इसलिए मेरे वचनों पर श्रद्धा करके उनके निकट चलो। विलम्ब करने से यह मान बहुत बढ़ जाएगा।

48. तुम्हारे चले आने पर प्रिय अकस्मात बहुत दुःखी हुए। अब हास और क्रीड़ा रस का आवेश उनमें नहीं है।

49. तुमको बुलाने के लिए ही प्रिय ने मुझे भेजा है। यदि तुम आज्ञा दो तो मैं उन्हीं को ले आऊं।

Nijanand App

शिव उवाच

श्रुत्वा कलावतीवाक्यं स्वामिनी मानमन्थरा।
मानाद्रिशिखरात्किंचिदुत्तीर्णा वाक्यमब्रवीत्॥५०॥

स्वामिन्युवाच

कलावति प्रिये मानो न कदापि मया कृतः।
सुन्दरीगुणमाहात्म्यश्रवणं मे विषादकृत्॥५१॥
मनुते चेत्प्रियस्त्वेकां सुन्दरीं गुणगुम्फितां।
कलावति तदा कार्यं किमस्माभिः प्रियस्य हि॥५२॥
इति मत्वाहमुत्थाय प्राप्तास्मि भवनं रहः।
सुखी भवतु सुन्दर्या गुणवत्या गुणी प्रियः॥५३॥

कलावत्युवाच

नाग्रहः सति कर्तव्यस्त्वया सरलनायके।
नायकाः सन्ति चत्वारः स्वलक्षणविलक्षिताः॥५४॥
अनुकूलो दक्षिणश्च धृष्टश्च शठ एव च।
एकपत्नीव्रतधरः अनुकूल उदीरितः॥५५॥
अन्यस्यां बद्धचित्तोपि पूर्वस्यां स्नेहगौरवम्।
न त्यजत्येव सततं स च दक्षिणनायकः॥५६॥
त्वमेका मम सर्वस्वं नान्या मे कामिनी प्रिया।
समक्षमेवं वदति परोक्षं योऽपराधकृत्॥५७॥
ज्ञातापराधः शपथान् कुरुते गूढचेष्टितः।
कुटिलं तं विजानीयान्नायकं शठसंज्ञकम्॥५८॥
कृतदोषोपि निःशङ्कस्ताड्यमानो न लज्जते।
प्रत्यक्षेष्वपि दोषेषु मिथ्यावाक् धृष्ट उच्यते॥५९॥
एवं चतुर्विधेष्वेषु नायकेषु मनस्विनि।
अनुकूलो दक्षिणश्च कीर्त्यतेऽसौ तव प्रियः॥६०॥
न शठोऽयं न धृष्टोऽयं किं मुधा खिद्यसे हृदि।
इत्युक्ते विस्मयं प्राप्ता पुनः प्राह कलावतीम्॥६१॥

इति श्रीमाहेश्वरतन्त्रे उत्तरखण्डे शिवोमासंवादे-एकोनचत्वारिंशं पटलम्॥३९॥

Nijanand App

शिव बोले—

50. मान के कारण मन्थर गति स्वामिनी ने कलावती के वचनों को सुनकर मान रूपी पर्वत से कुछ उतर कर कहा।

स्वामिनी ने कहा—

51. हे कलावती! प्रिय के विषय में मैंने कभी मान नहीं किया। सुन्दरी के महात्म्य का श्रवण से ही मुझे दुःख उत्पन्न हुआ।

52. यदि अकेली सुन्दरी को ही वे गुण वाली मानते हैं, तो प्रिय को हम लोगों से क्या काम?

53. यह मानकर उठकर एकान्त भवन चली आई। उस गुणवती सुन्दरी से गुणी प्रिय सुखी हों।

कलावती बोली—

54. तुम्हें सरल नायक के विषय में आग्रह नहीं करना चाहिए। नायक चार प्रकार के होते हैं जो अपने लक्षणों से जाने जाते हैं।

55. अनुकूल, दक्षिण, धृष्ट एवं शठ। एक पत्नी व्रत वाला अनुकूल नायक कहा जाता है।

56. दूसरे में बद्ध चित्त होने पर भी पहले वाली के स्नेह गौरव को नहीं छोड़ता, वह दक्षिण नायक होता है।

57. तुम्हीं मेरी सर्वस्व हो, कोई दूसरी स्त्री मुझे प्रिय नहीं, यह सामने कहता है और पीछे अपराध करता है।

58. अपराध खुल जाने पर शपथ खाता है। गूढ़ चेष्टाएं करता है। उस कुटिल नायक को शठ समझना चाहिए।

59. दोष करने पर भी तथा पीटे जाने पर भी निशंक रहता है और लज्जा नहीं करता है। दोष के प्रत्यक्ष हो जाने पर भी झूठ बोलता है, उसे धृष्ट कहते हैं।

60. हे मनस्विनी! इस प्रकार के चार नायकों में तुम्हारा प्रिय अनुकूल और दक्षिण कहा जाता है।

61. यह शठ नहीं है, धृष्ट नहीं है, बेकार ही हृदय को कष्ट दे रही हो। ऐसा कहने पर विस्मित होकर कलावती से कहा।

माहेश्वरतन्त्र के उत्तर खण्ड के शिव-उमा संवाद में उनतालीसवां अध्याय समाप्त हुआ।

Nijanand App

चत्वारिंशं पटलम्

स्वामिन्युवाच

कलावति महाप्राज्ञे यत्त्वयोक्तं प्रियाश्रयम्।
विरुद्धमिव मे भाति विरुद्धैर्लक्षणैः किल॥१॥
एकपत्नीव्रतधरोऽनुकूल इति कीर्त्तितः।
दक्षिणो बहुपत्नीकः सर्वास्वविषमः स्मृतः॥२॥
एकस्मिन्नायके साध्वि कथमेतद्द्वयं भवेत्।
अश्रद्धेयमिवाभाति यदि जानासि तद्वद॥३॥

कलावत्युवाच

शृणु स्वामिनि प्रवक्ष्यामि तव प्रश्नोत्तरं शुभम्।
यस्य श्रवणमात्रेण स्वास्थ्यं तव भविष्यति॥४॥
एकदा पुष्परागाद्रौ क्रीडनाय गतः प्रियः।
आरुह्य शिविकां दिव्यां सुवर्णकलशोज्वलां॥५॥
उपर्युपरिविन्यस्तनानातोरणमण्डितां।
हंसपारावतशुकपिक्सारसनादितां॥६॥
नवरत्नविचित्राभां कामगां च मनोजवाम्।
शतयोजनविस्तीर्णां नानाक्रीडारसालयाम्॥७॥
काञ्चने मध्यकलशे विन्यस्ते चोपरिस्थिते।
कोटिचन्द्रप्रभागौररत्नेनोल्लासिताम्बराम्॥८॥
तस्मिन्विमानप्रवरे संस्थितः पुरुषोत्तमः।
द्विषट्सखीसहस्त्रेषु मध्ये चन्द्र इवोडुपु॥९॥
मनोनुसारिगमनं विमानं कृष्णयोषिताम्।
तीर्यगूर्ध्वमधश्चापि पुष्पाद्रिशिखरेऽपतत्॥१०॥
तत्र चन्द्रप्रभो नाम्ना ह्रदः पीयूषपूरितः।
रचितस्वर्णसोपानः स्वर्णपङ्कजभूषितः॥११॥
अस्ति दक्षिणतस्तस्य सरः परमसुन्दरम्।
नाम्ना पञ्चनदं ख्यातं शतयोजनविस्तरम्॥१२॥
अधोधः कल्पितैः सप्तशतैर्मणिचितान्तरैः।
जातरूपमयैर्दिव्यसोपानैर्बद्धमायतैः॥१३॥
वैदूर्यपद्मिनीखण्डैः पद्मरागसरोरुहैः।
मराललीलापतनैर्मण्डितं तत्र तत्र ह॥१४॥

Nijanand App

चालीसवां अध्याय

स्वामिनी ने कहा—

1. हे महाप्राज्ञा! प्रिय के सम्बन्ध में जो तुमने कहा है वह विरुद्ध लक्षणों के कारण मुझे विरुद्ध प्रतीत होता है।

2. अनुकूल वह कहा जाता है तो एक पत्नीव्रत धारण करता है। जिसके बहुत पत्नियाँ हों और सभी में समव्यवहार हो उसे दक्षिण कहा गया है।

3. हे साध्वी! एक ही नायक में अनुकूल और दक्षिण यह दो कैसे हो सकते हैं? यह अश्रद्धेय सा दिखाई पड़ता है। यदि जानती हो, तो बताओ।

कलावती ने कहा—

4. हे स्वामिनी! तुम्हारे शुभ प्रश्न का उत्तर मैं कहूंगी सुनो, जिसके श्रवण मात्र से तुम्हें स्वास्थ्य लाभ होगा।

5. एक बार पुष्पराग पर्वत पर प्रिय क्रीड़ा के लिए गए थे। स्वर्ण कलशों से उज्ज्वल दिव्य शिविका

6. जिसमें ऊपर नाना तोरण सुशोभित हो रहे थे, हंस, पारावत, पिक, शुक, सारस कोलाहल कर रहे थे,

7. नवरत्नों से जिसकी आभा विचित्र थी, इच्छानुसार मन के समान वेग वाली सौ योजन विस्तीर्ण, नाना क्रीड़ा रसों का वह स्थान है।

8. स्वर्ण के मध्य कलश के ऊपर कोटि चन्द्र की कान्ति के समान श्वेत रत्नों से आकाश जिसमें चमक रहा है, ऐसी शिविका पर चढ़कर

9. और ऐसे श्रेष्ठ विमान पर बैठे हुए पुरुषोत्तम बारह हजार सखियों के मध्य तारों के मध्य चन्द्रमा के समान स्थित हुए।

10. कृष्ण की स्त्रियों का मन के अनुसार चलने वाला वह विमान तिरछे, ऊंचे और नीचे चलता हुआ पुष्पराग पर्वत के शिखर पर उतरा।

11. वहां चन्द्रप्रभा नामक अमृत से पूर्ण सरोवर था जिसके सोपान सोने के थे और स्वर्ण कमलों से सुशोभित था।

12. उसके दक्षिण की ओर परम सुन्दर शत योजन विस्तृत पंचनद नामक एक प्रसिद्ध सरोवर है।

13. नीचे से ऊपर लम्बी बनी हुई सात सौ सीढ़ियों में मणि जटित स्वर्ण लगा है।

14. वैदूर्य के कमलिनी खण्ड और पद्मराग के कमल जिन पर हंस क्रीड़ा करते-करते गिरते हैं, ऐसे सोपानों से वहां मण्डित

Nijanand App

तत्र या याः कृताः क्रीडा जलस्थलविभेदतः।
त्वया स्वपतिना साकं तास्ताः स्मर भामिनि॥१५॥
प्रियः सरसि सर्वाभिः सखीभिः परिवेष्टितः।
समन्तान्निपतद्वर्षैराहतो यत्र विद्रुतः॥१६॥
आरुरोह ततस्तूर्णं सरोविश्रान्तिमण्डपम्।
प्रतिजग्मुः प्रियाः सर्वास्तत्रोत्तीर्णसरोवराः॥१७॥
तावत्पपात सहसा पुनरेव सरोजले।
उत्तीर्णगम्भीरजलः कुत्रचिद्विजनस्थले॥१८॥
अनेककुञ्जगहने प्रच्छन्नोऽभवदेकलः।
मृगयन्त्यः प्रियाः सर्वा विचेरुस्तत्र तत्र च॥१९॥
अहं विचिन्वती तत्र गता गहनधामनि।
विलीय संस्थितं कृष्णामद्राक्षमतिसुन्दरम्॥२०॥
तत्र मामागतां सुभ्रु विलोक्य प्रहसन् प्रियः।
नासाग्राहिततर्जन्या कौतुकी सन्न्यवारयत्॥२१॥

प्रिय उवाच

कलावति कलाभिज्ञे मां विचिन्वन्ति योषितः।
न पश्यन्ति परं चात्र विभ्रमन्ते यतस्ततः॥२२॥
त्वमप्यत्रैव सन्तिष्ठ मया सह कलावति।
त्वया सह करिष्यामि लीलाखेलं रहः स्थितः॥२३॥
इत्युक्ताहं स्थिता तत्र बहुमानेन मानिता।
तत्र नानाविधाः क्रीडाः प्रियश्चक्रे मया सह॥२४॥
तदा मया कृतः प्रश्नः प्रियमुद्दिश्य भामिनि।
नायकाः सन्ति चत्वारस्तेषु वा को भवानिति॥२५॥
ततः प्रश्नोत्तरं प्राह कृष्णः कमललोचनः।
तदहं ते प्रवक्ष्यामि यथाश्रुतमनिन्दिते॥२६॥

श्रीकृष्ण उवाच

अनुकूलो दक्षिणश्च द्वैविध्यं मयि वर्त्तते।
तदन्यत्र विरुद्धं स्यादविरुद्धं मयि स्फुटं॥२७॥
रसोहं मूर्तिमान् साक्षात् घनीभूतः कलावति।
तस्याद्यभागं मां विद्धि द्वितीयं स्वामिनीं प्रियाम्॥२८॥

Nijanand App

15. हे भामिनी! जल और स्थल के भेद से उन-उन स्थानों में जो-जो क्रीड़ाएं तुमने अपने पति के साथ की थीं, उनका स्मरण करो।

16. सभी सखियों से घिरे प्रिय जिस सरोवर पर चारों ओर से वर्षा से आहत होकर भागे थे,

17. वहां से शीघ्र तालाब के पास विश्रान्ति मण्डप में चढ़ गए थे। सभी प्रियाएं भी सरोवर से निकल कर चली गई थीं।

18. इतनी ही देर में पुनः सरोवर के जल में सहसा कूद पड़े और गहरे जल को पार करके कहीं निर्जन स्थान में

19. जहां पर अनेक कुंज होने के कारण घना जंगल था वहां अकेले ही छिप गए। सभी प्रियाएं खोजती हुई यहां-वहां घूमने लगीं।

20. मैं खोजती हुई उस गहन धाम में गई और छिपकर बैठे अति सुन्दर कृष्ण को देखा।

21. वहां पर मुझको आई देखकर हंसते हुए प्रिय ने तर्जनी उंगली नाक पर रखकर कौतुक की इच्छा से मुझे मना कर दिया।

प्रिय बोले—

22. हे कलाभिज्ञे! कलावती! स्त्रियां मुझे खोज रही हैं, किन्तु देख नहीं पा रही हैं और इधर-उधर भटक रही हैं।

23. हे कलावती! तुम भी यहीं पर मेरे साथ ठहरो। तुम्हारे साथ एकान्त में बैठकर मैं लीला क्रीड़ा करूंगा।

24. बहुत मान से सम्मानित कर प्रिय द्वारा इस प्रकार कही गई मैं वहीं स्थित हो गई। प्रिय ने मेरे साथ वहां अनेक प्रकार की क्रीड़ाएं कीं।

25. हे भामिनी! तब मैंने प्रिय को उद्देश्य कर प्रश्न किया कि चार प्रकार के नायक होते हैं, आप कौन हैं?

26. कमल लोचन कृष्ण ने मेरे प्रश्न का उत्तर दिया। हे अनंदिते! जैसा मैंने सुना था वैसा ही मैं तुमसे कहूंगी।

श्रीकृष्ण बोले—

27. मेरे अनुकूल और दक्षिण द्विविध नायक के लक्षण विद्यमान हैं, जो अन्यत्र विरुद्ध होते हैं, परन्तु मेरे में विरुद्ध नहीं हैं, यह स्पष्ट है।

28. हे कलावती! मैं धनीभूत मूर्तिमान साक्षात् रस हूं। उसका आद्य भाग मुझे समझो और द्वितीय भाग प्रिया स्वामिनी को समझो।

Nijanand App

नावयोर्विद्यते भेदो भोक्तृभोग्यस्वरूपयोः।
मदात्मा स्वामिनी प्रोक्ता स्वामिन्यात्माहमेव च॥२९॥
मदन्यः पुरुषो नास्ति न च स्त्री स्वामिनीपरा।
नैकाकी रमते यस्मात् द्विधाभूतो रसस्ततः॥३०॥
पुंस्त्रीरूपविभागाभ्यां रसोहं विलसाम्यहम्।
ब्रह्मानन्दमयीं साक्षान्न लक्ष्मीमपि संस्पृशेत्॥३१॥
तेनाहमनुकूलोस्मि नायकः कमलेक्षणे।
यथाहं दक्षिणश्चास्मि तत्प्रकारं वदामि ते॥३२॥
यथानर्घस्य रत्नस्य परितः किरणावलिः।
प्रसर्पति न सा भिन्ना मणितस्तु विचारतः॥३३॥
स्वामिन्या एव ताः सख्यः कलारूपाः कलावति।
न स्वामिन्या विभेदोस्ति सखीनामणुमात्रतः॥३४॥
अत एवासु सर्वासु द्रवीभूतो वसाम्यहं।
बहिश्चापि घनीभूतस्ताभिः कीडारतोस्म्यहम्॥३५॥
क्रीडमानोपि सर्वाभिः स्वामिनीप्रेमविह्वलः।
अतोहं दक्षिणश्चास्मि नायको हि कलावति॥३६॥
अत्रापि नैव विहतमानुकूल्यं विचारतः।
भेदद्वयोपचारो हि कदाचिन्मयि वर्तते॥३७॥
इति मानिनि यत्पृष्टं त्वयैतत्कथितं मया।
प्रियेण कथितं साक्षात्स्वमुखेन यथातथा॥३८॥
प्रश्नोत्तरावसाने च विचिन्वन्त्यश्च ताः प्रियाः।
घनकुञ्जान्तरे लीनं दृष्ट्वाजग्मुस्त्वरान्विताः॥३९॥
ततः प्रियेण सहिता आगतास्तव सन्निधिम्।
एतत्सर्वं तु जानासि विशेषस्तु मयोदितः॥४०॥
तस्मान्मानिनि मानस्ते प्रियेण सह नोचितः।
आनन्दोपि निरानन्दः प्रतिभाति विना त्वया॥४१॥
तस्मादुत्तिष्ठ तत्पार्श्वमलंकुरु मनस्विनि।
त्वया विरहितं चण्डि प्रियं नो वीक्षितुं क्षमाः॥४२॥
इति पाण्डित्यचातुर्यं कलावत्या प्रयोजितं।
निशम्य हृष्टवदना वाक्यं चेदमुवाच ह॥४३॥

Nijanand App

29. हम दोनों भोक्ता और भोग्य स्वरूप हैं, दोनों में भेद नहीं है। स्वामिनी मेरी और मैं स्वामिनी की आत्मा हूं।

30. मुझसे भिन्न कोई पुरुष नहीं है और स्वामिनी से भिन्न स्त्री नहीं है। क्योंकि अकेले रमण नहीं होता, इसलिए रस द्विधाभूत है।

31. पुरुष और स्त्री रूपों के भाग से मैं ही रस रूप में सुशोभित हूं। ब्रह्मानन्द रूपी साक्षात् लक्ष्मी का भी मैं स्पर्श नहीं करता।

32. हे कमलनेत्री! इसीलिए मैं अनुकूल नायक हूं। जिस प्रकार मैं दक्षिण नायक हूं, वह प्रकार मैं बतलाता हूं।

33. जिस प्रकार अमूल्य रत्न के चारों तरफ किरणावली फैलती है जो विचार करने पर मणि से भिन्न नहीं होती।

34. हे कलावती! वे सखियां स्वामिनी की ही कला रूप हैं। स्वामिनी से उन सखियों का अणु मात्र भी भेद नहीं है।

35. इसलिए इन सब में द्रवीभूत मैं ही बसता हूं और बाहर भी घनीभूत होकर उन्हीं से क्रीड़ा में रत होता हूं।

36. सबसे क्रीड़ा करते हुए भी स्वामिनी के प्रेम में विह्वल रहता हूं। हे कलावती! इसलिए मैं दक्षिण नायक भी हूं।

37. विचार करने पर यहां अनुकूलता नष्ट नहीं होती। दोनों भेदों का उपचार भी कभी मेरे में रहता है।

38. हे मानिनी! जो तुमने पूछा था वह मैंने कह दिया। प्रिय ने साक्षात् अपने मुख से जैसा कहा था, वैसा ही कह दिया।

39. प्रश्नोत्तर के अन्त में खोजती हुई वे प्रियाएं घने कुंज के मध्य छिपे प्रिय को देख शीघ्र वहां आ गईं।

40. इसके पश्चात् प्रिय के साथ तुम्हारे समीप मैं आ गई। यह सब तो जानती ही हो। विशेष मैंने कह दिया।

41. हे मानिनी! प्रिय के साथ मान करना तुझे उचित नहीं है। वे आनन्द रूप होते हुए भी तुम्हारे बिना निरानन्द प्रतीत होते हैं।

42. हे मनस्विनी! इसलिए उठो और मेरे पार्श्व को अलंकृत करो। हे चण्डी! तुमसे विरहित प्रिय को देखने में हम समर्थ नहीं हैं।

43. इस पाण्डित्य और चातुर्य से युक्त कलावती द्वारा कहे गए वाक्यों को सुनकर प्रसन्नबदना स्वामिनी ने यह कहा।

Nijanand App

स्वामिन्युवाच

कलावति महाप्राज्ञे मानस्ते वचसा गतः।
तथापि मानिनीनां च समयान् वेत्सि हृद्गतान्॥४४॥
आगच्छामि यदि स्वैरं गौरवं मेऽपगच्छति।
तस्मात्प्रियः करे धृत्वा सुखं नयतु मामिति॥४५॥
इत्थं तया निगदिता सखी प्राप्ता प्रियान्तिकम्।
प्रहृष्टवदनां दृष्ट्वा प्रियोपि मुमुदे भृशम्॥४६॥
इति श्रीमाहेश्वरतन्त्रे उत्तरखण्डे शिवगौरीसंवादे चत्वारिंशं पटलम्॥४०॥

एकचत्वारिंशं पटलम्

पार्वत्युवाच

कलावती यदा कान्तदूती प्राप्ता प्रियान्तिकम्।
ततः किमभवत्तत्र तन्मे ब्रूहि महेश्वर॥१॥

शिव उवाच

शृणु देवेशि वक्ष्यामि कथां दिव्यां रसाश्रयां।
यस्याः श्रवणजानन्दो न मुक्तावपि विद्यते॥२॥
प्रहृष्टवदनाम्भोजां दृष्ट्वा दूतीं कलावतीं।
स्मयन्निव प्रियः प्राह शृण्वतीनां च योषिताम्॥३॥
कलावति कलाभिज्ञे किमुक्तं प्रियया तया।
पिपासोरिव पीयूषं तद्वचस्तृप्तये मम॥४॥
तत्सुधानिधिषीयूषप्रणाली त्वं कलावति।
सखीलतासमाश्लिष्टकल्पद्रुमं निषिञ्च माम्॥५॥

कलावत्युवाच

प्राणनाथ प्रिया तेऽद्य मानमास्थाय संस्थिता।
गत्वा मया बहुविधैर्वाक्यैरुद्बोधिता मुहुः॥६॥
मानाद्रिशिखरारूढा मां कथञ्चिदुवाच ह।
कलावति प्रिये मानो न कदापि मया कृतः॥७॥
सुन्दरीगुणमाहात्म्यश्रवणं मे विषादकृत्।
मनुते चेत्प्रियस्त्वेकां सुन्दरीं गुणगह्वरां॥८॥
अस्माभिर्गुणहीनाभिः कार्यं तस्य न विद्यते।
इत्यादिविविधैर्वाक्यैर्वदन्ती सा मनस्विनी॥९॥

Nijanand App

स्वामिनी ने कहा—

44. हे महाप्राज्ञे कलावती! तुम्हारे वचनों से मेरा मान तो दूर हो गया। फिर भी मानिनियों के हृदय में कुछ विशेष भाव होते हैं जिन्हें तुम जानती हो।

45. यदि मैं अपनी इच्छा से चली आऊं तो मेरा गौरव नष्ट होता है। इसलिए प्रिय मेरा हाथ पकड़ सुख से मुझे ले चलें।

46. इस प्रकार उसके द्वारा कही गई सखी प्रिय के समीप आई। सखी को प्रसन्न बदन देखकर प्रिय प्रसन्न हुए।

माहेश्वरतन्त्र के उत्तर खण्ड में शिव-गौरी सम्वाद का चालीसवां अध्याय समाप्त हुआ।

इकतालीसवां अध्याय

पार्वती ने कहा—

1. जब प्रिय की दूती कलावती प्रिय के पास पहुंची तब वहां क्या हुआ? हे महेश्वर! यह मुझे बताइए।

2. हे देवेशि! रस जिसका आश्रय है ऐसी दिव्य कथा मैं कहूंगा जिसके श्रवण का आनन्द मुक्ति में भी नहीं मिलता।

3. प्रसन्न मुख कमल वाली दूती कलावती को देखकर सभी स्त्रियों के सुनते हुए मुस्कराते हुए की तरह प्रिय बोले—

4. हे कलाभिज्ञ कलावती! उस प्रिया ने क्या कहा? प्यासे को अमृत के समान उसके वचन मुझे तृप्ति प्रदान करेंगे।

5. उस सुधानिधि से निकलने वाली अमृत प्रणाली तुम्हीं हो। सखी रूपी लताओं से आलिंगित कल्प द्रुम के समान मुझको सींचो।

कलावती ने कहा—

6. हे प्राणनाथ! आपकी प्रिया आज मान धारण कर बैठी थी। मैंने जाकर अनेक प्रकार के वाक्यों से उसे उद्‌बोधित किया।

7. मान पर्वत के शिखर पर आरूढ़ उसने मुझसे किसी प्रकार कहा। हे कलावती! मैंने प्रिय के सम्बन्ध में कभी भी मान नहीं किया।

8. सुन्दरी के गुणों के महात्म्य का सुनना मुझे विषादकारक है। यदि प्रिय अकेली सुन्दरी को गुणाढ्य मानते हैं,

9. तो गुणहीन हम लोगों से कोई काम नहीं है, इत्यादि विविध वाक्यों को कहती हुई उस मनस्विनी को

Nijanand App

युक्तियुक्तैश्च वचनैस्तोषिता सा मयापि हि।
त्यक्तरोषा प्रियं च त्वां हस्तग्राहमपेक्षते॥१०॥
स्त्रीणां जातिस्वभावोयं तस्मात्कुरु तथा प्रभो।
कलावतीवचस्तथ्यं मन्यमानः परात्परः।
आत्मारामोऽपि तत्प्रीत्यै आजगाम तदन्तिकम्॥११॥

श्रीकृष्ण उवाच

नोचितस्ते प्रिये साध्वि मानो मयि निरागसि।
त्वदात्मकत्वात्सख्यो मे सर्वाः प्रियतमा अपि॥१२॥
लहर्य्यः सलिलस्येव यथाग्रेर्विस्फुलिङ्गकाः।
पृथक् न सन्ति ते तद्वत्सख्यो भिन्ना न ते क्वचित्॥१३॥
तासु सर्वासु यत्प्रेम मदीयं परिवर्त्तते।
अनेकधापि विलसत् त्वय्येव पर्यवस्यति॥१४॥
इति सत्येन वचसा प्रार्थयामि मुहुर्मुहुः।
स्वसङ्केतं समायाहीत्युक्त्वा जग्राह तत्करम्॥१५॥
गृहीते स्वकरे पत्या भावपूरितमानसा।
तीर्यक्कटाक्षविशिखं सन्दधाना स्मिताधरा॥१६॥
चुम्बितालिङ्गिता प्रेम्णा प्रियेणोत्थाप्य सत्वरं।
प्रियांसारोपितभुजा स्वीयांसारूढतद्भुजा॥१७॥
स्वसङ्केतं समागत्य यथापूर्वं निषेदतुः।
मुदमापुः परां सख्यो दृष्ट्वा तं प्रियया युतम्॥१८॥
हासक्रीडावसाने तां प्रियः प्राह हसन्निव।
प्रिये विज्ञासुमिच्छामि यदि ते श्रवणेस्पृहा॥१९॥
अवाच्यं तत्तु जानीहि तथापि कथयामि ते।
कदाचिन्मोहजलधौ यदा मग्ना भविष्यथ॥२०॥
तदेयं सुन्दरी साक्षाद्भवतीरुद्धरिष्यति।
यदा यदा महामोहजलधौ परिमज्जथ।
तदा तदोद्धरित्रीयं भवतीर्नात्र संशयः॥२१॥
यदेनामवलम्ब्यैव सख्यः सर्वा भ्रमार्णवं।
तरिष्यन्तीति विज्ञातवतो मे सुन्दरी प्रिया॥२२॥
सुन्दर्य्यामधिकः प्रेम हेतुस्ते विनिरूपितः।
इति प्रियवचः श्लक्ष्णं श्रुत्वा सर्वा विसिस्मिरे॥२३॥

Nijanand App

10. युक्ति युक्त वचनों से मैंने भी तुष्ट किया। क्रोध त्यागने पर, प्रिय! आपके द्वारा हस्त ग्रहण की अपेक्षा करती है।

11. स्त्रियों का यह जाति स्वभाव होता है। इसलिए प्रिय आप वैसा ही करें। कलावती के इन वचनों को सत्य मानते हुए परात्पर आत्माराम होते हुए भी स्वामिनी की प्रीति के लिए उनके समीप गए।

श्रीकृष्ण ने कहा—

12. हे साध्वी! निरपराध मुझसे तुम्हारा मान उचित नहीं है। यह सभी सखियां तुम्हारा ही रूप हैं इसलिए सभी प्रियतमा हैं।

13. पानी की तरंगों की तरह तथा अग्नि की चिनगारियों की तरह यह सखियां तुमसे कभी भिन्न नहीं हैं।

14. उनमें जो हमारा प्रेम है वह अनेक प्रकार का होता हुआ भी तुम्हारे में ही परिपूर्ण होता है।

15. इस प्रकार सत्य वचन से बार-बार प्रार्थना करता हूं कि अपने संकेत स्थान को चलो। ऐसा कहकर उनका हाथ पकड़ लिया।

16. पति के द्वारा अपना हाथ पकड़ने पर भावपूर्ण मन से कुटिल कटाक्ष रूपी वाण का संधान करती हुई मुस्कराते हुए ओष्ठ वाली,

17. चुम्बित और आलिंगित होती हुई प्रेम से प्रिय द्वारा उठाई गई प्रिय के कन्धे पर भुजा रखे हुए तथा अपने कन्धे पर प्रिय की भुजा रखकर

18. अपने संकेत स्थान पर आकर पहले की तरह दोनों बैठ गए। उनको प्रिया से युक्त देखकर सखियां अति प्रसन्न हुईं।

19. हास क्रीड़ा के अन्त में हंसने से वे स्वामिनी से बोले, प्रिये! यदि तुम्हें सुनने की इच्छा है तो मैं कुछ कहना चाहता हूं।

20. उस को तुम अवाच्य समझो। फिर भी मैं कहता हूं। कभी मोह सागर में जब तुम लोग मग्न हो जाओगी,

21. तो यह सुन्दरी ही साक्षात् तुम्हारा उद्धार करेगी। जब जब तुम लोग महा मोह सागर में डूबने लगोगी तब तब यह तुम लोगों का उद्धार करेगी, इसमें सन्देह नहीं।

22. इसका सहारा लेकर ही सभी सखियां भ्रम रूपी सागर को पार करेंगी। यह जानते हुए ही सुन्दरी मुझे प्रिय है।

23. सुन्दरी में मेरा प्रेम जिस कारण अधिक है वह निरूपित कर दिया। प्रिय के इन मधुर वचनों को सुनकर सभी को विस्मय हुआ।

Nijanand App

तां सर्वाः पूजयामासुः स्वामिन्याद्याश्च सुन्दरी।
मनोज्ञभाषणैपरैर्वचोभिः कुसुमैरिव॥२४॥
स्वभावशीतलै रम्यैः स्वभावैश्चन्दनैरिव।
प्रसन्नाग्निविनिर्दग्धहृत्कालुष्यैश्च धूपकैः॥२५॥
मानांधतमसध्वंसप्रसादैरिवदीपकैः।
तेता बहुतरे कलि यदा जात सुमङ्गला॥२६॥
तदाविष्टः सखीवर्गो ययाचे प्रियमीप्सितम्।
दुःखाति दुःखमिति वः प्रार्थितं चेति बोधिताः।
न शिक्षावचनं चक्रुरिच्छाशक्तिविमोहिताः॥२७॥
वियोगदलमाश्रित्य यदा क्रीडति वै रसः।
तद्रसानुकूलगतिर्विमोहयति सुमङ्गला॥२८॥
तदा प्रियः सखीः प्राह शृणुध्वं मम भाषितम्।
निवार्यमाणा हि मया दुरन्ताच्च मनोरथात्॥२९॥
न निवृताश्च भो सख्यो यूयमाग्रहतत्पराः।
नानादुःखमयीं बाललीलां द्रक्ष्यथ मा चिरम्॥३०॥
विस्मरिष्यथ मां तत्र किमन्यदधिकं ब्रुवे।
तथापि सुन्दरी ह्येषा तारयिष्यति तत्तमः॥३१॥
मया प्रबोधिता सम्यक् कथयित्वा विनिर्णयम्।
इति प्रियवचः श्रुत्वा सर्वाः सख्यो मुदान्विताः॥३२॥
प्रसन्नानन्दजलधौ निमग्नाः शक्तिमोहिताः।
फले विलम्बमाज्ञाय पुनस्ताः प्रार्थनोत्सुकाः।
यदा तदा प्रियश्चक्रे तन्मनोरथपूरणम्॥३३॥

इति श्रीमाहेश्वरतन्त्रे उत्तरखण्डे शिवगौरीसंवादे एकचत्वारिंशं पटलम्॥४१॥

द्विचत्वारिंश पटलम्

अतः परं प्रवक्ष्यामि प्रस्तुतं शृणु सुन्दरि।
यच्छ्रुत्वा विविधा लीला हृद्यारूढा भवेत्प्रिये॥१॥
सन्तोषानन्दभूम्योस्तु सन्धौ पुष्पाद्रिरुत्तमः।
योजनायुतमानेन नानाश्चर्यमयो महान्॥२॥
नानाधातुमयः श्रीमान् नानामणिविभूषितः।
त्रीण्यस्याद्रिप्रधानस्य शिखराणि द्युमन्ति च॥३॥
पावमानं महारम्यं विभ्राजमिति तद्विदा।
पावमाने तु शिखरे नित्यं सङ्क्रीडते हरिः॥४॥

Nijanand App

24. स्वामिनी आदि सभी ने सुन्दरी की पूजा की। पुष्पों की तरह प्रिय भाषण वाले वाक्यों से

25. चन्दन के समान शीतल स्वभाव से सुशोभित जलती हुई अग्नि से भस्म की गई कालिमा रूपी धूप के समान

26. मान रूपी घोर अन्धकार के नष्ट होने से प्रकाश फैलाने वाले दीपकों के समान सुन्दर वचनों से सुन्दरी की पूजा/प्रशंसा की। इसके पश्चात् बहुत समय बीतने पर जब सुमंगला हुई,

27. तो उस समय सखी समूह ने प्रिय से इच्छित याचना की। तुम्हारी प्रार्थना अति दुःखदायिनी है, ऐसा बोधित होने पर भी इच्छा शक्ति से विमोहित होकर शिक्षा वचन नहीं सुना।

28. वियोग दल का आश्रय लेकर रस जब क्रीड़ा करता है तो उस रस के अनुकूल गति सुमंगला मोह में डालती है।

29. जब प्रिय ने सखियों से कहा कि मेरा कथन सुनो। दुर्लभ मनोरथ से निवारण की गई तुम सखियां

30. नहीं मानीं और आग्रह में तत्पर हो गईं। इसलिए शीघ्र ही नाना दुखमयी बाल लीला देखोगी।

31. वहां हमको भूल जाओगी। अधिक मैं क्या कहूं? फिर भी यह सुन्दरी उस अन्धकार से तुम्हें पार ले जाएगी।

32. मेरे द्वारा सम्यक रूप से प्रबोधित और निर्णय बतलाए जाने पर यह सुन्दरी मेरे द्वारा सम्यक प्रबोधित एवं निर्णय से सूचित हो तुम्हें पार करेगी। ऐसे प्रिय के वचनों को सुनकर सभी सखियां अत्यन्त प्रसन्न हुईं।

33. प्रसन्नता के आनन्द सागर में निमग्न, शक्ति से मोहित वे सखियां फल में विलम्ब जानकर पुनः प्रार्थना के लिए उत्सुक हुईं, तो प्रिय ने उनके मनोरथ को पूर्ण किया।

माहेश्वरतन्त्र के उत्तर खण्ड में शिव-गौरी सम्वाद का इकतालीसवां अध्याय समाप्त हुआ।

बयालीसवां अध्याय

1. हे सुन्दरी! परे की बात कहूंगा, अब सुनो जिसके सुनने से विविध लीलाएं हृदय में आरूढ़ (प्रकाशित) हो जाती हैं।

2. सन्तोष और आनन्द की भूमियों की सन्धि में पुष्प पर्वत है। अयुत योजन विस्तृत अनेक आश्चर्यों से भरा हुआ महान्,

3. नाना धातुमय, श्रीमान, नाना मणियों से विभूषित है। इन पर्वतराज के तीन शिखर कान्तिमान हैं।

4. पावमान, महारम्य और विभ्राज उनके भेद हैं। पावमान शिखर पर हरि नित्य क्रीड़ा करते हैं।

Nijanand App

नित्यं सङ्क्रीडतोरेव स्वामिनीकृष्णयोरपि।
श्रमघर्मजलस्त्रावो महानासीच्च देहतः॥५॥
तद्वारिपूर्णं यत्रास्ते सरः परमसुन्दरं।
शतयोजनमानेन रत्नसोपानभास्वरम्॥६॥
भ्रमद्भ्रमरसंशोभि सरोजवनसङ्कुलम्।
पक्षिणां स्वर्णपक्षाणां कुलैर्मण्डितसैकतम्॥७॥
तस्मात्प्रवृत्ता सरसो नाम्ना सा यमुना नदी।
अगाधतोया गम्भीरा बहुलावर्तभीषणा॥८॥
पावमानात्पतन्ती सा नदी विरजमस्तके।
शतैकयोजनोत्तुङ्गे धाराध्वनितगह्वरे॥९॥
सन्तोषभूमिकां प्लाव्य किञ्चिद्वैराग्यभूमिकां।
चिदानन्दमयीं भूमिं किञ्चिदानन्दभूमिकां॥१०॥
रतिभूमिं प्लावयन्ती याति भूमिं प्रकाशिकां।
प्रकाशानन्दभूम्योस्तु ह्यन्तराले महासरः॥११॥
सपादलक्षयोजनमानेन परिविस्तृतम्।
समुद्र इव गम्भीरं रत्नसोपानसुन्दरम्॥१२॥
पूरयन्ती पुनस्तस्मान्निर्याति ज्ञानभूमिकां।
भुक्तिभूमिं समाप्लाव्य याति प्रेमात्मिकां भुवम्॥१३॥
प्रेमात्मिकां भुवं प्लाव्य सुधाब्धौ विलयङ्गता।
रसस्य रममाणस्य दलाभ्यां गिरिनन्दिनि॥१४॥
तत्स्यन्दमात्रां यमुनां चिन्तयेत्तदभेदतः॥
यमुनानिलसंसर्गसमुत्थानन्दसागरः।
कूटस्थं गणितानन्दं पूरयत्येव सन्ततम्॥१५॥
परब्रह्म रसः कृष्णः तस्यापि द्रवरूपिणीं।
यमुनां केन तुलयेद्रसानन्दजलात्मिकाम्॥१६॥
गोमेदखण्डे यमुनाप्रवाहो योजनात्मकः।
तत्र पीतमिव स्वच्छं जलं पीयूषसन्निभम्॥१७॥
उभयोः कूलयोस्तस्याः कुट्टिमानि बृहन्ति च।
नानारत्नमयस्तम्भमण्डपानि द्युमन्ति च॥१८॥
गुञ्जद्भ्रमरपुष्पालिलताकुञ्जावृतानि च।
चतुर्लक्षाणि देवेशि महस्तोमोज्ज्वलानि च॥१९॥

Nijanand App

5. स्वामिनी और कृष्ण के नित्य क्रीड़ा करते समय परिश्रम के ताप से उनके शरीर से जो जल स्राव हुआ,

6. उस जल से पूर्ण जहां पर परम सुन्दर सरोवर है। सौ योजन विस्तीर्ण, रत्न सोपानों से चमकता हुआ,

7. घूमते हुए भ्रमरों से शोभित कमल वन जहां पर हैं, स्वर्णिम पंख वाले पक्षियों से उसका तट मण्डित है।

8. उस तालाब से ही यमुना नदी प्रकट हुई। जिसमें अगाध जल है और बहुत से भंवर शोभा बढ़ा रहे हैं।

9. पावमान से वह नदी विरज मस्तक पर उतरती है। यह एक सौ योजन ऊंचा है। इसके कंदरा में पहुंच धारा की प्रतिध्वनि उत्पन्न होती है।

10. वहां सन्तोष भूमिका को आप्लावित कर तथा कुछ वैराग्य भूमि को आप्लावित करती हुई चिदानन्द भूमि और आनन्द भूमि और

11. रति भूमि को प्लावित करती हुई प्रकाशित भूमि में आती है। प्रकाश और आनन्द भूमियों के मध्य महासर है।

12. सवा लक्ष योजन विस्तृत समुद्र की तरह गम्भीर रत्न के सोपानों वाला यह सरोवर है।

13. उसको भरती हुई उससे निकलकर ज्ञान भूमि को आती है। मुक्ति को आप्लावित कर प्रेम भूमि को जाती है।

14. प्रेम भूमि को आप्लावित कर सुधा सागर में विलीन हो जाती है। हे पार्वती! क्रीड़ा करते हुए इस रस के दोनों दलों से

15. स्पन्दित होने वाली यमुना का अभेद्य रूप में चिन्तन करें। यमुना का जल छूकर आने वाली वायु के संसर्ग से उत्पन्न आनन्द सागर कूटस्थ गणितानन्द को निरन्तर भरता रहता है।

16. कृष्ण परब्रह्म रस है। उनकी भी द्रवरूपिणी यमुना है। तो आनन्द जलात्मिका यमुना की किससे तुलना की जाय?

17. गोमेद खण्ड में यमुना का प्रवाह एक योजन है। वहां पीला स्वच्छ जल अमृत के समान है।

18. यमुना के दोनों तटों पर बड़े-बड़े कुट्टिम हैं और नाना रत्नमय खम्भों के मण्डप हैं।

19. गुंजायमान करते हुए भ्रमरों से युक्त पुष्प तथा लताओं के कुंज से चार लाख योजन विस्तृत अति उज्ज्वल मण्डप हैं।

Nijanand App

उपर्यधः स्थितास्तेषां पक्षिणश्चित्रपक्षकाः।
कुञ्जसञ्चारिणः केचित् केचिन्मण्डपसंस्थिताः॥२०॥
कुट्टिमान्तः स्थिताः केचिद्गायन्तो मधुरस्वराः।
वज्रखण्डमवेशोऽस्यादशयोजनमानतः॥२१॥
पयः फेननिभं तत्र दृश्यते सलिलं शिवम्।
तावानेव प्रवाहोस्यास्तटयोः कुट्टिमानि च॥२२॥
स्वर्णभक्तिविचित्राणि रत्नस्वस्तिकवन्ति च।
चतुर्द्वाराणि सर्वाणि मुक्तातोरणवन्ति च॥२३॥
मणिमण्डपयुक्तानि स्वर्णस्तम्भोज्वलानि च।
वज्रमुक्ताप्रवालाढ्यविष्टरास्तरितानि हि॥२४॥
रसानन्दात्मनां यत्र पक्षिणां कलकूजितैः।
श्रवणानन्दसन्दोहं वर्षद्भिः सुखमीयते॥२५॥
पुष्परागमये खण्डे चिदानन्दात्मभूमिके।
श्यामश्वेतजला भाति प्रविष्टा यमुना नदी॥२६॥
शतयोजनमानेन विशालस्तत्प्रवाहाकः।
स्वर्णमाणिक्यसोपाना फुल्लस्वर्णाम्बुजाकुला॥२७॥
पतत्पद्मरजः पुञ्जपिञ्जरीकृतसज्जला।
हंसकारण्डवानेककोलाहलतटोत्सवा॥२८॥
अन्तः स्थारत्नसिकताचाकचक्यलसज्जला।
एकेनोनं च शतकं योजनानां प्रमाणतः॥२९॥
चिदानन्दमहीव्याप्ता पादेनानन्दभूमिका।
आनन्दभूमिसञ्चारियमुनातटसीमनि॥३०॥
तीर्थसप्तकमीशानि स्मरेल्लीलारसाश्रयं।
जलावतारमार्गाणां तटसीमवनानि तु॥३१॥
वनं चान्द्रमसं नाम द्वितीयं नीलकाननम्।
तृतीयं पुष्पदन्ताख्यं तूर्यमानन्दकाननम्॥३२॥
पञ्चमं हेमकूटाख्यं षष्ठं तत्तारकूटकम्।
गारुडं नाम विख्यातं सप्तमं वनमुच्यते॥३३॥
वने चान्द्रमसे देवि नाम्ना चान्द्रमसो महान्।
न्यग्रोधराज आभाति वैदूर्यविलसच्छदः॥३४॥
चक्षुष्मत्पद्मरागोऽथ फलस्फारप्रभाचितः।
स्वर्णाङ्कुरजटाप्रान्तलम्बिमौक्तिकगुच्छकः॥३५॥

Nijanand App

20. उनके ऊंचे और नीचे विचित्र पंखों वाले पक्षी स्थित हैं। कुछ कुंज में घूमते हैं, कुछ मण्डप में बैठे हैं।

21. कुछ कुट्टिम के अन्दर मधुर स्वर से गा रहे हैं। यमुना के अन्दर दस योजन का एक ब्रज खण्ड प्रवेश है।

22. वहां फेना जैसा जल दिखाई पड़ता है। दोनों तटों पर वैसा ही प्रवाह और वैसे ही कुट्टिम हैं।

23. सोने की विचित्र रचनाएं और रत्न के स्वास्तिक वाले, मुक्ता के तोरण वाले चार द्वार हैं।

24. मणि मण्डप से उक्त स्वर्ण के स्तम्भों से उज्ज्वल वज्रमुक्ता, प्रबाल से उक्त आसन बिछे हैं।

25. सभी पक्षियों के सुन्दर कलरव से रसानन्द श्रवणों में आनन्द समूह की वर्षा कर रहे हैं। इससे सुख प्राप्त होता है।

26. चिदानन्द के आत्म भूमिका में पुष्परागमय खण्ड में श्याम और श्वेत जल वाली यमुना प्रविष्ट होती सुशोभित होती है।

27. इसका प्रवाह शत योजन विशाल है। स्वर्ण और माणिक्य के सोपान तथा खिले हुए कमल हैं।

28. इन कमलों की रज से जल पीला हो रहा है। अनेक हंस, कारंडव के कोलाहल से मानो तट पर उत्सव हो रहा हो।

29. अन्दर स्थित रत्न की बालू से चकाचौंध जिसके जल में उत्पन्न हो रहा है, निन्यानवे योजन उसका प्रमाण है।

30. उसके पाद प्रदेश में आनन्द भूमिका वाली चिदानन्द भूमि व्याप्त है। आनन्द भूमि में बहने वाली यमुना के तट की सीमा पर

31. लीला रस के आधारभूत सात तीर्थ हैं, उनका स्मरण करना चाहिए। जल में उतरने के लिए जो मार्ग बने हैं उनके तट की सीमा में वन हैं।

32. पहला चांद्रमस वन, दूसरा नील कानन, तीसरा पुष्पदन्त, चौथा आनन्द कानन

33. पांचवां हेमकूट, छठा तारकूट, सातवां गारुड़ वन कहा जाता है।

34. हे दवि! चांद्रमस वन में चांद्रमस नाम का एक महान् बरगद वृक्ष है जिसके पत्ते वैदूर्य के समान चमकते हैं।

35. आंखों वाले पद्मराग के समान फल से निकलने वाली प्रभा से व्याप्त है। सुवर्ण के अंकुर जटा के प्रान्त में लटकने वाले मोती के गुच्छे हैं।

Nijanand App

दिव्यपक्षिकृतावासशाखान्दोलनविभ्रमैः।
दर्शनादन्तरात्मानं चमत्कुर्वन्नटो यथा॥३६॥
फलापह्नुतचञ्चुश्रीपत्रापह्नुतपत्रकाः।
महाराजेति कृष्णेति वाचा च दृष्टव्यक्तिकाः॥३७॥
माध्वीकश्रवणां दिव्यां नानाकलपदांचितां।
गिरं च कीरनिवहाः संसृजन्ति कुतूहलम्॥३८॥
यस्याधस्तात्समाभाति शशिकान्तमणिस्थली।
अखण्डचन्द्रकान्तोद्यत्प्रभापुञ्जसुपेशला॥३९॥
यद्दीर्घविटपालम्बमानान्दोलनविभ्रमाः।
सख्यः परस्परं यस्यां प्रतिबिम्बभुजो भुवि॥४०॥
यदालवालवद्भाति माणिक्यवरकुट्टिमः।
चतुर्भिः काञ्चनस्तम्भैर्मुक्तावैदूर्यभूषितैः॥४१॥
उपर्यर्कमणिक्लृप्तमण्डपच्छायया विलः।
विष्वग्विततविटपाक्रान्तप्रान्तमहीतलः॥४२॥
न्यग्रोधमूलसं सूतकल्पद्रुमलतामधः।
दिव्यपल्लवपुष्पाढ्यो रत्नसिंहासनोत्तमे॥४३॥
क्रीडार्थमागतस्तत्र तिष्ठते पुरुषोत्तमः।
योजनायुतमाणिक्यकुट्टिमस्थाः सखीगणाः॥४४॥
हसन्तो हासयन्तश्च दिव्यक्रीडाकुतूहलैः।
मञ्जुस्वरेण गायन्ति प्रियस्यैव यशोऽमलम्॥४५॥
तिष्ठन्त्यत्र महोद्याने तत्स्थानपरिचारिकाः।
चतुर्विंशतिर्देवेशि सहस्राणीति संख्यया॥४६॥
तासां सौधानि शुभ्राणि मणिद्वाराणि पार्वति।
प्रवालदेहलीकानि विष्वक् न्यग्रोधमण्डलम्॥४७॥
द्विपंक्तिभाञ्जि रम्याणि सप्तभौमानि सुन्दरि।
तावन्त्येव विराजन्ते वीथीयुक्तानि मध्यतः॥४८॥
अन्योन्यपंक्तिस्थितहर्म्यलम्बद्दोलासमारूढसखीसमूहः।
अन्योन्यसङ्घट्टन पाणिपालीकरः पुनः श्लेषमुपैति गायन्॥४९॥
हेमप्राकारकलितमिदं चान्द्रमसं वनम्।
यमुनाभिमुखे यस्य द्वारमाभाति काञ्चनम्॥५०॥
द्वारापसव्यसव्यस्थौ कुट्टिमौ रत्नकाञ्चनौ।
महाचतुःस्तम्भलसन्मण्डपाडम्बरस्पृशौ॥५१॥

Nijanand App

36. दिव्य पक्षियों के बसेरे शाखाओं के हिलने से नट के समान दिखने और छिपने का प्रदर्शन कर रहा है।

37. फल में छिपी चोंच और पत्तों से ढके उनके शरीर हैं, किन्तु 'कृष्ण-कृष्ण' कहने से यह प्रकट होते हैं।

38. माध्वीक (महुए) की सुरा के समान कानों को आनन्द देने वाली अनेक पदों से युक्त वाणी से शुक कौतूहल पैदा करते हैं।

39. जिसके नीचे चन्द्रकान्ति मणि की शिलाओं से पूर्ण चन्द्र की कान्ति से उत्पन्न प्रभा पुंज सा फैल रहा है,

40. जहां के ऊंचे-ऊंचे वृक्षों पर लटकते हुए झूले की शोभा उत्पन्न हो रही है, जिसमें सखियां परस्पर पृथ्वी पर प्रतिबिम्बित होती हैं।

41. श्रेष्ठ माणिक्य वाली फर्श थाले की तरह दिखाई पड़ता है। चार मुक्ता वैदूर्य से शोभित स्वर्ण स्तम्भों से युक्त है।

42. जिसके ऊपर चन्द्रकान्ति मणि निर्मित मण्डप की छाया पड़ती है। चारों तरफ फैले वृक्षों से जहां का प्रदेश ढकां है।

43. बरगद के मूल से निकली कल्पद्रुम की लताओं के नीचे रत्न सिंहासन पर दिव्य पल्लव पुष्प धारण किए हुए,

44. क्रीड़ा के लिए आए पुरुषोत्तम स्थित हैं। अयुत योजन विस्तृत माणिक्य कुट्टिम में सखियां बैठी हैं।

45. दिव्य क्रीड़ा के कुतूहल से हंसती और हंसाती हुई मधुर स्वर से प्रिय के निर्मल यश का गान करती हैं।

46. इस महोद्यान में उस स्थान की चौबीस हजार परिचारिकाएं रहती हैं।

47. उनके शुभ्र महल, मणि निर्मित द्वार और प्रवाल की दहली उस बरगद के वृक्ष के चारों ओर हैं।

48. सुन्दर दो पंक्तियों में सात भूमियां उतने ही बीथियों से युक्त हैं।

49. आमने-सामने की पंक्तियों में स्थित महलों में झूलों पर बैठी सखी समूह एक-दूसरे से हाथों के रगड़ने से गाते हुए श्लेष प्राप्त करती हैं।

50. यह चांद्रमस वन सुवर्ण के प्राकार वाला है जिसका द्वार यमुना के सामने खुलता है।

51. इस द्वार के दाहिने बाएं रत्न और कांचन के कुट्टिम हैं जो महान् चार खम्भों से बने मण्डप की शोभा को धारण करते हैं।

Nijanand App

ततः सोपानमार्गेण गन्तव्या यमुना नदी।
सोपानानि सहस्रे द्वे द्वे शते च दशोत्तरे॥५२॥
पद्मरागार्कवैदूर्यप्रवालशशिगारुडैः।
मुक्तेन्द्रनीलगोमेदपुष्पवज्रहिरण्मयैः॥५३॥
पुनः पुनः क्रमादेतैः सोपानैः प्रान्तमण्डपैः।
अधोधः कल्पितैः सम्यक् गम्यते यमुना नदी॥५४॥
मणिकाञ्चनसन्नद्धा यत्र नौकाः सुपेशलाः।
वायूद्धूतध्वजपटाः विभ्रमन्ते यतस्ततः॥५५॥
अनेकपोतसंस्थासु सखीषु पुरुषोत्तमः।
मध्यपोतस्थितः सम्यक् राजते तिसृभिर्युतः॥५६॥
स्वामिनी वामभागस्था दाडिमीपुष्पभांशुकाः।
इन्दिरा सुन्दरी चोभे पुरः सव्यापसव्ययोः॥५७॥
इन्दिरा कृष्णपक्षीया सुन्दरी स्वामिनी परा।
हास्य केलिविहारेषु विवादेषु रसात्मसु॥५८॥
तेनेयमिन्दिरा साक्षात्स्वामिनीप्राणाधिवल्लभा।
सुन्दरी चापि कृष्णस्य प्राणवल्लभा हि सा॥५९॥
एवं क्रीडारसानन्दसखीभिः पुरुषोत्तमः।
वने चान्द्रमसे कृष्णः सेवते च यदृच्छया॥६०॥

इति श्रीमाहेश्वरतन्त्रे उत्तरखण्डे शिवपार्वतीसंवादे द्विचत्वारिंशं पटलम्॥४२॥

त्रिचत्वारिंशं पटलम्

शिव उवाच

नीलोद्यानेऽपि देवेशि कदाचित्पुरुषोत्तमः।
सखीसहस्त्रैरागत्य क्रीडते स्वामिनीमुखैः॥१॥
अखण्डमाणिक्यशिलाकल्पिता नीलभूमिका।
अन्तरान्तरितामुक्तावज्रवैदूर्यविद्रुमैः॥२॥
यत्र वाप्यः सुधापूर्णाः काञ्चनोत्पलमालिनः।
प्रवालपुष्पाभरणा लतोल्लासितमण्डपाः॥३॥
उपर्युपरिविन्यस्तभूमिस्थपरिचारिकाः।
वीणामृदङ्गघोषेण घोषयन्त्यो वनस्थलीम्॥४॥
रुचिरांशुतडिद्दीप्तरत्नभूषणभूषिताः।
नानारसकलाभिज्ञा यशो गायन्ति संहताः॥५॥

Nijanand App

52. वहां से सोपान मार्ग से यमुना को जाना होता है। दो हजार दो सौ दस सोपान हैं।

53. पद्मराग, सूर्यकान्त, वैदूर्य, प्रबाल, चन्द्रकान्त, गारुड़, मुक्ता, इन्द्रनील, गोमेद, पुष्प, बज्र और हिरण्मय

54. बने सोपान और उनके समीप के मण्डप जिनके नीचे होकर यमुना नदी जाया जाता है।

55. मणि और स्वर्ण से तैयार सुन्दर नौकाएं जिनके वायु के चलने से ध्वज लहराते हैं, सुशोभित हो रही हैं।

56. अनेक जहाजों पर सखियां बैठी हैं। पुरुषोत्तम बीच के पोत में तीन सखियों सहित बैठे शोभायमान होते हैं।

57. दाड़िम (अनार) फल के सदृश वस्त्रों को धारण किए वाम भाग में स्वामिनी, सामने एक दाएं और एक बाएं इन्दिरा और सुन्दरी बैठती हैं।

58. इन्दिरा कृष्ण का पक्ष लिए और सुन्दरी स्वामिनी का पक्ष लिए, लीला क्रीड़ाओं में रसात्मक विषाद एवं हास में तत्पर हैं।

59. इसीलिए यह इन्दिरा स्वामिनी की प्राणबल्लभा और सुन्दरी कृष्ण की प्राण बल्लभा है।

60. इस प्रकार से सखियों के साथ चांद्रमस वन में पुरुषोत्तम कृष्ण इच्छानुसार क्रीड़ा रस का आनन्द लेते हैं।

माहेश्वरतन्त्र के उत्तर खण्ड के शिव-पार्वती संवाद का बयालीसवां अध्याय समाप्त हुआ।

तैंतालीसवां अध्याय

शिव ने कहा—

1. हे देवेशि! कभी पुरुषोत्तम स्वामिनी आदि सहस्त्रों सखियों के साथ आकर नील उद्यान में क्रीड़ा करते हैं।

2. अखण्ड माणिक्य शिला से बनी नील भूमिका बीच-बीच में मुक्ता, बज्र, वैदूर्य, विद्रुम से जटित हैं।

3. जहां पर सुवर्ण कमल की मालाओं वाली सुधा पूर्ण बावली हैं, जहां प्रबाल के पुष्पों के आभूषण वाली लताओं से शोभित मण्डप हैं।

4. नीचे से ऊपर की ओर की भूमियों में परिचारिकाएं वीणा, मृदंग के शब्द से वनस्थली की ध्वनि करती हैं।

5. जो विद्युत के समान दीप्त रत्न आभूषणों से अलंकृत है। जहां पर सकल रस कला ज्ञाता एकत्र होकर यशगान करती हैं।

Nijanand App

चतुर्विंशतिसाहस्त्रं तत्स्थानपरिचारिकाः।
द्विपंक्त्या परितस्तासां मन्दिराण्युज्वलन्ति च॥६॥
तन्मध्यभूमौ देवेशि क्रीडासौधमनुत्तमं।
कोटिचन्द्रप्रभापुञ्जधिक्कारिमणिकल्पितम्॥७॥
चतुर्दिक्षु लसत्स्वर्णस्तम्भराजिविराजितम्।
प्रतिस्तम्भं प्रविन्यस्तपुत्रिकाभिरलङ्कृतम्॥८॥
मुक्ताप्रवालरचितंकपाटद्वारतोरणम्।
हंसपारावतशुकैर्भित्तिशङ्कुकृतास्पदैः॥९॥
अन्योन्यं वादिभिरिव क्षिप्ता वाचो जिगीषया।
मनः श्रोत्रहरा यत्रानन्दयन्ति सखीगणान्॥१०॥
सौधाङ्गणचतुर्दिक्षु कुट्टिमानि बृहन्ति च।
मण्डपाट्टालयुक्तानि मणिस्तम्भशतानि च॥११॥
दीर्घिकास्तेषु दिव्यन्ति सृजन्त्यः सलिलोन्नतिम्।
कल्पद्रुमकुसुमामोदसुवासितजलाः शिवाः॥१२॥
नर्त्तक्यो यत्र नृत्यन्ति नाट्यविद्याविशारदाः।
यन्नूपुररणत्काराः श्रूयन्ते कुञ्जभूमिषु॥१३॥
कुट्टिमनिकटारूढाश्चत्वारो जम्बुपादपाः।
शाखायां शतविस्ताराः काननस्येव केतवः॥१४॥
शाखाबद्धसुवर्णशृङ्खललसद्दोलाधिरूढाङ्गना
हस्ताहस्तमृदङ्गधीरनिनदैरानन्दयन्त्यः शिखीन्।
विद्युत्पुञ्जनिभांशुकांशुपरिधानापादयन्त्यश्चलान्,
यातायातविहारविभ्रमलसत्स्मेराननाक्षिभृतः॥१५॥
इन्द्रनीलमणिभ्राजत्प्राकारपरिवेष्टिते।
नीलोद्याने महारम्ये क्रीडते पुरुषोत्तमः॥१६॥
यमुनाभिमुखे यस्य महाद्वारं विराजते।
चन्द्रकान्तशिलाक्लृप्तकपाटं रत्नतोरणम्॥१७॥
द्वारस्य दक्षिणे वामे काञ्चनौ कुटिमौ समौ।
चतुर्द्वारमणिस्तम्भवज्रकल्पितमण्डपौ॥१८॥
ततः सोपानमार्गेण गन्तव्या यमुना नदी।
सोपानानि सहस्त्रे द्वे शते च दशोत्तरे॥१९॥
अस्मिन् सोपानमार्गेपि वामदक्षिणयोः स्थिताः।
रत्नमण्डपशोभाढ्याः कुट्टिमाः सन्त्यनेकशः॥२०॥

Nijanand App

6. उस स्थान पर चौबीस हजार परिचारिकाएं हैं। दो कतारों में उनके उज्ज्वल भवन हैं।

7. उसके मध्य भूमि में क्रीड़ा महल है जो कोटि चन्द्र की प्रभा को तिरस्कृत करने वाली मणियों से निर्मित है।

8. यह चारों दिशाओं में स्वर्ण स्तम्भ की पंक्तियों से शोभित है और प्रतिस्तम्भ चित्रित पुतलियों से अलंकृत है।

9. मुक्ता प्रबाल से निर्मित कपाटों वाला मुख्य द्वार है। हंस, पारावत, शुक, आदि पक्षी दीवाल की कोनों पर स्थान बना कर बैठे हैं।

10. जो वादियों की तरह एक-दूसरे की वाणी को जीतने की इच्छा से आक्षेप कर रहे हैं। मन और कानों को हरने वाले पक्षी यहां सखियों को आनन्दित करते हैं।

11. महल के आंगन की चारों दिशाओं में बड़े-बड़े कुट्टिम हैं। मण्डपों से युक्त मणियों के सैकड़ों स्तम्भ हैं।

12. पानी जिनमें बढ़ता रहता है ऐसी बावलियां उनमें हैं जिनके जल कल्पद्रुम वृक्ष की सुगन्ध से वासित हैं।

13. जहां पर नाट्य विद्या विशारद नर्तकियां नृत्य करती हैं। जिनमें नूपुरों की ध्वनि कुंजों में सुनाई देती है।

14. कुट्टिम के निकट चार जामुन के वृक्ष हैं जिनकी शाखाओं के सौ विस्तार हैं जो जंगल की ध्वजा के समान हैं।

15. शाखाओं में लटकती स्वर्ण की जंजीरों के झूले पर बैठी अंगनाएं हाथों से मृदंग बजा गम्भीर स्वर से मयूरों को आनन्दित कर रही हैं। बिजलियों के समूह के समान वस्त्रों के परिधान को चंचल बनाती हुई यातायात की क्रीड़ा के कारण मुस्कराते हुए मुखयुक्त नेत्रों वाली अंगनाएं हैं।

16. इन्द्रनील मणि से सुशोभित प्राकार से घिरे अति सुन्दर नील उद्यान में पुरुषोत्तम क्रीड़ा करते हैं।

17. चन्द्रकान्त की शिला निर्मित कपाट एवं रत्नों के तोरण वाला महाद्वार यमुना की ओर है।

18. द्वार के दक्षिण और बाम भाग बराबर सुवर्ण कुट्टिम है जिसके चार द्वारों के मणिस्तम्भ तथा ब्रज से निर्मित मण्डप हैं।

19. वहां से सोपान मार्ग से यमुना नदी को जाना चाहिए जिसमें दो हजार एक सौ दस सोपान हैं।

20. इस सोपान मार्ग में भी दाहिने बाएं रत्न मण्डप वाले अनेक कुट्टिम हैं।

Nijanand App

कदाचिज्जलखेलान्ते तिष्ठन्त्यत्र सखीगणाः।
चतुरस्रा विशालास्ति तत्रोच्चैर्मणिवेदिका॥२१॥
वेदिकायां विशालायां कुट्टिमो मणिभूषितः।
स्वर्णस्तम्भचतुर्द्वारो मुक्तामण्डितमण्डपः॥२२॥
वेदिकायां समुद्भूते द्वे दले स्वर्णपत्रके।
पार्श्वयोः पद्मरागीयपुष्पप्रचयभूषिते॥२३॥
मण्डपोपरि तच्छाखाः प्रसृताः कुसुमाकुलाः।
काश्चन प्रसृतास्तस्य मध्यदेशे सुशोभने॥२४॥
तत्र सिंहासनं देवि कोटिचन्द्रांशुनिर्मलम्।
इन्दिरासुन्दरीभ्यां तु पार्श्वयोः समधिष्ठितम्॥२५॥
कदाचित्तत्र भगवान् कृष्णः कमललोचनः।
तिष्ठते क्रीडते ताभिः सखीभिः कृतकौतुकः॥२६॥
स्मरेदथो वनं दिव्यं पुष्पदन्ताख्यमद्भुतम्।
वैदूर्यवीरुधां यत्र राजयो भान्ति पेशलाः॥२७॥
लतापरिमलोद्गारलोभमुग्धीकृताशयाः।
इतस्ततोनुधावन्ति भृङ्गा मायार्दिता यथा॥२८॥
पुष्पदन्ताभिधो यत्र दाडिमीतरुरुल्लसन्।
माणिक्यकुसुमश्रीको वैदूर्य रुचिरच्छदः॥२९॥
विशुद्धस्फाटिकमयी यत्र भूमिर्विराजते।
अरजस्कामृतस्यन्दा प्रतिबिम्बितभूरुहा॥३०॥
वैदूर्यपत्रद्युतिपुञ्जपूरितं माणिक्यपुष्पप्रभयानुरञ्जितम्।
वनं विशन्त्यो हि मयूरवल्लभा नृत्यन्ति विद्युद्घनशङ्किताशयाः॥३१॥
विदीर्णसद्दाडिमबीजसंहतीर्निरीक्षमाणाः प्रबलानुरागिणीः।
स्वदन्तसादृश्यमुपैति वा न वाभ्युपेतुमादर्शधरा भवन्ति॥३२॥
योजनायुतमूर्द्धन्यः शाखाक्रान्तमहीतलः।
फलपल्लवपुष्पश्रीभारभुग्नमहाभुजः॥३३॥
अनेकपक्षिसङ्घातगीतश्रवणानन्दनः।
यदधः कुट्टिमवरो राजते स्वर्णनिर्मितः॥३४॥
प्रवालस्तम्भशोभाढ्यरत्नमण्डपमण्डितः।
पुष्पदन्तः सखीवृन्दावतंसीकृतपुष्पकः॥३५॥
आधिपत्ये वनस्यास्य नियुक्त इव राजते।
स्वर्णकुट्टिममध्ये तु वैदूर्यमणिनिर्मितम्॥३६॥

Nijanand App

21. कभी जल क्रीड़ा की समाप्ति पर सखियां यहां बैठती हैं। यहां ऊंची, चौकोर विशाल मणि वेदी हैं।

22. विशाल वेदी में कुट्टिम है। जिसके चार द्वार स्वर्ण स्तम्भ वाले तथा मुक्ता मण्डित मण्डप हैं।

23. वेदी में स्वर्ण पत्र के दो दल प्रकट हैं। इनके बगल में पुष्पराग के पुष्पों का समूह शोभित है।

24. मण्डप के ऊपर फूलों से लदी उसकी शाखाएं फैली हैं। कुछ उसके मध्य देश में फैली हैं।

25. हे देवि! कोटि चन्द्रमा की किरणों के समान निर्मल वहां सिंहासन हैं जिस पर इन्दिरा और सुन्दरी को बगल में बैठाकर

26. भगवान कृष्ण कभी बैठते हैं और उन सखियों के साथ कौतुक क्रीड़ाएं करते हैं।

27. इसके बाद पुष्पदन्त नाम का अद्‌भुत वन है जहां वैदूर्य की लताओं की पंक्तियां शोभित हो रही हैं।

28. लता की सुगन्धि से लुब्ध माया से घिरे मनुष्यों की भांति भौरें इधर-उधर दौड़ते हैं।

29. यहां पर पुष्पदन्त नामक दाड़िम का वृक्ष है जो माणिक्य के फूलों के समान शोभा वाला तथा वैदूर्य के समान सुन्दर पत्तों वाला है।

30. विशुद्ध स्फटिक मणिमय जहां की भूमि है। जिस भूमि में धूल नहीं है। अमृत का प्रवाह है तथा वृक्षों के प्रतिबिम्ब पड़ रहे हैं।

31. वैदूर्य के पत्तों की द्युति से पूर्ण, माणिक्य के पुष्पों की प्रभा से अनुरंजित वन में प्रवेश करती हुई मयूरियां विद्युतयुक्त मेघ की शंका से नृत्य करने लगती हैं।

32. फटे हुए दाड़िम के बीज समूहों को देखती हुई अति अनुराग युक्त सखियां यह दाड़िम के बीज हमारे दांतों से सदृश्य हैं या नहीं, यह जानने के लिए दर्पण धारण करती हैं।

33. अयुत योजन ऊंची शाखाओं से पृथ्वी को घेरने वाला तथा फल, पल्लव तथा पुष्प के भार से शाखा रूपी भुजाओं को झुकाने वाला

34. अनेक पक्षियों के गीत श्रवण का आनन्द देने वाला स्वर्ण निर्मित कुट्टिम नीचे की ओर सुशोभित है।

35. प्रबाल के खम्भों की शोभायुक्त रत्न मण्डप वाला, सखि समूह जिसके पुष्पों का आभूषण बनाती है ऐसा पुष्प दन्त

36. इस वन के स्वामी के रूप में नियुक्त सा शोभित हो रहा है। स्वर्ण कुट्टिम के मध्य में वैदूर्य मणि से निर्मित

Nijanand App

महासिंहासनं देवि यच्च कृष्णोधितिष्ठति।
नीलाम्बर इवाभाति शुभ्रवस्त्रधरोपि यत्॥३७॥
सर्वाः सख्योपि वैदूर्यसिंहासनपरम्पराम्।
जुषाणाः परितो भान्ति नीलाम्बरधरा इव॥३८॥
अतीव भूषाम्बरवैपरीत्यं निरीक्ष्यमाणाः प्रहसन्ति सख्यः।
स्वानां प्रियस्यापि परस्परं ताः प्रदत्ततालीकरपङ्कजेषु॥३९॥
चतुर्विंशतिसाहस्त्रं तत्स्थानपरिचारिकाः।
परिचर्यापरास्तत्र वसन्ते कृष्णयोषिताम्॥४०॥
दिव्यपुष्पाम्बराकल्पैर्दिव्यगन्धानुलेपनैः।
दिव्यानन्दरसैस्तत्र सेवन्ते परिचारिकाः॥४१॥
नानाक्रीडारसासक्ता यदा सख्यः प्रियेण हि।
तदा काचिन्मृदङ्गेण काचित्तन्त्रीरवेण च॥४२॥
काश्चिन्मधुरवीणाभिर्नृत्यगीतादिभिश्च काः।
परितः स्वगृहारूढा दूरतस्तोषयन्ति ताः॥४३॥
पूर्वोक्तेन प्रकारेण तासां सौधानि पार्वति।
द्विपंक्त्यापरितो भान्ति वीथीयुक्तानि मध्यतः॥४४॥
वैदूर्यरत्नविलसत्प्राकारपरिवेष्टिते।
पुष्पदन्तमहोद्याने क्रीडते पुरुषोत्तमः॥४५॥
यमुनाभिमुखे यस्य राजते गोपुरं महत्।
पद्मरागमणिक्लृप्तकपाटद्वारतोरणम्॥४६॥
ततः सोपानमार्गेण गन्तव्या यमुना नदी।
सोपानानि च तावन्ति संख्यावर्णविभेदतः॥४७॥
द्वारस्य दक्षिणे वामे कुट्टिमौ सुमनोहरौ।
स्तम्भमण्डपसंयुक्तौ मुक्तामाणिक्यतोरणौ॥४८॥
जलक्रीडावसाने तु कृष्णः स्वसखीवृतः।
मुहूर्त्तं कुट्टिमे स्थित्वा ततो याति निजालयम्॥४९॥

इति श्रीमाहेश्वरतन्त्रे उत्तरखण्डे शिवगौरीसंवादे त्रिचत्वारिंशं पटलम्॥४३॥

चतुश्चत्वारिंशं पटलम्

शिव उवाच

स्मरेदथो महानन्दवनं सर्वर्तुसेवितम्।
नानापुष्पलताकुञ्जपुञ्जशोभाविराजितम्॥१॥

Nijanand App

37. महासिंहासन है, जिस पर कृष्ण बैठते हैं। यहां बैठने पर वह श्वेत वस्त्र धारण करने पर भी नील वस्त्र धारी से दिखते हैं।

38. सब सखियां भी चारों ओर वैदूर्य के सिंहासनों पर बैठी हुई नील वस्त्र धारिणी सी प्रतीत होती हैं।

39. सखियां अपने तथा प्रिय के वस्त्र आभूषणों के रंग की अत्यन्त विपरीतता देखती हुई हाथ से ताली लगाकर हंसती हैं।

40. चौबीस हजार इस स्थान की परिचारिकाएं बसन्त में कृष्ण के स्त्रियों की परिचर्या करती हैं।

41. दिव्य पुरुषों, वस्त्रों और चन्दनादि अनुलेपन द्रव्यों, दिव्य आनन्द रसों से परिचारिकाएं यहां सेवा करती हैं।

42. जब सखियां प्रिय के साथ नाना क्रीड़ा रसों में आसक्त होती हैं तो कोई मृदंग, कोई तन्त्री,

43. कोई मधुर वीणा, कुछ नृत्य, गीत आदि के द्वारा अपने घरों पर चढ़कर दूर से ही उनको सन्तुष्ट करती हैं।

44. पूर्वोक्त प्रकार से उनके महल दो पंक्तियों वाले मध्य में बीथी से युक्त शोभित होते हैं।

45. वैदूर्य तथा रत्नों से सुशोभित प्राकार से घिरे पुष्पदन्त महोद्यान में पुरुषोत्तम क्रीड़ा करते हैं।

46. यमुना के सम्मुख पद्मराग मणि से निर्मित कपाट युक्त तोरण हैं जिसमें वह महान् गोपुर सुशोभित है।

47. वहां से सोपान मार्ग से यमुना नदी को जाया जाता है। वहां भी संख्या और वर्ण भेद से उतने ही सोपान हैं।

48. द्वार के दाहिने और बाएं सुन्दर दो कुट्टिम हैं जिनमें स्तम्भ मण्डप तथा मुक्ता माणिक्य के तोरण हैं।

49. जल क्रीड़ा की समाप्ति पर अपनी सखियों से युक्त श्रीकृष्ण कुट्टिम पर क्षण भर ठहर कर निज घर को जाते हैं।

माहेश्वरतन्त्र के उत्तर खण्ड में शिव-पार्वती संवाद का तैंतालीसवां अध्याय समाप्त हुआ।

चौवालीसवां अध्याय

शिव ने कहा—

1. इसके पश्चात् सभी ऋतुएं जहां सर्वदा रहती हैं, नाना पुष्पों, लताओं, कुंजों की शोभा से सुशोभित महानन्द वन का स्मरण करना चाहिए।

Nijanand App

यत्र भूः काञ्चनी दिव्या नवरत्नविचित्रिता।
सार्द्धैकयोजनायामविस्तारा मध्यवेदिका॥२॥
चतुरस्रा दिव्यरत्ना प्रभापुञ्जारुणान्तरा।
तन्मध्ये कुट्टिमो देवि योजनार्द्धप्रमाणतः॥३॥
रजतस्वर्णवज्रेन्दुमुक्ताविद्रुमगारुडैः।
वैदूर्यैरिन्द्रनीलैश्च पद्मरागार्कगोमदैः॥४॥
समन्ततः परिक्लृप्तस्तम्भराजिविराजितः।
दक्षिणोत्तरमध्यस्थसूत्रमाकर्ष्य पार्वति।
पूर्वगर्भगतं कुर्यादधः पश्चिमगर्भगम्॥५॥
इन्द्रनीलप्रभालिप्तमेवं कोणचतुष्टयम्।
कल्पद्रुमलताकोणे चतुष्कोपरिराजते॥६॥
शतयोजनसंसर्पिदिव्यसौरभमेदुरा।
दिव्यप्रवालकुसुमामोदमोहितषट्पदा॥७॥
मन्दमारुतसंसर्गचलत्कुसुमपल्लवा।
पद्मरागमयस्तम्भौ पूर्वद्वारे नियोजितौ॥८॥
महानीलमणिस्तम्भौ दक्षिणे तु व्यवस्थितौ।
महावज्रमणेः स्तम्भौ प्रतीच्यां दिशि कल्पितौ॥९॥
वैदूर्यस्तम्भयुगलमुत्तरे ह्यनुकल्पितम्।
तप्तचामीकरक्लृप्तमण्डपस्तेषु कल्पितः॥१०॥
अन्तर्बहिस्तत्र मुक्ता भान्ति तारागणा इव।
अनेककोटिचन्द्रार्कप्रभाधिक्कारिवर्चसः॥११॥
वेदिमध्ये तु कलशा विभान्ति मणिमेदुराः।
मण्डपाधो मध्यभागे रत्नसिंहासनोत्तमम्॥१२॥
परितस्तस्य देवेशि सिंहासनपरम्परा।
कृष्णप्रियानिवेशार्हा कृष्णे मध्यासनं गते॥१३॥
वेदिकापरितो भान्ति नानामणिमया लताः।
मालती मल्लिका यूथी जातिचन्दनपाटली॥१४॥
कदम्बपारिजाताम्रबकुलार्जुनकेसराः।
केतकीचम्पकाशोकनीपाश्वत्थवटादिकाः॥१५॥
रत्नच्छदा घनीभूताः पुष्पपल्लवमण्डिताः।
मरुल्लीलाचलशाखारूढस्थल विहङ्गमाः॥१६॥

Nijanand App

2. जहां नव रत्नों से चित्रित स्वर्णमयी दिक भूमि है, डेढ़ योजन आयाम और विस्तार वाली

3. चौकोर दिव्य रत्नों के प्रभा पुंज से अरुण वर्ण के मध्य वाली मध्य वेदी है। उसके मध्य में आधे योजन प्रमाण का कुट्टिम है।

4. रजत, स्वर्ण, बज्र, चन्द्रकान्त, मुक्ता, विद्रुम, गरुड़मयी, वैदूर्य, इन्द्रनील, पद्मराग, सूर्यकान्त गोमेद से

5. चारों ओर जटिल स्तम्भों की पंक्तियां हैं। दक्षिण उत्तर की ओर मध्य में सूत्र को खींचकर पूर्व गर्भ और उसके नीचे पश्चिम गर्भ बनाया गया है।

6. इसी प्रकार इन्द्र नील मणि की प्रभा से युक्त चार कोने पर कल्पद्रुम लता वाला आंगन है।

7. सौ योजन तक फैलने वाली दिव्य सुगन्धि से युक्त दिव्य प्रबाल पुष्पों की सुगन्धि से भ्रमरों को मोहित करने वाली,

8. मन्द वायु के चलने से कुसुम पल्लव जिसके चंचल हो रहे हैं, ऐसी भूमि है। इसके पूर्व द्वार में पद्मराग के स्तम्भ हैं।

9. दक्षिण में महानील मणि के दो स्तम्भ हैं। पश्चिम में महाबज्रमणि के दो स्तम्भ कल्पित हैं।

10. उत्तर में वैदूर्य के दो स्तम्भ कल्पित हैं। तपाए हुए स्वर्ण के समान मण्डप उसमें निर्मित हैं।

11. अन्दर और बाहर वहां मुक्ता तारागण के समान शोभित होते हैं। अनेक कोटि सूर्य चन्द्र की प्रभा को तिरस्कृत करने वाली उनकी आभा है।

12. वेदी के मध्य में मणियों से जटित कलश सुशोभित होते हैं। मण्डप के नीचे मध्य भाग में उत्तम रत्न सिंहासन है।

13. उसके चारों ओर कृष्ण की प्रियाओं के बैठने योग्य सिंहासन है। वहां कृष्ण मध्य आसन में विराजमान होते हैं।

14. वेदियों के चारों तरफ मणिमय मालती, मल्लिका, यूथी, जाति, चन्दन और पाटली की लताएं हैं।

15. कदम्ब, पारिजात, आम्र, बकुल, अर्जुन, केशर, केतकी, चंपक. अशोक, नीप, अश्वत्थ, वट आदि वृक्ष

16. रत्नों से ढके पत्ते, फूल एवं पल्लवों से सुशोभित हैं और जिनकी वायु के चलने से हिलती हुई शाखाओं पर पक्षी बैठे हैं।

Nijanand App

रत्नकुल्याविनिर्गच्छत्सुधापूरसुतर्पिताः।
आभान्ति पादपा दिव्या महानन्दवने प्रिये॥१७॥
चतुर्विंशतिसाहस्त्रं तत्स्थानपरिचारिकाः।
तासां गृहाणि दिव्यानि परितो भान्ति सुन्दरि॥१८॥
वज्रप्रकल्पितमहाप्राकारपरिवेष्टितं।
महानन्दवनं वन्दे रसानन्दैकपत्तनं॥१९॥
यमुनाभिमुखे यस्य गोपुरं पद्मरागजम्।
यौगपद्योदितानेकबालार्कद्युतिभासुरम्॥२०॥
कुट्टिमद्वयमीशानि यद्बहिर्भातिसुन्दरम्।
चतुर्द्वारं चतुःस्तम्भं शोभाविर्भावभूमिकम्॥२१॥
ततः सोपानमार्गेण गन्तव्या यमुना नदी।
स्मरेदथो महेशानि हेमकूटवनं महत्॥२२॥
यत्र हेममयी भूमिर्हेमपादपसङ्कुला।
तन्मध्ये कुट्टिमौ हैमौ हैमस्तम्भचतुष्टयम्॥२३॥
गव्यूत्यर्द्धयुतः श्रीमान् हैममण्डपभूषितः।
चतुर्विंशतिसाहस्त्रं तत्स्थानपरिचारिकाः॥२४॥
तासां गृहाणि दिव्यानि हैमोपस्करवन्ति च।
मण्डपम्परितो भांति तडितामिव राशयः॥२५॥
सौधमण्डपयोर्देवि यावत्स्यादन्तरालकम्।
तत्सर्वं परितो व्याप्तं नारङ्गीलतिकाशतैः॥२६॥
एलालविङ्गकाश्मीरसुरभ्यनिलसेवितम्।
मृद्वीकामण्डपयुतं मातुलिङ्गलतोल्लसत्॥२७॥
बन्धूकैर्हयमारैश्च लवलीभिरलङ्कृतम्।
कर्णिकारैश्च कुन्दैश्च चम्पकैश्चन्दनैर्वृतम्॥२८॥
नानापक्षिगणाध्वानमुखरीकृतदिङ्मुखम्।
महानन्दमहोल्लासक्रान्तकोकिलकूजितम्॥२९॥
नृत्यत्कलापिनिकरं गुञ्जन्मत्तमधुव्रतम्।
धावद्धरिणसञ्चारमुत्पतत्प्लवगद्रुमम्॥३०॥
हेमप्राकारसंवीतं हेमकूटमिवास्थितम्।
हेमकूटमहोद्यानं हेमगोपुरमण्डितम्॥३१॥
हेमकुट्टिमविभ्राजद्बहिः पार्श्वद्वयोज्ज्वलम्।
ततः सोपानमार्गेण गन्तव्या यमुना नदी॥३२॥

Nijanand App

17. रत्नों की नालियों से निकलते हुए अमृत से तृप्त होने वाले दिव्य वृक्ष महानन्द वन में शोभित हैं।

18. उस स्थान की चौबीस हजार परिचारिकाएं हैं। उनके दिव्य गृह चारों ओर सुशोभित हैं।

19. ब्रज्र निर्मित महान् प्राकार से घिरे महानन्द वन की मैं वन्दना करता हूं जिसमें रसानन्द नामक एक शहर है।

20. एक साथ उदय लेने वाले अनेक बाल सूर्यों की द्युति से प्रकाशित पद्मराग मणि निर्मित गोपुर यमुना के सामने है।

21. जिसके बाहर अति सुन्दर दो कुट्टिम, चार द्वार और चार स्तम्भ शोभा पा रहे हैं।

22. वहां से सोपान मार्ग से यमुना नदी जाना चाहिए। हे देवि! हेमकूट वन का स्मरण करना चाहिए।

23. जहां की भूमि तथा वृक्ष स्वर्णमय हैं। उसके मध्य में स्वर्ण के चार स्तम्भों वाले चार स्वर्णिम कुट्टिम हैं।

24. अर्ध गव्यूति (एक कोस) का विस्तृत सुवर्ण मण्डप है। जहां चौबीस हजार परिचारिकाएं हैं।

25. स्वर्ण के उपकरणों वाले उनके दिव्य गृह मण्डप के चारों ओर विद्युत राशियों की तरह शोभित होते हैं।

26. महल और मण्डप के मध्य भाग में नारंगी की सैकड़ों लताएं व्याप्त हैं।

27. एला, लवंग, कस्तूरी की सुगन्धि युक्त वायु से सेवित द्राक्षा के मण्डप जो नीबू वृक्षों से सुशोभित हैं।

28. यह बन्धूक, हथमार, लवली से अलंकृत कनेर, कुन्द, चंपक एवं चन्दन से आवृत्त हैं।

29. नाना पक्षियों के शब्द से दिशाएं गुंजायमान हो रही हैं। जहां महा आनन्द उल्लासयुक्त कोकिल बोल रही हैं।

30. मोर जहां नाच रहे हैं, भौरे गुंजार कर रहे हैं। हरिण दौड़ रहे हैं और वानर वृक्षों पर उछल-कूद रहे हैं।

31. ऐसा सुवर्ण के प्राकार से वेष्टित स्वर्ण के शिखर समान स्थित स्वर्ण गोपुर से मण्डित हेमकूट उद्यान है।

32. हेम कुट्टिम तथा बाहर के दोनों पार्श्व शोभा युक्त हैं। वहां से सोपान मार्ग से यमुना नदी जाना चाहिए।

Nijanand App

ततश्च तारकूटाख्यं स्मरेद्विपिनमद्भुतम्।
नीलरत्नमयी भूमिर्भ्राजते यत्र निस्तुला॥३३॥
कदम्बकल्पद्रुमपारिजातैरमन्दगन्धाहृतभृङ्गसङ्घैः।
मरुल्लसत्पल्लवराजिपुष्पैर्यथा सदः सद्भिरिवातिशोभते॥३४॥
जम्बीरैर्निम्बुकैश्चैव कोविदाराजुनैरपि।
श्रीपर्णैः सरसैराम्रैः पनसैर्बकुलैरपि॥३५॥
नागपुन्नागमन्दारैस्तथैवामलकीद्रुमैः।
अम्लानपुष्पाभरणैः समन्तात् परिशोभितम्॥३६॥
तारकूटमहं वन्दे तारप्राकारवेष्टितम्।
चतुर्विंशतिसाहस्त्रं तत्स्थानपरिचारिकाः॥३७॥
तासां गृहाणि दिव्यानि तारकुट्टिममुच्चकैः।
परितो भान्ति देवेशि दलानीव कुशेशयम्॥३८॥
यमुनाभिमुखे यस्य भाति गोपुरमुन्नतम्।
गोपुरस्य बहिर्भागे राजिं कुट्टिमद्वयम्॥३९॥
स्तम्भैश्चतुर्भिरुद्भ्रान्तं राजतैः स्वर्णसूत्रितैः।
ततः सोपानमार्गेण गन्तव्या यमुना नदी॥४०॥
स्मरेदथो महेशानि गारुडं वनमद्भुतं।
गारुडै रत्ननिचयैः परिकल्पितभूमिकम्॥४१॥
तत्र हस्तान्तरे देवि चतुष्कं मणिकल्पितम्।
पूर्वपश्चिमभागेन चन्द्रकान्तमणिद्वयम्॥४२॥
दक्षिणोत्तरभागेन पद्मरागद्वयाङ्कितम्।
अन्योन्यचुम्बितमुखं शुद्धस्वर्णगृहार्पितम्॥४३॥
एवं कोटिचतुष्काणि हस्तमात्रान्तरान्तरम्।
भान्ति सर्वत्र देवेशि गरुत्ममणिभूमिषु॥४४॥
यस्याः प्रान्तचतुष्केषु स्थलपङ्केरुहाण्यपि।
यत्परागरजःपुञ्जैररुणीक्रियतेऽम्बरम्॥४५॥
तन्मध्यदेशगः श्रीमान् भाति माणिक्यमण्डपः।
सूर्यकान्तमणिस्थम्भनीलपत्रश्रियोल्लसत्॥४६॥
तन्मध्ये दीर्घिका दीर्घा स्वर्णपङ्कजमालिनी।
यद्गन्धाघ्राणमत्तालिझङ्कारमुखरान्तरा॥४७॥
माणिक्यभूमिपतिता अपि मौक्तिकराजयः।
न हर्षयन्ति कादम्बान् गुञ्जाशङ्काप्रतारितान्॥४८॥

Nijanand App

33. इसके पश्चात् तारकूट नामक अद्भुत वन का स्मरण करना चाहिए। जहां तुलना रहित नील रत्न निर्मित भूमि है।

34. कदम्ब, कल्पद्रुम, पारिजात की तीव्र गन्ध से जहां भंवरों का समूह आकृष्ट होता है, वायु के द्वारा कम्पित पल्लव समूह युक्त पुष्पों से सज्जनों से सभा की तरह उस भूमि की शोभा बढ़ रही है।

35. जंबीर, निंबुक, कोविदार, अर्जुन, श्रीपर्ण, सरसआम्र, कटहल, बकुल,

36. नागर, पुन्नाग, मंदार, आंवला से जिनके पुष्प रूपी आभरण कभी मलीन नहीं होते, उन वृक्षों से चारों ओर से शोभित

37. तार (शीश) के प्राकार से वेष्टित तारकूट की मैं वन्दना करता हूं। उस स्थान की चौबीस हजार परिचारिकाएं हैं।

38. तार के कुट्टिम के चारों ओर कमल के दल के समान उनमें दिव्य गृह सुशोभित हैं।

39. ऊंचा गोपुर यमुना के सामने स्थित है। गोपुर के बाहर की ओर दो कुट्टिम हैं जिनका स्तम्भ रजतमय और स्वर्ण सूत्रों से युक्त है।

40. वहां से सोपान मार्ग से यमुना नदी जाना चाहिए।

41. हे देवि! तत्पश्चात् अद्भुत गारुड वन का स्मरण करना चाहिए। जहां गारुड रत्नों से निर्मित भूमि है।

42. वहां एक हाथ की दूरी पर मणि निर्मित चौकोर स्थान है। वहां पर पूर्व पश्चिम दो चन्द्रकान्त मणियां हैं।

43. दक्षिण उत्तर दो पद्मराग मणियों, जिनकी छाया एक-दूसरे पर ऐसे पड़ती है जैसे वे एक-दूसरे के मुख का चुम्बन कर रहे हों, से सुशोभित हैं। यहां के गृह शुद्ध स्वर्ण से युक्त हैं।

44. इस प्रकार एक-एक हाथ की दूरी पर एक करोड़ चबूतरे गारुड मणि की भूमि पर हैं।

45. जिसके किनारे चबूतरों में स्थल कमल हैं। जिनकी धूल से आकाश लाल किया जा रहा है।

46. उसके मध्य में माणिक्य मण्डप है। जिसमें सूर्यकान्त मणि के खम्भे नीले पत्तों की शोभा से सुशोभित हैं।

47. उसके मध्य में एक बड़ी सुवर्ण कमलों वाली बावली है। जिसके गन्ध से मतवाले भंवरे वहां गुंजार कर रहे हैं।

48. माणिक्य की भूमि पर पड़े हुए मोती, गुंजा की आशंका में पड़े हंस को आनन्द नहीं दे रहे हैं।

Nijanand App

माणिक्यकन्दलाक्रान्ता वैदूर्यविलसच्छदाः।
मण्डपं परितो दूराद्विभान्ति कदलीलताः॥४९॥
कदलीकाण्डमारूढा हंसा गोफेनसन्निभाः।
तत्पत्रद्युतिसम्भिन्ना न लक्ष्यन्ते मनागपि॥५०॥
वाय्वान्दोलितपत्रौघप्रकम्पत्कंदलस्तनाः।
कूजत्पक्षिगणक्रीडा मनोनयननन्दनाः॥५१॥
नृत्यमाना इवाभान्ति कदल्यो वारयोषितः।
चतुर्विंशतिसाहस्रं तत्स्थानपरिचारिकाः॥५२॥
मध्यवीथीनि सौधानि द्विपंक्त्या भान्ति तद्वहिः।
भ्राजन्मणिकपाटानि हसद्रत्नाजिराणि च॥५३॥
तद्वहिर्भान्ति देवेशि महोद्यानलताद्रुमाः।
गन्धालुभ्य भ्रमद्भृङ्गा मरुदाघातवेपिताः॥५४॥
मयूरमृगचक्राह्वहंसकारण्डवैः पिकैः।
शुकपारापतक्रौञ्चसारसैर्हारिलैरपि॥५५॥
शाखामृगैः शशैः क्रोडैश्चातकैश्चटकैरपि।
पतत्रिभिरनेकैश्च कुलङ्गैरुपसेवितम्॥५६॥
जाड्यं मम धियो भिंद्यादुद्यानं गारुडाह्वयं।
मुक्ताप्राकारकल्पितमप्राकृतजनाश्रयम्॥५७॥
यमुनाभिमुखे यस्य महाद्वारं विराजते।
माणिक्यदेहलीरम्यमिन्द्रनीलकपाटकम्॥५८॥
महाद्वारबहिर्भागे कुट्टिमद्वयमद्भुतम्।
काञ्चनं विद्रुमस्तम्भं स्वर्णमण्डपमण्डितम्॥५९॥
यत्रस्थाः परिगायन्ति नृत्यन्ति च वराङ्गनाः।
वीणामृदङ्गवाद्यादिविद्यानैपुण्यशालिनः॥६०॥
ततः सोपानमार्गेण गन्तव्या यमुना नदी।
पूर्वसङ्ख्यैव सर्वत्र सोपानानां प्रियंवदे॥६१॥
एषु स्थानेषु देवेशि लीलार्थं पुरुषोत्तमः।
आयाति चन्द्रिकोद्गारिविमानेन सखीवृतः॥६२॥
कदाचिद्रथमारुह्य सहस्राश्वयुजं हरिः।
सखीसमाजमध्यस्थस्तल्लीलाप्रेमगर्वितः॥६३॥
रथाः सन्ति महादिव्याः सहस्राणि तु षोडश।
प्रधानाः षोडशैवेषु तांस्ते वक्ष्यामि नामतः॥६४॥

Nijanand App

49. माणिक्य की तरह फूलों से लदे, वैदूर्य की शोभायुक्त पत्तों वाली कदली लताएं मण्डप के चारों ओर शोभित हैं।

50. केला के काण्ड पर बैठे हुए गाय के फेना के समान श्वेत हंस उसके पत्ते की धुति से मिल जाने के कारण बिल्कुल प्रतीत नहीं होते हैं।

51. वायु के चलने से कम्पित कन्दल (केले के पेड़) रूपी स्तन हैं। चहचहाते हुए पक्षी जिनके कोटर में हैं तथा मन और नेत्र को आनन्द देते हैं।

52. ऐसी कदलियां वारांगनाओं की नृत्य करती हुई दिखाई पड़ती हैं। उस स्थान की चौबीस हजार परिचारिकाएं हैं।

53. उसके बाहर दो पंक्तियों में महल और उनके मध्य में बीथियां शोभित हैं। मणियों के कपाट, रत्न के आंगन

54. उसके बाहर शोभित होते हैं। वायु के आघात से कम्पित महोद्यान के लता, वृक्ष गन्ध के लोभ से भ्रमण करते हुए भंवरे दिखाई पड़ते हैं।

55. मयूर, मृग, चक्राह्न, हंस, कारंडव, पिक, शुक, पारावत, क्रौंच, सारस, हारिल,

56. शाखामृग, शश, क्रोड (शूकर), चातक, चटक इन तथा अन्य अनेक पक्षियों से शोभित

57. यह गारुड उद्यान मेरी बुद्धि की जड़तां को नष्ट करता है। मुक्ता के प्राकार से युक्त विशिष्ट जलों का आश्रय स्थान यह उद्यान है।

58. जिसका महाद्वार यमुना के सामने है। माणिक्य की देहली और इन्द्रनील के इसके कपाट हैं।

59. महाद्वार के बाहर दो अद्भुत कुट्टिम हैं। स्वर्ण विद्रुम का स्तम्भ तथा स्वर्ण मण्डप हैं।

60. यहां पर बैठकर वीणा, मृदंग आदि वाद्यों की विद्या में निपुण सुन्दर स्त्रियां गाती नाचती हैं।

61. यहां से सोपान मार्ग से यमुना नदी को जाना चाहिए। सर्वत्र पूर्व कही संख्या में ही सोपान हैं।

62. इन स्थानों में चन्द्रिका फैलाने वाले विमान पर बैठकर सखियों सहित पुरुषोत्तम लीला के लिए आते हैं।

63. कभी सौ घोड़ों वाले रथ पर बैठकर सखी समाज के मध्य स्थित उस लीला के प्रेम से गर्भित हरि आते हैं।

64. सोलह हजार दिव्य रथ हैं। इनमें से सोलह प्रधान हैं जिनके नाम कहूंगा।

Nijanand App

चन्द्रको भद्रकश्चैव मनोजवमहाजवौ।
जयमाली मणिस्कन्दो रोचिष्मान् भद्रसेनकः॥६५॥
मेघनादो महानादश्चन्द्रगौरो विसर्पणः।
नीलचक्रः कुरङ्गाङ्कः स्वर्णनेमिर्विभावसुः॥६६॥
सर्व एते सहस्राश्वयुजः काञ्चनमालिनः।
क्षुद्रघण्टानिनादेन परिपूरितदिङ्मुखाः॥६७॥
केचिन्नीलवरूथेषु व्युप्तमौक्तिकराजयः।
विभान्ति विलसत्तारागणा इव बलाहकाः॥६८॥
केचिन्नीलवरूथेषु स्वर्णरेखाविचित्रिताः।
तडिदुन्मेषरुचिरा ह्लेपयन्ति घनश्रियं॥६९॥
केचिद्रक्तवरूथेषु वज्रमण्डपमण्डिताः।
विलज्जयन्ति सन्ध्याभ्रशतभानूदयं नभः॥७०॥
अन्येपि स्यन्दनवरा मेघगम्भीरनिःस्वनाः।
मौक्तिकाख्ये वने दिव्ये राजन्ते राजिमण्डलैः॥७१॥
महासौधाङ्गणभ्राजन्मण्डपस्याय सव्यतः।
रथाः षोडश तिष्ठन्ति हयशालासु ते हयाः॥७२॥
विमानान्यपि दिव्यानि व्यायतानि निजेच्छया।
विचित्रशयनस्थानसभावाटीवृतानि च॥७३॥
मुक्तावितानशोभानि मणिस्तम्भोज्वलानि च।
कोटिचन्द्रप्रभास्पर्द्धिरत्नचित्राङ्गणानि च॥७४॥
रत्नस्तम्भावलिभ्राजत्पुत्रिकाहस्तकल्पितैः।
मणिभिर्भान्ति वेश्मानि प्रदीपावलिभिर्यथा॥७५॥
अष्टादशसहस्राणि विमानप्रवराणि हि।
तेष्वप्यष्टादशैवेह वरीयांसि द्युमन्ति च॥७६॥
उन्मादनं सुधास्यन्दि चन्द्रकं शतचन्द्रकं।
तुङ्गभद्रं मनोयानं महानीलमुदज्वनं॥७७॥
वज्रकूटं कलासारं चारुचन्द्रं प्रभारुणम्।
हेमकक्षं प्रभापूरं पुष्पगंधमनाविलम्॥७८॥
चित्रध्वजं वज्रकूटमेवमष्टादश स्मृताः।
स्थाप्यन्ते शिविकाख्या या विमानश्रेष्ठभूमिषु॥७९॥
चिदानन्दानन्दभूम्योरेवमाप्लाव्य निम्नगा।
प्रकाशानन्दसन्धिस्थसरस्यां विशते हि सा॥८०॥

Nijanand App

65. चन्द्रक, भद्रक, मनोजव, महाजव, जवमाली, मणिस्कन्द, रोचिष्मान, भद्रसेनक,

66. मेघनाद, महानाद, चन्द्रगौर, विसर्पण, नीलचक्र, कुरंगाह्व, स्वर्णनेमि, विभावसु।

67. यह सब हजार घोड़ों से जोते जाने वाले, स्वर्ण की मालाओं वाले, छोटी-छोटी घण्टियों के शब्द को दिशाओं को भर देने वाले,

68. कुछ नील कवचों में गुथी हुई मोतियों की पंक्ति वाले, इस प्रकार शोभित होते हैं जैसे मेघों के बीच तारागण।

69. कुछ नील कवचों में स्वर्ण रेखा युक्त हैं जो विद्युत युक्त मेघों की शोभा को लज्जित कर रहे हैं।

70. कुछ रक्त कवचों में वज्रमण्डप से मण्डित संध्या के आकाश में सैकड़ों सूर्ययुक्त आकाश को लज्जित कर रहे हैं।

71. और भी मेघ के समान गम्भीर ध्वनि वाले रथ मौक्तिक वन में पंक्तिबद्ध शोभित होते हैं।

72. महान् प्रासाद के आंगन में स्थित मण्डप के दाहिने बाएं हयशालाओं में सोलह रथ स्थित हैं।

73. अपनी इच्छा से फैल जाने वाले दिव्य विमान हैं जिनमें विचित्र शयनस्थान, सभास्थान आदि हैं।

74. मुक्ता के वितान से शोभित मणि के स्तम्भों से उज्ज्वल कोटि चन्द्रमा की प्रभा से स्पर्धा करने वाले रत्नजटित विचित्र आंगन

75. रत्नों की स्तम्भ पंक्ति में सुशोभित पुतलियों के हाथ में रखी हुई मणियों से जिस प्रकार दीपक पंक्ति से घर सुशोभित होते हैं, वैसे ही सुशोभित हो रहे हैं।

76. अट्ठारह हजार मुख्य विमान हैं। इनमें अट्ठारह प्रमुख हैं।

77. उन्मादन, सुधासिन्धु, चन्द्रक, शतचन्द्रक, तुंगभद्र, मनोयान, महानील, उदंचन,

78. वज्रकूट, कलासार, चारुचन्द्र, प्रभारुण, हेमकक्ष, प्रभापूर, पुष्पगन्ध, अनाविल,

79. चित्रध्वज, वज्रकूट इस प्रकार अट्ठारह हैं जो विमान क लिए निर्मित श्रेष्ठभूमि में रखे जाते हैं जिसे शिविका कहते हैं।

80. चिदानन्द और आनन्दभूमि को आप्लावित कर नदी प्रकाश और आनन्द की सन्धि में स्थित तालाब में प्रवेश करती हैं।

Nijanand App

सरसः पुनरुद्भूय प्रकाशाभिमुखं गता।
शतयोजनमानेन ततः पश्चिमवाहिनी॥८१॥
ज्ञानभूमिमथाप्लाव्य प्रयाता भुक्तिभूमिकां।
प्रेमभूमिं ततः प्लाव्य प्रविष्टा पश्चिमार्णवम्॥८२॥
आनन्दभुक्त्योरन्तराले महामाणिक्यपर्वतः।
बालार्ककोटिरुचिर उच्छ्राये शतयोजनः॥८३॥
यन्नितम्बभवा नद्यश्चतस्रो यमुनां गताः।
प्रविशन्ति सुधासिन्धु सुषुम्णा सिरसा सिता॥८४॥
निम्लोचा नामतः ख्याताः सर्वाः पीयूषवाहिनीः।
कदाचित् क्रीडते तत्र निर्झरध्वनिनादिते॥८५॥
सखीसहस्रसङ्कीर्णविमानवरमाश्रितः।
गिरिद्रोणीषु रम्यासु भगवान्पुरुषोत्तमः॥८६॥
एवं चानेकलीलाभी रसरूपाभिरन्वहम्।
क्रीडते हि रसः साक्षात् कृष्णः परमपूरुषः॥८७॥
एतत्ते सर्वमाख्यातमनापृष्टमपि प्रिये।
स्मृत्यवस्थोदये कृष्णास्त्रीणामेतद्धितं यतः॥८८॥

इति श्रीमाहेश्वरतन्त्रे उत्तरखण्डेशिवगौरी संवादे चतुश्चत्त्वारिंशं पटलम्॥४४॥

पञ्चचत्वारिंशं पटलम्

शिव उवाच

स्मरेदथो महादेवि ब्रह्मनालश्रियं शुभां।
ब्रह्मनालानन्दवनाद्दण्डाकारतया स्थितः॥१॥
मार्ग एव महेशानि निजालयनिवेशने।
गोपुरद्वारमारभ्य प्राकारदशकावधि॥२॥
विंशतिर्योजनानां च ब्रह्मनाल उदाहृतः।
पार्श्वयोरुभयोस्तस्य पष्ठ्युत्तरशतं प्रिये।
सौधानि सन्ति देवेशि बहिः कुट्टिमवन्ति च॥३॥
तत्तत्प्राकारसंवीत तत्तदुद्यानमण्डलं।
तत्तत्द्वारप्रवेशेन गम्यते ब्रह्मनालतः॥४॥
प्रतिप्राकारमीशानि प्रवेशे ब्रह्मनालतः।
सव्यापसव्ययोर्द्वारद्वयमुद्यत्प्रभारुणम्॥५॥

Nijanand App

81. तालाब से पुनः निकल प्रकाश की ओर जाकर शत योजन के प्रमाण से पश्चिम की ओर बहती हुई

82. ज्ञानभूमि को आप्लावित कर भुक्ति भूमिका को जाती है। पश्चात् प्रेम भूमि को आप्लावित कर पश्चिम सागर में प्रवेश करती है।

83. आनन्द और भुक्ति के मध्य में महामाणिक्य पर्वत है। जो कोटि बाल सूर्य की आभा वाला सौ योजन ऊंचा है।

84. जिसके नितम्ब स्थान से चार नदियां यमुना में पहुंचती हैं। सुधासिन्धु, सुषुम्णा, सिरसा और

85. निम्लोचा नाम से प्रसिद्ध यह सभी अमृतवाहिनी हैं। कभी झरने की ध्वनि से ध्वनित इस स्थान में

86. सहस्त्रों सखियों के घिरे विमान पर बैठकर पुरुषोत्तम भगवान रम्य गिरि द्रोणियों में क्रीड़ा करते हैं।

87. इस प्रकार रस रूप अनेक लीलाओं से प्रतिदिन क्रीड़ा करते हैं। श्रीकृष्ण परम-पुरुष साक्षात् रस रूप हैं।

88. हे प्रिये! जो तुमने नहीं पूछा था, वह सब कह दिया, क्योंकि कृष्ण की स्त्रियों की स्मृति अवस्था के उदय होने पर यह हितकर है।

माहेश्वरतन्त्र में उत्तर खण्ड का शिव-गौरी संवाद का चौवालीसवां अध्याय समाप्त हुआ।

पैंतालीसवां अध्याय

शिव ने कहा—

1. हे महादेवि! इसके पश्चात् ब्रह्मनाल शोभायमान करना चाहिए। ब्रह्मनाल नन्दवन दण्डाकार रूप में स्थित है।

2. अपने निजालय में प्रवेश के लिए यह मार्ग है। गोपुर द्वार से लेकर दस प्राकार तक है।

3. बीस योजन का ब्रह्मनाल कहा गया है। इसके दोनों बगलों में बाहर एक सौ साठ कुट्टिम वाले महल हैं।

4. उस प्राकार से घिरे उस—उस उद्यान मण्डल में उस—उस द्वार से प्रवेश कर ब्रह्मनाल से जाया जाता है।

5. ब्रह्मनाल से प्रवेश में हर प्राकार के दाहिने एवं बाएं उदय होते सूर्य की आभा के समान अरुण दो द्वार हैं।

Nijanand App

स्वर्णप्राकारसंवीता महाचम्पकवाटिकाः।
अनेकपक्षीनिनदा बह्वुलामोदमेदुराः॥६॥
तप्तकाञ्चनवर्णाभा भान्ति चम्पककोरकाः।
दीपा इव निवातस्था भृङ्गैर्दूरतरोज्झिताः॥७॥
पूर्णशारदराकेशानुकारिकुसुमोज्वलाः।
राजन्ते यत्र बहुशो दिव्याश्चम्पकवीरुधः॥८॥
चम्पकोद्यानुकुञ्जेषु दिव्यहर्म्यकृतास्पदाः।
चतुर्दशसहस्राणि वसन्ति परिचारिकाः॥९॥
कदाचित् क्रीडते तत्र श्रीकृष्णः स्वसखीवृत्तः।
मध्ये तारागणस्येव पूर्णशारदचन्द्रमाः॥१०॥
तदन्तः संस्मरेद्देवि वनं कल्पद्रुमाकुलम्।
महावैदूर्यशालेन समन्तात्परिवेष्टितम्॥११॥
कल्पद्रुकुसुमामोदमोदमानाः शिलीमुखाः।
नान्यगन्धमपेक्षन्ते पूर्णकामा यथेतरत्॥१२॥
कल्पद्रुकुसुमास्वादुरसव्यासक्तबुद्धयः।
स्वां वाचं मुद्रयन्तीह ज्ञाततत्वा इवालयः॥१३॥
महामरकतक्लृप्तस्थलीपतितमौक्तिका।
यथा तामसभक्तस्य बुद्धिः प्रेमाङ्कुरोज्वला॥१४॥
मधुश्रीमाधवश्रीकः स्त्रीस्कन्धार्पितसद्भुजः।
पुष्पकल्पितवासः श्रीर्भूषाशृङ्गारमंण्डितः॥१५॥
वसन्तः सन्ततं यत्र चरतेऽसौ रसात्मकः।
कल्पद्रुममहाकुञ्जवीथिषु प्रेमविह्वलः॥१६॥
कामकोदण्डकुटिलभ्रूलताचारुविभ्रमः।
कुङ्कुमारक्तवसनः साचीक्षणविचक्षणः॥१७॥
दिव्यपुष्परजः पुञ्जधूसरः सस्मिताननः।
कल्पकोद्यानकुञ्जेषु दिव्यहर्म्यकृतालयाः॥१८॥
त्रयोदश सहस्राणि वसन्ति परिचारिकाः।
कदाचिदत्र भगवान्कृष्णः कमललोचनः॥१९॥
वसन्तलीलारसिको रसात्मोपवने चरन्।
इन्दिरासुन्दरीमुख्यप्रियाविभ्रममोहितः॥२०॥
प्रियाकटाक्षचषकैरापीत इव सर्वतः।
आवृष्ट इव पुष्पौघैः सखीमुक्तैः समन्ततः॥२१॥

Nijanand App

6. स्वर्ण के प्राकार से वेष्टित महाचंपक की बाटिका जिसमें अनेक पक्षी बोल रहे हैं, आनन्द कर रही है।

7. वायु रहित स्थान में स्थित दीपक के समान तपाए हुए स्वर्ण के समान चम्पा की कलियां शोभित हो रही हैं। मृगों द्वारा जो दूर से ही परित्याग कर दिए गए हैं।

8. पूर्ण शरद ऋतु के चन्द्रमा के समान फूलों से उज्ज्वल दिव्य चम्पा की वहुत सी लताएं शोभित हैं।

9. चम्पा उद्यान के कुन्जों मे दिव्य महलों के रहने वाली चौदह हजार परिचारिकाएं रहती हैं।

10. कभी वहां पर अपनी सखियों सहित तारा गणों के मध्य चन्द्रमा के समान क्रीड़ा करते हैं।

11. उसके अन्दर कल्पद्रुम वाले वन का स्मरण करे जहां महा वैदूर्य के भवन चारों तरफ से सुशोभित हैं।

12. वहां कल्प वृक्ष के फूलों की सुगन्धि से आकृष्ट भौंरे दूसरे गन्ध की आवश्यकता नहीं समझते जैसे पूर्ण काम मनुष्य दूसरी कामना नहीं करता।

13. कल्प वृक्ष के पुष्प के स्वादिष्ट रस में लगी बुद्धि वाले तथ्य के जानकार के समान भ्रमर चुप हो जाते हैं।

14. महा मरकत निर्मित भूमि में पड़े मोती वैसे ही सुशोभित होते हैं जैसे तामसी भक्त की प्रेमांकुर वाली उज्ज्वल बुद्धि होती है।

15. चैत्र एवं वैशाख की शोभा वाला स्त्री के स्कन्धों पर भुजा रखे फलों की सुगन्ध से सुवासित आभूषण के शृंगार से मण्डित

16. बसन्त रस रूप में जहां निरन्तर कल्पवृक्ष के कुंज गलियों में प्रेम विह्वल होकर विचरण करता है।

17. कामदेव के धनुष के समान वक्र भ्रूलता के कारण अति सुन्दर कुंकुम के समान लाल रस वाला, तिरछा देखने में चतुर,

18. दिव्य पुष्पों की धूल से धूसरित, मुस्कराते हुए मुख वाला बसन्त विचरण करता है। कल्पवृक्ष के उद्यान कुंजों में दिव्य महलों में रहने वाली

19. तेरह हजार परिचारिकाएं बसती हैं। कभी यहां पर कमल लोचन भगवान् श्रीकृष्ण

20. बसन्त लीला के रसिक इस रूप वन में घूमते हुए इन्दिरा, सुन्दरी आदि मुख्य सखियों के सौन्दर्य से मोहित

21. प्रियाओं के कटाक्ष रूपी प्यालों से चारों ओर से पिए जाते हुए, सभी ओर से सखियों द्वारा बरसाए फूलों से

Nijanand App

अभिवर्षन् स्वयमपि सखीः कुसुमवृष्टिभिः।
मुखामोदसुसक्तालिझङ्कारोद्विग्ननेत्रया॥२२॥
गाढमालिङ्गितः कण्ठे स्वामिन्या पद्महस्तया।
प्रियाभिः प्रेमयुक्ताभिर्जलयन्त्रविनिर्गतैः।
कुङ्कुमाम्भोभिरासिक्तो जातः पीताम्बरो यथा॥२३॥
गजीभिरिव मातङ्गो रमते रतिलम्पटः।
अनेकरसयुक्तासु क्रीडासु कृतकौतुकः।.२४॥
तदन्तः संस्मरेद्दिव्यां मन्दारद्रुमवाटिकाम्।
दिव्यप्रवालरत्नोद्यत्प्राकारपरिवेष्टिताम्॥२५॥
महानीलमणिभ्राजद्भूमिकाभासमाश्रिताम्।
नृत्यन्ति यत्र शिखिनो नित्यमम्भोदशङ्कया॥२६॥
मन्दारमकरन्देषु विलीनमतयोऽलयः।
विस्मरन्त्यन्यपुष्पाणि यथा ब्रह्मरसप्लुताः॥२७॥
यत्रास्ते सततं राका पूर्णचन्द्रसमन्विता।
कुहूः कोकिलचञ्चुस्था केवलं यत्र लभ्यते॥२८॥
मन्दारमन्दसौरभ्यलुब्धा रोलम्बराजयः।
न क्वापि गन्तुमिच्छन्ति दानलुब्धा इवार्थिनः॥२९॥
शुक्तिश्रीति शुचिश्रीति यस्य वामे मदालसे।
मन्दारोद्यानसञ्चारी ग्रीष्मर्त्तुर्मदविह्वलः॥३०॥
मन्दारोद्यान कुञ्जेषु दिव्यहर्म्यकृतास्पदाः।
द्वादशैव सहस्त्राणि वसन्ति परिचारिकाः॥३१॥
मन्दारकुञ्जक्रीडार्थं कदाचित्प्रमदागणैः।
मूलभूमेः समुत्थाय पश्चिमद्वारमार्गतः॥३२॥
प्रविशत्यरविन्दाक्षः क्रीडते रतिलालसः।
महाकामकलाभिज्ञः कामात्मा पुरुषोत्तमः॥३३॥
ततस्तदन्तरुद्यानं पारिजातमयं स्मरेत्।
महामाणिक्यशालेन समन्तात्परिवेष्टितम्॥३४॥
चन्द्रकान्तशिलाक्लृप्तस्थलीकमतिसुन्दरम्।
यत्रेन्दुरश्मयः स्पर्शात्सुधाकणमवापिताः॥३५॥
कुट्टिमा यत्र भूयांसो विस्फुरद्रत्नमण्डपाः।
कुञ्जगुञ्जन्मधुकरव्रातझङ्कारनादिताः॥३६॥

Nijanand App

22. और स्वयं भी सखियों पर पुष्पों की वर्षा करते हुए मुख की सुगन्धि से आसक्त होने वाले भौंरों की झंकार से दुःखी नेत्र वाली

23. पद्म रूपी हाथ वाली स्वामिनी द्वारा कण्ठ में आलिंगन किया। प्रेम युक्त प्रियाओं द्वारा पिचकारियों से फेंके गए कुंकुम जल से वस्त्र पीला हो गया।

24. जिस प्रकार हाथी हथिनियों के साथ क्रीड़ा करता है तथा अनेक प्रकार की क्रीड़ाओं में कौतुक रखता है उसी प्रकार श्रीकृष्ण भी करते हैं।

25. फिर दिव्य प्रबाल एवं रत्नों के प्राकार से वेष्टित दिव्य मंदार वृक्ष की बाटिका का स्मरण करे।

26. जहां महानील मणि से युक्त भूमि पर बैठे हुए मयूर नित्य मेघ की शंका से नाचते हैं।

27. मन्दार की सुगन्धि में जिनका मन लगा है ऐसे भ्रमर जिस प्रकार ब्रह्मानन्द का अनुभव करने वाला अन्य सभी को भूल जाता है, उसी प्रकार अन्य पुष्पों को भूल जाते हैं।

28. जहां पूर्ण चन्द्र युक्त पूर्णिमा की रात सदैव रहती है और अमावस्या की रात तो केवल कोयल की चोंच में ही दिखाई पड़ती है।

29. मन्दार के मन्द सुगन्धि के लोभी भ्रमर दान के लोभी याचक के समान अन्यत्र कहीं जाना नहीं चाहते हैं।

30. जिसकी स्त्रियां शुक्तिश्री (ज्येष्ठ) और शुत्तिश्री (आषाढ़) साथ विराजमान हैं मन्दार उद्यान में ग्रीष्म ऋतु विचरण करता है।

31. मन्दार के उद्यान कुंज में दिव्य महल में निवास बनाए बारह हजार परिचारिकाएं बसती हैं।

32. कभी प्रमदाओं के साथ मन्दार कुंज में क्रीड़ा करने के लिए मूल भूमि से उठकर पश्चिम द्वार के मार्ग से

33. रति लालसा वाले काम कलाविद् पुरुषोत्तम प्रवेश करते हैं।

34. इसके बाद उसके अन्दर पारिजात का उद्यान स्मरण करना चाहिए जिसके चारों ओर महामाणिक्य की शालाएं बनी हैं।

35. चन्द्रकान्त की शिलाओं से बनी अति सुन्दर भूमि है। जहां पर चन्द्रमा की किरणें पड़ने से अमृत बिन्दु के समान दिखाई पड़ती है।

36. जहां पर कुंजों में गुंजार करते हुए भ्रमरों के झंकार से परिपूर्ण रत्न मण्डप वाले बहुत से कुट्टिम हैं।

Nijanand App

सरस्यो विलसत्स्वर्णसहस्रदलपङ्कजैः।
खेलन्मरालमिथुनैर्गन्धवासितपादपैः॥३७॥
निश्चलालिसमाक्रान्तपत्रजालैः समन्ततः।
विलोकयन्ति वात्यन्तं नेत्रैरुन्मेषवर्ज्जितैः॥३८॥
पारिजातवनीकुञ्जदिव्यसौधकृतालयाः।
एकादशसहस्राणि बसन्ति परिचारिकाः॥३९॥
पारिजातवनक्रीडारसलुब्धेन चेतसा।
कदाचिदत्र भगवान् समायाति सखीगणैः॥४०॥
कृष्णं सरोवराभ्यासमणिकुट्टिमसंस्थितम्।
भूषाम्बरादिभिः सख्यः कौसुम्भैर्भूषयन्ति ही॥४१॥
हारकुण्डलकेयूरवलयोत्तुङ्गमौलिभिः।
उष्णीषकञ्चुककटिबन्धरम्योत्तरीयकैः॥४२॥
पौष्पैः कृतश्रीः भगवान् सखीवृन्दान्तरे चरन्।
दिव्यपुष्पमयं वेत्रमादधानः कराम्बुजे॥४३॥
वमद्भिरिव सत्प्रेम विकुञ्चद्भृकुटीतटैः।
अभिवर्षन्निव सखीवृन्दं लोचनपङ्कजैः॥४४॥
स्वकरालूनकुसुमाभूषाभिर्भूषयन् सखीः।
हसितो हासयन्सर्वा लीलागतिविचक्षणः॥४५॥
गीयमानयशा गायन् रमते कुञ्जभूमिषु।
स्मरेदतस्तदंतःस्थां हरिचन्दनवाटिकां॥४६॥

गोमेदकमहारत्नरचितस्वीयगोपुराम्।
शुद्धस्फटिकविभ्राजद्भूमिकाकिरणोज्वलाम्॥४७॥
मरुल्लसत्पल्लवराजिराजितद्रुमावलीनां प्रतिबिम्बभूमिषु।
विहङ्गमाः पक्वफलाशया मुहुश्चञ्चूपुटाघातविधिं वितेनिरे॥४८॥
क्वचिद्विहङ्गाः स्फटिकावनीतले निरीक्षमाणाः प्रतिबिम्बविभ्रमम्।
स्वजातिपक्षिव्रजशाङ्किताशयाः कूजन्ति स्वं स्वं स्वरमुच्चकैर्मुहुः॥४९॥
हरिचंदनस्फुरदमन्दसुन्दरस्फटिकावनीतला वनविहारिणः।
पवनोल्लसद्विटपविष्टराः खगा विवदन्ति पंडितगणा इवोद्धटाः॥५०॥
मणिकुट्टिमास्फुरदमन्दरश्मयः परितो विभान्ति कृतरत्नमण्डपाः।
शुककोकिलभ्रमरहन्ससारसैः समुपास्यमानरमणीयमध्यमाः॥५१॥
मुखराट्टहासपरिपूरिताम्बरः सुनभोनभस्यरमणीविराजितः।
ऋतुराज एव किल प्रावृडित्ययं मदघूर्णमाननयनो विराजते॥५२॥

Nijanand App

37. सुवर्ण जैसे सहस्र दल कमलों से सुशोभित हंस के जोड़े जहां खेल रहे हैं, जहां के वृक्ष सुगन्ध से सुगन्धित हैं, ऐसे सरोवर हैं।

38. निश्चल भ्रमरों के भार से युक्त पत्तों वाले वृक्ष मानो निमेष रहित नेत्रों से देख रहे हों।

39. पारिजात वन के कुंजों से दिव्य महल बनाकर रहने वाली ग्यारह हजार परिचारिकाएं रहती हैं।

40. पारिजात वन में क्रीड़ा रस से लुब्ध चित्त भगवान कभी सखी गणों के साथ यहां आते हैं।

41. सरोवर के समीप मणि कुट्टिम पर बैठे श्रीकृष्ण को कुसुम वर्ण के आभूषण वस्त्रादि से भूषित करती हैं।

42. हार, कुण्डल, केयूर, वलय, माला, पगड़ी, अंगरखा, कटिबन्ध, सुन्दर उत्तरीय वस्त्रों से भूषित करती हैं।

43. यह सभी विशेषतः पुष्पों के बने हुए हैं। उनकी शोभा से युक्त सखी वृन्दों के मध्य विचरण करते हुए हाथ में दिव्य पुष्पमय वेत धारण किए

44. सिकुड़ती हुई भृकुटियों से मानो प्रेम का वर्षण कर रहे हों, नेत्र रूपी कमलों से मानो सखियों पर वर्षा कर रहे हों।

45. अपने हाथों से तोड़े गए फूलों के आभूषणों से सखियों को अलंकृत करते हुए, हंसते और सबको हंसाते हुए, क्रीड़ा के अनेक प्रकारों के जानने में चतुर

46. जिनका यश गाया जा रहा है और स्वयं गान करते हुए कुंज भूमि में रमण करते हैं। उसके अन्दर हरि चन्दन की बाटिका का स्मरण करें।

47. इस बाटिका का गोपुर गोमेद महारत्न से रचित है। शुद्ध स्फटिक की किरणों से चमत्कृत भूमि है।

48. वायु के द्वारा कम्पित पत्तों की पंक्ति से शोभित वृक्षावली का जिस भूमि में प्रतिबिम्ब पड़ता है। उस भूमि में फल की आशा से पक्षी चोंच का आघात सहन करते हैं।

49. वहीं पर स्फटिक की भूमि में अपने ही प्रतिबिम्ब को देखते हुए अपनी ही जाति के पक्षियों की शंका से तीव्र स्वर में बोलने लगते हैं।

50. मलयागिरि चन्दन के नीचे अति सुन्दर स्फटिक की भूमि वाले तल वायु से कंपाए गए वृक्ष ही जिनके बैठने के स्थान हैं ऐसे वन बिहारी पक्षी अद्भुत विद्वानों की तरह आपस में विवाद कर रहे हैं।

51. मणिकुट्टिम की फैलती हुई रश्मियों के चारों तरफ मण्डप सुशोभित होते हैं। जिनके बीच में शुक, कोकिल, भ्रमर, हंस, सारस बैठते हैं।

52. अट्टहास से आकाश को भर देने वाला सावन भादों रूपी स्त्रियों से युक्त यह वर्षा काल मद से घूरते हुए नेत्रों वाला ऋतुराज ही है ऐसा प्रतीत होता है।

Nijanand App

मृदुमन्दगर्ज्जितपयोदमण्डलीघटनान्धकारपरिलब्धवर्चसः।
परितो भ्रमन्ति वनकुञ्जमण्डलेष्वतिनीलरत्ननिभकीटकोटयः॥५३॥
हरिचन्दनद्रुमनिकुञ्जमण्डलेष्वतिदिव्यरत्नपरिचारिकागृहाः।
परितो विभान्त्ययुतसंख्यया शिवे ज्वलदग्निबीजरचिताङ्गणश्रियः॥५४॥

अत्रापि क्रीडते कृष्णः स्वामिन्यादिसखीवृतः।
नानाक्रीडाविनोदैश्च परिहासरसादिभिः॥५५॥
तदन्तः संस्मरेद्दिव्यमुद्यानं सुमनोहरम्।
वैडूर्यलतिकाखण्डमण्डितं नन्दनं दृशाम्॥५६॥
यत्र वैडूर्यवृक्षेषु प्रवालप्रतिबिम्बजा।
काप्यभिख्या दृगम्भोजमोदहेतुः प्रवर्तते॥५७॥
सूर्यकान्तमणिक्लृप्तदिव्यप्राकारमण्डितं।
सन्धिवर्ज्जितमाणिक्यशिलाकल्पितभूमिकम्॥५८॥
सूर्यकान्तमणिच्छायाविद्धमाणिक्य भूमिका।
जातारुणोदयमिव भ्रममुत्पादयत्यहो॥५९॥
वैडूर्यद्रुमकुञ्जेषु दिव्यसौधकृतालयाः।
सहस्त्राणि नव प्रोक्ताः तत्स्थानपरिचारिकाः॥६०॥
तदन्तः संस्मरेद्दिव्यां महामौक्तिकवाटिकाम्।
विस्फुरत्पुष्परागीयप्राकारपरिवेष्टिताम्॥६१॥
माणिक्यपुष्पविद्योतन्महामुक्तालतावृताम्।
लतासु विस्फुरद्दिव्यवैडूर्यवृन्तभासुराम्॥६२॥
महावज्रमणिभ्राजद्भूमिकाकिरणप्लुताम्।
कुञ्जेषु पक्षिनिनदप्रतिध्वानमनोहराम्॥६३॥
इषोर्जलक्ष्मीलावण्यप्रवाहपतितान्तरः।
मल्लिकामालतीपुष्पभूषावासःपरिच्छदः॥६४॥
स्मितशोभिमुखाम्भोजश्चम्पकद्युतिपाण्डुरः।
तत्र सञ्चरते साक्षाद्रसरूपी शरदृतुः॥६५॥
मुक्तानिकुञ्जभुवनक्रीडारसवशंवदाः।
सहस्त्राण्यष्ट देवेशि वसन्ति परिचारिकाः॥६६॥
क्रीडतेऽत्रापि भगवान् कृष्णः कमललोचनः।
स्वामिन्यादिसखीवृन्दसभाक्रीडाकुतूहलः॥६७॥

Nijanand App

53. धीरे-धीरे गरजते हुए मेघमाला के अन्धकार में जिन्हें शक्ति प्राप्त हुई है, अति नील के समान करोड़ों कीट चारों ओर वन के कुंजों में घूमते हैं।

54. मलयागिरि चन्दन के निकुंज मण्डल में दिव्य परिचारिकाओं के दस लाख घर सुशोभित होते हैं। जलती हुई अग्नि के बीज से जिनके आंगनों की शोभा निर्मित है।

55. स्वामिनी आदि सखियों से युक्त नाना क्रीड़ा विनोद एवं परिहास रस आदि से यहां भी श्रीकृष्ण क्रीड़ा करते हैं।

56. उसके अन्दर वैदूर्य की लता से मण्डित नेत्रों को आनन्द देने वाले मनोहर उद्यान का स्मरण करना चाहिए।

57. जहां पर वैदूर्य के वृक्षों में प्रवाल का प्रतिबिम्ब पड़ने से कोई एक विशेष शोभा नेत्र कमलों को आनन्द देने वाली होती है।

58. सूर्यकान्त मणि निर्मित दिव्य प्राकार जोड़ रहित माणिक्य शिला से निर्मित भूमि

59. सूर्यकान्त मणि की छाया युक्त माणिक्य भूमि अरुणोदय का भ्रम उत्पन्न कर रही है।

60. वैदूर्य वृक्षों के कुंजों के दिव्य महलों में एक हजार नौ उस स्थान की परिचारिकाएं कही गई हैं।

61. उसके अन्दर महामौक्तिक की वाटिका का स्मरण करना चाहिए जो पुष्पराग निर्मित प्राकार से घिरी है।

62. माणिक्य पुष्प से चमकती हुई महामुक्ता लता से आवृत्त है।.जिन लताओं में दिव्य वैदूर्य के चमकते हुए डंठल हैं।

63. महावज्र मणि की चमकती हुई भूमि की किरणों से आप्लावित कुंजों में पक्षियों के शब्दों की मनोहर प्रतिध्वनि सुनाई पड़ती है।

64. आश्विन और कार्तिक के सौन्दर्य का प्रवाह जिसके अन्दर पड़ रहा है। मल्लिका मालती के पुष्पों के आभूषण वस्त्र धारण किए हुए

65. मुस्कराहट से शोभित मुख कमल और चम्पा की द्युति के समान साक्षात् रस रूपी शरद ऋतु वहां संचरण करती है।

66. मुक्ता निकुंज के भवनों में क्रीड़ा रस के वशीभूत आठ हजार परिचारिकाएं रहती हैं।

67. यहां भी स्वामिनी आदि सखियों के साथ वृक्षों की सभा क्रीड़ा कौतूहल को धारण करने वाले कमल नयन श्रीकृष्ण क्रीड़ा करते हैं।

Nijanand App

तदन्तः संस्मरेद्दिव्यां प्रवालद्रुमवाटिकां।
गरुत्मन्मणिशालेन निगूढां परितः प्रिये॥६८॥
पुष्परागशिलाक्लृप्तवसुधातलमण्डितां।
मुक्तास्तबकसंशोभिप्रवालद्रुमशोभितां॥६९॥
सहसहस्यश्रीभ्यां तु नारीभ्यामुपलालितः।
हेमन्तस्तत्र चरते लीलाखेलकृतादरः॥७०॥
प्रवालोद्यानकुञ्जस्थरत्नसौधनिकेतनाः।
सप्त चैव सहस्राणि वसन्ति परिचारिकाः॥७१॥
सूर्यकान्तमणिभ्राजल्लताकुसुमपल्लवं।
तदन्तः संस्मरेद्दिव्यमुद्यानं कोटिसूर्यभं॥७२॥
कोटीन्दुविस्फुरच्चन्द्रकान्तशालेन व्यूहितं।
दिव्यप्रवालरत्नौघैर्निबद्धवसुधातलं॥७३॥
तपस्तपस्यश्रीभ्यां च तरुणीभ्यामलङ्कृतं।
तद्भावानुभवानन्दमोदमानमहर्निशम्॥७४॥
शिशिरर्तुं भजेत्तत्र चरन्तं मदविह्वलं।
सूर्यकान्तनिकुञ्जेषु खेलन्त्यो मदविह्वलाः॥७५॥
षट्सहस्राणि देवेशि वसन्ति परिचारिकाः।
कदाचिदत्र क्रीडार्थं सखीभिः पुरुषोत्तमः॥७६॥
स्वामिन्या च समासाद्य क्रीडन् विक्रीडयत्यपि।
तदन्तः संस्मरेद्दिव्यमुद्यानं तु मनोहरम्।
पद्मरागलतापुञ्जकुञ्जगुञ्जन्मधुव्रतं॥७७॥
चिन्तारत्नविचित्रान्तर्भूमिविद्योतितान्तरं।
अनेककुट्टिमैर्भ्राजन्मण्डपैः कुञ्जमध्यगैः॥७८॥
भ्राजत्कपाटरत्नालिप्रभोद्यैर्वियदन्तरं।
उदितेन्द्रधनुःकोटिकुर्वाणमिव सर्वतः॥७९॥
क्वचिदिन्दीवरवनप्रोच्छलन्तः प्रभाङ्कुराः।
सांद्रमेघान्धकारेण लिम्पन्त इव दिक्तटान्॥८०॥
कलापिनो हृष्टचित्तास्तत्र नृत्यन्ति सन्ततम्।
उद्घाट्य स्वकलापांश्च जलदाटोपशंकया॥८१॥
शुकपारावतक्रौंचपिककोलाहलाकुलम्।
कोटीन्दुकौमुदीगर्वनिर्वासनलताशतं॥८२॥

Nijanand App

68. उसके अन्दर प्रबाल वृक्षों की दिक वाटिका जो गारुड मणि के महलों से चारों तरफ से गुप्त है, उसका स्मरण करना चाहिए।

69. उस वाटिका की पुष्पराग शिला से निर्मित भूमि है। मोती के गुच्छों से शोभित प्रबाल वृक्ष शोभित हैं।

70. अगहन पौष रूपी दो स्त्रियों से ललित क्रीड़ाओं में आदर रखने वाला हेमन्त ऋतु विचरण करता है।

71. प्रबाल के उद्यान कुंज में रत्न भवनों में सात हजार सात परिचारिकाएं बसती हैं।

72. सूर्यकान्त मणि में सुशोभित लता पुष्प और पल्लव वहां पर हैं। उसके अन्दर कोटि सूर्य की आभा वाले दिव्य उद्यान का स्मरण करना चाहिए।

73. वहां कोटि चन्द्रमा के समान प्रकाशित चन्द्रकान्त मणि के भवन हैं और दिव्य प्रबाल और रत्नों से निर्मित भूमि तल है।

74. माघ, फाल्गुन रूप स्त्रियों से अलंकृत उनके भावों के अनुभव से दिन रात प्रसन्न

75. मद विह्वल वहां पर विचरण करते हुए शरद ऋतु का सेवन करना चाहिए।

76. छः हजार परिचारिकाएं वहां हैं। कभी यहां पर पुरुषोत्तम सखियों तथा स्वामिनी के साथ

77. क्रीड़ा करते हैं। इसके मध्य दिव्य उद्यान का स्मरण करना चाहिए। जहां पद्मराग की लता समूहों में भ्रमर गुंजार कर रहे हैं।

78. चिन्तामणि रत्न से विचित्र मध्य भाग जहां प्रकाशित हो रहा है। अनेक कुट्टिम और कुंज के मध्य मण्डप सुशोभित हैं।

79. चमकते हुए कपाटों में जटित रत्नों की प्रभा से मध्य भाग ऐसा प्रतीत हो रहा है मानो सैकड़ों इन्द्र धनुष प्रकट हो रहे हों।

80. कहीं इन्दीवर कमलों की प्रभा के अंकुर मानो घने मेघों के अन्धकार से दिशाओं को लीपते हुए दिखाई पड़ते हैं।

81. वहां पर प्रसन्न होकर मयूर मेघों की शंका से अपने पंखों को फैलाकर नाचते हैं।

82. शुक, पारावत, क्रौंच, पिक पक्षियों के कोलाहल से युक्त कोटि चन्द्रमा की चांदनी के गर्व को भंग करने वाली सैकड़ों लताओं से युक्त

Nijanand App

उत्पतद्भिर्मृगीवृन्दैर्वराहैर्गवयैः शशैः।
रुरुभिर्मृगनाभैश्च चमरीभिरलङ्कृतं॥८३॥
अनेकसूर्यसङ्काशचिन्तारत्नावृतिव्रतं।
यत्र पञ्चसहस्राणि मणिहर्म्यकृतास्पदाः॥८४॥
दिव्यशृङ्गारवेषाढ्या रसभावविभावुकाः।
सेवोपचारचतुरा वसन्ति परिचारिकाः॥८५॥
तदन्तः संस्मरेद्दिव्यं महापद्मवनं महत्।
लक्षयोजनविस्तीर्णं गुञ्जन्मत्तमधुव्रतं॥८६॥
वियद्वितानितमिव परागैः पवनेरितैः।
कुर्वन् तद्गन्धसञ्चारिषट्पदव्याजचित्रितम्॥८७॥
महापद्माटवीमध्ये स्मरेदेकमणिगृहम्।
चतुःषष्टिमहास्तम्भशोभाडम्बरमण्डितम्॥८८॥
मूलभूमिस्तु प्रथमा द्वितीया मतिविभ्रमा।
तृतीया भोगभूमिश्च नृत्यभूमिश्चतुर्थिका॥८९॥
पञ्चमी शयनीयाख्या षष्ठी वैमानिकीति च।
सप्तमी अष्टमी चोभे दोलाभूमी निरूपिते॥९०॥
नवमी दूरलक्षा च दशमी चन्द्रभूमिका।
इत्येता दश आख्याता भूमयो निजवेश्मनः॥
प्रियाभिः सह वसेदस्मिन् घनीभूतो रसःपुमान्॥९१॥

इति श्रीमाहेश्वरतन्त्रे उत्तरखण्डे शिवोमासंवादे पञ्चचत्वारिंशं पटलम्॥४५॥

षट्चत्वारिंशं पटलम्

शिव उवाच

इत्थं स्मरन्ती सततं निजधाममहोदयम्।
क्रमेण वासना देवि गमयत्येव वासरान्॥१॥
यद्येषा विरहावस्था स्मरणाख्या प्रवर्त्तते।
तदा स्मृतिपथारूढं निजं धाम भवेत्प्रिये॥२॥
अन्यथा ध्यायमानस्य रसलीलामहोदधिम्।
मध्येविच्छिद्य विच्छिद्य मनस्तस्मान्निवर्त्तते॥३॥
यावन्न जायते ह्येषा दशा विरहसम्भवा।
तावन्न शक्नुयात्कर्तुं विद्धि सेवां मनोमयीम्॥४॥

Nijanand App

83. उछलती हुई मृगियों, वराह, गवय, शश, रुरु, मृगनाभि तथा चमरियों से जो अलंकृत है।

84. अनेक सूर्य के समान चिन्तामणि रत्नों से आवृत्त पांच हजार मणि भवनों में रहने वाली

85. दिव्य श्रृंगार के वेश से पूर्ण रस भाव को जानने वाली सेवा उपचार में चतुर परिचारिकाएं रहती हैं।

86. उसके मध्य दिव्य महापद्म वन का स्मरण करना चाहिए। यह वन लक्ष योजन का है और भौंरे यहां गुंजार कर रहे हैं।

87. वायु के द्वारा उड़ाए गए पराग से मानो आकाश में वितान ताना जा रहा है। उसके गन्ध के लोभ में उड़ने वाले भंवरों से चित्रित वह तिमान दिखाई पड़ रहा है।

88. महापद्म वन के मध्य में एक मणिगृह का स्मरण करना चाहिए जो चौंसठ महास्तम्भों की शोभा से मण्डित है।

89. प्रथमा मूल भूमि, द्वितीया मति विभ्रमा, तृतीया भोग भूमि, चतुर्था नृत्य भूमि,

90. पंचमी शयनीय, षष्ठी वैमानिकी, सप्तमी तथा अष्टमी दोला भूमि कही गई है।

91. नवमी दूरलक्षा, दशमी चन्द्रभूमि। यह दस भूमियां निज गृह की कही गई हैं। यहां घनीभूत रस रूप परम पुरुष प्रियाओं के साथ निवास करते हैं।

माहेश्वरतन्त्र में उत्तर खण्ड का शिव-उमा संवाद का पैंतालीसवां अध्याय समाप्त हुआ।

छियालीसवां अध्याय

शिव ने कहा—

1. इस प्रकार अपने धाम का महान् उदय स्मरण करती हुई वासना क्रमशः दिन बिताती है।

2. यदि स्मरण नाम की यह विरहावस्था होती है तो निज धाम स्मृति पथ में आता है।

3. अन्यथा रस लीला महासागर का ध्यान करते हुए मध्य में विच्छिन्न होकर मन वहां से लौट पड़ता है।

4. जब तक यह विरह से होने वाली दशा उत्पन्न नहीं होती है, तब तक मनोमयी सेवा नहीं की जा सकती है।

Nijanand App

स्मृत्यवस्थोदयो यावत्तावत्सेवाद्वयं भवत्।
आन्तरीया तथा बाह्या तयोर्नैकतरा क्वचित्।।५।।
सेवया तद्गतं चेतः शनैर्लीलागतं भवेत्।
स्मृत्यवस्थामवाप्नोति क्रमेण परमेश्वरि।।६।।
स्मृत्यवस्थोदये देवि मनस्तत्तन्मनोरथैः।
प्रलापाख्यामवाप्नोति दशां च व्याकुलीकृतम्।।७।।
अबुद्धिपूर्वकालापः प्रलापः कथितः प्रिये।
प्रियलीलाविलासादिविषयस्थिरचेतसः।।८।।
रमयस्वाद्य रुचिरं प्रियप्रेम्णा वनान्तरे।
प्रिय त्वं चिरकालेन मया प्राप्तोसि साम्प्रतं।।९।।
इत्यादिविविधालापाः प्रवर्त्तन्ते महेश्वरि।
यदा देहानुसन्धानं मध्ये मध्ये प्रजायते।।१०।।
अत्युग्रतरसन्तापनिर्वापणपटीयसी।
सुधाधारेव सततं वाक् त्वदीया रसस्रवा।।११।।
अनङ्गकोटिसौन्दर्यमहाब्धिमथनोद्धृतः।
सारांश इव ते रूपमानन्दोद्वेलनक्षमं।।१२।।
महादुःखतमस्तोमविपाटनपटीयसी।
चन्द्रज्योत्स्नेव रुचिरा हास्यशोभा तव प्रिय।।१३।।
मय्येतत्तु कथं नाथ विपरीतं प्रवर्त्तते।
एवमादीनि वाक्यानि प्रवर्त्तन्ते गुणस्तवे।।१४।।
ततः क्रमेण देवेशि मनोवैवश्यकारिणी।
आध्यवस्था प्रवर्तेत विप्रलम्भदशात्मिका।।१५।।
दीर्घतापाग्निसन्तप्तमाधिग्रस्त मनोन्तरं।
बहिः सृजत्यश्रुधारां श्वासकम्पादिकं तथा।।१६।।
विरहे प्राणनाथस्य अप्राप्तौ सङ्गमस्य च।
जायते देवदेवेशि दशा चोन्मादसंज्ञिका।।१७।।
श्वासाश्रुपातसन्तापकम्पभूलेखनादिभिः।
अवस्था ज्ञायते देवि ह्युन्माद इति संज्ञया।।१८।।
जायमाने ततो देवि तापे विरहसम्भवे।
हुङ्कारमात्रवचना तन्द्रामोहसमाकुला।।१९।।
अनुसन्धानरहिता श्वाससंशोषिताधरा।
विवर्णवदनाकारा कृशीभूतकलेवरा।।२०।।

Nijanand App

5. जब तक स्मृति अवस्था का उदय हो तब तक दो सेवाएं होती हैं। आन्तरीया और बाह्या। कहीं उन दोनों में एक भी नहीं होती है।

6. सेवा के द्वारा तद्गत मन धीरे से लीलागत हो जाता है। क्रमशः स्मृति अवस्था भी प्राप्त हो जाती है।

7. स्मृति अवस्था के उदय होने पर मन इच्छाओं के द्वारा प्रलाप की अवस्था को प्राप्त हो जाता है। इस दशा में मन व्याकुल होता है।

8. अबुद्धिपूर्ण आलाप ही प्रलाप कहा गया है। इसमें प्रिय सम्बद्ध लीला विलास आदि विषयों में मन स्थिर रहता है।

9. आज प्रेम से सुन्दर प्रिय को वन के मध्य में रमण कराओ। हे प्रिय! तुम आज बहुत दिनों के बाद प्राप्त हुए हो।

10. हे महेश्वरि! इस प्रकार के विविध आलाप होते रहते हैं और बीच-बीच में देह का भी स्मरण हो जाता है।

11. अति उग्र संताप के शान्त करने में निपुण अमृत धारा के समान रस बहाने वाली तुम्हारी वाणी है।

12. कोटि काम के सौन्दर्य रूपी महासागर के मथने से निकले सार भाग की तरह आनन्द को उछालने वाला तुम्हारा रूप है।

13. महान् दुःख रूपी अन्धकार समूह नष्ट करने में समर्थ चन्द्रमा की ज्योत्स्ना के समान तुम्हारी हास्य शोभा रुचिर है।

14. हे नाथ! यह सब मेरे विषय में विपरीत क्यों हो रहा है। इत्यादि वाक्य गुण प्रशंसा में कहे जाते हैं।

15. हे देवि! मन को विवश कर देने वाली दस प्रकार के विप्रलंभ वाली आधि अवस्था क्रमशः चालू होती है।

16. दीर्घ ताप वाली अग्नि से संतप्त मन जब आधिग्रस्त होता है तो बाहर आंसुओं की धारा बहना, श्वास बन्द, कम्प आदि होता है।

17. प्राणनाथ के विरह में संगम के न होने पर उन्माद अवस्था उत्पन्न होती है।

18. श्वास, अश्रुपात, संताप, कम्पन, भूलेखन आदि के द्वारा उन्माद नाम की अवस्था जानी जाती है।

19. विरह जन्य ताप के होने पर हुंकार मात्र ही निकलती है। तन्द्रा और मोह घेर लेता है।

20. अनुसन्धान नहीं हो पाता है। श्वास ओष्ठ को सुखा देता है। मुख का आकार विवर्ण तथा शरीर कृश हो जाता है।

Nijanand App

नैकट्यजातमरणा जडावस्था भवेत्प्रिये।
कदाचिद्देवदेवेशि धैर्यस्याप्यनवस्थितौ॥२१॥
निजनाथवियोगाग्निज्वालाज्वलितविग्रहा।
जायते देवदेवेशि दशा मरणरूपिणी॥२२॥
इत्येता विरहावस्था दश प्रोक्ता तवानघे।
विप्रलम्भाख्यशृङ्गाररसे प्रादुर्भवन्ति ताः॥२३॥
यद्यप्येका प्रजायेत दशा विरहसम्भवा।
तथापि च वरारोहे रसस्यानुभवो भवेत्॥२४॥
यावन्न जायतेऽप्येका दशा विरहसम्भवा।
तावन्न जायते देवि रसस्यानुभवः क्वचित्॥२५॥
ज्ञात्वापि प्रियविश्लेषं यद्यवस्थोदयो नहि।
तदा चूडामणिजपः कर्तव्यः शुद्धिहेतवे॥२६॥
मनोविकारे भावाख्ये जायमाने सुरेश्वरि।
अप्राप्तौ विरहावस्थां धत्ते भावः स एव हि॥२७॥
परानन्दे प्रिये ज्ञाते पदप्राप्तिवशादिह।
मनो विकृतिमभ्येति भावसंज्ञामलौकिकीं॥२८॥
अनेकजन्मकलुषैर्यदा वीतं मनो भवेत्।
नैवाप्नोति तदाभावं येन स्याद्विरहोदयः॥२९॥
तन्मालिन्यनिरासार्थं जपसेवार्चनादिकम्।
अवश्यमेव कर्तव्यं श्रीकृष्णप्रीतये चिरम्॥३०॥
अनुग्रहदृशा पश्येत् यदैव पुरुषोत्तमः।
प्रसादसुमुखो भूत्वा तदा स्याद्विरहोदयः॥३१॥
इति ते सर्वमाख्यातं दशावस्थानिरूपणम्।
समासेन महेशानि किं भूयः श्रोतुमिच्छसि॥३२॥

इति श्रीमाहेश्वरतन्त्रे उत्तरखण्डे शिवोमासंवादे षट्चत्वारिंशं पटलम्॥४६॥

सप्तचत्वारिंशं पटलम्

पार्वत्युवाच

भगवन् श्रोतुमिच्छामि यथा कृष्णः प्रसीदति।
विना जपं विना सेवां विना पूजामपि प्रभो॥१॥
यथा कृष्णः प्रसन्नः स्यात्तमुपायं वदाधुना।
अन्यथा देवदेवेश पुरुषार्थो न सिद्ध्यति॥२॥

Nijanand App

21. मरणावस्था निकट होने पर उस अवस्था को जड़ावस्था कहते हैं। हे देवि! धैर्य के निश्चित न होने से कभी-कभी

22. अपने स्वामी के वियोगाग्नि की ज्वाला से दग्ध शरीर होने पर मरण अवस्था भी हो जाती है।

23. यह दस विरह अवस्था कही गई है जो विप्रलंभ शृंगार में होती है।

24. यद्यपि विरह दशा एक ही उत्पन्न होती है तथापि रस का अनुभव होता है।

25. जब तक विरहजन्य एक भी दशा नहीं होती तब तक रस का अनुभव नहीं होता।

26. वियोग को जानबूझ कर अवस्था का उदय न हो तो शुद्धि के लिए चूड़ामणि जप करना चाहिए।

27. भाव नामक मनोविकार के उत्पन्न होने पर विरहावस्था न होने पर वह भाव ही धारण करता है।

28. परमानन्द प्रिय के ज्ञात हो जाने पर उसकी अप्राप्ति के कारण मन अलौकिक विकृति भाव संज्ञा प्राप्त करता है।

29. अनेक जन्म के कर्मों से जब मन घिरा होता है तो अभाव की प्रतीति नहीं होती जिससे विरह का उदय हो।

30. उसकी मलिनता को दूर करने के लिए कृष्ण की प्रीति के लिए चिरकाल तक जप, सेवा, अर्चन आदि अवश्य करना चाहिए।

31. जब पुरुषोत्तम अनुग्रह दृष्टि से देखते हैं तो उनके प्रसन्न होने से विरहोदय होता है।

32. इस प्रकार से हमने तुम्हारे लिए दस अवस्थाओं का निरूपण संक्षेप में कर दिया। आगे क्या सुनना चाहती हो?

माहेश्वरतन्त्र में उत्तर खण्ड के शिव-उमा संवाद का छियालीसवां अध्याय समाप्त हुआ।

सैंतालीसवां अध्याय

पार्वती ने कहा—

1. हे भगवन्! जप, सेवा और पूजा के बिना भी कृष्ण किस प्रकार प्रसन्न होते हैं, वह मैं सुनना चाहती हूं।

2. जिस तरह कृष्ण प्रसन्न हो, वह उपाय बताइए, अन्यथा पुरुषार्थ सिद्ध नहीं होता है।

Nijanand App

शिव उवाच

साधु पार्वति ते प्रश्नः सावधानतया शृणु।
विना जपं विना सेवां विना पूजामपि प्रिये॥३॥
यथा कृष्णः प्रसन्नः स्यात्तमुपायं वदामि ते।
जपसेवादिकं चापि विना स्तोत्रं न सिध्द्यति॥४॥
कीर्तिप्रियो हि भगवान् परात्मा पुरुषोत्तमः।
जपस्तन्मयतासिध्द्यै सेवा स्वाचाररूपिणी॥५॥
स्तुतिः प्रसादनकरी तस्मात्स्तोत्रं वदामि ते।
सुधाम्भोनिधिमध्यस्थे रत्नद्वीपे मनोहरे॥६॥
नवखण्डात्मके तत्र नवरत्नविभूषिते।
तन्मध्ये चिन्तयेद्रम्यं मणिगृहमनुत्तमं॥७॥
परितो वनमालाभिः ललिताभिः विराजिते।
तत्र सञ्चिन्तयेच्चारु कुट्टिमं सुमनोहरं॥८॥
चतुःषष्ट्या मणिस्तम्भैश्चतुर्दिक्षु विराजितं।
तत्र सिंहासने ध्यायेत्कृष्णं कमललोचनं॥९॥
अनर्घ्यरत्नजटितमुकुटोज्वलकुण्डलं।
सुस्मितं सुमुखाम्भोजं सखीवृन्दनिषेवितं॥१०॥
स्वामिन्याश्लिष्टवामाङ्गं परमानन्दविग्रहं।
एवं ध्यात्वा ततः स्तोत्रं पठेत्सुविजितेन्द्रियः॥११॥
कृष्णं कमलपत्राक्षं सच्चिदानन्दविग्रहं।
सखीयूथान्तरचरं प्रणमामि परात्परं॥१२॥
शृङ्गाररसरूपाय परिपूर्णसुखात्मने।
राजीवारुणनेत्राय कोटिकन्दर्परूपिणे॥१३॥
वेदाद्यगमरूपाय वेदवेद्यस्वरूपिणे।
अवाङ्मनसविषयनिजलीलाप्रवर्त्तिने॥१४॥
नमः शुद्धाय पूर्णाय निरस्तगुणवृत्तये।
अखण्डाय निरंशाय निरावरणरूपिणे॥१५॥
संयोगविप्रलम्भाख्यभेदभावमहाब्धये।
सदंशविश्वरूपाय चिदंशाक्षररूपिणे॥१६॥
आनन्दांशस्वरूपाय सच्चिदानन्दरूपिणे।
मर्यादातीतरूपाय निराधाराय साक्षिणे॥१७॥

Nijanand App

शिव ने कहा—

3. हे पार्वति! तुम्हारा प्रश्न ठीक है। सावधान होकर सुनो। जप सेवा और पूजा के बिना भी

4. जैसे कृष्ण प्रसन्न होते हैं, वह मैं कहूंगा। जप सेवा के बिना स्तोत्र सिद्ध नहीं होता है।

5. पुरुषोत्तम कीर्ति प्रिय हैं। जप तन्मयता सिद्धि के लिए और सेवा निज आचार रूप होती है।

6. स्तुति प्रसन्नता देने वाली होती है इसलिए मैं स्तोत्र कहता हूं। सुधा सागर के मध्य मनोहर रत्न द्वीप में

7. जो नवरत्नों से विभूषित नवखण्डात्मक है, उसके मध्य श्रेष्ठ मणिगृह का चिन्तन करना चाहिए।

8. उसके चारों ओर सुन्दर वन की पंक्तियां हैं। उसमें सुन्दर कुट्टिम का ध्यान करे।

9. वह कुट्टिम चारों दिशाओं में चौंसठ मणि स्तम्भों से सुशोभित है। वहां सिंहासन पर श्रीकृष्ण का ध्यान करना चाहिए।

10. अमूल्य रत्नों से जटित मुकुट तथा उज्ज्वल कुण्डल, मुस्कराहटयुक्त मुख कमल जिनका है, सखियां जिनकी सेवा कर रही हैं।

11. स्वामिनी जिनके बामांग में हैं, जो परम आनन्द मूर्ति हैं। उनका ध्यान करके जितेन्द्रिय होकर स्तोत्र पाठ करे।

12. सच्चिदानन्द, कमल नयन सखी समूहों में विचरण करने वाले परात्पर कृष्ण को प्रणाम करता हूं।

13. जो शृंगार, रस रूप, पूर्ण सुख, पूर्ण सुखात्मा, कोटि काम देव के समान रूपवान, कमल के समान लाल नेत्रों वाले हैं।

14. जिनका रूप वेद भी नहीं जान पाते हैं। वेद वेद्य स्वरूप है। वाणी और मन से अगम्य निज लीला प्रदर्शित करने वाले हैं।

15. शुद्ध, पूर्ण, गुणवृत्तिरहित, अखण्ड, निरंश, निरावरण रूपी परब्रह्म को मैं नमस्कार करता हूं।

16. संयोग वियोग रूप शृंगार के महासागर, सत् अंश से जो विश्वरूप हैं और चिदंश से अक्षर रूप, उनको मैं नमस्कार करता हूं।

17. आनन्दांश रूप, सच्चिदानन्द रूपी, मर्यादातीत रूप, निराधार साक्षी को मैं प्रणाम करता हूं।

Nijanand App

मायाप्रपञ्चदूराय नीलाचलविहारिणे।
माणिक्यपुष्परागाद्रिलीलाखेलप्रवर्त्तिने॥१८॥
चिदन्तर्यामिरूपाय ब्रह्मानन्दस्वरूपिणे।
प्रमाणपथदूराय प्रमाणाग्राह्यरूपिणे॥१९॥
मायाकालुष्यहीनाय नमः कृष्णाय शम्भवे।
क्षरायाक्षररूपाय क्षराक्षरविलक्षणे॥२०॥
तुरीयातीतरूपाय नमः पुरुषरूपिणे।
महाकामस्वरूपाय कामतत्त्वार्थवेदिने॥२१॥
दशलीलाविहाराय सप्ततीर्थविहारिणे।
विहाररसपूर्णाय नमस्तुभ्यं कृपानिधे॥२२॥
विरहानलसन्तप्तभक्तचित्तोदयाय च।
आविष्कृतनिजानन्दविफलीकृतमुक्तये॥२३॥
द्वैताद्वैतमहामोहतमः पटलपाटिने।
जगदुत्पत्तिविलयसाक्षिणेऽविकृताय च॥२४॥
ईश्वराय निरीशाय निरस्ताखिलकर्मणे।
संसारध्वान्तसूर्याय पूतनाप्राणहारिणे॥२५॥
रासलीलाविलासोर्मिपूरिताक्षरचेतसे।
स्वामिनीनयनाम्भोजभावभेदैकवेदिने॥२६॥
केवलानन्दरूपाय नमः कृष्णाय वेधसे।
स्वामिनीहृदयानन्दकन्दलाय तदात्मने॥२७॥
संसारारण्यवीथीषु परिभ्रान्तामनेकधा।
पाहि मां कृपया नाथ त्वद्वियोगाधिदुःखितां॥२८॥
त्वमेव मातृपित्रादिबन्धुवर्गादयश्च ये।
विद्या वित्तं कुलं शीलं त्वत्तो मे नास्ति किञ्चन॥२९॥
यथा दारुमयी योषिच्चेष्टते शिल्पिशिक्षया।
अस्वतन्त्रा त्वया नाथ तथाहं विचरामि भोः॥३०॥
सर्वसाधनहीनां मां धर्माचारपराङ्मुखाम्।
पतितां भवपाथोधौ परित्रातुं त्वमर्हसि॥३१॥
मायाभ्रमणयंत्रस्थामूर्ध्वाधोभयविह्वलाम्।
अदृष्टनिजसंकेतां पाहि नाथ दयानिधे॥३२॥
अनर्थेऽर्थदृशं मूढां विश्वस्तां भयदस्थले।
जागृतव्ये शयानां मामुद्धरस्व दयापरः॥३३॥

Nijanand App

18. माया प्रपंच से दूर, नीलांचल पर विहार करने वाले, माणिक्य पर्वत, पुष्पराग पर्वत पर लीलाएं रचाने वाले,

19. चित्, अन्तर्यामी, ब्रह्मानन्द स्वरूप, प्रमाण मार्ग से दूर, प्रमाण से अग्राह्य रूप वाले,

20. माया की कलुषता से रहित, आनन्ददायक स्वरूप कृष्ण को नमस्कार है। क्षर तथा अक्षर रूप तथा दोनों से विलक्षण

21. तुरीयातीत रूप, पुरुषरूपी को नमस्कार है। महाकाम स्वरूप, काम के तत्वार्थ को जानने वाले,

22. दस लीला विहार, सप्ततीर्थ विहारी, विहार रस पूर्ण, कृपानिधि! आपको नमस्कार है।

23. विरहाग्नि से तप्त, भक्त के मन के उदय के लिए प्रकट किए गए अपने आनन्द से मुक्ति को भी निष्फल करने वाले,

24. द्वैत अद्वैत रूपी महामोह के अन्धकार को मिटाने वाले, जगत् की उत्पत्ति एवं विनाश के साक्षी, अविकृत,

25. ईश्वर, निरीश, अखिल कर्मों को निरस्त करने वाले, संसार रूपी अन्धकार के सूर्य, पूतना प्राणहारी,

26. रास लीला के विलास रूपी तरंगों से पूर्ण अक्षर चित्त वाले, स्वामिनी के नेत्र कमलों के भाव के एकमात्र ज्ञाता,

27. केवलानन्द रूप, बेधा कृष्ण को नमस्कार। स्वामिनी के हृदय के आनन्द को देने वाले, स्वामिनी रूप,

28. संसार रूपी जंगल की बीथियों में अनेक बार घूमने वाले, हे नाथ! आपके वियोग से दुःखित मेरी कृपा करके रक्षा कीजिए।

29. आप ही माता, पिता, बन्धुवर्ग, विद्या, धन, कुल, शील सब कुछ हैं। आपसे बढ़कर मेरे लिए दूसरा कुछ नहीं है।

30. जिस प्रकार से कठपुतली शिल्पी की शिक्षा से चेष्टा करती है, इसी प्रकार आपके अधीन मैं विचरण करती हूं।

31. सर्वसाधनहीन धर्माचार से पराङ्मुख, भवसागर में पड़ी हुई मेरी आप रक्षा करें।

32. माया के घूमते हुए यन्त्र में स्थित होकर ऊपर और नीचे दोनों ओर भय से विह्वल अपने संकेत को न देख पाने वाली मेरी रक्षा करें।

33. अनर्थ में ही अर्थ समझने वाली, भय स्थान में विश्वस्त होने वाली, जागरण योग्य विषय में सोती मेरी दया करके उद्धार करें।

Nijanand App

अतीतानागतभवसन्तानविवशान्तराम्।
बिभेमि विमुखी भूय त्वत्तः कमललोचन॥३४॥
मायालवणपाथोधिपयः पानरतां हि मां।
त्वत्सान्निध्यसुधासिन्धुसामीप्यं नय माऽचिरं॥३५॥
त्वद्वियोगार्तिमासाद्य यज्जीवामीति लज्जया।
दर्शयिष्ये कथं नाथ मुखमेतद्विडम्बनं॥३६॥
प्राणनाथ वियोगेपि करोमिप्राणधारणं।
अनौचिती महत्येषा किं न लज्जयतीह मां॥३७॥
किं करोमि क्व गच्छामि कस्याग्रे प्रवदाम्यहं।
उत्पद्यन्ते विलीयन्ते वृत्तयोब्धौ यथोर्मयः॥३८॥
अहं दुःखाकुली दीना दुःखहा नभवत्परः।
विज्ञाय प्राणनाथेदं यथेच्छसि तथा कुरु॥३९॥
ततश्च प्रणमेत्कृष्णं भूयो भूयः कृताञ्जलिः।
इत्येतद्गुह्यमाख्यातं न वक्तव्यं गिरीन्द्रजे॥४०॥
एवं यः स्तौति देवेशि त्रिकालं विजितेन्द्रियः।
आविर्भवति तच्चित्ते प्रेमरूपी स्वयं प्रभुः॥४१॥

इति श्रीमाहेश्वरतन्त्रे उत्तरखण्डे शिवपार्वतीसंवादे पुरुषोत्तमस्तवो नाम सप्तचत्वारिंशं पटलम्॥४७॥

अथाष्टचत्वारिंशं पटलम्

पार्वत्युवाच

भगवन् देवदेवेश जगन्नाथ दयानिधे।
कथा साध्वी महापुण्या भवता विनिरूपिता॥१॥
अनुगृहीता नाथेन त्वयाहं करुणात्मना।
ब्रह्मगुह्यमिदं देव यदेतत्प्रकटीकृतम्॥२॥
अतः परं तु देवेश वेदितव्यं न विद्यते।
तथापि प्रष्टुमिच्छामि कोऽमृतं पीय तृप्तिभाक्॥३॥
मन्त्रराजप्रसङ्गेन सेवा ते विनिरूपिता।
यथा सिध्यन्ति देवेश वासनाः कृष्णयोषितां॥४॥
धर्मः कृष्णप्रियाणां हि न सेवातोधिकः क्वचित्।
तथापि भवता नाथ किञ्चित्पूजापि सूचिता॥५॥

Nijanand App

34. हे कमल के समान नेत्र वाले! बीते हुए और आने वाले जन्म समूह से विवश मन वाली, मैं आपसे विमुख होकर भयभीत हूं।

35. माया के खारे सागर के पानी को पीने में लगी मुझको अपने सान्निध्य रूप सुधा सागर के समीप शीघ्र ले चलिए।

36. आपके वियोग रूपी व्यथा को पाकर जो मैं जी रही हूं, इस लज्जा से अपना यह मुख कैसे दिखाऊं?

37. प्राणनाथ के वियोग में भी मैं प्राण धारण किए हूं, यह महान् अनौचित्य मुझे लज्जित क्यों नहीं कर रहा है?

38. क्या करूं, कहां जाऊं, किसके आगे कहूं? सागर में लहर के समान मेरी चित्त वृत्तियां उठती और विलीन होती हैं।

39. मैं दुःख से व्याकुल हूं, दीन हूं। आपसे बढ़कर दुःख नाशक कोई अन्य नहीं है। यह जानकर जैसी इच्छा हो वैसा कीजिए।

40. इसके बाद हाथ जोड़कर बार-बार कृष्ण को प्रणाम करना चाहिए। यह रहस्य हमने बता दिया किसी से कहना नहीं।

41. हे देवि! इस प्रकार जो जितेन्द्रिय त्रिकाल स्तुति करता है उसके मन में प्रेम रूपी प्रभु स्वयं प्रकट होते हैं।

माहेश्वरतन्त्र के उत्तर खण्ड में शिव-पार्वती के पुरुषोत्तमस्तव नामक सैंतालीसवां अध्याय समाप्त हुआ।

अड़तालीसवां अध्याय

पार्वती ने कहा—

1. हे भगवान्! संसार के स्वामी, दयानिधि! आपने महापुण्यमयी कथा कही।

2. करुणा रूपी आपके द्वारा मैं अनुगृहीत हूं। ब्रह्म के गुह्य विषय को मेरे सामने प्रकट कर दिया।

3. हे देव! इससे परे कुछ ज्ञातव्य नहीं है फिर भी मैं पूछना चाहती हूं क्योंकि अमृत पीकर कौन तृप्त होता है?

4. मन्त्रराज के प्रसंग में आपने सेवा का निरूपण किया था। जिस प्रकार कृष्ण के स्त्रियों की वासनाएं सिद्ध होती हैं।

5. कृष्ण प्रियाओं का धर्म सेवा के अतिरिक्त कुछ नहीं है फिर भी कुछ पूजा भी सूचित की है।

Nijanand App

विधिना केन देवेश क्रियते सा कदा च कैः।
एतन्मे ब्रूहि भो विद्वन् महांस्त्वं दीनवत्सलः॥६॥

शिव उवाच

प्रिये धन्यासि धन्यासि धन्यासि मम मानसम्।
प्रीणासि प्रश्नवादेन सूर्योऽब्जमिव भानुना॥७॥
अतस्त्वां कथयिष्यामि सुगोप्यमपि पूजनम्।
सेवनं मुख्यमेवोक्तं पूजनं गौणमुच्यते॥८॥
सेवां कर्तुमशक्तश्चेत् पूजयेत्पुरुषोत्तमम्।
तदहंते प्रवक्ष्यामि यन्मां त्वं पृच्छसि प्रिये॥९॥
प्रातरुत्थाय देवेशि ब्रह्मरन्ध्रे निजं गुरुम्।
ध्यात्वा पञ्चोपचारैश्च मानसैः पूजयेत्परम्॥१०॥
ततो हृदम्बुजे ध्यायेच्छ्रीकृष्णं स्वामिनीयुतम्।
प्रसन्नवदनाम्भोजप्रियावृन्दविहारिणम्॥११॥
पूर्ववत्पूजयित्वाथ व्यवहारविधौ प्रिये।
अनुज्ञां प्रार्थयेत्तस्य प्रबद्धकरसम्पुटा॥१२॥
जानामि धर्मं न हि मे प्रवृत्तिर्जानाम्यधर्मं न ततो निवृत्तिः।
मायान्धकारे गहने प्रविष्टा गृहान्धकूपे पतिता प्रमादात्॥१३॥
यद्यत्करिष्यामि शुभाशुभं वा नाहं स्वतन्त्रः प्रकरोमि तत्तत्।
तस्मात्क्षमस्व प्रियनाथ सर्वं संसारयात्रामनुवर्त्तमानम्॥१४॥
आदायाज्ञां ततो देवि भूमिं सम्प्रार्थ्य पूर्ववत्।
मलोत्सर्गविधिं कृत्वा हस्तपादादिशोधनम्॥१५॥
पूर्ववद्देवदेवेशि दन्तशुद्धिं समाचरेत्।
तीर्थे वा स्वगृहे वापि स्नानं कृत्वा च पूर्ववत्॥१६॥
पूजागृहसमीपं तु गत्वोक्तासनसंस्थितः।
कुङ्कुमादिशुभैर्द्रव्यैस्तिलकं हरिमन्दिरम्॥१७॥
वामरेखास्थितो ब्रह्मा दक्षिणायामहं प्रिये।
हरिर्मध्यगतस्तस्मान्मध्यदेशं न लेपयेत्॥१८॥
न दर्पणे च जले तैले विलोक्य तिलकी भवेत्।
कृतमप्यकृतं वीक्ष्य दर्पणादौ तु यत्कृतम्॥१९॥
मुद्रादिधारणं कुर्यात् यथा स्थानं महेश्वरि।
आदौ ललाटदेशे तु गदां कौमोदिकीं न्यसेत्॥२०॥

Nijanand App

6. किस विधि से, कब, किन लोगों के द्वारा वह पूजा की जाती है? हे दीन वत्सल! यह मुझसे बतलाइए।

शिव बोले—

7. प्रिये तुम धन्य हो क्योंकि प्रश्नों द्वारा मेरे मन को वैसे ही प्रसन्न करती हो जैसे सूर्य कमल को किरणों द्वारा।

8. इसलिए गोप्य पूजन भी मैं कहूंगा। सेवा ही मुख्य है। पूजा गौड़ है।

9. यदि सेवा करने में अशक्त हो तो पूजन करे। मैं वह बतलाऊंगा जो तुमने मुझसे पूछा है।

10. प्रातः काल उठकर ब्रह्म रन्ध्र में अपने गुरु का ध्यान कर मानसिक पंचोपचारों से परब्रह्म का पूजन करे।

11. तब हृदय कमल में स्वामिनी युक्त प्रसन्न मुख वाली प्रियाओं के समूह में विहार करने वाले श्रीकृष्ण का ध्यान करे।

12. व्यवहार विधि में पूर्व की तरह पूजन करके अंजलि बांध कर आज्ञा की प्रार्थना करे।

13. मैं धर्म को जानती हूं, किन्तु धर्म में मेरी प्रवृत्ति नहीं। अधर्म जानती हूं किन्तु उससे निवृत्ति नहीं। माया के अन्धकार वाले घने जंगल में मैं प्रविष्ट हूं। घर रूपी अन्ध कूप में मैं आलस्य वश गिरी पड़ी हूं।

14. मैं शुभ या अशुभ जो कुछ करती हूं वह स्वतन्त्र होकर नहीं करती। हे नाथ! संसार यात्रा का अनुसरण करने वाले उस सब के लिए क्षमा करें।

15. हे देवि! आज्ञा लेकर भूमि की प्रार्थना कर, मल त्याग कर, हाथ पैर शुद्ध करके

16. पूर्व की तरह दंत शुद्धि कर तीर्थ या अपने घर में पूर्ववत् स्नान करके,

17. पूजा गृह के समीप जाकर आसन पर बैठे। कुंकुम आदि शुभ वस्तुओं से तिलक रूपी हरि मन्दिर बनावे।

18. जिसकी वाम रेखा में ब्रह्मा, दक्षिण में मैं तथा मध्य में हरि होते हैं इसलिए मध्य देश में लेपन करे।

19. दर्पण में, जल में, तेल में देखकर तिलक न बनाए। दर्पण आदि में देखकर बनाया तिलक भी अकृत हो जाता है।

20. यथास्थान मुद्रा आदि धारण करे। प्रारम्भ में ललाट में कौमुदकी गदा का न्यास करे।

Nijanand App

एकैकां विन्यसेद्वामपार्श्वे वामस्तने तथा।
बाहुयुग्मे तथैकैका द्वे द्वे वा भक्तिभावतः॥२१॥
उदरे पञ्च चक्राणि हृदि चक्रत्रयं न्यसेत्।
चक्रद्वयं ततो देवि दक्षपार्श्वे नियोजयेत्॥२२॥
त्रीणि दक्षस्तने युज्यात् द्वयं दक्षभुजे वहेत्।
दक्षकर्णस्य मूले तु चक्रयुग्म प्रविन्यसेत्॥२३॥
कण्ठदेशे तथा वामबाहौ चक्रं सकृत्सकृत्।
एक एव भवेद्देवि शङ्खो वामकपोलगः॥२४॥
वामपार्श्वे तथा चैकः स्तने वामे द्वयं न्यसेत्।
वामबाहौ त्रयं विद्याद्वामकर्णे द्वयं तथा॥२५॥
अधरेपि द्वयं न्यस्य शुभया गोपिकामृदा।
दक्षबाहौ तथा चैकमेवे शङ्खान्मविन्यसेत्॥२६॥
पद्ममुद्राद्वयं वामे दक्षिणेपि तथा न्यसेत्।
नाममुद्रा तु सर्वाङ्गे विभृयाद्भक्तितत्परः॥२७॥
अधृत्वा तुलसीमालामकृत्वायुधलाञ्छनम्।
न सिद्धिमाप्नुयात्कोपि सत्यमेव वचो मम॥२८॥

पार्वत्युवाच

अधृत्वायुधलिङ्गानि यः कुर्याद्भजनादिकम्।
न सिद्धिमाप्नुयादत्र मनो मे मुह्यतेतराम्॥२९॥
रसरूपस्य कृष्णस्य न चास्त्ययुधधारणम्।
कस्मात्कृष्णप्रिया साक्षात् बिभृयाद्वैष्णवायुधम्॥३०॥
यो यो यद्देवता भक्तः स बिभर्त्ति तदायुधम्।
प्रयोजनं तु नास्त्येव तथाप्यादिश्यते त्वया॥३१॥
तस्मान्मे संशयो जातो व्यथते हृदि शल्यवत्।
तमुद्धर दयासिन्धो येन मे निश्चयो भवेत्॥३२॥

शिव उवाच

शृणु देवि प्रवक्ष्यामि यन्मां त्वं परिपृच्छसि।
यस्य श्रवणमात्रेण मनो निःसंशयं भवेत्॥३३॥
अद्वैतं भावयेन्नित्यं द्वैतभावं न भावयेत्।
द्वैतभावनया नित्यं संसारो न निवर्त्तते॥३४॥

Nijanand App

21. एक-एक का न्यास वाम पार्श्व वाम स्तन में करे। दोनों बाहुओं में एक-एक या दो-दो भक्ति भावानुसार,

22. उदर में पांच चक्र तथा हृदय में तीन चक्रों का न्यास करे। इसके बाद दक्षिण पार्श्व में दो चक्र नियुक्त करे।

23. दक्षिण स्तन में तीन और दक्षिण भुजा में, दक्षिण कर्ण के मूल में दो चक्र का न्यास करे।

24. कण्ठ में तथा वाम बाहु में एक-एक चक्र तथा बाएं कपोल में एक शंख,

25. वाम पार्श्व में एक और वाम स्तन में दो, वाम बाहु में दो, वाम कर्ण में दो का न्यास करे।

26. अधर में गोपी चन्दन से न्यास करे। दक्षिण बाहु में एक, इस प्रकार शंखों का न्यास करे।

27. वाम तथा दक्षिण में दो-दो पद्म मुद्रा न्यास करे। नाम मुद्रा सारे शरीर में धारण करे।

28. तुलसी माला को बिना धारण किए, आयुध के चिन्हों को बिना धारण किए कोई भी सिद्धि प्राप्त नहीं कर सकता। यह मेरा सिद्ध वचन है।

पार्वती ने कहा—

29. आयुध लिंगों को बिना धारण किए भजनादि करने से सिद्धि प्राप्त नहीं होती, इस विषय में मेरे मन में मोह है।

30. रस रूप कृष्ण तो आयुध धारण नहीं करते तो कृष्ण प्रिया वैष्णव आयुध कैसे धारण करे।

31. जो जो जिस देवता का भक्त है, वह उसके आयुध धारण करता है। प्रयोजन तो कोई है नहीं फिर भी आप आज्ञा दे रहे हैं।

32. इसलिए मुझे सन्देह हो गया है जो शल्य के समान हृदय को पीड़ा देता है। उसको दूर कीजिए जिससे मुझे निश्चय हो।

शिव ने कहा—

33. हे देवि! सुनो जो पूछती हो, वह कहूंगा। जिसके सुनने से ही मन संशय रहित हो जाता है।

34. अद्वैत की नित्य भावना करनी चाहिए, द्वैत भाव की नहीं। द्वैत भावना से संसार निवृत्त नहीं होता है।

Nijanand App

अद्वैतभावनिष्णातः संसारं नैव पश्यति।
तस्मादद्वैतभावेन यः पश्यति स पश्यति॥३५॥
अयं ब्रह्मा हरिरयं रुद्रोयमिति वै भिदा।
यः पश्यति महेशानि तस्य कालकृत्तं भयम्॥३६॥
प्रपञ्चो ब्रह्मतन्मात्रं ब्रह्मादिस्थावरान्तकः।
द्वे ब्रह्मणीति वेदोक्तिर्लीलाभेदकृता भवेत्॥३७॥
एकमेवाद्वितीयं चेत्यन्यथा तु विरुद्ध्ययते।
तस्माद्द्वैतं तु देवेशि भ्रममात्रं न संशयः॥३८॥
चन्द्रद्वैतं प्रतीयेत जलोपाधिप्रसङ्गतः।
जलोपाधिनिरासेन चन्द्राद्वैतं प्रकाशते॥३९॥
ब्रह्मण्यपि तथा द्वैतमज्ञानेन विजृम्भितं।
अज्ञानस्य निरासे तु ब्रह्माद्वैतं यथा भवेत्॥४०॥
कः शिवः को हरिर्ब्रह्मा 'एकत्वमनुपश्यतः'।
तस्मादायुधलिङ्गानां धारणं न विरुध्यते॥४१॥
आत्मश्रेयः प्रवृत्तानां तामससर्गमाश्रिताः।
दोषा विनायकाश्चान्ये भ्रंशयन्ति मनःश्रिताः॥४२॥
पलायन्ते च ते सर्वे वैष्णवायुधदर्शनात्।
जाज्वल्यमानज्वलनज्वालयेवाकुलीकृताः॥४३॥
सत्त्वोपाधिगतं ब्रह्म विष्णुस्तस्यायुधान्यपि।
दृष्ट्वा दोषाः पलायन्ते सिंहं दृष्ट्वा यथा गजाः॥४४॥
अन्यथाविश्य चित्तं ते भजनं वारयन्ति हि।
तस्मादायुधलिङ्गानां धारणं सर्वथा प्रिये॥४५॥
दृष्ट्वा बिभ्यन्ति पापानि चक्राङ्कितवपुर्धरं।
रजस्तमोमयाभावा न स्पृशन्ति कदाचन॥४६॥
ये लोकरञ्जनार्थाय चक्राद्यायुधलाञ्छनाः।
पाखण्डिनः पतन्त्येते निरयेषु पुनः पुनः॥४७॥
तस्माद्भजनाङ्गतया बिभृयादायुधानि तु।
भजन्सिद्धिमवाप्नोति पापदोषाद्यसंश्रितः॥४८॥
द्वारपूजां ततः कृत्वा प्रविशेद्यागमन्दिरम्।
त्रिर्वामपार्ष्णिघातेन भौमांस्तालत्रयेण च॥४९॥
अन्तरिक्षस्थितान् दिव्यदृष्ट्या भूतान् दिवि स्थितान्।
उत्सार्य भूमिं सम्प्रार्थ्य सम्प्रोक्ष्य विधिनासनम्॥५०॥

Nijanand App

35. अद्वैत भाव में निष्णात संसार नहीं देखता है। इसलिए अद्वैत भाव से जो देखता है वही देखता है।

36. यह ब्रह्म है, यह हरि है, यह रुद्र है, ऐसा भेद करके जो देखता है उसे काल का भय हो जाता है।

37. यह प्रपंच तन्मात्र है जो ब्रह्मा से लेकर स्थावर तक है। जो वेद की यह उक्ति है कि ब्रह्म दो हैं वह लीला भेद के कारण है।

38. वह एक अद्वितीय ही है। अन्यथा यह कथन विरुद्ध हो जाता है। इसलिए अद्वैत ब्रह्म मात्र ही है, इस में सन्देह नहीं।

39. जल रूप उपाधि के प्रसंग से चन्द्र दो प्रतीत होते हैं और जल रूप उपाधि के हट जाने पर चन्द्र अद्वैत प्रकाशित होता है।

40. ऐसे ही ब्रह्म में भी द्वैत अज्ञान जन्य है। अज्ञान नष्ट होने पर ब्रह्म अद्वैत ही हो जाता है।

41. जो एकल देख रहा है उसके लिए कौन शिव, कौन हरि और कौन ब्रह्मा है।

42. इसलिए आयुध लिंगों का धारण विरुद्ध नहीं है। अपने कल्याण में लगे तामस सृष्टि में पाए जाने वाले दोष और विनायक आदि जो मन में विद्यमान हैं वह भ्रष्ट कर देते हैं।

43. वे सब वैष्णव आयुध के देखने से भाग जाते हैं। वे आयुध जलती हुई अग्नि की ज्वाला के समान उन्हें दिखाई पड़ते हैं।

44. सत्व उपाधि-गत ब्रह्म, विष्णु हैं। उनके आयुधों को भी देखकर सिंह देखकर भागने वाले हाथी की तरह दोष भाग जाते हैं।

45. अन्यथा वे चित्त में प्रवेश कर भजन रोक देते हैं, इसलिए आयुध लिंगों का धारण करना चाहिए।

46. चक्रांकित शरीर को देखकर पाप भाग जाते हैं और रज-तम मय भाव उसको स्पर्श नहीं करते हैं।

47. जो चक्रादि आयुध लोक रंजन के लिए धारण करते हैं, वह पाखण्डी नरकों में बार-बार पड़ते हैं।

48. इसलिए भजन का अंग होने के कारण आयुध धारण करना चाहिए। भजन करता हुआ पाप दोषादि रहित होकर सिद्धि प्राप्त करता है।

49. पश्चात् द्वार पूजा करके यज्ञ भवन में प्रवेश करना चाहिए। वाम पार्श्व को तीन बार और भौम को तीन ताल से ताड़ित करना चाहिए।

50. अन्तरिक्ष स्थित और द्युलोक में स्थित भूतों को दिव्य दृष्टि से हटाकर भूमि की प्रार्थना कर शुद्ध कर आसन बिछाए।

Nijanand App

आचम्य च शिखां बध्वा मूलमन्त्रेण देशिकः।
स्त्रीवेषधारी सुभगः ताम्बूलवदनोर्चयेत्॥५१॥

इति श्रीमाहेश्वरतन्त्रे उत्तरखण्डे शिवगौरीसंवादे अष्टचत्वारिंशं पटलम्॥४८॥

एकोनपञ्चाशत्तमम्

शिव उवाच

पृथिव्यादीनि भूतानि ब्रह्मणि प्रविलाप्य च।
क्रमेणोत्पाद्य च पुनः पवित्राणि विभावयेत्॥१॥
भूतशुद्धिं विधायेत्थं प्राणान् संस्थापयेत्पुनः।
पञ्चाशन्मातृका न्यस्य न्यसेत् ऋष्यादिकं ततः॥२॥
मूलमन्त्राक्षरन्यासं ततः कृत्वा समाहितः।
ध्यायेत्स्वहृदयाम्भोजे कृष्णं कमललोचनम्॥३॥
दिव्यरत्नकिरीटं तु मूर्ध्नि सञ्चिन्तयेत्प्रिये।
अथवोष्णीषकं ध्यायेद्दाडिमीकुसुमप्रभम्॥४॥
अनर्घ्यरत्नविलसन्मुक्ताकुण्डलमण्डितं।
उष्णीषबद्धरत्नेन वर्त्तुलेनातिभास्वता॥५॥
धिक्कुर्वन्तमिव प्रोद्यत्पूर्णचन्द्रस्य मण्डलम्।
दिव्यमुक्ताफलस्त्रजा वेष्टितोष्णीषसुन्दरम्॥६॥
क्षीरसागरकल्लोलशोभातिशयसुन्दरम्।
न्यस्तरत्नप्रभोद्भासि वसानममलाम्बरम्॥७॥
प्रांतपल्लवविभ्राजंल्लम्बिमुक्तालिभास्वरम्।
दधानमुत्तरं वासो नवीनजलदप्रभम्॥८॥
वलयाङ्गदकेयूरभ्राजमानकरद्वयम्।
वैडूर्यमुक्तामाणिक्यहारभारविराजितम्॥९॥
दिव्याङ्गरागसौरभ्याघ्राणमत्तमधुव्रतान्।
लीलारविन्दभ्रमणैर्वारयन्तं मुहुर्मुहुः॥१०॥
हीरालिदशनज्योत्स्नां विकिरन्तं स्मिताननात्।
रसालभृकुटीलीला विह्वलीकृतबल्लभम्॥११॥
नीलकुञ्चितसुस्निग्धालकशोभिमुखाम्बुजम्।
पाटीरतिलकोद्भासिभालस्थलमनोहरम्॥१२॥
ताम्बूलपूर्णवदनं चाम्पेयद्युतिविग्रहम्।
सदाषोडशवर्षीयं ध्यायेत्कृष्णं हृदाम्बुजे॥१३॥

Nijanand App

51. आचमन कर मूल मन्त्र से शिखा बांध कर स्त्री वेश धारण करके ताम्बूल खाकर अर्चन करे।

माहेश्वरतन्त्र के उत्तर खण्ड में शिव-गौरी संवाद का अड़तालीसवां अध्याय समाप्त हुआ।

उनचासवां अध्याय

शिव ने कहा—

1. पृथ्वी, आदि पंचभूतों को ब्रह्म में लीन कर तथा पुनः प्रकट कर उन्हें पवित्र माने।

2. इस प्रकार भूत सिद्ध कर पुनः प्राण स्थापित करे। पचास मातृिकाओं का न्यास करे तथा ऋषि आदि का न्यास करे।

3. मूल मन्त्र के अक्षरों का न्यास करके अपने हृदय कमल में कमल के समान नेत्र वाले कृष्ण का ध्यान करे।

4. मस्तक पर दिव्य रत्नों की किरीट का चिन्तन करे अथवा दाड़िम के कुसुम से वर्ण की उष्णीष (पगड़ी) का ध्यान करे।

5. अमूल्य रत्नों से सुशोभित मुक्ता कुण्डल से अलंकृत पगड़ी में लगे हुए वर्तुल आकार के चमकते हुए,

6. जो पूर्ण चन्द्र के मण्डल को मानो लज्जित करते हों, दिव्य मुक्ता फल की माला पगड़ी पर वेष्टित है।

7. क्षीर सागर के लहरों की शोभा से भी अति सुन्दर रत्न प्रभाओं से चमकते हुए निर्मल वस्त्र धारण किए,

8. किनारे पर लटकते हुए मुक्ताओं से चमकृत उत्तरीय वस्त्र जो नवीन मेघ के समान है उसको धारण किए हुए,

9. वलय, अंगद, केयूर दोनों हाथों में धारण किए हुए वैदूर्य, मुक्ता, माणिक के हार से सुशोभित

10. दिव्य अंगराग की सुगन्धि से आकृष्ट भ्रमरों को कमल सुंघा कर निवारण करते हुए,

11. मुस्कराने के समय हीरा के समान दांतों की ज्योत्सना फैलाते हुए अति सरस, भृकुटी लीला से प्रियजनों को विह्वल करने वाले,

12. नीले घुंघराले चिकने बालों से शोभित मुख कमल वाले, चन्दन के तिलक से शोभित मस्तक वाले,

13. ताम्बूल पूर्ण मुख, चम्पा के समान शरीर, सदैव षोडष वर्षीय श्रीकृष्ण का ध्यान करे।

Nijanand App

वामभागगतां तस्य स्वामिनीं संस्मरेत्प्रिये।
कुञ्चितानङ्गकोदण्डभ्रूलताविभ्रमश्रियम्॥१४॥
रसानन्दाङ्कुरीभूतदशनावलिभासुरां।
मीनाब्जखञ्जरीटोग्रगर्वनिर्नाशिलोचनां॥१५॥
तिलसूलनलसन्नासानटन्मौक्तिकभूषणाम्।
प्रान्तमुक्तावलिभ्राजद्भालभूषणभूषिताम्॥१६॥
मुखेन्दुमण्डलप्रोद्यत्कस्तूरीतिलकाङ्किताम्।
कपोलपालिविलुठन्मुक्तादाममनोहराम्॥१७॥
किंशुकाभांशुकद्युत्या प्रसर्पन्त्याध ऊर्ध्वतः।
सिन्दूरपूरितमिव कुर्वाणां वियदन्तरम्॥१८॥
सुवर्णरचनाचञ्चन्मुक्तारत्नविचित्रिताम्।
दधानां नीलजलदश्यामलां कुचपट्टिकाम्॥१९॥
प्रान्तलम्बितमुक्तादिच्छटाविच्छुरितावनि।
नीलचण्डातकं चारु दधानां स्वर्णसूत्रवत्॥२०॥
सुवर्णमुक्तामणिहारशोभां ग्रैवेयविद्योतितकम्बुकण्ठीम्।
माणिक्यमञ्जीररणत्पदाब्जां श्रीस्वामिनीं चेतसि चिन्तयामि॥२१॥
ततस्तौ मानसैर्दिव्यैरुपचारैः प्रपूजयेत्॥२२॥
दत्त्वा नैवेद्यमीशानि वैश्वदेवं समाचरेत्।
मूलाधारे महाकुण्डे चतुरस्त्रं विचिन्त्य च॥२३॥
चतुर्भिरात्मभिः क्लृप्तं संविदग्निसमुज्वलम्।
जुहुयादाहुतीस्तत्र कामक्रोधादिकाः प्रिये॥२४॥
कामः क्रोधश्च लोभश्च मोहश्च मदमत्सरौ।
अधर्मानृतमज्ञानं जुहुयाज्ज्ञानपावके॥२५॥
दग्धकामादिकलुषमात्मानं वासनात्मकम्।
ध्यात्वा कृतक्षणः किञ्चिद्दत्वाचमनमेतयोः॥२६॥
भुञ्जानौ मनसा ध्यात्वा दत्त्वा चैव पुनर्जलम्।
ताम्बूलवीटिकां दत्त्वा यथाशक्ति जपेद्धिया॥२७॥
अन्तःपूजां समाप्यैवं बहिःपूजां समारभेत्।
पूजायन्त्रं लिखेत्पट्टे सौवर्णे राजते च वा॥२८॥
ताम्रे चापि महेशानि श्रीपर्णीचन्दनोद्भवे।
षट्कोणमादौ निर्माय शक्तिं निर्भिद्य वह्निना॥२९॥

Nijanand App

14. उनके वाम में स्वामिनी का स्मरण करे, जिन स्वामिनी की भ्रूलता सिकुड़े हुए कामदेव के धनुष के समान,

15. जिनकी दंतावलि रसानन्द के अंकुर के समान है। मछली, कमल तथा खंजन के महान् अहंकार को नष्ट करने वाले नेत्रों वाली,

16. तिल के पुष्प के समान शोभित नासिका में लगे मोती के आभूषण वाली, जिसके किनारे मुक्तावलि है ऐसे मस्तक के आभूषण से शोभित

17. मुख चन्द्र मण्डल के समान कस्तूरी तिलक से अंकित है, कपोल प्रदेश में टकराती हुई मुक्ता की माला से युक्त

18. किंशुक की आभा वाले वस्त्रों की द्युति से जो ऊपर फैल रही है मानो आकाश के मध्य को सिन्दूर से भर रही है।

19. स्वर्ण की रचनाएं मुक्ता रत्नों से चित्रित है ऐसी नील मेघों के समान कुच पट्टिका को धारण किए,

20. किनारे पर लटकते हुए मुक्तादि की छटा से मिश्रित नील चण्डातक (गरारा साया) जिसमें स्वर्ण सूत्र पड़ा है, को धारण किए हुए,

21. स्वर्ण, मुक्तामणि के हार की शोभा वाले हाथ से चमकता है सुन्दर कण्ठ जिनका, जिनके पद कमल घुंघरुओं की ध्वनि से रणित होते हैं, उन श्रीस्वामिनी का मैं ध्यान करता हूं।

22. इसके बाद उन दोनों का मानसिक दिव्य उपचारों से पूजन करें।

23. नैवेद्य देकर वैश्वदेव (नित्य करने वाला श्राद्ध) करे। मूलाधार रूपी महाकुण्ड में चतुरस्र का विचार करे।

24. चार आत्माओं से रचित संवित् अग्नि की ज्वाला में काम क्रोधादि की आहुतियां करे।

25. काम, क्रोध, मोह, लोभ, मद, मत्सर, अधर्म, अनृत, अज्ञान इन सबको ज्ञान की अग्नि में हवन करे।

26. वासनात्मक अपने को कामादि कलुषों से रहित ध्यान कर उत्सव के साथ इन दोनों को आचमन देकर

27. मन में ध्यान करे कि वे भोजन कर रहे हैं, उन्हें पुनः जल देकर ताम्बूल की पिटारी देकर यथाशक्ति बुद्धि से जाप करे।

28. इस प्रकार अन्तः पूजा समाप्त कर बाहरी पूजा करे। पूजा मन्त्र सुवर्ण या चांदी के पट्ट पर लिखे।

29. हे देवि! ताम्र में और श्रीपर्णी चन्दन में भी पट्ट पर मन्त्र निर्माण किया जा सकता है। पहले आदि में षट्कोण बनाकर बह्नि के द्वारा शक्ति का भेदन करने

Nijanand App

अष्टकोणं तथा कुर्यात् तत्प्रकारं शृणुष्व मे।
चतुरस्त्रं लिखेदादौ ऋजुरेखं मनोहरम्॥३०॥
पूर्वरेखामूर्ध्वभागाद्रेखामाकृष्य पार्वति।
मध्यभागान्महादेवि सन्धिभेदक्रमेण च॥३१॥
पूर्वरेखामध्यभागात् रेखामाकृष्य पार्वति।
मध्यभागान्महादेवि सन्धिभेदक्रमेण च।
दक्षरेखां विनिर्भिद्य बहिः किञ्चित्प्रसारयेत्।
दक्षरेखामूर्ध्वगतामाकृष्य परमेश्वरि॥३२॥
प्रतीचिमानयेदाशां पूर्ववद्बहिरानयेत्।
तामाकृष्योत्तरगतरेखां मूर्द्धानमानयेत्॥३३॥
प्राग्वद्बहिः प्रसृमरां तामाकृष्य सुलोचने।
पूर्वरेखोपरिस्थाप्य अग्रदेशेन मेलयेत्॥३४॥
अष्टकोणमिदंकृत्वा वेष्टयेद्वृत्तरेखया।
तल्लग्नमूलपत्रञ्च लिखेद्द्वादशयन्त्रकम्॥३५॥
तस्योपरि लिंखेद्देवि वृत्तं पूर्णेन्दुसन्निभम्।
चतुरस्त्रत्रयं कुर्याच्चतुर्द्वारं मनोहरम्॥३६॥
पूजापीठं समारोप्य पूजयेच्च ततः परम्।
सामान्यविधिना देवि सामान्यार्घं प्रकल्पयेत्॥३७॥
स्ववामभागे देवेशि जलेन चतुरस्त्रकं।
कृत्वाभ्यर्च्याक्षतैरक्तैर्गंधचन्दनलोलितैः॥३८॥
तत्राधारं प्रतिष्ठाप्य पूजयेद्वह्निमण्डलम्।
शङ्खं वान्यतरत्पात्रं तत्र संस्थाप्य सुन्दरि॥३९॥
कलाभिः सहितं तत्र पूजयेत्सूर्यमण्डलं।
तत्र शुद्धोदकं पूर्य चन्द्रगन्धादिमिश्रितम्॥४०॥
तत्र तीर्थान्यथावाह्य भित्वा सूर्यस्य मण्डलम्।
अभिमंत्र्याष्टधा मूलमन्त्रेण कुसुमादिभिः॥४१॥
सुरभ्या चामृतीकृत्य शशमत्स्यौ प्रदर्शयेत्।
अनेनैव विधानेन पाद्यमर्घं प्रकल्पयेत्॥४२॥
कांस्यजं मधुपर्कार्थं तथैवाचमनीयकम्।
एवं पात्राणि संस्कृत्य पीठपूजां समारभेत्॥४३॥
मण्डूकाधारशक्ती च कूर्मोऽनन्तवराहकौ।
पृथिवी च जलं तेजो वायुराकाश एव च॥४४॥

Nijanand App

30. के पश्चात् अष्टकोण बनाना चाहिए। उसका प्रकार सुनो। आदि में सीधी रेखा वाला चौकोर बनाए।

31. ऊर्ध्व भाग से पूर्व रेखा खींचकर मध्य भाग से सन्धि भेद के क्रम से

32. पूर्व रेखा के मध्य भाग से एक रेखा खींचकर मध्य भाग में मिला दे। दक्षिण रेखा भेद न करके बाहर की ओर कुछ फैलाए। ऊर्ध्व की दक्ष रेखा को खींचकर

33. पश्चिम की ओर पूर्व की भांति बाहर की ओर ले जाए। उसको खींचकर मस्तक तक ले जाए।

34. पहले की तरह बाहर फैलने वाली उस रेखा को खींचकर पूर्व रेखा से मिलाकर अग्र देश से मिलाए।

35. इस प्रकार अष्टकोण बनाकर गोल रेखा से उसे घेरे। उससे लगे मूल पत्र में द्वादश मन्त्र लिखे।

36. उस पर पूर्ण चन्द्र के समान एक और घेरा बनाए और चौकोर चक्र द्वार बनाए।

37. इस प्रकार पूजा पीठ स्थापित कर पूजन करे। सामान्य विधि से सामान्य अर्ध्य की कल्पना करे।

38. अपने वाम भाग में जल से चौकोर बनाकर लाल अक्षर, चन्दन आदि से पूजन करे।

39. वहां आधार की प्रतिष्ठा कर अग्नि मण्डल की पूजा करे। हे सुन्दरी! वहां पर शंख या दूसरा पात्र स्थापित करे।

40. कलाओं सहित सूर्यमण्डल का पूजन करे। कपूर चन्दनादि से मिले शुद्ध जल भरकर

41. उसमें तीर्थों का आह्वान करके आठ बार मूल मन्त्र से अभिमन्त्रित कर पुष्पादि से

42. सुगन्धि आदि से उसे अमृत तुल्य बनाकर शंख और मत्स्य प्रदर्शित करे।

43. इस विधि से पाद्य एवं अर्ध्य दे। मधुपर्क आचमन के लिए कांस्य पात्र का प्रयोग करे। इस प्रकार पात्र संस्कार कर पीठ पूजा करे।

44. मंडूक, आधार शक्ति, कूर्म, अनन्त, वाराह, पृथ्वी, जल, तेज, वायु, आकाश,

Nijanand App

अहङ्कारो महत्तत्त्वं प्रकृतिः पुरुषस्तथा।
रत्नद्वीपो ब्रह्मनालः कल्पद्रुमवनं ततः ॥४५॥
मन्दारोद्यानमीशानि पारिजातवनं ततः।
हरिचन्दनमुद्यानं वैडूर्यद्रुमवाटिका ॥४६॥
दिव्यमुक्तावनं चैव प्रवालद्रुमवाटिका।
सूर्यकान्तद्रुमोद्यानं पद्मरागवनं ततः ॥४७॥
महापद्मवनं चैव मणिगृहमनुत्तमम्।
चतुःषष्टिमणिस्तम्भमण्डपस्तु ततः परम् ॥४८॥
रत्नसिंहासनं देवि तस्य पादचतुष्टये।
धर्मो ज्ञानं च वैराग्यमैश्वर्यं वह्निदिक् क्रमात् ॥४९॥
एवं पीठार्चनं कृत्वां बध्वावाहनमुद्रिकाम्।
स्वामिनीसहितं कृष्णं ध्यात्वानाकुलचेतसा ॥५०॥
हृद्यागतमिति ध्यायन् सामरस्यमयं महः।
नेत्रद्वारेण कुसुमं जलाक्षतसमन्वितम् ॥५१॥
यन्त्रराजोपरि क्षिप्त्वा प्राणन्यासं समाचरेत्।
आवाहनादिकां मुद्रां दर्शयेदथ पार्वति ॥५२॥
पाद्यपात्रोदकेनैव पाद्यं दद्याद्विचक्षणः।
अर्घ्यपात्रोदकेनैव दद्यादर्घ्यं च मूर्द्धनि ॥५३॥
मधुपर्कं ततः कृत्वा दद्यादाचमनीयकम्।
पुष्पतैलं ततो दत्वा दर्शयेन्मणिपादुकाम् ॥५४॥
स्नानं दिव्यजलैर्देवि वासः खचितरत्नकम्।
भूषणानि समर्प्याथ दिव्यगन्धार्पणं ततः ॥५५॥
चम्पकैः करवीरैश्च केतकैर्बकुलैरपि।
पङ्कजैर्जातिकुसुमैर्मालतीमोगरैरपि ॥५६॥
पूजयेद्यन्त्रराजस्थं धूपं दद्याद्यथाविधि।
निवेदयेत्ततो दीपमज्ञानध्वान्तनाशनम् ॥५७॥
दक्षिणे स्थापयेद्दीपं तैलदीपस्तु वामतः।
तयोरेकतरेणापि दीपं दद्याद्यथारुचि ॥५८॥
वामभागे तु देवेशि त्रिविधानर्चयेद्गुरून्।
करुणानन्दनाथश्च तरुणानन्द एव च ॥५९॥
भुवनानन्दनाथश्च त्रीनेतानूर्ध्वतो यजेत्।
द्वितीयायां तथा पङ्क्तौ तदधः परमेश्वरि ॥६०॥

Nijanand App

45. अहंकार, महत्तत्व, प्रकृति, पुरुष, रत्न द्वीप, ब्रह्म नाल, कल्पद्रुम वन,

46. मंदार का उद्यान, पारिजात वन, हरिचन्दन वन, वैदूर्य वृक्ष वाटिका,

47. दिव्य मुक्ता वन, प्रबाल वाटिका, सूर्यकान्त उद्यान, पद्मराग वन,

48. महा पद्मवन, श्रेष्ठ मणि गृह, चौसठ मणि स्तम्भ युक्त मण्डप,

49. हे देवि! रत्न सिंहासन उसके चारों पायों में धर्म, ज्ञान, वैराग्य, ऐश्वर्य की आग्नेय दिशा के क्रम से पूजन करे।

50. इस प्रकार पीठ का पूजन कर आह्वान मुद्रा बांधकर, स्वस्थ चित्त से स्वामिनी सहित कृष्ण का ध्यान करे।

51. सामरस्यमय तेज मेरे हृदय में आ गया है ऐसा ध्यान करता हुआ नेत्र द्वार से जल अक्षत युक्त पुष्प

52. मन्त्रराज के ऊपर डालकर प्राण न्यास करे। आह्वान, आदि की मुद्रा दिखलाए।

53. पाद्य पात्र के जल से पाद्य प्रदान करे और अर्ध्यपात्र से मस्तक पर अर्ध्य दे।

54. मधुपर्क देकर आचमन कराए। पुष्प तैल देकर मणि पादुका दिखलाए।

55. दिव्य जल से स्नान, रत्न जटित वस्त्राभूषण समर्पित कर दिव्य गन्ध अर्पित करे।

56. चम्पा, कर्वीर, केतक, बकुल, पंकज, जाति पुष्प, मालती, मोगरा

57. से पूजन करे और मन्त्रादि पर विधिपूर्वक धूप दे। अज्ञान रूपी अन्धकार का नाश करने वाला दीपक दे।

58. दक्षिण में घृत दीपक और वाम में तैल दीपक या एक ही दीपक से पूजन करे।

59. वाम भाग में तीन प्रकार से गुरुओं का पूजन करे। करुणानन्दनाथ, तरुणानन्द,

60. भुवनानन्दनाथ इन तीनों का ऊर्ध्व भाग में पूजन करे। उसके नीचे दूसरी पंक्ति में

Nijanand App

मदनं मोहनं चैव मन्द्रं चैव यजेत्ततः।
मन्दरं शङ्करं ताम्रं स्वगुरुं तद्गुरुं तथा॥६१॥
षट्गुरूश्च महेशानि तदधः परिपूजयेत्।
साध्यसाधकयोर्मध्यदेशः प्राचीति गद्यते॥६२॥
क्लृप्तप्राचीं समारभ्य सर्वत्र परिपूजयेत्।
षट्कोणेष्वर्चयेद्देवि सुन्दरीमिन्दिरां तथा॥६३॥
आह्लादिनीमथानन्दामरुणां करुणावतीम्।
श्यामानङ्गानङ्गरेखा सुरङ्गा व्यञ्जुली रतिः॥६४॥
बलाकी केसराङ्गी च वसुकोणे प्रपूजयेत्।
ततो द्वादशपत्रेषु पूजनं प्रवदामि ते॥६५॥
चत्वारिंशद्यूथमुख्यास्तिस्त्रस्तिस्त्र उदाहृताः॥
प्रतिपत्रं प्रपूज्ये द्वे स्वामिनीनित्यपार्श्वगे॥६६॥
मालती १ माधवी २ नन्दा ३ सुभद्रा ४ रुचिरानना ५।
पुष्पावती ६ रत्नरेखा ७ पद्मवृन्दा ८ विलासिनी ९॥६७॥
मन्दारमधुरा १० माध्वी ११ मञ्जुनादा १२ कलावती १३।
शृङ्गारलतिका १४ वृन्दा १५ प्रमोदा १६ मधुमालती १७॥६८॥
किशोरी १८ कुसुमानन्दा १९ रसकुल्या २० प्रभावती २१।
आशावती २२ विशाला च २३ निस्तुला २४ नीलकुन्तला २५॥६९॥
विद्युद्वर्णा २६ निम्ननाभिः २७ विरजस्का २८ विहारिणी २९।
रागिणी ३० रङ्गलतिका ३१ तथा रत्नावतीति च ३२॥७०॥
पद्मावती ३३ पद्मगर्भा ३४ पद्मिनी च ३५ पिकस्वरा ३६।
बहिर्वृत्ते च कूटस्थं व्यापकं नित्यमव्ययम्।
अखण्डं सच्चिदानन्दं पूजयेत्परमेश्वरि॥७१॥
कालमेघालिरुचिरं स्फुरन्माणिक्यकुण्डलम्।
दिव्यरत्नकिरीटेन ज्वालयेव हविर्भुजम्॥७२॥
मुक्ताहारं चतुर्बाहुमुद्यत्सूर्यारुणाम्बरम्।
कोटिचन्द्रांशुसन्दोहप्रकाशपरमोज्ज्वलम्॥७३॥
यदुन्मेषनिमेषाभ्यां ब्रह्माण्डविलोदयौ।
जगद्भ्रमस्याधिष्ठानं रजतस्येव शुक्तिका॥७४॥
अध्यारोपापवादाभ्यां विदुषां ज्ञानगोचरम्।
यत्सत्तयाप्यसद्भाति नामरूपविकल्पितम्॥७५॥

Nijanand App

61. मदन, मोहन और मद्र का पूजन करे। तथा मन्दर, शंकर, ताम्र, स्वगुरु और उनके भी गुरु,

62. उसके नीचे छः गुरुओं का पूजन करे। साध्य और साधक के मध्य के स्थान प्राची दिशा कही जाती है।

63. इस प्रकार निश्चित प्राची दिशा से प्रारम्भ कर सर्वत्र पूजन करे। छः कोणों में सुन्दरी, इन्दिरा,

64. आह्लादिनी, आनन्दी, अरुणा, करुणावती, श्यामा, अनंगा, अनंगरेखा, सुरंगा, व्युंजली, रति,

65. बलाकी, केसरांगी का वसुकोण में पूजन करे। पश्चात् बारह पत्रों में पूजन कहता हूं।

66. चालीस यूथ की मुख्य चौवालीस यूथों की मुख्य तीन-तीन कही गई हैं। प्रति पत्र दो स्वामिनी के नित्य पार्श्व स्थित की पूजा करे।

67. मालती, माधवी, नन्दा, सुभद्रा, रुचिरासना, पुष्पावती, रत्नरेखा, पद्मवृन्दा, विलासिनी,

68. मन्दारमधुरा, माध्वी, मन्जुनादा, कलावती, शृंगार लतिका, वृन्दा, प्रमोदा, मधुमालती,

69. किशोरी, कुसुमानन्दा, रसकुल्या, प्रभावती, आशावती, विशाला, निस्तुला, नीलकुन्तला,

70. विद्युतवर्णा, निम्ननाभि, विरजस्का, विहारिणी, रागिणी, रंगलतिका तथा रत्नावती,

71. पद्मावती, पद्मगर्भा, पद्मिनी, पिकस्वरा का पूजन करे। वृत्त के बाहर कूटस्थ व्यापक, नित्य अगम अखण्ड, सच्चिदानन्द का पूजन करे।

72. काल मेघ की मालाओं के समान सुन्दर, माणिक्य कुण्डल तथा रत्नकिरीट युक्त स्वाहा से युक्त अग्निदेव के समान

73. मुक्ताहारयुक्त, चतुर्भुज, प्रातः सूर्य के समान लाल वस्त्र वाले, कोटि चन्द्र किरणों के समान उज्ज्वल

74. जिसके नेत्र बन्द करने, खोलने से ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति और नाश होता है। रजत का भ्रम सुक्ति में जैसे होता है वैसे ही जगत् के भ्रम का मूलाधार,

75. अध्यारोप तथा अपवादों से विद्वानों के ज्ञान में आने वाला जो सत्ता से भी असत् दिखाई पड़ता है। जिसके नाना रूपों की कल्पना की जाती है।

Nijanand App

उपेतं रमया पञ्चवार्षिक्या सप्तवार्षिकम्।
नवरत्नविचित्रश्रीमालयालङ्कृतं परम्।।७६।।
तद्बहिश्चतुरस्रे च प्रतिद्वारं सुरेश्वरि।
पुरुषं प्रकृतिं कालं यज्ञं पूर्वादिवामतः।।७७।।
तद्बहिश्चतुरस्रे च वासुदेवादिकान् यजेत्।
किरीटकुण्डलधरान् जलदश्यामलाकृतीन्।।७८।।
शङ्खचक्रगदापद्मभ्राजद्भुजचतुष्टयान्।
तद्बहिश्चतुरस्रेपि पूजयेच्च ततः परम्।।७९।।
अग्नेरीशानपर्यन्तं पञ्चभूतार्चनं क्रमात्।
ईशानाद्वायुपर्यन्तं तन्मात्राः परिपूजयेत्।।८०।।
नैऋतेर्वायुपर्यन्तं पञ्चकर्मेन्द्रियाण्यपि।
नैऋतादग्निपर्यन्तं पूजयेत् ज्ञानपञ्चकम्।।८१।।
तद्बहिर्द्वारदेशेषु पूर्वादिक्रमतोर्चयेत्।
इन्द्रमग्निं यमं चैव निर्ऋतिं च जलेश्वरम्।।८२।।
पवनं धनदं रुद्रमूर्ध्वं ब्रह्माणमर्चयेत्।
अधस्ताच्च तथानन्तं तत्रैवास्त्राणि वाहनैः।।८३।।
पूजयित्वा ततो देवि ततो नैवेद्यमर्पयेत्।
भक्ष्यभोज्यान्नभरितं साधारं पात्रमुत्तमम्।।८४।।
सामान्यसलिलैः प्रोक्ष्य दत्त्वा पुष्पाक्षतादिकम्।
ततो धेन्वामृतीकृत्य मूलमन्त्रं ततोऽष्टधा।।८५।।
पञ्चप्राणाहुतीर्दद्यात् ग्रासमुद्रां च दर्शयन्।
जलपात्रं निवेद्याथ बिभृयादन्तरे पटम्।।८६।।
पौराणैः प्राकृतैः स्तोत्रैः स्तुत्वा भुञ्जानमीश्वरम्।
ध्यात्वा तृप्तमिति ज्ञात्वा दूरीकृत्य पटावृत्तिम्।।८७।।
दत्त्वाचमनमीशानि गन्धचूर्णैरनेकधा।
स्नेहापनोदनं कृत्वा हस्तयोः परमेशितुः।।८८।।
गण्डूषान् कारयेत्पश्चात् कर्पूरैर्मुखशोधनम्।
हस्तपादौ च प्रक्षाल्य हस्तवासस्ततोर्चयेत्।।८९।।
ततः प्रसन्नपूजान्ते लविङ्गैलेन्दुमिश्रिताम्।
पूगाश्मचूर्णनिर्भिन्नां ददेत्ताम्बूलवीटिकाम्।।९०।।
सम्प्रार्थ्य पादुकायुग्मं निधाय पुरतः शिवे।
पुनः सिंहासनगतं दीपैर्नीराजयेत्ततः।।९१।।

Nijanand App

76. पांच वर्ष की रमा से युक्त सात वर्ष अवस्था वाले नवरत्नों से विचित्र श्रीमाला से अलंकृत परब्रह्म का पूजन करे।

77. उसके बाहर चारों कोनों में प्रति द्वार प्रकृति, पुरुष, काल, यज्ञ का पूर्व से वाम की ओर पूजन करे।

78. उसके बाहर के चौकोर में किरीट कुण्डलधारी, मेघ श्याम शरीर, वासुदेव का पूजन करे।

79. शंख, चक्र, गदा, पद्म रो जिनकी चारों भुजा सुशोभित हैं, उसके बाहर के चौकोर में पंच

80. अग्निकोण से ईशान तक पूजन करे। ईशान से वायु तक तन्मात्राओं का पूजन करे।

81. नैऋत्य से वायु तक पंच कर्म और इन्द्रियों का पूजन करे। नैऋत्य से अग्नि पर्यन्त ज्ञान पंचक का पूजन करे।

82. उसके बाहर द्वार देशों में पूर्वादि क्रम से इन्द्र, अग्नि, यम, नैऋति और वरुण,

83. पवन, कुबेर, रुद्र और ऊंचे की ओर ब्रह्मा का तथा नीचे अनन्त अस्त्र तथा वाहन का पूजन करे।

84. पश्चात नैवेद्य अर्पित करे। भक्ष्य भोज्य अन्नों से भरे आधार पात्र सहित भोजन पात्र,

85. सामान्य जल से प्रोक्षण कर पुष्प अक्षत आदि देकर धेनु के द्वारा अमृत बनाकर आठ बार मूल मन्त्र जाप करे।

86. पांच प्राणाहुतियां देकर ग्रास मुद्रा दिखलाए, जल पात्र रखकर अन्दर पट धारण करे।

87. पौराणिक, प्राकृत, स्तोत्रों से भोजन करते ईश्वर की स्तुति करके तृप्त हो गए हैं, ऐसा जानकर पर्दा खोल दे।

88. आचमन देकर, गन्ध चूर्ण आदि देकर परमेश्वर के हाथों की चिकनाई दूर करके

89. कुल्ला कराए कर्पूर से मुख शोधन, हाथ पैर प्रक्षालन करके हाथ पोंछने के लिए कपड़ा दे।

90. पूजा के अन्त में लवंग, इलायची, कर्पूर मिश्रित सुपारी चूर्ण से मिश्रित ताम्बूल वीटिका दे।

91. प्रार्थना करके सामने पादुका रखकर पुनः सिंहासन पर बैठे भगवान का दीपकों से नीराजन (आरती) करे।

Nijanand App

ईषत्पक्वसुपिष्टेन कुर्याद्विदाङ्गुलोन्नतान्।
चतुरस्रान् शुभाकारान् नव सप्ताथ पञ्च वा॥९२॥
ततश्छत्रं चामरं च मायूरं व्यजनं तथा।
दर्पणं च ततो दत्वा प्रदक्षिणनमस्क्रियाम्॥९३॥
गीतनृत्यादिकं कृत्वा प्रीणयेत्परमेश्वरम्।
इति ते कथितो देवि पूजाया विधिरुत्तमः॥९४॥
मनः प्रसादकाले तु कुर्यात्पूजां समाहितः।
न कालनियमश्चात्र विद्यते परमेश्वरि॥९५॥
इत्येतत्कथितं देवि त्वया पृष्टं सुलोचने।
समासेन महेशानि किं भूयः श्रोतुमिच्छसि॥९६॥

इति श्रीमाहेश्वरतन्त्रे उत्तरखण्डे शिवोमासंवादे एकोनपञ्चाशत्तमं पटलम्॥४९॥

पञ्चाशत्तमं पटलम्

पार्वत्युवाच

देव नाथ महेशान त्रिलोचन जगत्पते।
पूजनस्यापि परमो विधिर्मे संश्रुतो महान्॥१॥
कूटस्थपूजने तत्र ध्यानमुक्तं त्वयाऽस्य हि।
व्यापकं नित्यमव्यक्तमखण्डमिति शङ्कर॥२॥
अखण्डं व्यापकं तच्चेत्तदानन्दगतं न किम्।
केवलानन्दलीलायामङ्गीकारो विरुध्यते॥३॥
अनङ्गीकारे देवेश व्यापकत्वं विरुध्यते।
ज्ञानरूपं तु कूटस्थमानन्दः पुरुषोत्तमः॥४॥
मिथौ विरुद्धौ देवेश ज्ञानानन्दौ सुरेश्वर।
भेदशून्यं यदा ज्ञानं जायते कृष्णयोषिताम्॥५॥
रसस्तदा निवर्त्तेत निर्विशेषतया प्रभो।
रसाभासकरं ज्ञानं कथं युज्येत तत्र हि॥६॥
अखण्डव्यापकत्वादिधर्माणां तत्र का गतिः।
एतज्जिज्ञासया देव मनो मे खिद्यतेतराम्॥७॥

शिव उवाच

साधु पृष्टं त्वया भद्रे जिज्ञासूनामभीप्सितम्।
यच्छ्रुत्वा तत्क्षणादेव जिज्ञासा विनिवर्त्तते॥८॥

Nijanand App

92. थोड़ी पकी चावल की पिट्ठी से चार अंगुल ऊंचे चौकोर नव, सात या पांच आकार बनाए।

93. तब छत्र चामर, मोरपंख, दर्पण देकर प्रदक्षिणा नमस्कार करे।

94. गीत नृत्यादि द्वारा परमेश्वर को प्रसन्न करे। यह पूजा की विधि हमने तुमसे बताई।

95. जब मन प्रसन्न हो तो समाहित होकर पूजन करे। काल का कोई नियम नहीं है।

96. हे सुन्दर नेत्रों वाली देवी! जो तुमने पूछा कह दिया और क्या जानना चाहती हो।

माहेश्वरतन्त्र के उत्तर खण्ड में शिव-उमा संवाद का उनचासवां अध्याय समाप्त हुआ।

पचासवां अध्याय

पार्वती ने कहा—

1. तीन नेत्रों वाले, जगत् के स्वामी, हे नाथ! मैंने पूजन की विधि भी सुन ली।

2. कूटस्थ के पूजन में आपने इनका ध्यान बताया और कहा कि यह व्यापक, नित्य, अव्यक्त अखण्ड हैं।

3. यदि वह अखण्ड और व्यापक हैं, तो आनन्द गत क्यों नहीं? केवल आनन्द लीला में अंगीकार विरुद्ध हैं।

4. हे देवेश! अनंगीकार में व्यापकत्व विरुद्ध है। ज्ञान रूप कूटस्थ है। आनन्द पुरुषोत्तम है।

5. ज्ञान और आनन्द यह परस्पर विरुद्ध हैं। जब कृष्ण की स्त्रियों को भेद शून्य ज्ञान होता है,

6. हे प्रभु! तब रस निर्विशेष प्रतीत होता है। ज्ञान रसाभास उत्पन्न करने वाला कैसे होगा?

7. अखण्ड व्यापकत्व आदि धर्मों की क्या गति है? इस जिज्ञासा से मेरा मन खिन्न हो रहा है।

शिव बोले—

8. हे भद्रे! जिज्ञासु लोग जिसे चाहते हैं, वह तुमने ठीक पूछा, जिसको सुनकर तत्क्षण जिज्ञासा शान्त हो जाती है।

Nijanand App

कूटस्थं व्यापकं देवि व्याप्यं कार्यमिति स्थितम्।
न कार्यं व्यापकं क्वापि न व्याप्यं कारणं भवेत्॥९॥
अल्पवृत्ति भवेद्व्याप्यं व्यापकं तु तदन्यथा।
व्याप्यव्यापकता चापि कूटस्थानन्दयोरपि॥१०॥
विशेषं तत्र वक्ष्यामि शृणु त्वं कमलेक्षणे।
कामांशकणिकाव्याप्तं कूटस्थं ज्ञानरूपकम्॥११॥
अत एव श्रुतिशतैरानन्दमिति कीर्त्यते।
कूटस्थमपरिच्छिन्नं विद्यते यद्यपि प्रिये॥१२॥
तिरोहितमिवानन्दे कुह्वां बिम्बमिवैन्दवम्।
कामांशस्त्वपरिच्छिन्नमखण्डमचलं ध्रुवम्॥१३॥
सर्वतो व्याप्य देवेशि स्वरूपेण प्रकाश्यते।
चिदानन्दमयीलीला प्रोक्ता कामांशभावजा॥१४॥
अनुभूता पुरा देवि निगमैः प्राकृते लये॥
तस्माद्गोलोकलीलेति प्रोच्यते वरवर्णिनि॥१५॥

पार्वत्युवाच

कीदृशी सा भवेल्लीलानुभूता निगमैः कथम्।
शब्दात्मकः कथं वेदो रसानुभवमर्हति॥१६॥
एतदाख्याहि भगवन् यदि योग्यं भवेन्मम।

शिव उवाच

शृणु पार्वति वक्ष्यामि तव प्रश्नमनुत्तमम्॥१७॥
सम्प्राप्ते प्रतिसञ्चरे न स त्रिभुर्ब्रह्मा प्रजानां पति-
र्नोसूर्यादिगृहर्क्षसागरसरिद्विश्वन्धराः पर्वताः।
वृक्षा औषधयस्तदा न विबुधा दैत्या मनुष्या दिशो
गन्धर्वा न च राक्षसा मुनिवरा यक्षा न सिद्धोरगाः॥१८॥
नष्टं स्थावरजङ्गमं विधिकृतं शिष्टं न किञ्चित्तदा
यः शिष्टः स विभुर्विनाशरहितः कूटस्थ एकः पुमान्।
वेदा विस्मितचेतसोप्यथ विभुं तेऽन्तश्चरा ब्रह्मवत्
सञ्चित्याथ ह्रदास्तुवन् रहसि ते यं वाङ्मनोगोचरम्॥१९॥

वेदा ऊचुः

एकस्त्वमात्मा पुरुषः पुराणो नित्योऽव्ययोऽनन्तगुणो निरीहः।
क्वचित्स्थितः क्वापि गतो न विद्महे तं त्वां परं संशरणं गता वयम्॥२०॥

Nijanand App

9. हे देवि! कूटस्थ व्यापक है और कार्य व्याप्य है। ऐसी स्थिति है। कहीं भी कार्य व्यापक और कारण व्याप्य नहीं हो सकता।

10. जो कम स्थान में रहता हो वह व्याप्य होता है। अधिक स्थान में रहने वाला व्यापक होता है। यह कूटस्थ और आनन्द की व्याप्य व्यापकता होती है।

11. मैं इसमें विशेष बताऊंगा, सुनो। कामांश की कणिका से व्याप्त कूटस्थ ज्ञान रूप है।

12. इसलिए सैकड़ों श्रुतियां इसे आनन्द कहकर कीर्तन करती हैं। हे प्रिए! कूटस्थ यद्यपि अपरिछिन्न है।

13. अमावस्या में चन्द्रमा के बिम्ब के समान वह आनन्द में छिपा हुआ है। कामांश अपरिछिन्न, अखण्ड, अचल ध्रुव है।

14. सब ओर व्याप्त होकर स्वरूप से प्रकाशित है। कामांश के भाव से होने वाली चिदानन्दमयी लीला कही गई है।

15. प्राकृत लय के समय निगमों ने इसका अनुभव किया। इसी से उसे गोलोक लीला कहा जाता है।

पार्वती ने कहा—

16. वह लीला कैसे हो सकती है और निगमों ने कैसे अनुभव किया? वेद शब्दात्मक है, रसानुभव कैसे कर सकता है?

17. यदि मेरे योग्य हो, तो बताने का कष्ट करें।

शिव ने कहा—

हे पार्वती! सुनो, तुम्हारे प्रश्न का उत्तर कहता हूं।

18. जब प्रलय चल रहा था तो प्रजापति विभु, ब्रह्मा नहीं थे। सूर्य आदि ग्रह नक्षत्र, सागर, सरित, पृथ्वी को धारण करने वाले पर्वत, वृक्ष, औषधियां, देवता, दैत्य, मनुष्य, दिशाएं, गन्धर्व, राक्षस, मुनि, यक्ष, सिद्ध, उरग—यह कुछ भी नहीं थे।

19. ब्रह्मा के द्वारा रचा गया स्थावर जंगम सब नष्ट हो गए थे। कुछ बाकी नहीं बचा था। तब जो शेष था वह विभु विनाश रहित कूटस्थ एक पुरुष ही था। विस्मित चित्त होकर वेद, जो कि ब्रह्म की तरह अन्तःचर है, विभु का चिन्तन कर हृदय से वाणी और मन के अगोचर की स्तुति किया था।

वेदों ने कहा—

20. आप एक आत्मा, पुराण:, पुरुष, नित्य, अव्यय, अनन्त गुण, तृष्णा रहित हैं। कहीं पर स्थित हैं, कहीं गए हुए हैं, यह हम नहीं जानते। हम आपकी शरण में हैं।

Nijanand App

कर्माणि तानीह गुणाश्च ते प्रभो नष्टानि सर्वाण्यधुना न सन्ति।
क्वचिद्भुतानि क्व गता हि जन्तवो ये यज्ञभुग्ब्रह्मपुरोगमास्ते॥२१॥
न सन्ति ते क्वापि पुरन्दरादयो येऽस्मत्प्रदत्तानि हवींष्यदन् क्रतौ।
कामान् मनोज्ञान् हि ददत्यनारतं नाशं गतास्तेपि न विद्महे क्वचित्॥२२॥
ब्रह्मेशनारायणनामधेयः करोषि सृष्टिं हरणं च पालनम्।
स्वयं गुणातीतगुणैस्त्रिभिस्त्वं मनुष्यदैत्यान् विबुधान् विधासि॥२३॥

नमः कूटस्थरूपाय नमोऽनन्ताय वेधसे।
व्याप्यव्यापकरूपाय वाच्यवाचकरूपिणे॥२४॥
नमः शिवाय शान्ताय निर्गुणाय गुणात्मने।
सदसद्व्यतिरिक्ताय सदसद्व्यक्तिहेतवे।
ईक्षाप्रवर्त्तितजगद्व्यापाराय रते नमः॥२५॥
त्वय्युदितं त्वयि लीनं जगदेतद्धेम्नि कुण्डलं यद्वत्।
आदावन्ते यत्सत्तत्सन्मध्येऽप्यसत्तया सद्वत्॥२६॥
तस्मिंस्त्वयि वचनानामेषा रचना विभाति नो नाथ।
दीपविधिर्दिवसेश्वरबिम्बालोकाय निष्फलो यद्वत्॥२७॥
तस्मात्प्रसीद भगवन् नोनुग्रहमुररीकुरु।
त्वदुद्भवा वयं वेदास्त्वन्निष्ठास्त्वां कथं स्तुमः॥२८॥

स्तुवन्त एवं भगवन्तमव्ययं स्थिता हि वेदाः स्थगितार्द्रमानसाः।
महालये प्राकृतसंज्ञके हि ते बभूव गोर्व्योम्नि तदा मनोहरा॥२९॥
शृणुध्वं विभोर्वाक्यमेतन्मनोज्ञं वृणुध्वं वरं मत्तु वेदाः प्रसन्नात्।
प्रसन्ने परे मय्यलभ्यं किमस्ति नचापीह लोके परत्रापि शश्वत्॥३०॥

वेदा ऊचुः

वरःकः परो वाणि योस्माभिरीड्यो न चैतत्परं किञ्चिदस्तीह लोके।
यदस्तीह किञ्चित्परं तत्त्वमेव प्रसन्नोसि चेद्दर्शनं नो विधेहि॥३१॥

अस्माभिर्वर्ण्यते नित्यं तव रूपाण्यनेकशः।
ज्ञातान्यपि विशेषेण दृष्टानि बहुशोपि हि॥३२॥
आविभर्वन्ति लीयन्ते निर्गुणे त्वयि केवले।
निर्गुणातीतमात्मानं त्वदीयं दर्शयाद्यनः॥३३॥
एवं प्रार्थयमानेषु वेदेषु बहुधा तदा।
आविर्बभूव सहसा लीला गोलोकविश्रुता॥३४॥

प्रादुर्बभूवातिमनोहरा सरित् स्फुरन्महारत्नतटाच्छवालुका।
सुवर्णपङ्केरुहशोभमाना गभीरपीयूषजलोर्मिमालिनी॥३५॥

Nijanand App

21. हे प्रभो! आपके वे कर्म एवं गुण सब नष्ट हो गए हैं और अब नहीं हैं। कहीं वे नष्ट हो गए या चले गए और जो यज्ञ का भोग करने वाले ब्रह्म तत्व के अग्रणी थे वे या जन्तु अब नहीं हैं।

22. वे पुरन्दर आदि कहीं नहीं हैं जो यज्ञों में हमारे द्वारा दी गई हवि भक्षण करते थे और निरन्तर हमारी कामनाएं पूर्ण करते थे। वे भी नष्ट हो चुके हैं, यह हम नहीं जानते।

23. ब्रह्मा, ईश, नारायण नाम वाले आप जगत् की उत्पत्ति, पालन और नाश करते हैं। गुणातीत होते हुए भी आप तीनों गुणों से मनुष्यों, दैत्यों और देवताओं को उत्पन्न करते हैं।

24. व्याप्य व्यापक रूप, वाच्य वाचक रूप, कूटस्थ, अनन्त स्रष्टा आपको नमस्कार है।

25. कल्याणकारी, शान्त, निर्गुण, गुणात्मा, सत् असत् से भिन्न, सत् असत् के हेतु, इच्छा से निर्मित जगत् के व्यापार वाले आप को नमस्कार है।

26. जिस प्रकार स्वर्ण में कुण्डल लीन रहता है वैसे ही यह जगत् आपसे ही प्रकट होता है, आप में लीन है। आदि और अन्त में जो सत् है उसके मध्य में असत् रूप में सत् की तरह आप हैं।

27. ऐसे पूर्ण आप में मेरे वचनों की यह रचना शोभित नहीं हो रही है जैसे कि सूर्य के बिम्ब को दिखाने के लिए दीपक विफल होता है।

28. भगवन्! इसलिए आप प्रसन्न हों और मुझ पर अनुग्रह करें, हम वेद आप से ही उत्पन्न हुए हैं। त्वन्निष्ठ हैं। आपकी स्तुति कैसे करें?

29. जिस समय अव्यय भगवान की स्तुति करते हुए चकित मन वेद प्राकृत महालय के समय स्थित थे, तभी आकाश में यह सुन्दर वाणी प्रकट हुई।

30. हे वेद! यह विभु की वाणी सुनो कि मैं तुम पर प्रसन्न हूं, वर मांग लो। मेरे प्रसन्न होने पर इस लोक या परलोक में कुछ भी अलभ्य नहीं है।

वेदों ने कहा—

31. वाणी से जो हमारे द्वारा पूज्य है उससे बढ़कर कौन वर है, इससे बढ़कर संसार में कुछ है ही नहीं। जो कुछ है आप ही हैं। यदि आप प्रसन्न हैं तो दर्शन दें।

32. हम लोगों के द्वारा आपके अनेक रूप वर्णन किए जाते हैं, जो ज्ञात भी हैं और विशेष रूप से बहुत बार देखे भी गए हैं।

33. निर्गुण केवल आप में वह रूप प्रकट और लीन होते हैं। निर्गुणातीत अपने को आज दिखाइए।

34. इस प्रकार से वेदों के प्रार्थना करने पर गोलोक में प्रसिद्ध लीला सहसा प्रकट हुई।

35. एक मनोहर नदी जिसके चमकते हुए महारत्न के तट और स्वच्छ वालुका थी। सुवर्ण कमल सुशोभित थे। गहरे अमृत जल की तरंगें उठती थीं।

Nijanand App

वृन्दावनं तद्वरवृक्षवृन्दैर्युतं सचिन्तामणिकल्पपादपैः।
शालैस्तमालैस्तरलैः कदम्बैर्जम्बाम्रप्लक्षैर्वटपिप्लाद्यैः॥३६॥
कपित्थबिल्वामलनालिकेरैरश्वत्थपूगैः कदलैर्वनैश्च।
युतं मनोहारिभिरन्यवृक्षैरशोकपाटीरसुपारिजातैः॥३७॥
मनोज्ञकुञ्जैर्बहुभिः परीतं गोगोपगोपीनिलयैरुपेतम्।
आनन्दसन्दोहमिवोद्गिरद्भिर्मरुद्भिरानर्त्तितपल्लवद्रुमम्॥३८॥

प्रादुर्भूतं वनं तत्र नानापक्षिगणाकुलम्।
नातिदूरे वर्तमानो गोवर्धननगोत्तमः॥३९॥
सर्वर्तुगुणसम्पन्नो नानाधातुविचित्रितः।
स्फुरत्सुवर्णशिखरः सुधानिर्झरशीतलः।
वीक्ष्य तं विस्मयं प्राप्ताः स्वप्नोऽयं वा मनोभ्रमः॥४०॥

पारावताः कलरवाः कलराजहंसः कारण्डवा रथपदाह्वयकोकिलाद्याः
सारङ्गबर्हणमनोहरपक्षिपूगास्तस्थुर्वने हरिगणा इव तं स्तुवन्तः॥४१॥
घनश्यामरूपं प्रफुल्लाब्जनेत्रं किरीटाङ्गदैरुल्लसद्भ्रूकपोलम्।
सुनासं सुवक्त्रं रणद्वेणुहस्तं सुवर्हावतंसं तमापीतवस्त्रम्॥४२॥
तमानन्दरूपे वने नन्दसूनुं तदानन्दरूपं प्रभुं तेऽभ्यपश्यन्।
महावल्लवीयूथमध्ये चरन्तं त्रिभङ्गाकृतिभ्राजमानस्वरूपम्॥४३॥

कोट्यर्कप्रभया विराजिततनुं कोटीन्दुदर्पापहं
कोटिस्फूर्जदनङ्गरङ्गवपुषं कोट्यब्धिगाम्भीर्यकम्।
तं लावण्यनिधिं विलोक्य सहसा पार्श्वस्थया राधया
जुष्टं गोपिकया निरन्तरमतिप्रेम्णाथ ते विस्मिताः॥४४॥
काचिद्गोपी सचमरकरा वीजयन्ती स्वकान्तं
काचिच्चाग्रे करयुगपुटं कृत्य तस्थौ निरीहा।
काचित् स्थाल्यां मणिगणमयीं कृत्य दीपावलिं तां
राधाकृष्णप्रतिमुखगता कुर्वती दीपकृत्यम्॥४५॥
काचित्कृष्णमुखं निरीक्ष्य सुतरां चित्रार्पितेवाभवत्
काचित्कृष्णकरं निगृह्य हृदये संस्थाप्य तस्थौ मुदा।
काचिच्चांध्रियुगं निगृह्य सदयं स्वेमूर्ध्यधारस्यन्मुदा
काचिन्नृत्यति कृष्णकीर्तनपरा धृत्वा करे तालिकाम्॥४६॥
एवं रासरसोन्मत्तं गोपिकायूथमध्यगं।
वीक्ष्य वृन्दावने कृष्णं प्रणेमुः श्रुतयः समम्॥४७॥

Nijanand App

36. उन सुन्दर वृक्षों के समूहों, चिन्तामणि और कल्पवृक्षों, शाल, तमाल, कदम्ब, जम्बू, आम्र, प्लक्ष, वट, पिप्पल आदि

37. कपित्थ, बिल्व, आमलक, नालिकेर, अश्वत्थ, केला के वन से युक्त, और अन्य अशोक, चन्दन, पारिजात आदि मनोहर वृक्षों से युक्त

38. बहुत से सुन्दर कुन्जों से युक्त गो, गोप तथा गोपियों के निवासों से युक्त, वायु से जहां के पल्लव और वृक्ष नचाए से जा रहे हैं; जो वायु मानो आनन्द समूह हो प्रकट कर रही हो,

39. नाना पक्षी गणों से युक्त वन प्रकट हुआ। उसके समीप गोवर्धन पर्वत था।

40. सभी ऋतुओं के गुणों से सम्पन्न नाना धातुओं से चित्रित चमकते स्वर्ण शिखर, अमृत के झरने से शीतल उस गोवर्धन को देखकर वेदों को विस्मय हुआ। वे सोचने लगे कि वह स्वप्न है या मन का भ्रम है।

41. पारावत, राजहंस, कारंडव, चक्रवाक, कोकिल आदि सारंग, मयूर और मनोहर पक्षियों के समूह हरिगणों के समान स्तुति करते हुए वन में खड़े थे।

42. मेघ के समान श्याम रूप, खिले कमल के समान नेत्र, किरीट, अंगद धारण किए हुए सुन्दर भौहें और कपोल वाले, सुन्दर नासिका, सुन्दर मुख वाले, बजती हुई वंशी हाथ में लिए मोर के पंखों का आभूषण, नील वस्त्र धारण किए हुए,

43. आनन्द वन में उन नन्द के पुत्र के आनन्द रूप प्रभु को वेदों ने देखा। गोपियों के यूथ के मध्य त्रिभंगाकृति चमकता हुआ स्वरूप था।

44. कोटि सूर्य की प्रभा से शरीर विराजित था। कोटि चन्द्रमा के दर्प को नष्ट करने वाला, कोटि कामदेवों को तिरस्कृत करने वाला शरीर जिनका था, जिनमें कोटि सागर की गम्भीरता थी। पास में स्थित राधिका और गोपिकाओं से युक्त उन लावण्य निधि को देखकर अति प्रेम से वे विस्मृत हो गईं।

45. कोई गोपी चंवर हाथ में लिए अपने कान्त पर डुला रही थी। कोई उनके आगे हाथ जोड़कर निरीह भाव में खड़ी थी। कोई मणि की थाली में दीप पंक्ति सजा कर राधाकृष्ण के सामने आरती उतारती थी।

46. कोई कृष्ण के मुख को देखकर चित्र लिखित की भांति हो गई। कोई कृष्ण के हाथ को पकड़ कर हृदय पर रखकर प्रसन्न होकर खड़ी हो गई। कोई दोनों चरणों को पकड़ कर प्रसन्नता से अपने मस्तक पर धारण करने लगी। कोई करतार हाथ में लेकर कृष्ण कीर्तन करके नाचने लगीं।

47. इस प्रकार से रास के रस में उन्मत्त गोपियों के यूथ के मध्य वृन्दावन में कृष्ण को देखकर श्रुतियों ने प्रणाम किया।

Nijanand App

ततः प्रसन्नस्ता आह ब्रूत मत्तो वरं शुभम्।
भवद्भिर्दृष्टमित्येव धाम गोलोकशब्दितम्॥४८॥

श्रुतय ऊचुः

न वृणीमो वरं किञ्चित्कालग्रस्तं विनश्वरं।
यदि दास्यसि चेन्नाथ तदा नोनुग्रहं कुरु॥४९॥
विलसन्ति यथा गोप्यस्त्वत्प्रिया भवता सह।
जायते च तथास्माकं रिरंसाकुलितं मनः॥५०॥
सम्पादय तथा काममस्माकं हृदयस्थितम्।
कोटिकन्दर्पसुभगं वीक्ष्य स्थातुं न शक्नुमः॥५१॥
निशम्य वेदगदितं किशोराकृतिरच्युतः।
शृण्वन्तीनां च गोपीनां प्राह प्रहसिताननः॥५२॥
कामोऽयं निगमाः सत्यं खपुष्पमिव दुर्लभः।
न प्राप्तुं शक्नुयात्कोपि स्वयं पुरुषबुद्धिभाक्॥५३॥
प्रियारूपं स्वमात्मानं जानन्मां प्रियमित्यथ।
अत्युग्रविरहज्वालाज्वलिताकृतिरेति माम्॥५४॥
नाद्यावधि ममैवायं लोको गोलोकसंज्ञितः।
प्राप्तः केनापि निगमा मदुक्तेनापि वर्त्मना॥५५॥
तथापि वरदानार्थं प्रोक्ताः स्थ वरदेन मे।
तदपि स्यान्न मे वाक्यं व्यलीकं कर्हिचित्क्वचित्॥५६॥
यदा चतुर्मुखो ब्रह्मा पद्मकल्पे भविष्यति।
तत्सृष्टलोकमध्ये तु माथुरं मण्डलं शुभम्॥५७॥
तत्र वृन्दावनं दिव्यं भविष्यति रसाश्रयम्।
तत्र गोलोकलीलेयं सर्वथावतरिष्यति॥५८॥
मूलरूपं च मे तत्र स्वप्रियाभिरुदेष्यति।
भवन्तोपि विशेषेण पुरुषत्वं विहाय च॥५९॥
कामिनीभावमापन्ना भविष्यथ व्रजाङ्गनाः।
तत्रापि मुरलीनादश्रवणानन्दमोहिताः॥६०॥
अतिक्रम्य स्वमर्यादां रासमण्डलमागताः।
भविष्यथ तदा यूयं पूर्णकामा न संशयः॥६१॥
इत्युक्त्वान्तर्दधे साक्षात्किशोराकृतिरच्युतः।
ततः कतिपये काले पद्मकल्पे चतुर्मुखे॥६२॥

Nijanand App

48. तब प्रसन्न होकर उन्होंने कहा कि मुझसे वर प्राप्त करके गोलोक धाम के दर्शन तो तुम ने कर लिए।

श्रुतियों ने कहा—

49. मैं ऐसा कोई वर जो कालानुसार नश्वर हो वह नहीं वरण करती हूं। हे नाथ! यदि आप देते हैं, तो मुझ पर अनुग्रह करें।

50. आपकी प्रिया गोपिकाएं आपके साथ जैसे विलास करती हैं, वैसे ही मेरा मन रमण करने के लिए व्याकुल है।

51. हमारे मन में स्थित कामना पूर्ण कीजिए। कोटि कामदेव के समान सुन्दर आपको देखकर हम नहीं रुक सकते।

52. वेदों के इस वचन को सुनकर किशोर अच्युत ने गोपियों को सुनाते हुए हंसकर कहा।

53. हे वेदो! यह कामना आकाश पुष्प के समान दुर्लभ है। जो स्वयं अपने में पुरुष बुद्धि रखता है वह कोई भी इसे प्राप्त नहीं कर सकता।

54. अपने को प्रिया रूप और मुझे प्रिय मानता हुआ उग्र विरह की ज्वाला से जल कर ही मुझे पा सकता है।

55. हे निगमो! मेरे इस गोलोक नामक लोक को मेरे कहे मार्ग से भी आज तक

56. कोई प्राप्त न कर सका। फिर भी वरदायक मैंने तुमको वरदान के लिए कहा था। वह मेरा वाक्य भी कहीं झूठा न हो।

57. जब पद्म कल्प में चतुर्मुख ब्रह्मा होंगे तब उनके द्वारा रचे गए लोक के मध्य में मथुरा मण्डल होगा।

58. वहां पर रस का आश्रम दिव्य वृन्दावन होगा। वहां मेरी इस गोलोक लीला का अवतरण होगा।

59. अपनी प्रियाओं के साथ मेरा मूल रूप उदय होगा। आप लोग भी विशेषतः पुरुष रूप को छोड़कर

60. कामिनी भाव प्राप्त कर ब्रजांगनाएं होंगे। वहां मुरली नाद को सुनकर आनन्दे मोहित होकर

61. अपनी मर्यादा अतिक्रमण कर रास मण्डल में आ जाएंगी। तब तुम लोग पूर्णकाम होगे, इसमें सन्देह नहीं।

62. यह कहकर किशोर अच्युत अन्तर्ध्यान हो गए और कुछ समय व्यतीत होने पर चतुर्मुख के

Nijanand App

जाते तस्य व्यतिक्रान्ते परार्द्धे प्रथमे ततः।
द्वितीयस्यापि तस्यैव मध्ये लीलेयमागता॥६३॥
द्विषट्सहस्रभेदेन स्वात्मानं च विभज्य ते।
कामिनीभावमापन्ना रासमण्डलमध्यगाः॥६४॥
कृष्णप्रियाप्रसङ्गेन कृतकृत्या बभूविरे।
इति ते सर्वमाख्यातं यत्पृष्टोहं सुलोचने॥६५॥
कूटस्थहृदयं साक्षात् गोलोक इति विश्रुतः।
तत्र क्रीडति गोपीभिः कामांशः पुरुषोत्तमः॥६६॥
आविर्भूतः सदैवायं कूटस्थे परमात्मनि।
तिरोहितं तु चैतन्यं वर्त्तते पुरुषोत्तमे॥६७॥
रसलीलारसाम्भोधेः पारं गन्तुं क ईश्वरः।
दिङ्मात्रदर्शनं विद्धि यन्मया वर्णितं शिवे॥६८॥

इति श्रीमाहेश्वरतन्त्रे उत्तरखण्डे शिवोमासंवादे गोलोकवर्णने पञ्चाशत्तमं पटलम्॥५०॥

अथैकपञ्चाशत्तमं पटलम्

शिव उवाच

अथान्यत्ते प्रवक्ष्यामि प्रकारं शृणु पार्वति।
यस्य श्रवणमात्रेण जायते भावना शुभा॥१॥
भूमयो दश ते प्रोक्ता मया च वरवर्णिनि।
पञ्चमी शयनीयाख्या तस्यां शेते निशास्वपि॥२॥
स्फूर्जद्रत्नमयूखचित्रविलसत्स्वर्णाच्छदण्डोद्धृत-
भ्राजन्मण्डपमण्डिते परिलसद्दिव्योपधानैः सुखे।
प्रान्तस्फूर्जदनेकमौक्तिकमणिभ्राजत्पटीप्रावृत्ते
दिव्यामोदमनः प्रमोदसुमनः सौरभ्यसम्भाविते॥३॥
तल्पे तल्पसुखास्पदे परिलसन्मुक्तावितानोत्तमे
हंसीतूलचिते स्फुरन्मणिगणप्रोच्चैः प्रदीपोज्ज्वले।
स्वामिन्या परया विलासविविधक्रीडारसव्यग्रया
रात्रौ निर्भरमन्मथोत्सवसुखं शेते रसात्मा प्रभुः॥४॥
वीणामृदङ्गमधुरध्वनिगीतनादैः
क्रीडागृहं च परितः परिवृत्तमानाः।
सख्यः प्रियं परिचरन्ति निशावसाने
प्राणप्रियेशपरिबोधनकर्मदक्षाः॥५॥

Nijanand App

63. उत्पन्न होने पर तथा प्रथम परार्ध बीत जाने पर द्वितीय परार्ध के मध्य में यह लीला अवतरित हुई।

64. बारह हजार रूपों में अपने को विभक्त कर स्त्री का रूप धारण कर रास मण्डल के मध्य में

65. कृष्ण की प्रिया के प्रसंग से कृतकृत्य हुए। हे सुलोचने! जो तुमने पूछा था वह सब बता दिया।

66. गोलोक कूटस्थ का साक्षात् हृदय है, यह प्रसिद्ध है। वहां कामांश पुरुषोत्तम गोपियों के साथ क्रीड़ा करते हैं।

67. कूटस्थ परमात्मा में यह सदैव प्रकट रहते हैं और पुरुषोत्तम में यह चैतन्य तिरोहित रहता है।

68. हे शिवे! रास लीला रस के सागर को कौन पार कर सकता है। मैंने दिशा मात्र दर्शन कराया है, जो मैंने कहा था।

माहेश्वरतन्त्र के उत्तर खण्ड में शिव-उमा संवाद में गोलोक वर्णन का पचासवां अध्याय समाप्त हुआ।

इक्यावनवां अध्याय

शिव ने कहा—

1. हे पार्वती! इसके पश्चात् अन्य प्रकार कह रहा हूं, सुनो, जिसके श्रवण से ही भावना शुद्ध हो जाती है।

2. मैंने तुमसे दस भूमियों का वर्णन किया है। पांचवी शयनीय भूमिका है उसमें रात्रि में सोते हैं।

3. चमकते हुए रत्नों की किरणों से सुशोभित स्वर्ण के स्वच्छ दण्ड पर टिके हुए मण्डप से मण्डित दिव्य तकिया जिसमें लगी हैं और किनारे पर चमकते हुए अनेक मौक्तिक मणियों से सुशोभित वस्त्र जिस पर बिछा है। दिव्य पुष्पों की सुगन्ध से जो सुशोभित है।

4. मुक्ताओं का उत्तम वितान जहां सुशोभित हो रहा है। हंस के समान श्वेत वस्त्र जिस पर बिछा है। चमकती हुई मणियों का उज्ज्वल दीपक जहां रखा है, ऐसे पलंग पर अनेक प्रकार की क्रीड़ा में लगी स्वामिनी के साथ रसात्मा पुरुष रात्रि में मन्मथोत्सव सुख शयन करते हैं।

5. इस क्रीड़ा गृह के चारों ओर वीणा, मृदंग की मधुर ध्वनि, गीतों के नाद करती हुई सखियां प्राणप्रिय के जगाने में दक्ष रात्रि के अन्त में प्रिय की सेवा करती हैं।

Nijanand App

कनकाङ्गी मञ्जुमुखी कलकण्ठी स्मितानना।
आनन्दवल्लरी वृन्दा मित्रवृन्दा विशोकिनी॥६॥
चित्रवस्त्रा विचित्राङ्गी चन्द्रघण्टा विभावरी।
मञ्जुमोदा विधुमुखी रत्नदन्ती मदालसा॥७॥
लावण्यलहरी लीलावती लावण्यमन्थरा।
ललिताङ्गी कामवती पुष्पिणी पुष्पदन्तिका॥८॥
हसंतिका हंसगतिः पुष्पवेणी मरुल्लता।
मुदिता मोदिनी श्यामा तथा मुक्तावती रतिः॥९॥
हारिणी हरिणी हंसी विहंसी हंसकुण्डला।
अरुणाङ्गी रङ्गरङ्गा रसरङ्गा कुमुद्वती॥१०॥
कुङ्कुमाङ्गी कुन्दहासा चन्द्रहासा चरित्रिणी।
आनन्दमञ्जरी मन्द्रा पद्मवृन्दा ज्वलन्तिका॥११॥
कुन्ददन्ती रत्नकला जयिनी स्वर्णमेखला।
पुलिंदिनी हेमवर्णा हरिणाक्षी रतिप्रिया॥१२॥
पद्मकोशा भृङ्गरावा गायनी मदमन्थरा।
एकषष्टिमिताः सख्यो नियुक्ता बोधकर्मणि॥१३॥

प्रातः प्रोत्थितमायतादिकमलप्रोत्तम्भितभ्रूलतं
जृम्भामञ्जुमुखारविन्दविलसद्बिम्बाधरोद्यस्मितम्।
निद्रान्ताघूर्णमानं समधिगतसखीवृन्दमालोकयन्तं।
दृष्ट्या वातेरिताम्भोरुहमुकुललसच्छोभया निस्तुलाङ्गम्॥१४॥

स्फूर्जत्काञ्चनमण्डितामलमणिप्रोद्भासिते पात्रके।
श्रीमन्मङ्गलवस्तुनि प्रविलसच्छ्रीरत्नदीपैः शुभैः।
सख्यस्ता मृदुमञ्जुकङ्कणरणत्कारान् समातन्विताः।
कान्ताः कान्तमनङ्गकोटिरुचिरं नीराजयन्ति प्रियम्॥१५॥

तदनु झटिति रागादागतानन्दमञ्ज-
र्य्यनघकरसरोजे व्यादधत् दर्पणं च।
प्रियसुभगमुखाब्जं दर्शनीयं तवेदं
असितकणकृतश्रि रम्यमालोकयेति॥१६॥

ह्लादिनीनिहितरत्नपादुके पादपङ्कजयुगे निधाय च।
रत्नपीठमुपसाद्यसुन्दरं दन्तधावनविधिं करोति सः॥१७॥
दन्तधावनविधानयोजिते मन्द्रिणीति सुरसेति विश्रुते।
मन्द्रिणी धृतवती शुभं जलं हस्तवस्त्रममलं तथेतरा॥१८॥

Nijanand App

6. कनकांगी, मंजुमुखी, कलकण्ठी, स्मितानना, आनन्द बल्लरी, वृन्दा, मित्रबृन्दा, विशोकिनी,

7. चित्रवस्त्रा, विचित्रांगी, चन्द्रघटा, विभावरी, मंजुमोदा, विधुमुखी, रत्नदंती, मदालसा,

8. लावण्यलहरी, लीलावती, लावण्यमंथरा, ललितांगी, कामवती, पुष्पिणी, पुष्पदंतिका,

9. हसंतिका, हंसगति, पुष्पवेगी, मरुल्लता, मुदिता, मोदिनी, श्यामा, मुक्तावती, रति,

10. हारिणी, हरिणी, हंसी, विहंसी, हंसकुण्डला, अरुणांगी, रंगरंगा, कुमुद्वती,

11. कुंकुमांगी, कुंदहासा, चन्द्रहासा, चरित्रिणी, आनन्दमंजरी, मंदरा, पद्मवृंदा, ज्वलंतिका,

12. कुन्ददन्ती, रत्नकला, जयिनी, स्वर्णमेखला, पुलिन्दिनी, हेमवर्णा, हरिणाक्षी, रतिप्रिया,

13. पद्मकोशा, भृंगरवा, गायनी, मदमंथरा यह इकसठ सखियां जगाने में नियुक्त हैं।

14. प्रातःकाल उठे हुए सुन्दर कमल पर टिकी हुई भ्रूलता है जिनकी, जम्हाई लेने पर सुन्दर मुखारबिन्द में सुशोभित बिम्बाधर के सुन्दर मुस्कान वाले, निद्रा के अन्त में आंखों को कुछ घूरते हुए और उपस्थित सखी वृन्दों को देखते हुए, हवा से खिलते हुए कमल की कली में शोभित शोभा वाली दृष्टि से जिनका अंग तुलना रहित है,

15. चमकती हुई कंचन से सुशोभित निर्मल मणि के चमकते हुए पात्र में मंगल वस्तुओं में रखे हुए रत्नदीपों से सुन्दर कंगन के शब्दों से युक्त प्रिय सखियां कोटि काम सुन्दर अपने प्रिय की आरती उतारती हैं।

16. इसके पश्चात् शीघ्र ही आनन्दमंजरी आ गई और हाथ में दर्पण लेकर, हे प्रिय, तुम्हारा यह मुख दर्शन के योग्य है, कृष्ण शोभा से जो बड़ा रम्य दिखाई पड़ता है, उसे इस दर्पण में देखें।

17. ह्लादिनी के द्वारा लाई गई रत्न पादुकाओं को अपने चरण कमलों में धारण कर सुन्दर रत्नपीठ पर बैठकर दन्त धावन करते हैं।

18. दन्त धावन विधि के लिए मन्द्रिणी एवं सुरसा नियुक्त थीं। मन्द्रिणी जल लिए थी और सुरसा हस्तवस्त्र लिए थी।

Nijanand App

ततो लविङ्गकर्पूरचूर्णैलापूगमिश्रितम्।
उपतिष्ठति सत्पात्रे धृत्वा मदनमेखला॥१९॥
ताम्बूलमास्वाद्य ततः प्रसन्नः सखीजनप्रार्थनयातिकामम्।
आरुह्य रत्नोज्वलपादुके द्वे स्नानगृहस्याभिमुखः प्रयाति॥२०॥
रत्नमौक्तिकवितानमण्डितं धूपितं स्वगरुधूमराजिभिः।
कल्पवृक्षकुसुमालिसौरभोद्भ्रान्तभृङ्गमुखरीकृताम्बरम्॥२१॥
सज्जसर्वपरिचारिकागणं नृत्यमानबहुनर्त्तकीगणम्।
उल्लसद्विविधवाद्यगायनोज्जृम्भितप्रतिनिनादमञ्जुलम्॥२२॥
स्तम्भलग्नमणिपुत्रिकागणं स्नानमण्डपमुपेत्य भास्वरम्।
रत्नपीठमुपनीय दर्शितं भामया समधितिष्ठति प्रभुः॥२३॥
उत्तार्य भूषणकलापमथो मनोज्ञं
तत्तत्प्रियाकरयुगान्युपलम्भयित्वा।
नीराजितः स्वप्रमदोत्तमभूषणोद्यत्
कान्तिच्छटाभिरिव दीपशतैर्विभाति॥२४॥
यक्षकर्द्दम काश्मीररजनीचूर्णमिश्रितैः।
उद्वर्त्तनं चकारेला गन्धद्रव्यैर्मनोहरैः॥२५॥
आनीय मणिपात्रस्थं गन्धतैलं मनोजवा।
करोत्यभ्यङ्गमङ्गेषु स्वभावसुरभिष्वपि॥२६॥
मुक्तारत्नविचित्रहेमकलशैरापीड्यमानैः शरत्
पूर्णेन्दूज्वलहस्तिकुंभशिखरारूढैः सुधास्पर्द्धिभिः।
कस्तूरीद्रवयक्षकर्दममहासौरभ्यसम्भावितैः
सख्यः पुष्पगणाधिवासितजलैः संस्नापयन्ति प्रियम्॥२७॥
स्मेरानना विधुकला बल्गुनादा विहङ्गमा।
सङ्गमाला स्मरानन्दा विश्वानन्द सुकुण्डला॥२८॥
यशोवती हेमगर्भा तरुणी तपनावती।
एताः प्राधान्यतः प्रोक्ता द्वादश स्नानकर्मणि॥२९॥
स्नानस्वच्छशुचिना वाससाङ्गं सुकुण्डला।
अत्याह्लादजननी प्रोच्छयत्यतिकोमलम्॥३०॥
कटिवासः परित्यज्य तेजोवत्या निवेदितम्।
काश्मीररागरुचिरं कटिवस्त्रं विभर्त्यसौ॥३१॥
पादुकायुगमारुह्य मन्दं मन्दं परः प्रभुः।
भूपामण्डपमायाति प्रियाभिः परिवेष्टितः॥३२॥

Nijanand App

19. इसके पश्चात् लौंग, कपूर, इलायची और सुपारी चूर्ण से मिश्रित चूर्ण एक पात्र में लेकर मदनमेखला उपस्थित होती है।

20. तांबूल खाकर सखी जनों की प्रार्थना से पादुकाओं को पहनकर स्नानगृह के सामने जाते हैं।

21. रत्न और मुक्ताओं के वितानों से मण्डित अगर धूम से धूपित कल्पवृक्ष के पुष्पों की सुगन्धि से भ्रम में पड़े भौंरों से आकाश शब्दायमान हो रहा था।

22. सभी परिचारिकाएं सज्जित थीं। नर्तकीगण नाच रही थीं। विविध वाद्य और गायन की ध्वनि की जहां प्रतिध्वनि हो रही है।

23. खम्भों पर बने हुए पुतलियों वाले स्नान मण्डप में पहुंचकर भामा के द्वारा दिखाए गए रत्नपीठ पर प्रभु बैठते हैं।

24. सारे भूषणों को उतारकर उन-उन प्रियाओं के हाथ में देकर उन रत्नों और प्रभारत्नों को धारण किए रत्नों की कान्ति से ही मानो सैकड़ों दीपकों से की जाती हुई आरती की भांति सुशोभित होते हैं।

25. यक्षकर्दम (कपूर), अगर, कस्तूरी, कुंकुम, चन्दन से मिला घोल या महासुगन्धित केशर और हल्दी चूर्ण और सुन्दर गन्ध द्रव्यों का उबटन लगाया।

26. मणिपात्र में सुगन्धित तेल को मनोजवा ने लाकर उनके अंगों में मला।

27. मुक्ता रत्न जिसमें जड़े हैं ऐसे स्वर्ण कलश जो शरद पूर्ण चन्द्र के समान हैं, हाथियों के शिखर पर स्थित अमृत की स्पर्धा करने वाले कस्तूरी द्रव, यक्षकर्दम की महान् सुगन्धि से युक्त पुष्पों से अधिवासित जल द्वारा सखियां उन्हें स्नान कराती हैं।

28. स्मेराननना, विधुकला, वल्गुनादा, विहंगमा, संगमाला, स्मरानन्दा, विश्वानन्दा, सुकुण्डला,

29. यशोवती, हेमगर्भा, तरुणी, तपनावती—यह बारह प्रधान रूप से स्नान कर्म में नियुक्त थीं।

30. स्नान से स्वच्छ हो जाने पर सुकुण्डला वस्त्रों से उनके अंगों को पोंछती है

- उस कटि वस्त्र को उतार कर तेजोवती द्वारा दिए गए केशर के रंग वाले कटि वस्त्र को [illegible]ा करते हैं।

32. खड़ाऊं को पहनकर धीरे-धीरे अलंकरण मण्डप में आते हैं।

Nijanand App

रत्नराजितसुवर्णकुट्टिमे स्फूर्जदंशुनिवहैस्तथोर्ध्वगैः।
शक्रचापरचनाचितान्तरे मण्डपे स्फटिकपीठमाश्रितः॥३३॥
केशावलिं कङ्कतिकामुखेन संशोध्यमाना ललिता प्रियस्य।
निर्दग्धकालागरुधूपधूपैः सुवासयत्यत्र सरोजगन्धा॥३४॥
सिन्दूरपूरारुणिमानमुच्चैर्वहन्महोष्णीष मनङ्गरेखा।
प्रान्तेषु मुक्तागुणगुम्फितं तदा व्यापारयामास तदुत्तमाङ्गे॥३५॥
सुवर्णरचितं प्रान्तं मुक्ताजालपरिस्कृतं।
पद्मरागं मध्यनीलमुष्णीषाग्रे बबन्ध सा॥३६॥
अनेकमुक्तामणिराजमाने निजेच्छया स्वीकृतहंसकुण्डले।
तडित्प्रभापुञ्जमिवोद्वमन्ती श्रु[illegible]द्वयस्याभरणीचकार॥३७॥
नवरत्नमयीं मालां ग्रैवेयाभरणं तथा।
हृदम्बुजे लम्बमानं चतुष्काभरणं तथा॥३८॥
बाह्वोः केयूरयुगलं कटकाङ्गदमुद्रिकाः।
उन्मिषद्रत्नरचितं काञ्चीसूत्रं महद्ध्वनम्॥३९॥
निर्यद्भूषांशुनिचयैः किर्मीरितमिवोत्तमम्।
निःश्वासहारिवसनं श्वेतं स्निग्धं मनोहरं॥४०॥
नवीनजलदस्निग्धमुत्तरीयं सुशोभनम्।
अनर्घ्यमौक्तिकमणिभ्राजत्प्रान्तचतुष्टयम्॥४१॥
अनेकदिव्याभरणान्यङ्गे प्रियतमस्य हि।
रचयामास शृङ्गारचमत्कृतिमुपेयुषः॥४२॥
इति सज्जितशृङ्गारो गायद्भिः परितो वृतः।
सखीवृन्दैः वाद्यहस्तैर्भोगभूमिं प्रयाति सः॥४३॥
पाकशालास्वधिकृता ललिताङ्गादिकाः प्रियाः।
तिष्ठन्ति यत्र सुभगाः किशोराकृतयः शतम्॥४४॥
स्वर्णपीठं समास्थाय तिष्ठति पुरुषोत्तमः।
सौवर्णविमलं पात्रं साधारमति विस्तृतम्॥४५॥
परितस्तस्य सौवर्णपात्राणां च सहस्त्रकम्।
स्थाप्यन्ते तेषु ते भोगाः स्निग्धा हृद्याः पृथग्विधाः॥४६॥
जातीकोरकपुञ्जविभ्रमकरं स्वन्नं च मध्यस्थितं
वामेऽस्याढकमुद्गमोदनमथो प्राज्यं घृतं माहिषम्।
सूपापूपहयङ्गवीनविलसत्पक्वान्नरम्भाफलै
मुक्तालड्डुकपूलिकाशिखरिणीदध्यक्तमापान्नकैः॥४७॥

Nijanand App

33. रत्नों से शोभित स्वर्ण कुट्टिम में चमकती हुई ऊर्ध्वगामी किरणों द्वारा इन्द्रधनुष की आभा धारण करने वाले मण्डप में स्फटिक पीठ पर बैठते हैं।

34. ललिता प्रिय की केशावली को कन्धी से शोधित करती है और सरोजगन्धा अनेक प्रकार के धूपों से सुवासित करती है।

35. अनंगरेखा सिन्दूर के समान लाल और किनारे पर मुक्ताओं से गुम्फित पगड़ी उनके सिर पर बांधती है।

36. जिसका किनारा सुवर्ण से रचित है। मुक्ताजाल जिसमें लगा है ऐसे पद्मराग मणि को पगड़ी पर लगाया।

37. अनेक मुक्ता मणियों से शोभित कुण्डल मानो विद्युत प्रभा का वहन कर रहे हों ऐसे कुण्डल दोनों कानों में धारण किया।

38. नवरत्नों की माला, हार जो हृदय पर लटक रहा है और चतुष्क आभरण

39. दोनों बाहुओं में केयूर, अंगद, कटक और मुद्रिका और रत्नरचित कांची सूत्र (करधनी)

40. आभूषणों से निकलती किरणों से मिश्रित, निःश्वास को हरण करने वाले श्वेत वस्त्र,

41. नवीन मेघ के समान चिकने उत्तरीय वस्त्र जिसमें अमूल्य मोती और मणियाँ चारों किनारे पर खिले हुए थे, उनको धारण किया।

42. प्रिय के अंग में अनेक दिव्य आभूषणों की रचना किया।

43. इस प्रकार श्रृंगार सजाकर गाती हुई वाद्ययन्त्र लिए सखियों से घिरे हुए उनके साथ भोग भूमि जाते हैं।

44. पाकशाला में ललिता, अंगादिका प्रियाएं अधिकृत थीं। यह सुन्दर किशोर आकृति की सौ थीं।

45. स्वर्ण पीठ पर बैठकर स्वर्ण के निर्मल पात्र जो विस्तृत आधार पर रखा है।

46. उसके चारों ओर हजारों स्वर्ण पात्र हैं जिनमें प्रिय भोजन तथा अनेक प्रकार की भोजन सामग्री रखी जाती है।

47. जाती की कलियों के समूह को विभ्रम देने वाले सुन्दर अन्न और उनके मध्य स्थित वाम की ओर अरहर, मूंगयुक्त चावल, बहुत अधिक भैंस का घृत, दाल, पुआ, मक्खन से सुशोभित पकवान, केला, फल, मोती के लड्डू-पूड़ी, शिखरिणी दही में डूबे बड़े,

Nijanand App

वह्न्युष्णशर्करयुतं मणिपात्रसंस्थं
दुग्धं च पायसमथोघृतशर्कराक्तम्।
पूर्णेन्दुचन्द्रकचितं मधुराम्लतिक्त
नानारसाम्ररसमाक्षिकगोस्तनीकम्॥४८॥

कुष्माण्डवृन्ताकपटोलबिम्बीशिम्बीसुकौशातकिसूरणाद्यैः।
मृद्वग्नितापेन सुपाचितैर्युतं हिङ्ग्वामरीचादिसुवासितैर्भृशम्॥४९॥
चतुर्विधान्नं परिवेश्यमाणमानन्दमानन्दमयोपि भुङ्क्ते।
प्रियाः समस्ता अपि तं समन्तात्प्रहासयन्त्यो बुभुजुः स्वपात्रैः॥५०॥

भोजनान्ते ततः कृष्णं मणिपीठे तु दक्षिणे।
शुद्धाङ्गी स्वर्णभृङ्गारजलेनाचमनं ददौ॥५१॥
स्नेहापनोदनार्थाय गन्धचूर्णं शुभं ददौ।
दन्तकाष्ठं च कर्पूरशशाङ्कशकलास्तथा॥५२॥
गण्डूषाचमनीयान्ते केसराङ्गी तु बीटिकाम्।
पादुकायुगमारुह्य पञ्चवाद्यपुरः सरम्॥५३॥
पीठान्तरगतं कृष्णं परमानन्दविग्रहम्।
स्वामिनीप्रमुखाः सर्वाः मुक्ताभिः समवाकिरन्॥५४॥

मुक्ताविचित्रचतुरस्त्रसुवर्णपात्रे
दूर्वादधिप्रभृतिमाङ्गलिकोपचारैः।
आरोपितैः स्थिरशिखैः शुभरत्नदीपै-
र्नीराजयन्ति निजनाथमकामकामम्॥५५॥

शृङ्गारहास्याद्भुतमोदमानः प्रियानुरोधेन ततः परेशः।
विश्रम्य तत्रैव मुहूर्तमात्रं प्रयाति भूमिं शयनीयसंज्ञाम्॥५६॥
मृदुवाद्यादिगीतेन गीयमानः प्रियाजनैः।
चित्रया वीजितः शेते मृदुव्यजनहस्तया॥५७॥

सुप्तोत्थितः परिजनैः सहं नृत्यभूमौ
सिंहासने विमलरत्नमयूखचित्रे।
स्थित्वा प्रियाविलसनादिकनृत्यगीतं
पश्यंस्तुतोष यदपि स्वयमेव तोषः॥५८॥

अखण्डितशरच्चन्द्रस्मयापहारमण्डलम्।
मिहिला छत्रमाधत्त रत्नदण्डरुचोज्वलम्॥५९॥

Nijanand App

48. आग से गरम किए गए शकर से युक्त मणि पात्र में दूध, खीर जिसमें घृत और शर्करा मिला है, पूर्ण चन्द्र से युक्त मधुर अम्ल और तिक्त तथा नाना रस वाले आमरस, कन्दयुक्त खांड, अंगूरों का गुच्छा,

49. कूष्मांड, बैंगन, परबल, बिम्बिकल, शिम्बी, तोरई, सूरण आदि, धीमी आग में भली प्रकार पकाए हींग, मरिच आदि से युक्त,

50. चतुर्विध परोसे गए अन्न को आनन्दमय भोजन करते हैं। उनके चारों ओर सभी प्रियाएं अपने-अपने पात्रों में हंसाते हुए भोजन करती हैं।

51. भोजन के अन्त में दक्षिण की ओर मणि पीठ पर बैठे कृष्ण को शुखागी ने सोने की सुराही के जल से आचमन कराया।

52. चिकनाई दूर करने के लिए गन्ध चूर्ण दिया। दन्तकाष्ठ, कपूर तथा शशांक के टुकड़े देकर

53. कुल्ला, आचमन के अन्त में केसरांगी ने पान बीड़ी दिया। खड़ाऊं पहन, पंचवाद्य आगे बजाते हुए

54. दूसरे पीठ पर बैठे हुए परम आनन्दमय स्वरूप वाले श्रीकृष्ण को स्वामिनी आदि सभी सखियां मुक्ता की वर्षा करती हैं।

55. मुक्ता से विचित्र गोल सुवर्ण के पात्र में दूर्बा, दधि आदि मांगलिक वस्तुएं रखकर जलते हुए रत्नद्वीप से अपने प्राणनाथ की आरती करती हैं।

56. शृंगार, हास्य अद्भुत आनन्द से प्रसन्न होते हुए प्रियाओं के अनुरोध से मुहूर्त भर वहीं विश्राम कर शयन भूमि जाते हैं।

57. मृदुवाद्य आदि के साथ प्रियाजनों द्वारा गीत गाए जाते हुए चित्रा के द्वारा पंखे डुलाए जाते हुए सोते हैं।

58. सोकर उठते हैं और अपने परिजनों के साथ नृत्य भूमि में निर्मल रत्न की किरणों से युक्त सिंहासन पर बैठकर प्रियाओं के विलासयुक्त नृत्य गीत देखकर सुनते हुए यद्यपि स्वयं तोष हैं फिर भी प्रसन्न हुए।

59. पूर्ण शरद चन्द्र के समान मण्डल वाले रत्नमय दण्ड की कान्ति से उज्ज्वल छत्र मिहिला ने उनके ऊपर धारण किया।

Nijanand App

व्यजनं पादुके चारु चामरे दर्पणादिकम्।
दधानाः परिसेवन्ते पूर्वोद्दिष्टाः परात्परम्॥६०॥
ततो विमानप्रवरं नाम्ना चित्रध्वजं महत्।
सखीसहस्रैरास्थाय गतश्चान्द्रमसं वनम्॥६१॥
कदाचिन्नीलविपिने कदाचित्पुष्पदन्तके।
कदाचिदानन्दवने हेमकूटेऽपि कर्हिचित्॥६२॥
कदाचित्तारकूटाख्ये गारुडे नीलपर्वते।
कदाचित्पुष्परागाद्रौ माणिक्याद्रावपि क्वचित्॥६३॥
मन्दारविपिने क्वापि पारिजातवनान्तरे।
हरिचन्दनकोद्याने वैदूर्यविपिने क्वचित्॥६४॥
महामुक्तावने क्वापि प्रवालोद्यान एव च।
पद्मरागवनोद्याने महापद्मवने तथा॥६५॥
कदाचिच्चम्पकवने क्वचित्कल्पद्रुकानने।
अनेकविधलीलाभिः क्रीडते पुरुषोत्तमः।
ततश्चान्द्रमसादेत्य विमानेन महौजसा॥६६॥
महाद्वारपुरोवर्त्ति मण्डपेपि स्थितः क्षणः।
चतुःषष्टिमहास्तम्भां मूलभूमिं समाश्रितः॥६७॥
रत्नसिंहासनगतं तदैवेच्छाविमोहिताः।
स्वामिनीप्रमुखाः कृष्णं प्रार्थयामासुरुत्सुकाः॥६८॥
तत्तु सर्वं मया प्रोक्तं पुरा ते वरवर्णिनि।
अतः परं प्रवक्ष्यामि शृणुष्वैकाग्रमानसा॥६९॥
यथानेन प्रकारेण प्रियाः परिचरन्ति तम्।
तथैव काश्चन व्यग्राः स्वामिनीसेवनादिषु॥७०॥
नीराजनस्नानवस्त्रगन्धमाल्यविभूषणैः।
शयनासनताम्बूलैः सख्यः परिचरन्ति ताम्॥७१॥
द्विषटसहस्रसंख्याताः याः सख्यस्ते मयोदिताः।
षट्सहस्राणि कृष्णस्य परिचर्यापराणि हि॥७२॥
स्वामिन्याः षट्सहस्राणि वर्त्तन्ते परिकर्मणि।
तासां यूथानि देवेशि चत्वारिंशन्मितानि हि॥७३॥
तासां सौधानि दिव्यानि सहस्राणीति द्वादश।
एकैकं योजनार्द्धेनायामविस्तारसंयुतं॥७४॥

Nijanand App

60. पंखा, पादुका, चमर, दर्पण आदि धारण करती हुई पूर्व कही हुई प्रियाएं उनकी सेवा करती हैं।

61. इसके पश्चात् चित्रध्वज नामक विमान पर सहस्रों सखियों के साथ बैठकर चांद्रमस वन को जाते हैं।

62. कभी नीलवन में, कभी पुष्पदन्त में, कभी आनन्द वन मे, कभी हेमकूट में,

63. कभी तारकूट में, कभी गारुड़ के नील पर्वत पर, कभी पुष्पराग पर्वत पर, कभी माणिक्य पर्वत पर,

64. कभी मन्दार वन में, कभी पारिजात वन में, कभी हरिचन्दक उद्यान में, कभी वैदूर्य वन में

65. कभी महामुक्ता वन में प्रबाल उद्यान में, पद्मराग वन उद्यान में, महापद्म वन में,

66. कभी चंपक वन में, कभी कल्पद्रु वन में अनेक प्रकार की क्रीड़ाओं से पुरुषोत्तम लीला करते हैं। पश्चात् अतिवेग वाले चांद्रमस विमान से उतरकर,

67. महाद्वार के सामने वाले मण्डप में भी क्षण भर बैठते हैं। इसके पश्चात् चौंसठ स्तम्भ वाली मूल भूमि में आते हें।

68. वहां रत्न सिंहासन पर बैठे हुए उन कृष्ण से उन्हीं की इच्छा से विमोहित स्वामिनी प्रमुख प्रियाएं उत्सुक होकर प्रार्थना करती हैं।

69. हे वरवर्णिनी! हमने तुम्हें पहले ही यह सब बता दिया था। इसके आगे मैं कहता हूं, एकाग्र होकर सुनो।

70. जैसे प्रियाएं उनकी परिचर्या करती हैं, ऐसे कुछ स्वामिनी की सेवा में लग्न हैं।

71. नीराजन, स्नान, वस्त्र, गन्ध, माल्य, आभूषण, शयन, आसन, ताम्बूल से सखियां उनकी परिचर्या करती हैं।

72. हमने तो बारह हजार सखियां कहीं हैं उनमें से 6 हजार श्रीकृष्ण की सेवा में तत्पर रहती हैं।

73. स्वामिनी की सेवा में भी 6 हजार रहती हैं। उनके चालीस यूथ हैं।

74. उनके दिव्य बारह हजार महल प्रत्येक आधे योजन लम्बे-चौड़े हैं।

Nijanand App

एकैकस्याः प्रियायास्तु मन्दिरे मन्दिरे प्रिये।
शतं शतं प्रवर्त्तन्ते सेवार्थं परिचारिकाः॥७५॥
प्रियासौधबहिर्भागे तत्क्रमेणैव भामिनि।
परिचारिकावर्गसमं मन्दिराणि पृथक् पृथक्॥७६॥
योजनार्द्धप्रमाणेन किञ्चिदप्यधिकेन च।
विस्तारयाममयुक्तानि त्रिभौमानि द्युमन्ति च॥७७॥
प्रियासौधानि दिव्यानि नानावर्णाकृतीनि च।
चन्द्रामृतोद्गारवन्ति चन्द्रकान्तोद्भवानि तु॥७८॥
कानि कृष्णानि रक्तानि कृष्णरक्तानि कान्यपि।
कानिचिद्रक्तकृष्णानि श्वेतरक्तानि कानिचित्॥७९॥
श्वेतानि चैव रक्तानि रक्तश्वेतानि कान्यपि।
एवं धूम्राणि कृष्णानि धूम्रकृष्णानि कानिचित्॥८०॥
कृष्णधूम्राणि देवेशि सर्वसौधेष्वयं क्रमः।
एकैकमन्दिरे देवि मज्जनागारमायतम्॥८१॥
नानोपकरणैर्युक्तं दिव्यरत्नवितानकं।
भूषागृहं तथैकत्र महाकुट्टिममण्डपम्॥८२॥
भूषागृहस्य पूर्वे तु गन्धालेपस्य मन्दिरम्।
नानागन्धविभेदादिसमृद्धं बहुयुक्तिकं॥८३॥
महानसं तु देवेशि वर्त्तते वह्निकोणगम्।
ईशान्ये तु सभासद्म दिव्यासनविराजितम्॥८४॥
एवं कृष्णप्रियासौधस्थितिरुक्ता तवानघे।
द्रवीभूतरसः कृष्णः प्रियाभावात्मकस्तु यः॥८५॥
आविर्भूय प्रियावृन्दैः क्रीडते प्रतिमन्दिरम्।
स्वामिनीमन्दिरेपि च घनीभूतस्तु केवलम्॥८६॥
न स्वामिनीं विना कृष्णः न स्वामिनी कृष्णं विना।
न तिष्ठति क्षणं देवि ह्यन्यथा लुप्यते रसः॥८७॥
अत्र ये मणयो मुक्ताः कुसुमानिलताध्रियाः।
विद्रुमस्वर्णरजतनानाभेदाश्च धातवः॥८८॥
सूर्याचन्द्रमसौ देवि पशुपक्षिसमीरणाः।
भक्ष्यभोज्यलेह्यचोष्यपेयभेदा ह्यनेकशः॥८९॥
भोक्तृभोग्यविभागश्च ज्ञातृज्ञेयादिकं तथा।
रस एवेति विज्ञाय न मुह्यति कदाचन॥९०॥

Nijanand App

75. एक-एक प्रिया के मन्दिर में सौ-सौ परिचारिकाएं सेवा में प्रवृत्त हैं।

76. प्रियाओं के महलों के बाहर उसी क्रम से परिचारिका वर्ग के पृथक्-पृथक् मन्दिर हैं।

77. अर्द्ध योजन या उससे अधिक प्रमाण से लम्बे-चौड़े तिमंजिले कान्तिवान

78. नाना वर्ण आकार वाले चन्द्रामृत के उद्‌गार वाले चन्द्रकान्त उद्‌भव वाले ब्रह्म प्रियाओं के यहां महल हैं।

79. कुछ कृष्ण, कुछ रक्त, कुछ काले लाल मिले हैं। कुछ श्वेत, कुछ रक्त,

80. कुछ श्वेत और रक्त, कुछ रक्त श्वेत मिले हैं। इसी प्रकार धूम्र और कृष्ण तथा कुछ धूम्र कृष्ण और

81. कुछ कृष्ण धूम्र हैं। यह सभी महलों के वर्ण का क्रम है। प्रत्येक महल में विस्तृत स्नानागार हैं।

82. नाना उपकरणों से युक्त दिव्य रत्नों के वितान वाला अलंकार गृह तथा महाकुट्टिम मण्डप है।

83. अलंकार गृह के पूर्व की ओर गन्धलेप का मन्दिर है। नाना गन्धों के भेदों से सम्पन्न बहुत युक्ति से निर्मित है।

84. बह्नि कोण में रसोई है। ईशान में दिव्य आसन लगे सभा भवन हैं।

85. इस प्रकार से कृष्ण प्रियाओं के महलों की स्थिति मैंने बताई। कृष्ण द्रवीभूत रस हैं तो प्रियाएं भावात्मक हैं।

86. वह प्रकट होकर प्रति मन्दिर में प्रिया वृन्दों से क्रीड़ा करते हैं। स्वामिनी मन्दिर में भी केवल घनीभूत रस रूप कृष्ण रहते हैं।

87. क्षण भर के लिए भी स्वामिनी के बिना कृष्ण नहीं और न कृष्ण के बिना स्वामिनी ही रह सकती हैं, अन्यथा रस का ही लोप हो जाय।

88. यहां पर जो मणियां, मुक्ता, पुष्प, लताएं, वृक्ष, विद्रुम, स्वर्ण, रजत आदि नाना प्रकार की धातुएं तथा

89. सूर्य, चन्द्र, पशु, पक्षी, वायु, भक्ष्य, लेह्य, चोष्य, पेय जो अनेक भेद हैं,

90. भोक्ता और भोग्य का विभाग तथा ज्ञाता ज्ञेय का विभाग यह सब रस है। यह जानकर मनुष्य कभी मोहित नहीं होता है।

Nijanand App

न कालगणना तत्र वर्त्तते परमेश्वरि।
न सूर्यचन्द्रताराणामुदयास्तादिकं भवेत्॥९१॥
उदयास्तादिभावाश्च प्रतीयन्ते तथापि हि।
लीलासमयभेदार्थमेवं जानीहि पार्वति॥९२॥
एतन्मयोदितं साध्वि त्वया सम्यक् श्रुतं किल।
न वाच्यं कस्यचिद्देवि सर्वोपनिषदां रहः॥९३॥
एतन्माहेश्वरं तन्त्रं सर्वतन्त्रोत्तमोत्तमम्।
रसनिर्णयसम्पन्नं समाधौ यच्छ्रुतं मया॥९४॥
मया प्रकटितं तेऽद्य पुत्रयोरपि गोपितम्।
वासना एव तुष्यन्ति श्रुत्वा साध्वीं कथामिमाम्॥९५॥
अल्पाः कूपा विवर्द्धन्ते ज्योत्स्नया किं समुद्रवत्।
हरिणा एव तुष्यन्ति गानं श्रुत्वा न गर्दभाः॥९६॥
तस्मात्परीक्ष्य वक्तव्यं सहसा न प्रकाशयेत्।
श्रद्धधानाय शान्ताय कुलीनाय महेश्वरि॥९७॥
विनीताय कृतज्ञाय क्रियाशुद्धाय दीयताम्।
श्रद्धाभक्तिविहीनाय कृतघ्नाय दुरात्मने॥९८॥
गुरुभक्तिविहीनाय हेतुवादरताय च।
असम्भावितचित्ताय विपरीतार्थवादिने॥९९॥
वृथार्थैकप्रवर्त्ताय वेदशास्त्रार्थमानिने।
दाम्भिकायातिदुष्टाय विषयाक्रान्तचेतसे॥१००॥
न देयः सर्वथा देवि तन्त्रार्थः परमाद्भुतः।
तन्नास्ति त्रिषु लोकेषु यद्दत्त्वाप्यनृणी भवेत्॥१०१॥
प्रभोर्देवस्य सर्वस्वं मयेदं ते प्रकाशितम्।
अतः परं तु देवेशि ज्ञातव्यं नावशिष्यते॥१०२॥
तस्मादिदं सुविज्ञाय रहस्यं कृष्णयोषिताम्।
स्वयमेव परानन्दनिमग्ना भव सुन्दरि॥१०३॥
अतः परं तु देवेशि पृष्टव्यं नैव किञ्चन।
नित्यं ध्यायामि यच्चित्ते तदेतत्ते निवेदितम्॥१०४॥
इत्युक्त्वा च तदा शम्भुस्तूष्णींभूत्वा च संस्थितः।
वर्णमानमहालीलासमुद्रे मन आदधे॥१०५॥
स्तिमितोर्मिरिवाम्भोधिः पुलकाङ्गः सुलोचनः।
बभूव देवदेवेशः कृपासिन्धुरुमापतिः॥१०६॥

Nijanand App

91. वहां ईश्वरीय काल की गणना नहीं है। न तो सूर्य, चन्द्र तारागणों का उदय अस्त होता है।

92. फिर भी उदय अस्तादि भाव लीला समय भेद के लिए प्रतीत होते हैं, ऐसा जानो।

93. हे साध्वी! यह मैंने तुमको बता दिया जो मैंने सुना था। यह सभी उपनिषदों का रहस्य है। किसी से कहना नहीं।

94. यह सब तन्त्रों में उत्तमोत्तम माहेश्वरतन्त्र रस निर्णय से युक्त है, जिसको मैंने समाधि में सुना था।

95. अपने दोनों पुत्रों को भी मैंने नहीं बताया था, तुमको प्रकट कर दिया। इस कथा को सुनकर ब्रह्म वासनाएं ही तुष्ट होती हैं।

96. ज्योत्स्ना से जैसे समुद्र बढ़ता है वैसे ही क्या छोटे कुएं भी बढ़ते हैं। गान को सुनकर हिरण ही प्रसन्न होते हैं गधे नहीं।

97. इसलिए पात्र की परीक्षा करके कहना चाहिए। सहसा नहीं प्रकाशित करना चाहिए। श्रद्धा रखने वाले शान्त, कुलीन,

98. विनीत, कृतज्ञ, क्रियाशुद्ध को ही यह ज्ञान देना। श्रद्धा और भक्ति से रहित कृतघ्न, दुरात्मा,

99. गुरु भक्ति रहित, तार्किक बुद्धि, असम्भावित चित्त, विपरीतार्थकारी,

100. व्यर्थ के कार्यों को करने वाले, वेदशास्त्रार्थ का झूठा मान रखने वाले, दम्भी, अतिदुष्ट, विषयी मन वाले को

101. इस परम् अद्भुत तन्त्र का अर्थ सर्वथा नहीं बतलाना चाहिए। ऐसी कोई वस्तु त्रिलोक में नहीं है जिसको देकर इस ज्ञान के ऋण से मुक्त हो सके।

102. प्रभुदेव का यह सर्वस्व मैंने तुम्हारे सामने प्रकाशित कर दिया, इसके बाद कुछ भी ज्ञातव्य शेष नहीं है।

103. इसलिए कृष्ण की योषिताओं के इस रहस्य को अच्छी प्रकार जानकर स्वयं परमानन्द में निमग्न हो जाओ।

104. हे देवि! इसके बाद कुछ पूछने को बाकी नहीं है। चित्त में जो मैं नित्य ध्यान करता हूं, वह तुमको बता दिया।

105. यह कहकर शम्भु चुप होकर बैठ गए और वर्णन किए जा रहे महालीलासागर में मन लगा दिया।

106. शान्त तरंगों वाले समुद्र की तरह रोमांचयुक्त सुन्दर नेत्र वाले उमापति कृपासिन्धु हो गए।

Nijanand App

एवमानन्दसन्दोहनिमग्नं वीक्ष्य शङ्करम्।
सर्वोपचारविधिना पूजयामास पार्वती॥१०७॥
दण्डवत्प्रणनामैषा कृतार्थास्मीति वादिनी।
तुष्टाव शङ्करं भूयः कृपानिधिमनुत्तमम्॥१०८॥
त्वं देव सर्वविद्यानामुपदेष्टा गुरुः स्वयम्।
त्वयि भक्तिवतामेव मन्त्रयन्त्रादिसिध्यतु॥१०९॥
इत्युक्त्वा पार्वती चित्ते लीलामाधाय वर्णिताम्।
अवाप परमानन्दं हर्षाश्रुपुलकाङ्किता॥११०॥

इति श्रीमन्माहेश्वरतन्त्रे उत्तरखण्डे शिवोमासंवादे एकपञ्चाशत्तमं पटलम्॥५१॥

आदितः श्लोकानां समष्ट्यंकाः॥३०६०॥

श्रीमन्माहेश्वरं तन्त्रं समाप्तम्।

Nijanand App

107. इस प्रकार आनन्द समूह में निमग्न शंकर को देखकर सभी उपचारों की विधि से पार्वती जी ने पूजन किया।

108. दण्डवत प्रणाम किया और कहा मैं कृतार्थ हूं। पुनः कृपानिधि शंकर की स्तुति किया।

109. हे देव! आप ही सभी विद्याओं के उपदेशक स्वयं गुरु हैं। तुम्हारे में भक्ति करने वालों को ही मन्त्र तन्त्र आदि की सिद्धि प्राप्त हो।

110. यह कहकर पार्वती ने मन में वर्णित लीला का ध्यान कर हर्ष के आंसू तथा पुलकित अंगयुक्त होकर परमानन्द प्राप्त किया।

माहेश्वरतन्त्र के उत्तर खण्ड में शिव-उमा संवाद का इक्यावनवां अध्याय समाप्त हुआ।

आदि से लेकर सभी श्लोकों की संख्या 3060 है।

श्री माहेश्वरतन्त्र समाप्त हुआ।

Nijanand App